भारत मे संचार माध्यमों का उद्भव और विकास

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY

बी.जे.एम.सी.

भारत में संचार माध्यमों का उद्भव और विकास

म. प्र. भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय, भोपाल

© *Madhya Pradesh Bhoj (Open) University*

All rights reserved. **No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University.**

The views expressed in this SIM are that of the author(s) and not that of the MPBOU.

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY

Raja Bhoj Marg (Kolar Raod) Bhopal - 462016. Tel: (0755) 2492095.

Fax: (0755)-2424640.

email: bedspc@rediffmail.com or bed@bhojvirtualuniversity.com

website : http://www.bhojvirtualuniversity.com

INDEX

भारत में संचार माध्यमों का उद्भव और विकास

इकाई -1	भारत में समाचार पत्रों का उद्भव	4
इकाई - 2	स्वातंत्र्योत्तर पत्रकारिता	121
इकाई - 3	रेडियो का विकास	271
इकाई -4	टेलीविजन का विकास	316
इकाई -5	न्यू मीडिया	418

by
e

इकाई–1 **भारत में समाचार पत्रों का उद्‌भव।**

बंगाल गजट

भारत में भाषाई पत्रकारिता का विकास

निम्नलिखित पत्रकारों का पत्रकारिता में योगदान

राजाराम मोहन राय, पं. युगल किशोर शुक्ल,

लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, गणेश शंकर विद्यार्थी,

बाबू राव, विष्णुराव पराड़कर, माखनलाल चतुर्वेदी।

इकाई–2 **स्वातंत्र्योत्तर पत्रकारिता**

स्वतंत्र भारत में पत्रकारिता का विकास

संवाद समितियों का विकास (पी.टी.आई.,

यू.एन.आई. हिन्दुस्तान समाचार)

मध्यप्रदेश की पत्रकारिता का संक्षिप्त परिचय

इकाई–3 **रेडियो का विकास–**

स्वतंत्रता पूर्व स्वतंत्रता के पश्चात्, एफ.एम.

और सामुदायिक रेडियो

इकाई—4 <u>टेलीविजन का विकास</u> —

भारत में दूरदर्शन का शुभारंभ, दूरदर्शन के उद्देश्य·

दूरदर्शन का विकास।

इलेक्ट्रानिक मीडिया की स्वायत्तता, प्रसार भारती

इकाई—5 <u>न्यू मीडिया</u>

वेब पत्रकारिता एवं पोर्टल, मल्टी मीडिया, ब्लाग

इकाई—1

भारत में समाचार पत्रों का उद्‌भव

बंगाल गजट

भारत में प्रारंभिक समाचार पत्रों का प्रकाशन ईस्ट इण्डिया कम्पनी के भूतपूर्व कर्मचारियों द्वारा ही किया गया। समाचार पत्रों का प्रकाशन उन्हें क्यों करना पड़ा ? इसका स्वाभाविक उत्तर यही प्रतीत होता है कि अपनी घुटन को वे अभिव्यक्ति देना चाहते थे। कम्पनी के अधिकारी यहाँ न केवल व्यक्तिगत व्यापारिक गतिविधियों से धन संचय करते थे, वरन् अपने छोटे कर्मचारियों को दबाकर भी रखना चाहते थे ताकि उनकी अवांछनीय गतिविधियों पर पर्दा पड़ा रहे। इन प्रारंभिक अंग्रेज पत्रकारों को न केवल कम्पनी का कोपभाजन बनना पड़ा वरन् मानसिक क्लेश के भी वे शिकार बनाए गए।

इन पत्रकारों मैं विलियम बोल्ट्स का नाम सर्वप्रथम आता है, जिन्होंने 1776 में कलकत्ता से एक समाचार पत्र निकालने की घोषणा की, जिसका सूचना पत्र इस प्रकार था— "मेरे पास ऐसी बहुत सारी बातें हैं जो मुझे कहना है और जिनका संबंध हर व्यक्ति से है।" इस सूचना मात्र से ही सभी कम्पनी अधिकारियों की भृकुटियां तन गई और बोल्ट्स को बंगाल छोड़ने का हुक्म सुना दिया गया। वहां से उसे मद्रास (वर्तमान में चेन्नई) भेजा गया, उसके बाद वहीं से यूरोप के लिए रवाना कर दिया गया। बोल्ट्स के इस प्रथम (असफल) प्रयास के बाद 29 जनवरी, 1780 को जेम्स आगस्टस हिकी ने "बंगाल गजट

और कलकत्ता जनरल एडवरटाइजर" का प्रकाशन किया। 'हिकीज गजट' के नाम से मशहूर इस समाचार पत्र के प्रवेशांक में हिकी ने स्वयं को आनरेबल कम्पनी का मुद्रक घोषित किया।

हिकी के 'गजट' की महारात ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्मियों की निजी जिन्दगी का भण्डाफोड़ करने में थी। यद्यपि हिकी अपने आपको कम्पनी के कर्मियों में प्रथम मुद्रक मानता था, तथापि कम्पनी उसे अधिक तवज्जो नहीं देती थी। दो पन्नों के इस अखबार में गवर्नर वारेन हेस्टिंग्ज सहित कम्पनी के अधिकारियों की निजी जिन्दगी पर तीखे प्रहारों में ज्यादा स्थान चला जाता था। इसकी एक वजह यह भी थी कि हिकी का साहित्य आदि से कोई सरोकार न था।

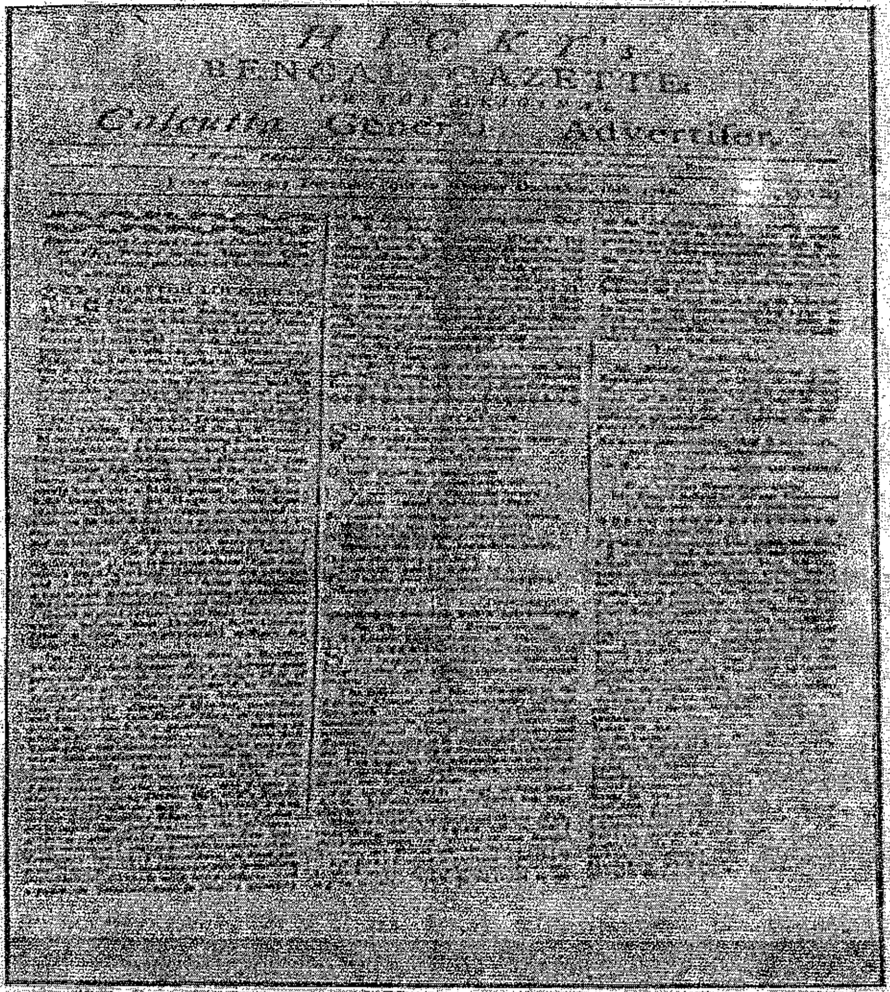
HICKY's
BENGAL GAZETTE;
Calcutta General Advertiser.

भारत में पत्रकारिता का सूत्रपात 29.1.1780 को 'हिकीज बंगाल गजट' के प्रकाशन के साथ हुआ।

हिकी ने जब हेस्टिंग्ज़ की पत्नी और कुछ अन्य आला हस्तियों के विरूद्ध व्यक्तिगत और तीखे प्रहार किए तो उसे जी.पी.ओ. (जनरल पोस्ट ऑफिस) के मार्फत समाचार पत्र प्रेषण की सुविधा से वंचित कर दिया गया। लेकिन हिकी के प्रहार रूके नहीं। स्वीडिश मिशनरी जॉन जकारिया कीरनेण्डर ने हिकी के खिलाफ मुकदमा चला दिया। जिसमें

हिकी को चार महीने की कैद और पांच सौ रूपए जुर्माना से दण्डित किया गया। जब तक यह जुर्माना अदा न करता तब तक उसे जेल में ही रहना था। इसके बावजूद हिकी ने रास्ता नहीं बदला और उसने गवर्नर तथा मुख्य न्यायाधीश के खिलाफ भी कटु लेखन जारी रखा। इस बीच यूरोपीय लोगों की अगुवाई में करीब चार सौ हथियारबन्द लोगों की भीड़ ने हिकी के प्रेस पर धावा बोल दिया। हिकी से अस्सी हजार रूपए की जमानत मांगी गई, जिसे वह दे न सका और उसे जेल भेज दिया गया। तथापि जेल में रहते हुए भी हिकी अखबार का सम्पादन करता रहा। यही नहीं, उसने अपना स्वर भी नहीं बदला। उस पर चले मुकदमे में एक आरोप में एक वर्ष की कैद और दो सौ रूपए जुर्माना की सजा हुई, वहीं दूसरे आरोप में मुख्य न्यायाधीश ने वारेन हेस्टिंग्ज को पांच हजार रूपया क्षतिपूर्ति के रूप में चुकाने का आदेश पारित किया। इतने सब आघातों से विचलित हुए बिना हिकी ने अपने लेखन के तेवर तो बरकरार रखे, लेकिन वह धीरे–धीरे गरीबी के दलदल में धंसता गया जिसने अंततः उसे तोड़ दिया।

आलोचकों के प्रति ईस्ट इण्डिया कम्पनी का व्यवहार कितना निर्मम हुआ करता था इसका एक उदाहरण हिकी के प्रति कम्पनी का व्यवहार है। 16,800 सीट्स की छपाई का काम हिकी को मिला था जिसके लिए हिकी ने 35,092 रूपए का बिल प्रस्तुत किया, जबकि उसे मात्र 6,711 रू. का भुगतान मंजूर करने के लिए विवश किया गया। इसका आखिरी नतीजा यह निकला कि छपाई का काम पूरा करने के बाद उसे बिल की सिर्फ पांचवें हिस्से बराबर धनराशि का भुगतान हो पाया।

हिकी का 'गजट' 29 जनवरी, 1780 से 16 मार्च, 1782 तक निकलने की पुष्टि होती है। राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता के दुर्लभ ग्रंथ संग्रह प्रभाग में केवल दो अंक 29 जनवरी 1780 और 5 जनवरी, 1782 के ही उपलब्ध हैं 'बगाल गजट' के प्रारंभिक अंक संयत और अनुत्तेजक भाषा में लिखे गये थे। फिर धीरे–धीरे वह कांडों को उजागर करने लगा।

हिकी वित्तीय अनियमितता के अपराध में दो वर्ष से अधिक समय तक सिविल जेल में रहा। इस दौरान उसे प्रिंटिंग क्रिया पर एक पुस्तक हाथ लग गई और उससे उसने प्रिंटिंग प्रेस की जानकारी प्राप्त की । तब तक कलकत्ता में एक भी प्रिंटिंग प्रेस नहीं थी। जेल से छूटने के बाद बड़े उत्साह और कड़ी मेहनत से उसने टाइप सेट की कटाई की और परचों तथा विज्ञापनों की छपाई में उनका प्रयोग सफल और सस्ता सिद्ध हुआ।

इससे वह उत्साहित भी हुआ। इस प्रकार थोड़ा–थोड़ा करके उसने कुछ सौ रूपए जोड़े और इंग्लैण्ड से प्रिंटिंग का सामान बुलाया। अभी सामान आया भी नहीं था कि उसके दिमाग में सामान्य जनता के लिए एक समाचार पत्र निकालने का विचार आया। जब सामान आ गया तब उसने एक साप्ताहिक समाचार पत्र के मुद्रण के लिए प्रस्ताव बुलाए। प्रस्ताव का उत्तर आशाजनक रहा और उसने 'बंगाल गजट' प्रारंभ कर दिया। चाहे आज सरीखे समाचार उसमें न छप सकते हों, परन्तु समाचारों के प्रति कौतूहल तो उसने पैदा किया ही था। प्रचलित मुहावरों के प्रयोग से वह स्थिति को समझाने में सफल भी हुआ। 'सम्पादक के नाम पत्र' स्तम्भ का जनक भी हिकी

का बंगाल गजट ही था। इससे यह भी ज्ञात होता है कि पत्र जनता की भावनाओं को अभिव्यक्ति देने का पक्षधर था। साथ ही जनता की समस्याओं, सोच को उजागर कर विचारों के आदान–प्रदान को महत्त्व देता था। यह एक प्रजातांत्रिक सोच भी था।

हिकी ने अपने संबंध में लिखा– मुझे अखबार छापने का कोई खास शौक नहीं है और न मेरी तबीयत को इस काम में लगाव ही है। मेरी परवरिश भी इस तरह की नहीं हुई है कि मैं मेहनत की गुलाम की जिन्दगी जीऊँ, परन्तु इन सब बातों के बावजूद आत्मा और दिमाग की आजादी खरीदने के लिए मैं अपने शरीर को बखुशी गुलाम बना रहा हूँ।

हिकी की पत्रकारिता पर वारेन हेस्टिंग्ज ने पहला प्रहार 14 नवम्बर, 1780 को यह आदेश जारी करके किया– ''आम सूचना दी जाती है कि एक साप्ताहिक समाचार पत्र जिसका नाम ''बंगाल गजट आफर कलकत्ता जनरल एडवरटाइजर'' है, जो जे.ए. हिकी द्वारा मुद्रित किया जाता है, के ताजा अंकों में व्यक्तिगत रूप से निजी जिन्दगी को लांछित करने वाले अनुचित अंश पाए गए हैं, जा अशांत करने वाले हैं, अतएव इसे जी.पी.ओ. के माध्यम से प्रसारित होने की और अधिक अनुमति नहीं दी जा सकती।''

16 दिसम्बर, 1802 को 'कलकत्ता गजट' में जेम्स आगस्टस हिकी की मृत्यु के संबंध में एक छोटा सा समाचार प्रकाशित हुआ। 1802 में एन्जेक्स नामक जहाज से हिकी भारत से रवाना हुए थे और उसी जहाज में उनके जीवन का अवसान हो गया। यद्यपि उनकी मृत्यु

की सही तिथि आज तक पता नहीं चल सकी है। जिस जहाज से हिकी भारत से रवाना हुए थे, वह मार्च, 1803 में कलकत्ता लौट आया था। इसके लगभग दो महीने बाद कलकत्ता गजट के 12 मई, 1803 के अंक में एक विज्ञापन छपा जिसमें 'डिसीज्ड' (मृतक) के रूप में हिकी का उल्लेख किया गया। सुप्रीम कोर्ट ने जेक्सन को हिकी की सम्पत्ति की जवाबदारी सौंपी थी। जेक्सन ने इस विज्ञापन में आम लोगों को सूचित किया था कि जो लोग हिकी के कर्जदार हैं वे उस ऋण को चुका दें। और जिनका हिकी से कुछ लेना है, वे अविलम्ब इसकी सूचना दें। 26 मार्च, 1803 को 'कलकत्ता गजट' में नीलामी का दूसरा विज्ञापन छपा और उसके दूसरे दिन उनकी की सम्पत्ति नीलाम कर दी गई।

भारत में भाषाई पत्रकारिता का विकास :

भारतीय पत्रकारिता का आरंभ कलकत्ता से माना जाता है। यह वह समय था जब अंग्रेजी भाषा का ज्ञान होना और उसे अपनाया जाना आधुनिकता की पहचान के लिए जरूरी समझा जाता था। देश में इस आधुनिकता तथा नवजागरण का नेतृत्व राजा राममोहन राय ने किया जो एक समाज सुधारक तथा प्रगतिवादी दृष्टिकोण वाले व्यक्ति थे।

ब्रिटिश सरकार द्वारा मुद्रण कला और पत्रकारिता के मार्ग में अनेक प्रकार के अवरोध उत्पन्न करने के बावजूद पत्रकारिता की नींव पड़ी। जिन समाचार पत्रों का क्रिश्चियन मिशनरी द्वारा संचालन हुआ करता था उनको ब्रिटिश सरकार प्रोत्साहन देती थी। इसी प्रोत्साहन

के बल पर हिंदी के प्रमुख केन्द्रों से भी ईसाई पत्रों का प्रकाशन और प्रसारण होने लगा। ये मिशनरी पत्र ईसाई पत्रों का सम्मान करते थे और देश के सांस्कृतिक गौरव का विनाश करना चाहते थे। इस तरह के अन्याय को राजा राममोहन राय सहन नहीं कर पाए। उन्होंने पत्र–प्रकाशन के अपने लक्ष्य को इस प्रकार स्पष्ट किया– 'मेरा उद्देश्य मात्र इतना ही है कि मैं जनता के सामने ऐसे बौद्धिक निबंध उपस्थित करूं जो उनके अनुभव को बढ़ाए और सामाजिक प्रगति में सहायक सिद्ध हो। मैं अपनी शक्तिभर शासकों को उनकी प्रजा की परिस्थितियों का सही–सही परिचय देना चाहता हूँ, ताकि शासक जनता को अधिक से अधिक सुविधा देने का अवसर पा सके और जनता उन उपायों से अवगत हो सके, जिनके द्वारा शासकों से सुरक्षा पाई जा सके तथा अपनी उचित मांगें पूरी कराई जा सके।'

मद्रास के गवर्नर सर टॉमस मुनरो ने प्रेस को स्वतंत्रता देना अपने लिए खतरनाक माना। उनके ही शब्दों में –'प्रेस को आजादी देना हमारे लिए खतरनाक है। विदेशी शासन और समाचार पत्रों की स्वतंत्रता दोनों एक साथ नहीं चल सकते। पहला भारतीय समाचार पत्र 'दिग्दर्शन' बांग्ला भाषा में 1818 में प्रकाशित हुआ। उसके बाद 1822 में 'समाचार चंद्रिका' प्रकाशित किया गया। उसके बाद कुछ और बांग्ला समाचार पत्र प्रकाशित हुए।

भारत में हिंदी पत्रकारिता का श्रीगणेश 1826 में 'उदन्त मार्तण्ड' के प्रकाशन से हुआ था। 1831 के पार्लियामेंटरी दस्तावेजों में देशी पत्रों का जो विवरण समाविष्ट किया गया था, उसमें पहली बार

'उदन्त मार्तण्ड' और 'बंगदूत' नामक दो हिंदी पत्रों के अस्तित्व का उल्लेख किया गया है।

1836 में 'समाचार चन्द्रिका' की 250 प्रतियां छपती थीं, 'समाचार दर्पण' की 298, 'बंगदूत' की 70 से भी कम, 'पूर्णचन्द्रोदय' की 100 और ज्ञाननेशन की 2004, 1839 में कलकत्ता में, जो उस समय भारत की राजधानी थी, यूरोपियनों के 26 पत्र निकलते थे, जिनमें एक 'संवाद प्रभाकर' 1 जून, 1839 को दैनिक हुआ था। बांग्ला, हिंदी, उर्दू और फारसी के जो पत्र कलकत्ता से निकले वे प्रायः सभी साप्ताहिक थे। उसका कारण था, दैनिक पत्रों के लिए सबसे बड़ा साधन और आवश्यकता तार की होती थी। कलकत्ता से आगरा होकर बंबई और बंबई से मद्रास तथा आगरा से पेशावर तक की तार की लाइनें 1855 ही खोली गईं। समाचार पत्रों को एक ही दर पर डाक से भेजने की प्रक्रिया 1857 में शुरू हुई थी। उससे पहले 20 वर्षों तक दूरी के हिसाब से डाक–टिकट देना पड़ता था। समाचार पत्रों को ले जाने वाली रेलवे लाइनें भी 1857 में शुरू हुईं, जब 274 मील की रेलवे लाइनें खोली गईं। इस प्रकार इस काल से पहले बहुत प्रचार वाले या दैनिक समाचार पत्रों का आविर्भाव संभव नहीं था, फिर भी देश में ऐसे पत्र निकले जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना में बड़ा योगदान दिया। 15 नवंबर, 1851 को दादाभाई नौरोजी ने गुजराती में ''रास्तगुफ्तार' नामक पत्र निकाला था। राजा राममोहन राय का 'बंगदूत' जो एक साथ बांग्ला, हिंदी फारसी और अंग्रेजी में छपता था, समाज सुधार का पत्र था। 'ज्ञाननेशन' भारतीय भाषाओं मं शिक्षा की और बांग्ला भाषा को सरकारी भाषा की मांग करने के लिए प्रसिद्ध था। 1857 में

'पयाम–ए–आजादी' के नाम से उर्दू तथा हिंदी में एक पत्र प्रकाशित हुआ जो अंग्रेजों के विरूद्ध क्रांति का प्रचारक था और जिसको जब्त कर लिया गया था। जिस किसी के पास उसकी प्रति पाई जाती थी, उसे राजद्रोह का दोषी माना जाता था और कठोर से कठोर सजा दी जाती थी। 1857 में ही हिंदी के प्रथम दैनिक 'समाचार सुधावर्षण' और उर्दू–फारसी के दो समाचार पत्रों 'दूरबीन' और 'सुलतान–उल–अखबार' के विरूद्ध यह मुकदमा चला कि उन्होंने बादशाह बहादुरशाह जफर का एक फरमान छापा जिसमें लोगों से मांग गई कि थी कि अंग्रेजों को भारत से बाहर निकाल दें। इस पत्र के संपादक श्यामसुंदर सेन दिन भर की सुनवाई के बाद राजद्रोह के अपराध से मुक्त कर दिए गए और इसके बाद ही लॉर्ड केनिंग का प्रसिद्ध गैगिंग–एक्ट पारित हुआ, जिसमें समाचार पत्रों पर बहुत बंधन लगाए गए थे।

अंग्रेजी राज्य के विरूद्ध संघर्ष के क्षेत्र में जिन समाचार पत्रों का विशेष उल्लेख करना आवश्यक है, उनमें कलकत्ता का 'हिन्द पेट्रियट' मुख्य था, जिसकी स्थापना 1853 में लेखक और नाटककार गिरीशचंद्र घोष ने की थी और जो हरीशचंद्र मुखर्जी के नेतृत्व में असाधारण लोकप्रियता प्राप्त कर गया। 1861 में इस पत्र में नाटक 'नील दर्पण' निकला जिसने निलहे गोरे व्यापारियों के विरूद्ध नील की खेती को खत्म करने के लिए आंदोलन चलाया और इसके फलस्वरूप एक नील कमीशन की नियुक्ति हो गई। बाद में यह पत्र ईश्वरचंद्र विद्यासागर के हाथ में आ गया और क्रिस्टोदास पाल इसके संपादक नियुक्त हुए। इस पत्र ने सरकारी ज्यादतियों का जमकर विरोध किया और यह मांग

की कि सरकार की नौकरियों में भारतीय को प्रवेश दिया जाए। 1878 में जब देशी भाषायी समाचार पत्र विरोधी कानून पास हुआ, तो उसका प्रबल विरोध किया। 'इण्डियन' मिरर कलकत्ता का दूसरा ऐसा प्रसिद्ध पत्र था।

उन दिनों बांग्ला में जैसोर से प्रकाशित एक साप्ताहिक पत्र चल रहा था जिसका नाम था–'अमृत बाजार पत्रिका'। इस पत्र के संचालकों पर सरकारी कर्मचारियों की आलोचना करने का मुकदमा चला और सजाएं हुईं। 1871 में यह कलकत्ता से प्रकाशित होने लगा और विशेषतया इसी पत्र को दबाने के लिए 1878 का देशी भाषा पत्र कानून पास हुआ था। लेकिन इस पत्र के संपादकों ने जिनमें शिशिर कुमार घोष और मोतीलाल घोष दो भाई थे, इसे रातोरात अंग्रेजी का पत्र बना दिया। इसके बाद यह पत्र भारतीय स्वाधीनता संग्राम का प्रबल समर्थक रहा। 1868 में फिर प्रसिद्ध पत्रकार गिरीशचंद्र घोष ने 'बांग्ली' नाम से एक साप्ताहिक निकाला था। कुछ दिनों बाद सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने इस पत्र को खरीद लिया और इसके बाद यह पत्र बंगाल में ही नहीं, सारे देश में स्वाधीनता संग्राम का प्रबल पक्षधर हो गया। उन्होंने एक लेख कलकत्ता हाईकोर्ट के एक फैसले के बारे में लिखा तो उन्हें एक महीने की सजा हुई। 1886 से लेकर बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक तक बनर्जी राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रमुख नेता रहे।

पूना में 1849 में "ज्ञान प्रकाश" का प्रकाशन हुआ था। इसका प्रबंध पूना की सार्वजनिक सभा ने ले लिया था और यह सार्वजनिक महत्व के प्रश्नों पर बहुत प्रभावशाली ढंग से लिखता था। इसी संगठन ने पूना में कांग्रेस बुलाने का निर्णय किया था। महाराष्ट्र के सार्वजनिक

जीवन के एक प्रकार से आदि--संस्थापक महादेव गोविंद रानाडे भी इसमें तथा 'इन्दु प्रकाश' में लिखते थे। कुछ दिनों बाद इस पत्र के संपादक श्रीकृष्ण शास्त्री चिपलूणकर के पुत्र विष्णु शास्त्री चिपलूणकर, जी.जी. आगरकर और बाल गंगाधर तिलक ने मिल कर 1 जरवरी, 1881 से मराठी में 'केसरी' और अंग्रेजी में 'मराठा' नामक दो साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किए। 'डैकेन स्टार' नामक अंग्रेजी पत्र के संपादक श्री नाम जोशी भी इसमें आ गए और यह पत्र 'मराठा' में मिला लिया गया। कोल्हापुर के दीवान के विरूद्ध एक लेख छापने पर तिलक और आगरकर को सजा हुई और बाद में जब 1897 में पूना में प्लेग फैला और कमिश्नर रैंड के अत्याचार असहनीय हो गए तो लोकमान्य तिलक ने 4 मई, 1897 में एक लेख छापा जिसमें लिखा था—'बीमारी तो एक बहाना है, वास्तव में सरकार लोगों की आत्मा को कुचलना चाहती है। मिस्टर रैंड अत्याचारी हैं और जो कुछ वे कर रहे हैं, वह सरकार की आज्ञा से ही कर रहे हैं, इसलिए सरकार के पास प्रार्थना देना व्यर्थ है।' इस प्रकार के लेखों के पश्चात् चापेकर बंधुओं ने 22 जून को रैंड की हत्या कर दी थी। 15 जून को 'केसरी' में श्री तिलक का जो अग्रलेख निकला था, उसको लेकर उन्हें डेढ़ वर्ष की सजा दी गई और इसके बाद लोकमान्य तिलक भारतीय स्वाधीनता संग्राम के अत्यंत प्रमुख नेता स्वीकार कर लिये गए। उनका 'केसरी' सारे भारत में स्वाधीनता संग्राम का एक प्रबल प्रचारक बन गया जिसने बंग—भंग विरोधी आंदोलन को देशव्यापी बना दिया।

'केसरी' और 'मराठा' स्वाधीनता आंदोलन के प्रमुख प्रवर्तक बन गए और सारे देश में उनका आदर्श अनुकरणीय माना गया। नागपुर

और बनारस से 'हिंदी केसरी' निकला और जब 1920 में बनारस से 'आज' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ तो उस संबंध में दिशा–निर्देश लेने के लिए बाबूराव विष्णु पराड़कर, लोकमान्य तिलक से मिलने पूना गए थे।

कांग्रेस के अन्य अध्यक्षों में अनेक ऐसे थे जो या संपादक रहे या जिन्होंने किसी बड़े पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया। इनमें प्रमुख थे श्री फिरोज़शाह मेहता, जिन्होंने प्रसिद्ध पत्र 'बाम्बे क्रॉनिकल' की स्थापना की। श्री मदनमोहन मालवीय, जिन्होंने 'दैनिक हिन्दुस्तान' का संपादन किया तथा साप्ताहिक और दैनिक 'अभ्युदय' निकाला और दिल्ली के हिन्दुस्तान टाइम्स को राष्ट्रीय पत्र का स्वरूप प्राप्त हुआ। पंडित मोतीलाल नेहरू 'लीडर' पत्र के निदेशक मंडल के प्रथम अध्यक्ष थे और 'लीडर' से जमानत मांगी गई थी तो उन्होंने कहा था कि जब तक मेरे घर में एक भी ईंट है तब तक मैं 'लीडर' को मरने नहीं दूंगा। उन्होंने इंडीपेंडेंट पत्र की भी स्थापना की। लाला राजपत राय की प्रेरणा से 'पंजाबी', 'बंदेमातरम' और 'पीपुल' नाम के तीन पत्र लाहौर से निकले। महात्मा गांधी जब अफ्रीका में थे, तभी उन्होंने 'इंडियन ओपीनियन' नाम का पत्र निकाला था और भारत में आकर 'यंग इंडिया' 'नवजीवन' 'हरिजन' 'हरिजन सेवक' और 'हरिजन बन्धु' जैसे पत्र निकाले। जे.एम. सेनगुप्त और चित्तरंजन दास यद्यपि पत्रकार नहीं थे, परन्तु उन्होंने 'वंदेमातरम्' और 'फारवर्ड' जैसे पत्रों को राष्ट्रीय पत्रों के रूप में चलाया। जवाहरलाल नेहरू ने 'नेशनल हेराल्ड' पत्र की स्थापना की और उसमें लिखा भी। यद्यपि उन्होंने संपादक को लिखने की पूरी आजादी दी थी परन्तु महत्वपूर्ण प्रश्नों पर वे स्वयं लिखते थे।

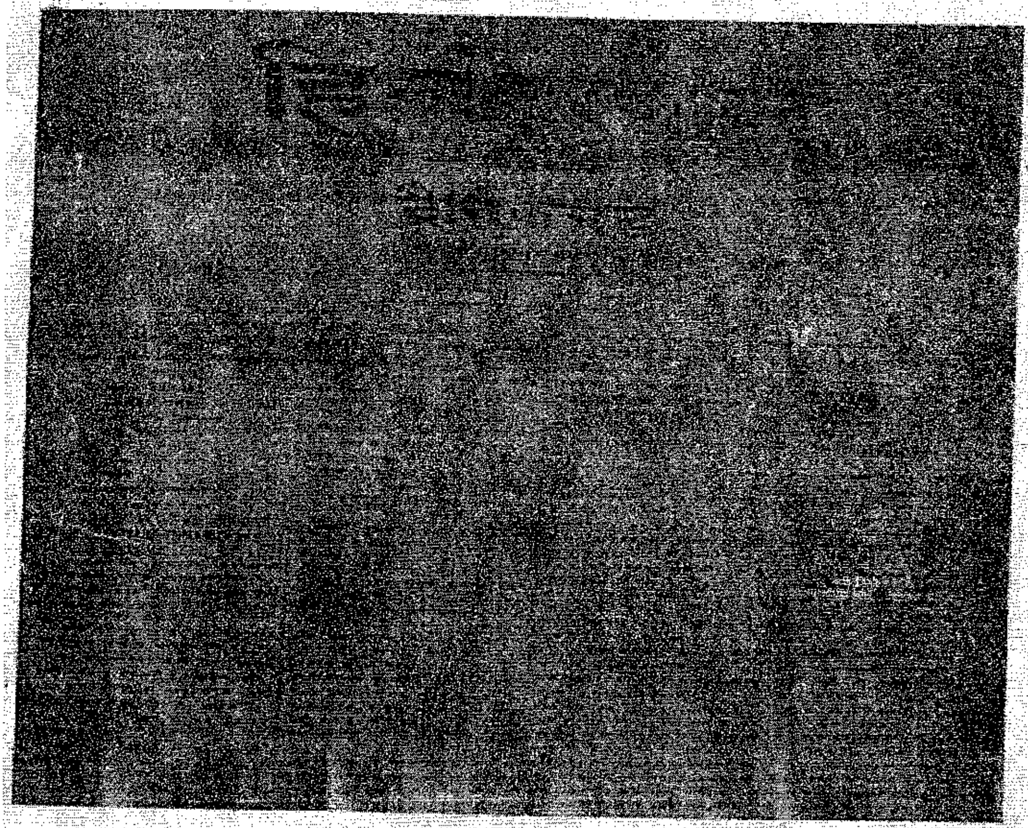

हिन्दोस्थान, 1 नवं., 1885

भारत का क्रांतिकारी आंदोलन बंदूक और बम के साथ नहीं, समाचार पत्रों से शुरू हुआ। जिनमें कुछ नाम अत्यंत गौरवशाली हैं। सर्वप्रथम – 'युगांतर', जिनका प्रकाशन और संपादन अरबिंद घोष के छोटे भाई वारींद्र कुमार घोष ने, भूपेन्द्रनाथ दत्त तथा अवनीश भट्टाचार्य की सहायता से किया और बाद में जब समाचार पत्र बंद हो गया तो उन्हीं कार्यकर्ताओं ने एक क्रांतिकारी दल संगठित किया जो 'युगांतर' गुट के नाम से प्रसिद्ध हुआ। 1908 में इस पत्र की प्रसार

संख्या 8 हजार प्रतियां थी। जब समाचार पत्रों द्वारा अपराध भड़काने संबंधी कानून के अंतर्गत इसे बंद कर दिया गया तो चीफ जस्टिस सर लारेंस जैकिनसन ने इस पत्र के बारे में लिखा था— 'इनकी हरेक पंक्ति से अंग्रेजों के प्रति विद्वेष टपकता है। हरेक शब्द से क्रांति के लिए उत्तेजना झलकती है। इसमें बताया गया कि किस प्रकार क्रांति होती है।' स्वयं 'गदर' अखबार अपने आप में क्रांति का बड़ा दूत था। यह एक वर्ष के काल में ही हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, गुजराती, मराठी और अंग्रेजी में निकलने लगा और इसकी लाखों प्रतियां छपती थीं। भारत से बाहर जहां–जहां भी भारतीय थे, उनको भेजी जातीं। यही नहीं, उन्हें भारत भी बड़ी चतुराई से भेजा जाता था। जब लाला हरदयाल को अमेरिका में गिरफ्तार किया गया और वे अमेरिका छोड़कर भारत चले आए तो उनके उत्तराधिकारी पंडित रामचंद्र ने 'हिन्दुस्तान गदर' के नाम से उसका अंग्रेजी संस्करण भी निकाला।

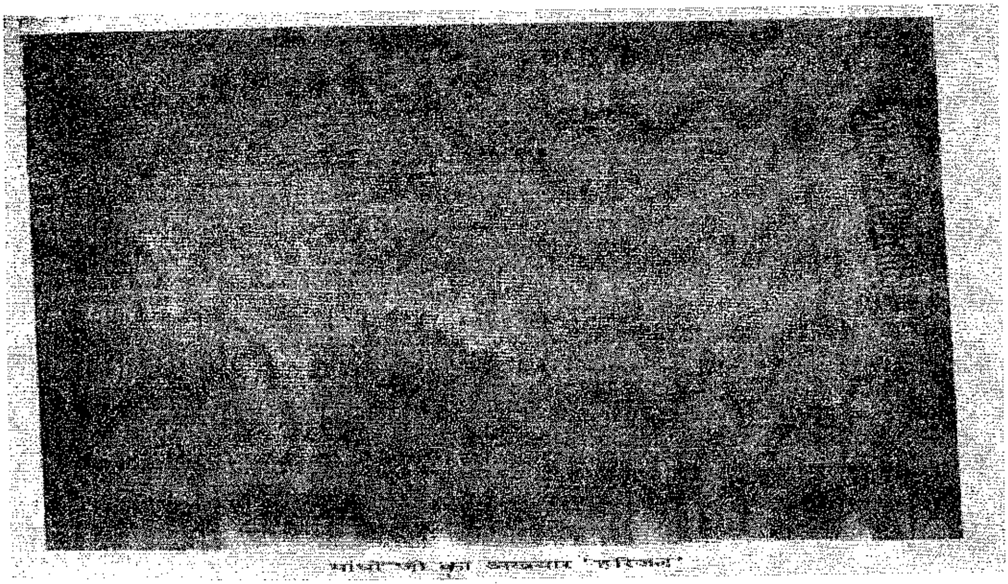

'युगांतर' के बाद 'बंदेमातरम' ने राष्ट्रीय आंदोलन में बड़ी भूमिका निभाई। इसकी स्थाना सुबोध चंद्र मलिक, देशबंधु चित्तरंजनदास और बिपिन चंद्र पाल ने 6 अगस्त, 1906 को अरबिंद घोष के संपादकत्व में की थी। अरबिंद घोष पर मुकदमा चला और उनके साथ ही 'संध्या' के संपादक ब्राहम्यबांधव उपाध्याय और 'युगांतर' के संपादक भूपेन्द्रनाथ दत्त पर भी। जब अरबिंद घोष को सजा नहीं हो सकी तो 'बंदेमातरम' के प्रेस मैनेजर को जेल भेज दिया गया। बाद में उन्होंने अंग्रेजी में 'कर्मयोगी' और बांग्ला में 'धर्म' नामक पत्र निकाले।

जहां तक हिंदी पत्रों का संबंध है, प्रारंभ में जो पत्र कलकत्ता से निकले, उन्हें सरकारी सहायता की अपेक्षा रहती थी, परन्तु इस दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण भूमिका भारतेंदु हरिश्चंद्र की थी, जिन्होंने 1868 में 'कविवचन सुधा' नामक एक कविता की पत्रिका निकाली परन्तु बाद में उसमें गद्य भी सम्मिलित होता रहा। पहले वह मासिक थी, 1875 में साप्ताहिक हो गई और अगले दस वर्ष तक हिंदी तथा अंग्रेजी में निकलती रही। उस पत्र की क्या नीति थी, उसका दिग्दर्शन उसके मुख्य पृष्ठ पर छपने वाले उस सिद्धांत वाक्य में मिलता है जो इस प्रकार था—

खल–गननसों सज्जन दुखी मति होंहि, हरपद मति रहै।

अपधर्म छूटे, स्वत्त्व निज भारत गहै, करदुख बहै।

बुध तजहिं मत्सर, नारिनर सम होंहि, जग आनन्द लहै।

तजि ग्रामकविता, सुकविजनकी अमृतबानी सब कहै।

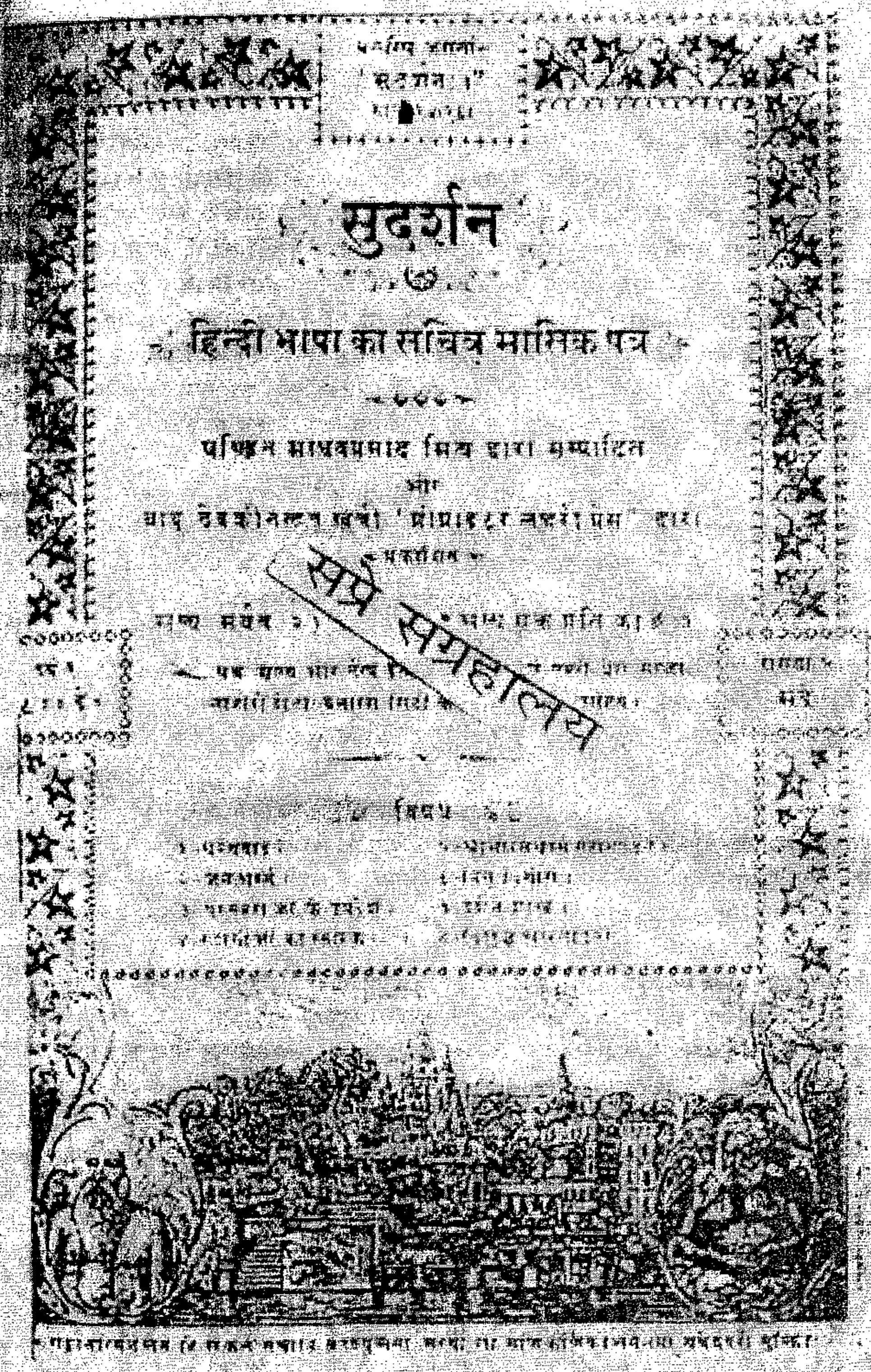

'सुदर्शन' जनवरी 1900 में काशी से प्रकाशित हुआ।

इससे पहले मर्सिया नामक एक लेख के कारण उस पत्र की सरकारी सहायता बंद कर दी गई और उनके दो अन्य पत्रों 'हरिश्चंद्र पत्रिका' और 'बालबोधनी' की जो सौ—सौ प्रतियां सरकार खरीदती थी, वे भी बंद कर दी गईं। भारतेंदु हरिश्चंद्र के अन्य मित्र थे कानपुर में पं. प्रताप नारायण मिश्र तथा इलाहाबाद में पंडित बालकृष्ण भट्ट का 'हिंदी प्रदीप' निकला जो 1910 में 'प्रेस एक्ट' के अंतर्गत बद कर दिया गया। 'ब्राह्मण' पत्र ने कानपुर में राष्ट्रीय पत्रों की परंपरा को जन्म दिया। लाहौर से मुकुंद राम के संपादकत्व में 'ज्ञान प्रदायिनी' पत्रिका निकली। 1885 में कालाकांकर से राजा रामपाल सिंह ने 'हिन्दोस्थान' पत्र निकाला, जिसके प्रथम संपादक मदनमोहन मालवीय थे। वे बालकृष्ण भट्ट की परंपरा के थे और उन्होंने न केवल 'हिन्दोस्थान' के द्वारा बल्कि बाद में अन्य पत्रों के द्वारा, जिनका हम जिक्र कर चुके हैं, राष्ट्रीय आंदोलन को बढ़ाया। इसी पत्र में बालमुकुंद गुप्त और अमृतलाल चक्रवर्ती जैसे संपादक काम करने आए, जिन्होंने दैनिक पत्रों के क्षेत्र में विशेषता राजनीतिक पत्रकारिता में बहुत अधिक नाम कमाया।

कलकत्ता का एक प्रसिद्ध हिंदी समाचार पत्र 'भारतमित्र' था, जो 17 मई, 1878 को पाक्षिक पत्र के रूप में निकला। बाद में यह दैनिक हो गया और इस पत्र ने राष्ट्रीय आंदोलन में बहुत बड़ा योगदान दिया। इस पत्र के प्रकाशक दुर्गाप्रसाद मिश्र और छोटूलाल मिश्र 'कश्मीरी' थे। पचास वर्ष तक इस पत्र ने राष्ट्रीयता का प्रचार किया। कश्मीर को हड़पने की ब्रिटिश सरकार की योजना का इसने भंडाफोड़ किया और इसके संपादक बालमुकुंद गुप्त ने लॉर्ड कर्जन के

अत्याचारों पर 'शिवशम्भू के चिट्ठे' नाम से जो टिप्पणियां कीं उनसे बहुत जन–जागृति फैली। इसी के प्रकाशक दुर्गाप्रसाद मिश्र ने 'उचित वक्ता' नामक पत्र भी निकाला। इसमें भारतेंदु हरिश्चंद्र भी लिखते थे। कलकत्ता से हिंदी के कई पत्र निकले, जिन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन के सिलसिले में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। एक 'स्वतंत्र' था जिसे अंबिका प्रसाद वाजपेयी ने चलाया था और हास्य का पत्र 'मतवाला' था। रामानंद चटर्जी ने अंग्रेजी में 'माडर्न रिव्यू' और बंगाल मं 'प्रवासी' पत्र प्रकाशित किए। हिंदी में बनारसीदास चतुर्वेदी के संपादकत्व में 'विशाल भारत' निकला, जिसने न केवल विदेशों में रहने वाले भारतीयों की दुर्गति की ओर ध्यान दिलाया बल्कि संसार की प्रगतिशील विचारधारा से हिंदी जगत को परिचित कराया।•

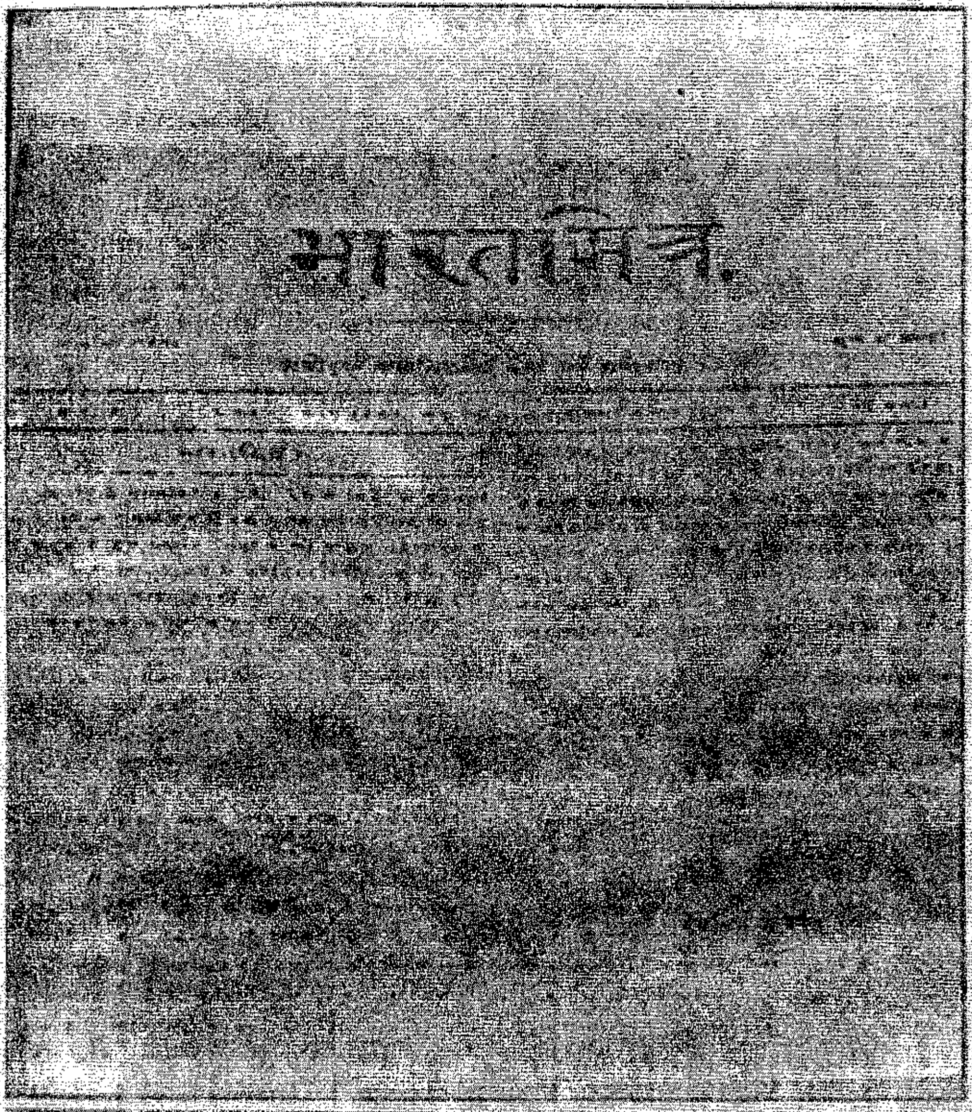

भारतमित्र

भारत मित्र : 17-5 1878

पंडित सुंदरलाल ने इलाहाबाद से 'कर्मयोगी' साप्ताहिक निकाला, जो उग्र विचारधारा का पत्र था और जिसमें अरबिंद घोष के 'कर्मयोगी' तथा लोकमान्य तिलक के 'केसरी' में प्रकाशित लेख भी छपते थे। बहुत शीघ्र ही इसकी प्रसार संख्या दस हजार प्रतियां हो

गई और इससे तंग आकर भारत सरकार ने 1908 और 1910 के दमनकारी कानूनों के अंतर्गत इसे बंद करा दिया। सुंदरलालजी की प्रेरणा और सहयोग से शिवनारायण भटनागर ने उर्दू का 'स्वराज्य' पत्र निकाला जिसके नौ संपादकों को राजद्रोह के अंतर्गत सजा हुई और एक के बाद एक जेल भेजे गए, कई को काले पानी की सजा हुई। बाद में 1910 के प्रेस कानूनों के अंतर्गत यह भी बंद हो गया। सुंदरलाल ने साप्ताहिक 'भविष्य' भी निकाला और वर्षों उसके संपादक रहे। उस पत्र के द्वारा उन्होंने राजनीतिक विचारधारा के प्रसार में बड़ा योगदान दिया।

स्वाधीनता प्रेमी हिंदी पत्रकारों में गणेश शंकर विद्यार्थी का नाम प्रमुख है। वे भी बालकृष्ण भट्ट के शिष्य थे। 1913 में उन्होंने कानपुर से साप्ताहिक 'प्रताप' का प्रकाशन किया, जो स्वाधीनता आंदोलन का एक प्रमुख प्रचारक बन गया। उनको जब सजा मिली, अपने अग्रलेखों या समाचारों के कारण। हिंदू–मुस्लिम एकता के प्रयास में वे 1931 में शहीद हो गए। 1920 में शिवप्रसाद गुप्त ने, जो कांग्रेस के कोषाध्यक्ष रहे, बाबूराव विष्णु पराड़कर के संपादकत्व में जो 'आज' निकाला, वह उत्तर प्रदेश में राष्ट्रीय समाचारों और विचारों का प्रबल समर्थक रहा। यद्यपि पराड़कर क्रांतिकारी दल के सदस्य होने के नाते कलकत्ता की रोडा कंपनी से कारतूसों की डकैती के मामले में जेल काट चुके थे, परन्तु उन्होंने कांग्रेस विचारधारा के प्रसार में बड़ा योगदान दिया। इसी प्रकार आगरा से पंडित कृष्णदत्त पालीवाल का 'सैनिक' पश्चिमी उत्तर प्रदेश का प्रबल राष्ट्रीय पत्र हो गया। इन पत्रों को, चाहे 'प्रताप' हो, 'आज' हो, 'अभ्युदय' या 'सैनिक' प्रत्येक को स्वाधीनता आंदोलन

में कई बार बंद होना पड़ा था और उसके संपादक और प्रकाशक कई बार जेल गए थे।

दिल्ली में प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता स्वामी श्रद्धानंद ने हिंदी में 'वीर अर्जुन' और उर्दू में 'तेज' का प्रकाशन शुरू किया। ये दोनों पत्र राष्ट्रीय आंदोलन के प्रबल पक्षधर रहे और स्वामी श्रद्धानंद के बलिदान के बाद पंडित इंद्र विद्या वाचस्पति और देशबंधु गुप्ता इन्हें चलाते रहे। वे स्वयं भी प्रमुख कांग्रेसी नेता रहे।

लाहौर में महाशय खुशहाल चंद सुरसंद ने 'मिलाप' और महाशय कृष्ण ने उर्दू पत्रों का प्रकाशन किया और ये पत्र भी राष्ट्रीय आंदोलन के प्रचारक रहे। पंजाब में राष्ट्रीय पत्रों की परंपरा काफी पुरानी रही है। 1881 में सरदार दयाल सिंह मजीठिया ने सुरेंद्रनाथ बनर्जी के परामर्श से शीतलाकांत चटर्जी के संपादकत्व में अंग्रेजी पत्र 'ट्रिब्यून' का प्रकाशन आरंभ किया। कुछ दिनों तक बिपिनचंद्र पाल ने भी इस पत्र में संपादन किया। वे 1911 में लाला लाजपत राय के 'पंजाबी' पत्र के संपादक बने और दिसंबर, 1945 तक रहे। पंजाब के राष्ट्रवादी पत्रकारों में एक अत्यंत गौरवशाली नाम सूफी अंबा प्रसाद का है, जिन्होंने पंजाब से 'हिन्दुस्थान', 'देशभक्त' और 'पेशवा' जैसे समाचार पत्रों में काम किया था। 1890 में उन्होंने अपने जन्म स्थान मुरादाबाद से एक उर्दू साप्ताहिक 'जाम्युल इलूम' नाम का पत्र निकाला था और 1887 में उन्हें एक लेख के कारण डेढ़ साल के लिए जेल भेज दिया गया था। उन्होंने फिर उसी प्रकार के विचार लिखने शुरू किए, जिसके लिए उन्हें छह वर्ष की जेल हुई और उनकी सारी संपत्ति जब्त कर ली गई। जेल से छूटे तो फिर लाहौर के 'हिन्दुस्थान' पत्र में

काम करने लगे। जब सरदार अजीत सिंह ने भारतमाता सोसायटी स्थापित की तो सूफी अंबा प्रसाद उनके साथ हो गए। बाद में जब सरदार अजीत सिंह को देशनिकाला हो गया तो वे नेपाल भाग गए। बाद में वे ईरान चले गए, वहां ब्रिटिश सेना ने गोलियों से उड़ा दिया।

बंबई से 'बाम्बे क्रॉनिकल' तो निकला ही, उसके ही एक संपादक बी.जी. हार्नीमैन ने 'बाम्बे क्रॉनिकल' को उग्र राष्ट्रीयता का एक प्रबल पत्र बना दिया। उन्होंने 'बाम्बे सेंटीनल' भी निकाला जलियांवाला हत्याकांड की रिपोर्ट छापने के कारण उनके संवाददाता गोवर्धन दास को फौजी अदालत से तीन साल की सजा हुई। होर्नीमैन को गिरफ्तार कर इंग्लैण्ड वापस भेज दिया गया। बंबई में ही अमृतलाल सेठ ने गुजराती 'जन्मभूमि' को जो काठियावाड़ा की रियासतों की प्रजा के पत्र के रूप में निकला था, राष्ट्रीय आंदोलन का प्रबल संवाहक बनाया। इसी प्रकार का दूसरा गुजराती पत्र सांवलदास गांधी का 'सांझ वर्तमान' था। उन्होंने 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में महत्वपूर्ण भाग लिया था और जूनागढ़ सरकार के विरूद्ध समानांतर सरकार बनाई थी, जिसने 1947 में जूनागढ़ के नवाब को भारत छोड़कर जाने के लिए विवश किया। सिंध में साधु टी.एल. वासवानी ने 'न्यू टाइम्स' निकाला और सिंधी पत्र 'हिन्दू' के तीन संपादक जयराम दास, दौलतराम, डा. चौइथराम गिडवानी और हीरानंद कर्मचंद गिरफ्तार किए गए, प्रेस बंद कर दिया गया और संपत्ति जब्त कर ली गई। 1932 के आंदोलन में संपादक और प्रबंध विभाग के सारे कर्मचारी गिरफ्तार कर लिये गए थे। 1942 में इसका प्रकाशन गांधाजी की अपील पर बंद कर दिया गया।

बिहार के राष्ट्रीय पत्रों में सच्चिदानंद सिन्हा द्वारा स्थापित 'सर्चलाइट' पत्र मुरली मनोहर सिन्हा के संपादकत्व में राष्ट्रीय आंदोलन का बड़ा पक्षधर रहा। बिहार के हिंदी पत्रों में देवव्रत शास्त्री द्वारा स्थापित 'नवशक्ति' और 'राष्ट्रवाणी' राष्ट्रीय आंदोलन के पत्र रहे। 'साप्ताहिक योगी' और 'हुंकार' ने भी जनजागरण में योगदान दिया। बंगाल में हेमंत प्रसाद घोष ने 1914 में 'बसुमती' की स्थापना की थी और मृणाल कांति घोष, प्रफुल्ल कुमार सरकार और सरेशचंद्र मजूमदार ने 'आनन्द बाजार पत्रिका', जो आज भी बांग्ला भाषा का सबसे बड़ा पत्र है, की स्थापना की। चित्तरंजन दास ने 1923 में 'फारवर्ड' पत्र निकाला था और इन सब पत्रों का राष्ट्रीय आंदोलन में बड़ा योगदान रहा। मद्रास में श्रीमती एनी बेसेंट ने 'मद्रास स्टेंडर्स' पत्र को खरीद कर उसका नाम 'न्यू इंडिया' कर दिया और 14 जलाई 1914 से अपने संपादकत्व में उसे निकालना प्रारंभ किया। यह पत्र भी दक्षिण भारत में होम रूल आंदोलन और कांग्रेस आंदोलन का प्रबल पक्षधर था। इस पत्र के विरुद्ध कार्यवाही शुरू की गई, पहले दो हजार रूपये की और फिर दस हजार रूपये की जमानत मांगी गई और उन्हें नजरबंद कर दिया गया।

केरल के 'मलयाली मनोरमा' को सरकार का कोपभाजन होना पड़ा और कालीकट का 'मातृभूमि' तो मलयालम भाषा में स्वाधीनता का प्रबल समर्थक था। इसी प्रकार का पत्र कर्नाटक में हुबली में स्थापित 'संयुक्त कर्नाटक' अथवा मद्रास की तेलुगु, आंध्र पत्रिका, 'स्वदेश मित्रम' में, असमिया पत्र समाज का 'आसाम ट्रिब्यून' और 'नूतन असमिया' थे।

राजकीय सेवा में जातीय एवं रंग—भेद की नीति का बोलबाला था। कार्नवालिस सबसे पहला अंग्रेज था जिसने समस्त राजकीय ऊंचे पदों को गोरों के लिए आरक्षित किया। उसने भारतीयों को जान—बूझकर सरकारी सेवाओं से वंचित किया। इस अन्यायपूर्ण सरकारी नीति के विरूद्ध हिंदी पत्रों ने डटकर प्रचार किया तथा भारतीय जनता को जगाया। 'काशी पत्रिका' ने कुछ प्रश्नोत्तर किए, 'क्या सिविल सेवा के लिए परीक्षा उत्तीर्ण करने के अतिरिक्त भी कोई गुण है , क्या हजारों भारतीय जो बुद्धि, न्याय, साहस और चरित्र आदि गुणों से परिपूर्ण होने पर भी इसके लिए कुंठित हो गए हैं, जैसे सूर्य के समक्ष मोमबत्ती धुंधली पड़ जाती है।' जब समाचार पंत्रों ने उपरोक्त ढंग से उद्बोधन किया तो सरकारी सेवाओं के संबंध में स्थान—स्थान पर सभाएं आयोजित की गईं। वायसराय एवं ब्रिटिश संसद को स्मृति पत्र पेश किए गए।

सरकारी सेवा के अतिरिक्त हिंदी पत्रकारिता ने लेजिस्लेटिव कौंसिल में भारतीय प्रतिनिधित्व की मांग भी सरकार के सामने रखी एवं इसके लिए जनता में नवजागरण उत्पन्न किया क्योंकि 1858 के पश्चात् बनने वाले संवैधानिक ढांचे में भारतीय उचित स्थान नहीं पा रहे थे, अतः समाचार पत्रों ने भारतीय प्रतिनिधित्व की मांग रखी, ताकि भारतीय अपने कष्टों से ब्रिटिश सरकार और उसके अधिकारियों को अवगत करा सकें। इस आंदोलन के फलस्वरूप वायसराय ने सर सैयद अहेमद खां और राजा शिवप्रसाद को लेजिस्लेटिव कौंसिल में मनोनीत किया। लेकिन ये दोनों व्यक्ति चूंकि सरकारी नीतियों के समर्थक थे, अतः भारतीयों के हित में कुछ कर पाने में वे असमर्थ

सिद्ध हुए। 'कविवचन सुधा' एवं 'काशी पत्रिका' ने राजा शिवप्रसाद और सर सैयद अहमद खां की डंके की चोट पर आलोचना की। चूंकि उन दोनों ने सन् 1878 में प्रेस कानून का समर्थन किया था जो कि भारतीय प्रेस का गला घोंट रहा था। पत्र–पत्रिकाओं के आंदोलन के कारण लाहौर और इलाहाबाद में सभाएं आयोजित की गईं, जिनमें भारतीयों के उचित प्रतिनिधित्व की मांग रखी गई। 'हिन्दोस्थान' ने लिखा कि संपूर्ण भारत प्रतिनिधित्व की मांग करता है तथा आशा करता है कि ब्रिटिश सरकार अवश्य ही मांग को मानकर भारतीयों को आभारी करेगी। लैंसडाउन ने उक्त आंदोलन के प्रवाह को परख कर सैक्रेट्री ऑफ स्टेट ऑफ इंडिया को सुझाव दिया कि 'लेजिस्लेटिव कौंसिल' के ढांचे में सुधार किया जाए। आंदोलन के फलस्वरूप इंडियन एक्ट 1892 पास किया गया जिसमें भारतीयों की संख्या 6 से बढ़ाकर 10 कर दी गई। उन्हें बजट पर बोलने का अधिकार भी दिया गया। इस पर कांग्रेस समर्थक 'हिन्दोस्थान' ने कहा, 'कांग्रेस के अथक प्रयासों के लिए वह धन्यवाद की पात्र है।'

इसके साथ ही हिंदी पत्र–पत्रिकाओं ने उत्तर प्रदेश और पंजाब में प्रांतीय 'लेजिस्लेटिव कौंसिल' की स्थापना के लिए मांग करनी आरंभ की, ताकि इन प्रांतों की समस्याओं को सरकार के कानों में डाला जाए। 'आर्यमित्र' ने कहा कि यदि बंबई, कलकत्ता और मद्रास सरीखी 'लेजिस्लेटिव कौंसिल' इन प्रांतों में स्थापित की जाए तो लेफ्टिनेंट–गवर्नर को प्रशासन कुशलतापूर्वक चलाने में सहयोग मिलेगा।

हिंदी पत्रकारिता की मांग का क्षेत्र यहीं तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने ब्रिटिश संसद में भारतीय प्रतिनिधित्व की मांग भी की और उसके लिए संघर्ष किया, ताकि ब्रिटिश संसद और इंग्लैण्ड की जनता को यह ज्ञान हो जाए कि भारत किन–किन समस्याओं से जूझ रहा है। परन्तु यह दुखद बात रही कि डिजरायली, जिसने वचन दिया था कि महारनी विक्टोरिया को भारतीय महारानी की उपाधि मिलने के पश्चात् भारत को उचित प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाएगा, अपना वचन पूरा करने में असफल रहा। 'हिन्दोस्थान' ने भारतीयों को आंदोलित किया कि अंग्रेज जो लंदन में बैठे भारत में राज कर रहे हैं, भारत की आर्थिक दुर्दशा को नहीं समझ सकते। अतः आप स्वयं आंदोलन करो और ब्रिटिश संसद में प्रवेश लो। समाचार पत्रों के निरंतर संघर्ष के पश्चात् दादाभाई नौरोजी को 1886 में सदस्यता मिली। पत्रकारिता के क्षेत्र में इस शुभ समाचार को सुनकर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। लेकिन यह मांग निरंतर चलती रही, ताकि अधिक लोगों को प्रतिनिधित्व मिले। 1904 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने प्रस्ताव संख्या नौ में से कम से कम दो भारतीय सदस्यों की मांग की।

समय–समय पर ब्रिटिश सरकार ने हिंदी पत्रकारिता के विकास एवं पवित्र कार्य को रोकने के लिए वैधानिक एवं प्रशासनिक कदम उठाए, जबकि भारतीय पत्र–पत्रिकाएं सरकार को वचन दे रहीं थीं कि उनके कार्य सरकार विरोधी नहीं है। फिर भी ब्रिटिश सरकार विभिन्न प्रकार के अभियोग लगा रही थी। 'हिन्दी प्रदीप' ने वर्नाकुलर प्रेस के समर्थन में कहा कि वर्नाकुलर प्रेस के संपादकों को सरकार अशिक्षित बताती है चूंकि वे किसी यूनिवर्सिटी के ग्रेजुएट नहीं हैं। वे

कोट—पतलून नहीं पहनते और वे अपनी परंपरा से लगाव रखते हैं। तब तो अंग्रेज अपनी जगह ठीक हैं। किन्तु यदि शिक्षा का अर्थ सच्चाई, शक्ति और योग्यता से है तो वर्नाकुलर प्रेस के संपादक किसी से कम नहीं हैं।

राजा राममोहन राय तथा स्वामी दयानंद ने जो कार्य आंदोलन के माध्यम से किया, वही अनुष्ठान भारतेंदुजी ने भाषा और साहित्य के माध्यम से किया था। बालमुकुंद गुप्त ने लिखा है 'कविवचन सुधा' जब पाक्षिक होकर राजनीति संबंधी और दूसरे लेख स्वाधीनता भाव से प्रकाशित करने लगी तो बड़ा आंदोलन मचा। भारतेंदुजी ऑनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किए गए तब भी वे निडर होकर लिखते रहे। सर्वसाधारण में उनके पत्र का आदर होने लगा। उस समय हिंदी भाषा के प्रेमी बहुत कम थे, तो भी 'हरिश्चंद्र' के ललित लेखों ने लोगों के जी में विशेष जगह कर ली थी। इसी प्रकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के अविस्मरणीय योगदान को भी हिंदी पत्रकारिता कभी नहीं भुला सकती। द्विवेदीजी बहुमुखी प्रतिभा वाले एक कुशल संपादक थे, जिन्होंने न केवल भाषा को संस्कारित किया, अपितु 'सरस्वती' नामक पत्रिका के माध्यम से संस्कारित लेखकों की एक 'टीम' का निर्माण किया। वे एक सिद्धांतपालक कुशल व्यक्ति थे जो मौलिक विचारों तथा सिद्धांतों की व्यावहारिक रूप से स्थापना का प्रयास करते थे। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ऐसे—वैसे संपादक नहीं थे, वे एक सिद्धांतवादी और सिद्धांतपालक संपादक थे। जो कुछ उनके लक्ष्य में थे, उनकी प्राप्ति अपनी निश्चित धारणा के अनुसार 'सरस्वती' के द्वारा करना उनका सिद्धांत था। अतः 'द्विवेदी काल 'की 'सरस्वती' में केवल

द्विवेदीजी की भाषा की प्रतिभा ही गठित नहीं है, उनके विचारों का भी उसमें प्रतिबिंब पड़ा है।

उसी काल में बाबूराव विष्णु पराड़कर ने अहिंदी भाषी होने के बावजूद हिंदी तथा हिंदी पत्रकारिता के बहुविध विकास में पूर्ण निष्ठा के साथ अपूर्व योगदान किया। हिंदी पत्रकारिता को एक साफ–सुथरे धरातल पर लाने में उनके प्रयत्नों को कभी नहीं बुलाया जा सकेगा।

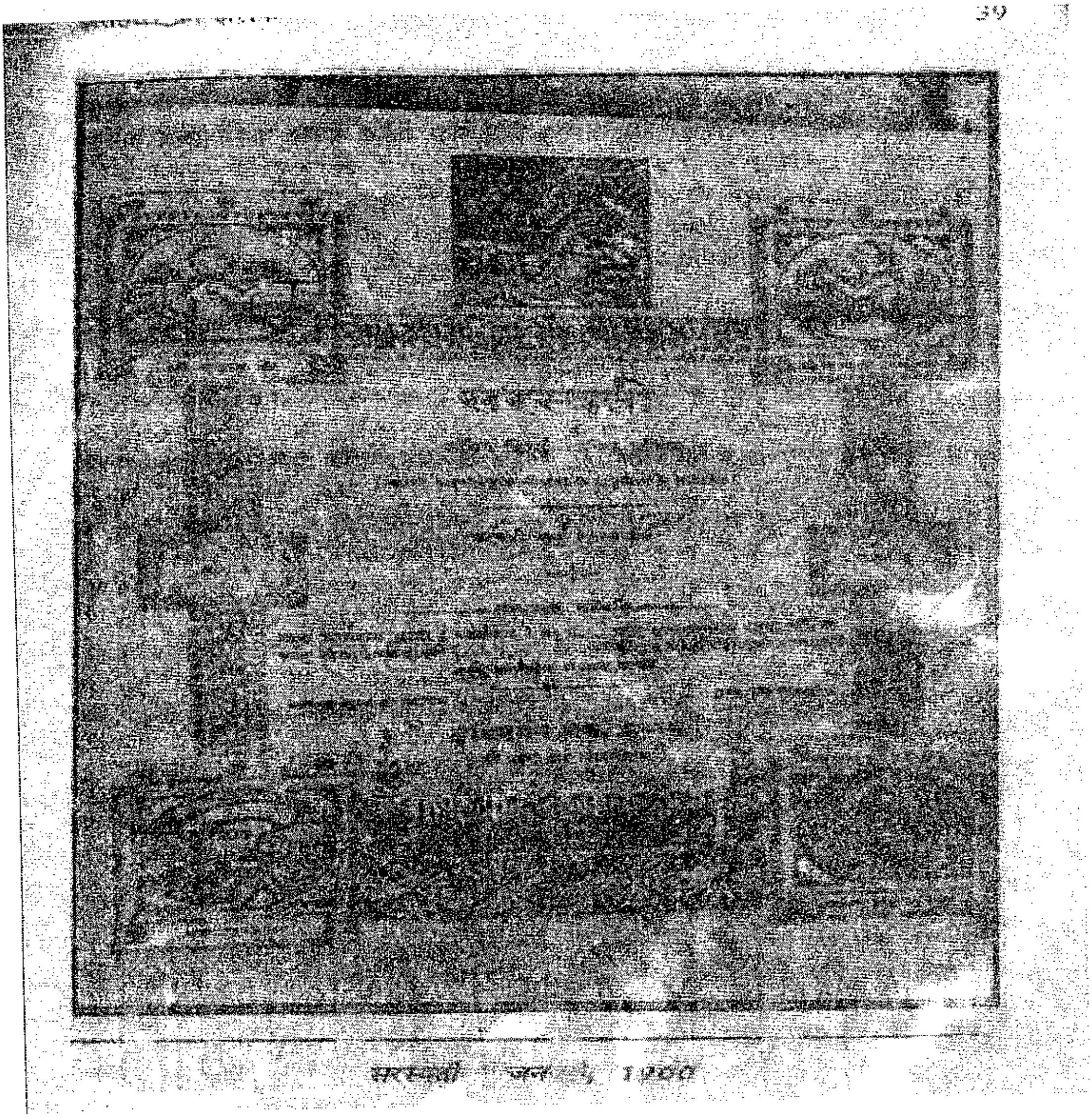

पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने जो अपने समय के सुप्रसिद्ध कवि एवं पत्रकार थे 'आजकल' में लिखा है – गणेशशंकर विद्यार्थी की यह विशेषता थी कि वे नवयुवकों को परखना, उन्हें आश्रय देना और अनुप्राणित करना खूब जानते थे। उनके जीवन को संवारना उन्हें

आता था। उनका चरित्र अद्भुत था। वे कभी किसी प्रलोभन के सामने नहीं डिगे।

'छत्तीसगढ़ मित्र' के संपादन के द्वारा माधवराव सप्रे ने मध्यप्रदेश के हिंदी पत्रकारिता जगत में नई चेतना की लहर लगाई।

हिंदी ग्रंथ माला द्वारा उन्होंने हिंदी की सेवा की। जब लोकमान्य तिलक ने पूना से 'केसनी' का प्रकाशन आरंभ किया तब उसके हिंदी संस्करण 'हिन्द केसरी' का संपादन सप्रे जी ने किया। 1919 में सप्रेजी ने जबलपुर से 'कर्मवीर' का प्रकाशन शुरू करबाया जिसे पं. माखनलाल चतुर्वेदी निकालते थे। माधवराव सप्रे ने हिंदी साहित्य और हिंदी पत्रकारिता के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया।

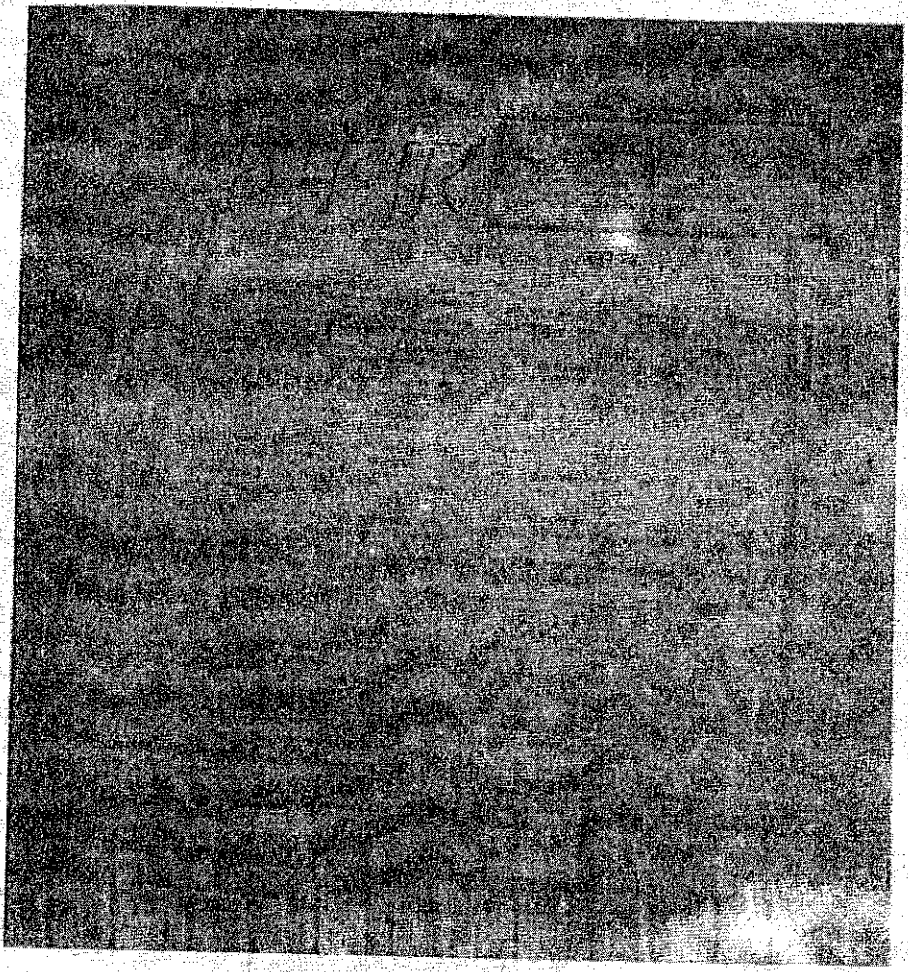

जबलपुर से प्रकाशित 'कर्मवीर' (सन् १९१९)

<u>पत्रकारिता के रूप अनेक :</u> हिंदी पत्रकारिता के जन्म के साथ ही साहित्यिक पत्रकारिता का विकास होने लगा। प्रारंभ में पत्रों की भाषा शिथिल थी, उसमें स्थानीय पुट भी रहता था। वर्तनी में एकरूपता नहीं थी। व्याकरण संबंधी भूलें भी होती थीं। हिंदी पत्र–पत्रिकाओं के प्रारंभिक संपादकों, बाल मुकुंद गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, दुर्गाप्रसाद

मिश्र, मदनमोहन मालवीय, बाबूराव विष्णु पराड़कर, अंबिका प्रसाद वाजपेयी और लक्ष्मीनारायण गर्दे ने इन कमियों को दूर करने और हिंदी गद्य को परिमार्जित करने में उल्लेखनीय योगदान दिया।

इस संबंध में 1852 में आगरा से 'बुद्धिप्रकाश' का प्रकाशन महत्वपूर्ण है। इसमें सभी विषयों के लेख रहते थे। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'कविवचन सुधा' 'हरिश्चंद्र मैगजीन' और 'हरिश्चंद्र चन्द्रिका' का प्रकाशन करके साहित्यिक पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए उपयुक्त आधार तैयार कर दिया था। 'सरस्वती' का प्रकाशन हिंदी साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में युगांतरकारी घटना थी। इसका प्रकाशन 1900 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने शुरू किया। बाद में इसके प्रकाशन का भार इंडियन नेशनल प्रेस, इलाहाबाद को सौंप दिया गया। 1903 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' का संपादन भार स्वीकार किया। द्विवेदीजी ने अपने जीवनकाल में 'सरस्वती' को हिंदी की अग्रणी साहित्यिक पत्रिका बना दिया।

द्विवेदी ने साहित्यिक पत्रकारिता के लिए कुछ नियम बनाए। वह समय की पाबंदी अथवा पत्रिका के नियमित समय पर प्रकाशन को अत्यधिक महत्व देते थे। वह पत्रिका के संचालकों को विश्वास में लेना, स्वतंत्रता एवं निष्पक्षता से विचार प्रकट करना, लेखकों को कुछ पारिश्रमिक देना, पाठकों को नई जानकारी और नई रचनाएं प्रदान करना भी आवश्यक समझते थे। यह पाठकों के हानि–लाभ, उनकी रूचि को समुचित महत्व देते थे। द्विवेदीजी ने अपने मार्गदर्शन में हिंदी कवियों, लेखकों और समीक्षकों की एक पूरी पीढ़ी तैयार की। वह सरल सुबोध भाषा के पक्षधर थे।

राजा राममोहन राय : राजा राममोहन राय भारत में पत्रकारिता के जनक थे। वे प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने पत्रकारिता के दोहरे उद्देश्यों को समझने और उन्हें बढ़ावा देने का कार्य किया। उन्होंने एक बांग्ला साप्ताहिक 'द बांग्ला' सहित अपने सभी समाचार पत्रों का उपयोग सती प्रथा के विरूद्ध अभियान को प्रचारित करने एवं लोकप्रिय बनाने में किया। सती प्रथा उन दिनों व्यापक रूप से विशेषकर बंगाल में काफी प्रचलित थी। इस प्रथा के अंतर्गत विधवाओं को, चाहे उनकी आयु कुछ भी रही हो, उनके मृत पतियों की चिताओं पर जिंदा जला दिया जांता था। कहा जाता है कि उनकी भाभी को भी पति की मृत्यु के पश्चात् ऐसी ही पाशविकता का सामना करना पड़ा था। उनका मानना था कि उसे वास्तव में जलती चिता में धकेला गया था। इसी ने उन्हें कुछ करने के लिए झकझोरा। शायद सती प्रथा पर प्रतिबंध ही ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा किया गया सामाजिक सुधार का एकमात्र कार्य था। लॉर्ड विलियम बेंटिक ने 1829 के 11वें अधिनियम के जरिए सती प्रथा को समाप्त कर दिया था।

वे जानते थे कि भले ही लोगों में कंपनी का भय व्याप्त था, मगर केवल कानून से ही इस बुराई का अंत संभव नहीं था। कानून पर अमल परिस्थिति की आवश्यकता के हिसाब से अपर्याप्त ही रहना था। भारत का राज ब्रिटिश क्राउन के हाथों में जाने के उपरांत भी सती प्रथा और बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियों का प्रचलन जारी रहा। कानून—व्यवस्था के पूरी तरह प्रभावी रहने के बावजूद यह स्थिति थी। उन दिनों आधिकारिक आदेशों पर सख्ती से अमल होना आम बात थी और बंगाल, बंबई और मद्रास के शिक्षित एवं मध्यवर्गीय

समाज पर यह बात विशेष रूप से लागू होती थी। राय ने अपने द्वारा संस्थापित एवं प्रकाशित समाचार पत्रों को सती प्रथा पर प्रतिबंध लागू कराने में सहायक बनाने का मन बनाया। साथ ही, उन्हें सेरामपुर के ईसाई मिशनरियों के साथ भी कई मामलों में अपना हिसाब चुकता करना था। ये मिशनरी ब्रिटिश लोगों की तरह ईसाई धर्म के अनुयायी होने के कारण ब्रिटिश शासकों के नातेदारों की स्थिति में होने का दंभ पाले हुए थे। जिला स्तर पर तो, विशेषकर प्रशासक लोगों में, जिनमें से ज्यादातर एंग्लो–इंडियन थे, मिशनरियों के पक्ष में एक वैयक्तिक प्रतिबद्धता का भाव था। इस प्रकार वे मिशनरियों के साथ अपने विवादों के चलते खुद को प्रायः ब्रिटिश शासकों के विरूद्ध खड़ा पाते थे। उतनी ही मजेदार बात यह थी कि राय ने उस दौर के ब्रिटिश प्रशासकों के साथ अपनी समझ को साझा करने का प्रयास किया। यह उनकी महानता को ही इंगित करता है।

प्रारंभिक दौर के समाचार पत्रों का प्रभाव संसाधनों और प्रतिभा की सीमितता के चलते कलकत्ता, बंबई, मद्रास, लाहौर और इलाहाबाद जैसे शहरी केन्द्रों तक ही सीमित था। 'द बंगाल गज़ट' का जन्म और चार साल तक प्रकाशन राजा राममोहन राय की प्रेरणा और सहारे से ही हुआ। कानूनन इसके संपादक एक स्कूल अध्यापक गंगाधर भट्टाचार्य थे, जो उनके बहुत निकट थे। हैंड कंपोजिंग और ट्रेडल प्रिंटिंग के उस जमाने में दैनिक समाचार पत्र का प्रकाशन एक अध्यापक के बूते के बाहर की बात थी। दूसरे, संरक्षकों और अंशदाताओं (ग्राहकों) के रूप में समर्थक जुटाने के लिए लोकप्रियता और विशाल कद की जरूरत थी, जो केवल उनके के पास था,

जबकि भट्टाचार्य इस मामले में फिसड्डी ही रहते । (उन सुखद दिनों में विज्ञापनदाता नहीं होते थे)। सबसे महत्त्वपूर्ण बात है कि उन दिनों में जब ईस्ट इंडिया कंपनी पत्रकारिता को राजद्रोह के रूप में देखती थी, एक दैनिक अखबार, चाहे वह गैर–राजनीतिक क्यों न हो, का प्रकाशन उन जैसे व्यक्ति के द्वारा ही संभव हो सकता था, उनके काम कम ख्यात सहयोगी द्वारा नहीं।

एस. नटराजन ने 'ए हिस्ट्री ऑफ दि प्रेस इन इंडिया' में उनके द्वारा स्वयं को 'द बंगाल गज़ट' का संपादक घोषित न करने का एक वास्तविक प्रतीत होने वाला कारण बताया है। कलकत्ता के हिंदू कॉलेज में उनके प्रायोजन का समाज के रूढ़िवादी वर्ग ने भारी विरोध किया था, जिसकी वजह उनके द्वारा अंग्रेजी की अध्ययन के पैरवी और सती प्रथा पर रोक जैसे समाज सुधारों को बढ़ावा देने के उनके प्रयास थे। धार्मिक उत्सवों एवं अनुष्ठानों के अनुसार व्यवहार न करने और सती प्रथा के अटल विरोध के कारण उन्होंने अपनी मां को भी विरोधी बना लिया था, जिन्होंने उनका परित्याग करने में जरा भी संकोच नहीं किया। वे ऊंची उड़ान भरने योग्य समाचार पत्र के उद्यम की शैशव अवस्था में ही संकट में नहीं डालना चाहते थे। फेडरल कोर्ट के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश सर एडवर्ड हाइर्डे–ईस्ट द्वारा इंग्लैण्ड में नियुक्त एक न्यायाधीश जे. हेरिंग्टन को लिखा एक पत्र दर्शाता है कि कुछ लोग उनके प्रति व्यक्तिगत स्तर पर नापसंदी का कैसा भाव रखते थे। यह यूं है–

यहां हाल ही में एक रोचक दृश्य सामने आया जो दर्शाता है कि किस तरह चीजें एक ही मौसम में बदल जाती हैं। मई की शुरूआत में

कलकत्ता के एक ब्राहम्ण (इशारा राजा की ओर है) जिसे मैं जानता हूँ तथा जो अपनी विद्वता और बंगाल के प्रमुख लोगों के बीच सक्रियता के कारण भली--भांति जाना जाता है और अग्रणी हिन्दुओं से जिसकी काफी घनिष्ठता है, ने मुझे सूचित किया कि बहुत--से अग्रणी हिंदू अपने बच्चों की शिक्षा के लिए एक ऐसा संस्थान बनाना चाहते हैं जहां उसी उदार ढंग से शिक्षा प्रदान की जा सके, जिस तरह यूरोप में प्रदान की जाती है और इच्छा जताई कि मेरी स्वीकृति के साथ एक बैठक का आयोजना इस दिशा में मेरी ओर से सहायता होगी। मेरे घर पर 14 मई, 1816 को योजनानुसार एक बैठक आयोजित की गई, जिसमें 50 से अधिक सम्मानित हिंदुओं ने भाग लिया, जिनमें ख्याति प्राप्त और धनवान लोगों के अलावा प्रमुख 'पंडित' भी शामिल थे। बैठक में लगभग 50 हजार रूपये दान में देने का वादा भी किया गया। मैंने पाया कि उनमें से उच्च जाति के एक ब्राहम्ण और एक प्रभावशाली एवं धनी व्यक्ति ने अधिकांश समय राममोहन राय के खिलाफ मोर्चा खोले रखा।

रूढ़िवादी हिंदुओं के बीच उनकी अलोकप्रियता की छाय हिंदू कॉलेज पर न पड़े, यही सोचकर राजा ने एक प्रायोजक के तौर पर खुद को कॉलेज प्रोजेक्ट से अलग कर लिया था। तो भी, वो अनाम रहकर उसे अपना पूरा समर्थन देते रहे। हो सकता है उन्होंने अपने नए आविष्कार 'द बंगाल गजट' को अपने दकियानूसी विरोधियों से इसी तरह बचाना चाहा हो। अगर यह उनके मुख पत्र के रूप में सामने आया होता तो इसकी पहुंच और महत्त्व प्रारंभिक अवस्था में ही प्रभावित हो सकती थी तथा यह बात राजा के अखबार प्रकाशित करने

के उद्देश्य के विपरीत जाती। इसके अलावा श्री भट्टाचार्जी आत्मीय सभा या मित्र समाज के एक सक्रिय सदस्य थे। आत्मीय सभा के सदस्य ही राममोहन राय के समर्थकों के अंतरंग घेरे का निर्माण करते थे। समाज सुधार के मुद्दे पर राजा के विचारों से उनके विचार भी पूरी तरह मेल खाते थे। संयोग से आत्मीय सभा का गठन 1815 में ईश्वरपरक परिचर्चाओं और चिंतन–मनन के लिए किया गया था।

समाज सुधार के लिये राय का मार्ग शिक्षा से होकर गुजरता था। सामाजिक परिवर्तन का विरोध करने के लिए रूढ़िवादी तत्व जिन धर्मग्रंथों को आधार बनाकर उद्धृत करते थे, वे सब संस्कृत में थे जिन्हें अधिकतर लोग, जिनमें शिक्षित भी शामिल थे, समझ नहीं पाते थे। अतः उन्होंने इन धर्मग्रंथों का बांग्ला में अनुबाद किया और उनका समय–समय पर प्रकाशन किया। स्वीकार करना होगा कि उस दौर में प्रकाशित शब्द यानी पुस्तकों की पहुंच आज के मुकाबले कहीं ज्यादा सीमित थी, मगर समाज का ऊपरी तबका शिक्षित था और समाज सुधार के केन्द्र में वही था। दूसरे, विषय–वस्तु के बारे में मौखिक शब्द और मूल पाठ का जोर दूर तक जा रहे थे। ये महिलाओं तक भी पहुंच रहे थे। इस प्रकार, इसने विकसित होते मध्य वर्ग को प्रभावित किया। समाज के जिस ऊपरी वर्ग के लिए ये प्रकाशन थे, वो भी मुख्यतः अंग्रेजी में ही शिक्षित था और इस प्रकार उसे सुगमता से समझाया जा सकता था। राजा ने इस वर्ग के सदस्यों को अनूदित धर्मग्रंथों और संस्कृत के मूल पाठ को उनकी पहुंच के दायरे में लाते हुए अपना लक्ष्य बनाया। नियमित रूप से प्रकाशित पत्रिका में इनकी उपलब्धता सती प्रथा जैसी सामाजिक बुराइयों की उत्पत्ति और

धर्मग्रंथों में उनको प्राप्त स्वीकृति या अस्वीकृति के बारे में चेतना फैलाने की आम कोशिश का हिस्सा था। पत्रकारिता के अज्ञात साम्राज्य में घुसपैठ के पीछे उनका एक और उद्देश्य था। उन्होंने इस बात का ठीक ही अहसास किया था कि प्रशासकों, विशेषकर उच्च स्तर पर बैठे प्रशासकों को, जो भिन्न संस्कृति के थे और प्रायः भारतवासियों के प्रति शत्रुता का ही भाव रखते थे, आम लोगों की समस्याओं और आकांक्षाओं से अवगत कराने की आवश्यकता थी। उनकी सोच के अनुसार सरकार को जनता के निकट लाने के लिए यह आवश्यक था। उनकी दृष्टि में ब्रिटेन में स्थापित शासन व्यवस्था आदर्श थी। संयोगवश, अनेक समकालीन लोगों और मित्रों की तरह, जिनमें दादाभाई नौरोजी एवं सुरेंद्रनाथ बनर्जी प्रमुख थे, राय भी ब्रिटेन की उदार राज–व्यवस्था की बेझिझक प्रशंसा करते थे तथा उन्होंने क्राउन को इस बात के लिए तैयार करने का प्रयास किया कि उस राज–व्यवस्था को यथासंभव भारत में भी लागू किया जाए और प्रशासन में भारतीयों की भागीदारी अधिक से अधिक हो। उनकी अवधारणा में समाचार पत्र को शासकों को फीडबैक देने का माध्यम बनाने की सोच भी शामिल थी। यद्यपि प्राचीनकाल में राजा अपने कार्यों पर लोगों की प्रतिक्रिया जानने के लिए गुप्त रूप से अपने राज्य में घूमा करते थे। तुलसीदास की रामचरितमानस में वर्णन है कि किस प्रकार राम यह जानने के लिए कि लोग उनके शासन के बारे में क्या राय रखते हैं, रात में अयोध्या में घूमा करते थे।

इस संदर्भ में उन परिस्थितयों पर दृष्टिपात करना भी आवश्यक है जिनमें राय ने एक समाचार पत्र आरंभ करने का नैतिक साहस और

संकल्प दर्शाया। मार्कस ऑफ वेलेजली द्वारा जारी अधिनियम के प्रावधान के अंतर्गत किसी भी समाचार पत्र का प्रकाशन तब तक संभव नहीं था जब तक कि सरकार के सचिव द्वारा उसकी पूर्व जांच न कर ली गई हो। जिसका अर्थ था प्री–सेंसरशिप। क्योंकि तब तक प्रकाशित कुछ समाचार पत्रों के प्रकाशक और संपादक सिर्फ यूरोपीय ही होते थे। इस अधिनियम की अवहेलना की सजा 'यूरोप में निर्वासन' निर्धारित की गई थी। 1814 में मार्कस ऑफ हेस्टिंग्स द्वारा वेलेजली की जगह लेने के बाद हालात में थोड़ा सुधार हुआ। उन्होंने प्रकाशनों की संख्या में वृद्धि के साथ प्री–सेंसरशिप लागू करने में आने वाली व्यावहारिक कठिनाईयों को समझा। उधर, यूरोप में निर्वासन की सजा का दंश भी अपना असर खो चुका था, क्योंकि यूरोप में पैदा हुए भारतीय और अन्य भारतीयों ने समाचारपत्रों का प्रकाशन शुरू कर दिया था। एक अंग्रेज जेम्स सिल्क बकिंघम, जिन्हें भारत में पहले अंग्रेजी समाचार पत्र के प्रकाशक के रूप में जाना जाता था, ने 1816 में 'केलकटा जर्नल ऑफ पॉलिटिकल, कमर्शियल और लिटरेरी गज़ट' नामक ब्रॉडशीट अखबार का प्रकाशन शुरू किया। वे खुले रूप में यह कहने से नहीं चूके कि संपादक को प्रशासकों को उनके कर्तव्यों के बारे में झिड़कने और उनकी त्रुटियों पर आक्रामक रूप से चेताने एवं असहमति वाले तथ्यों पर ध्यान आकृष्ट करने का पावन अधिकार है। ईस्ट इंडिया कंपनी के एक पूर्व कर्मचारी के रूप में उनका लहजा अपने पूर्व वरिष्ठ अफसरों और नियोक्ताओं के साथ हिसाब चुकता करने वाला था। इस प्रक्रिया में उन्हें भारत से निर्वासन के खतरे का भी सामना करना पड़ा। परन्तु वे भी राय की तरह नौकरशाही की सेंसरशिप से घृणा करते थे और उन्होंने अपने समान उद्देश्य की पूर्ति

के लिए मिलकर काम किया। अपने संकीर्ण उद्देश्य और आडंबरपूर्ण दबाव के बावजूद सिल्क का प्रयास भी पथभंजक का था। राय का दूसरा पत्रकारीय उद्यम बांग्ला साप्ताहिक 'संवाद कौमिदी' था। यह बंगाल में सामाजिक सुधार का एक प्रकाश–स्तंभ था। इससे हेस्टिंग्स की प्रेस पर प्रतिबंधों में छूट और हिंदुओं में समाज सुधार को प्रोत्साहित करने की उनकी नई नीति का स्वागत करने के उद्देश्य की पूर्ति भी हुई ।

बाद में और लगभग एक ही समय में राय ने उन लोगों के लिए जो बांग्ला और अंग्रेजी नहीं जानते थे, एक फारसी पत्रिका 'मिरात–उल– अख्तर' तथा सेरामपुर मिशनरियों के प्रचार की काट के लिए अंग्रेजी पत्रिका 'ब्राम्हानिकल मैगजीन' का प्रकाशन आरंभ किया। अपने इन सभी पत्रकारीय प्रयासों में राय इसी इच्छा से प्रेरित थे कि सुधारों की राह सुगम बनाने के लिए सामाजिक समस्याओं पर विचार–विमर्श होना चाहिये।

इस प्रकार भारतीय पत्रकारिता के जनक 'प्रथम आधुनिक भारतीय' थे, जिन्होंने रचनात्मक प्रयासों की महत्ता के साथ हमारे राष्ट्रवाद में प्राण फूंके तथा गुरूदेव टैगोर के संकलन की मदद से आत्म–अनुभूति के श्रमसाध्य कार्य की शुरूआत की। वे अंधविश्वासों और धर्मांधता से ग्रस्त लोगों में लोकतांत्रिक भावना जागृत करने में भी अग्रणी रहे। उन्होंने मुक्त चिंतन और जिज्ञासा की भावना की वकालत करते हुए इस व्यवहार में उतारते हुए महिलाओं जैसे शोषित वर्गों के उत्थान की अगुवाई कर जनता में लोकतांत्रिक भावना की नींव रखी। उन्होंने धर्मांधता को खारिज किया और सहनशीलता की भावना को

प्रोत्साहित किया। संस्कृत के मूल पाठों का बांग्ला में अनुवाद और प्रकाशित कर उन्होंने कुछ गिने–चुने विद्वानों और बाकी समुदाय के बीच की खाई को पाटा। वे एक जन्मजात संचारक थे। उन पर अपने विचारों को दूर–दूर तक फैलाने की धुन सवार थी। इस प्रक्रिया में उन्होंने देश के दूसरे भागों के समाज सुधारकों, जिनमें बंबई (मुम्बई) के दादाभाई नौरोजी एवं महादेव गोविंद राणाडे आदि प्रमुख थे, के साथ न केवल बौद्धिक संपर्क स्थापित किए, बल्कि सामाजिक बुराइयों के खिलाफ जिहाद भी चलाया। आंध्रप्रदेश में, जो उन दिनों मद्रास प्रेसिडेंसी का भाग था, राजा के विचारों और कार्यों ने बाल विवाह के निषेध हेतु आंदोलन को प्रेरित किया तथा विधवा पुनर्विवाह को लोकप्रिय बनाया। वे इस आंदोलन के नेताओं, जिनमें कांडुकुरी वीरइसालिंगम प्रमुख थे, क लिए आदर्श थे।

राय के अंग्रेजी और फारसी में प्रकाशन इस प्रयास में वाहक थे। सती प्रथा के विरूद्ध अभियान, जाति व्यवस्था एवं छुआछूत को खारिज करने तथा उपनिषदों के सहारे एकेश्वरवाद की घोर पैरवी ने उन्हें एक अद्वितीय संचारक बना दिया और अंतिम रूप से वे प्रेस की स्वतंत्रता के अधिक चैंपियन रहे।

शुरूआती दौर के अधिसंख्य समाज सुधारकों के अखबारों के संस्थापक एवं संपादक होने के नाते उनकी राजनीतिक और पत्रकारीय गतिविधियां साथ–साथ चलती थीं। राय के उत्तराधिकारियों ने, जिनमें नौरोजी और राणाडे प्रमुख थे, देश में संगठित नागरिक समाज का आधार तैयार करने के लिए उनकी कार्यसूची को और व्यापक बनाया।

मुख्यतः हिंदू समाज के सुधार के अलावा उन्होंने नागरिक समाज के संस्थानीकरण का आधार बनाने की शुरूआत भी की।

पत्रकारों में ऊंचे कद वाले सी.वाई चिंतामणि ने कहा कि भारत में आधुनिक सार्वजनिक जीवन की बुनियाद अप्रतिमा राय की अगुवाई में पहले बंगाल में पड़ी। उनके द्वारा स्थापित ब्रम्ह समाज सामाजिक सुधारों का मुख्य औजार बना। ठीक उसी प्रकार उनके द्वारा स्थापित समाचार पत्रों और उनके लेखों ने इस काम को बढ़ावा दिया। उन्होंने इस प्रकार बांग्ला साहित्य के विकास का काम प्रारंभ किया, जिसने देश में अंग्रेजी शिक्षा लागू कराने के आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। वे उन दिनों अप्रतिनिधिक सरकार के राजनैतिक सुधारों की आवश्यकता को लेकर भी समान रूप से सचेत थे। उन्होंने सरकार के न्यायिक एवं कार्यकारी कामों के विभाजन की वकालत की, जिसने बाद में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को भी प्रेरित किया। वे संसदीय समिति के सामने गवाही देने के लिए इंग्लैंड जाने वाले पहले भारतीय थे।

जहां राय एक ओर समाज सुधारक, विशेषकर सती प्रथा के खिलाफ अभियान और मूर्ति पूजा का विरोध करके तथा साथ ही देश में पाश्चात्य शिक्षा को लागू करने का समर्थन करके हिंदू रूढ़िवादियों का कोपभाजन बन रहे थे, वहीं वे सेरामपुर मिशनरियों के सतत प्रहारों का भी लक्ष्य बने हुए थे। संक्षेप में कहें तो 1821 में प्रारंभ राय के अखबार 'संवाद कौमिदी' में हिंदू समाज में व्याप्त बुराईयों के विरूद्ध बड़े सुव्यवस्थित ढंग से और किसी भावना से प्रभावित हुए बिना लिखा गया था। इस सूची में अंधविश्वासों एवं वर्जित कर्मों का वो पूरा

सम्तक शामिल था, जो समाज को प्रगति की राह पर जाने से रोक रहा था। राय द्वारा सूचीबद्ध ये बुराइयां थीं— विधवा दहन (सती), मानव बलि, जाति व्यवस्था, विधवाओं के पुनर्विवाह का विरोध और पुरूषों में बहु विवाह का चलन, इन्हीं दोनों से सती प्रथा जन्म लेती थी, जाति व्यवस्था की कठोरता, छुआछूत, अफीम की लत, महिलाओं की सामाजिक हैसियत को कम करना और समुद्र पार जाने वालों का बहिष्कार हिंदू धर्म और दर्शन के उद्गम में जाकर और विशेषकर उपनिषदों के सहारे उन्होंने यह दर्शाया कि इनमें से किसी भी बुराई को धर्मग्रंथों से स्वीकृति प्राप्त नहीं है।

चूंकि राय के तर्क हिंदू धर्म पर ईसाई मिशनरियों के प्रहार से मेल खाते थे, अतः इससे दकियानूसी हिंदुओं की झुंझलाहट और बढ़ी। इन प्रहारों का स्वाभाविक रूप से ही राय की ओर से भी जवाब आया, जिसमें उन्होंने अपने चरित्रगत धैर्य के साथ ब्रम्ह समाज और अपने समाचार पत्रों के बारे में स्पष्टीकरण दिया। उन्होंने बताया कि उनका प्रयास हिंदू समाज को कमजोर करना और इसके सदस्यों को ईसाइयत जैसे दूसरे धर्मो में जाने के लिए अपना धर्म छोड़ने के लिए उद्यत करना नहीं है, बल्कि हिंदू समुदाय को बुराइयों से मुक्ति दिलाकर इसे मजबूत बनाना है। उन्होंने हिंदुओं को चापलूसी के जरिए ईसाई बनाने के मिशनरियों के प्रयासों की निंदा की। उनकी लेखनी से मिशनरियों के अखबार ने जब आग बबूला होकर उन पर सीधे हमला बोल दिया, तो एक युवा बेपटिस्ट मिशनरी विलियम एडम, उनकी 'एक ईश्वर' की धारणा से प्रभावित हो उनके पक्ष में खड़ा हो गया। इसके फलस्वरूप त्रिमूर्ति से इतर एकेश्वरवाद के सिद्धांत का

खूब प्रसार हुआ। एडम ने 1821 में मिशनरियों को धर्मशास्त्रीय बहस में उलझाने के लिए एक एकेश्वरवादी समिति गठित कर दी। जिस प्रकार ब्रम्ह समाज और राय हिंदुओं में व्याप्त सामाजिक बुराइयों के खिलाफ लड़े, उसी प्रकार एडम और उनके सहकर्मियों ने ईसाईयों में व्याप्त अंधविश्वासों और अन्य कुरीतियों के खिलाफ निशाना साधा। एकेश्वरवादियों और रूढ़िवादी चर्च के बीच इस गरम विवाद ने ब्रिटिश उपयोगितावादियों का ध्यान आकृष्ट किया और उन्हें राय का प्रशंसक बना दिया। लॉर्ड बेंटिक सती प्रथा पर प्रतिबंध लगाने के लिए इसी से प्रभावित हुए थे।

जेरेमी बेंथम के नेतृत्व में ब्रिटिश उपयोगितावादी, महान इतिहासकार जॉन स्टुआर्ट मिल और डेमोक्रेटिक सोशलिस्ट पार्टी के वरिष्ठ नेता विलियम रोस्को एवं रोबर्ट ओवेन तथा दास प्रथा की समाप्ति के अग्रणी पैरोकार धार्मिक कट्टरता और रूढ़िवाद के खिलाफ जंग में राय के साथ थे। जब राय का 1833 में वेल्स के ब्रिस्टल में निधन हो गया तो उन्होंने भारत के समाज सुधारकों एवं पत्रकारों के बीच राजकुमार सरीखे इस व्यक्ति के लिए ऐसे अंतिम संस्कार का प्रबंध किया, जैसा किसी राजा के लिए किया जाता है। भावपूर्ण जेरेमी बेंथम ने उन्हें मानव जाति की सेवा में जुटे एक अतिप्रिय सहयोगी की संज्ञा दी, वहीं मैक्स मुलर ने उन्हें तुलनात्मक धर्मशास्त्र का एक जनक बताया।

युगल किशोर शुक्ल

युगल किशोर शुक्ल हिन्दी के 'आदिसम्पादक' थे और उनके द्वारा सम्पादित 'उदन्त मार्तण्ड' हिन्दी का पहला साप्ताहिक पत्र था। हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में शुक्लजी और उनके 'उदन्त मार्तण्ड' का नाम अपना सर्वथा विशिष्ट महत्व रखता है। इसके प्रकाशन के समय श्याम सुन्दर सेन द्वारा सम्पादित प्रसिद्ध त्रैभाषिक दैनिक पत्र 'समाचार सुधा वर्षण' के 17 जून, 1826 के अंक में जो सूचना 'नागरी का समाचार पत्र' शीर्षक से प्रकाशित हुई थी, उससे हमारे इस कथन की पुष्टि होती है। वह सूचना इस प्रकार थी–"हाल में इस कलकत्ता नगर से 'उदन्त मार्तण्ड' नामक एक नागरी का नूतन समाचार–पत्र प्रकाशित हुआ है, इससे हमारे अहल्लाद की सीमा नहीं है। क्योंकि समाचार पत्र द्वारा दूसरा सम्पत्ति संबंधीय और नाना दिशाओं के देशों के राजसम्पर्कीय वृत्तान्त प्रकाशित हुआ करते हैं, जिनके जानने में अवश्य ही उपकार होता है।" इस पत्र का पहला अंक 30 मई, 1826 को प्रकाशित हुआ था और इसका प्रकाशन श्री शुक्ला ने 'हिन्दुस्तानियों के हित हेतु' अपने ही प्रयास से सर्वथा साधनहीन अवस्था में अकेले ही किया था। इस पत्र पर जो हिन्दी पद्य छपा करते थे, वे इस प्रकार होते थे :

दिनकर कर प्रगटत 'दिनहि' यह प्रकाश अठयाम।

ऐसो रवि अब उग्यो नहिं, जोहि तेहि सुख को धाम।

उत कमलनि विगसित करत, बढ़त चाव चित वाम।

लेत नाम या पत्र को, होत हर्ष अरू काम।।

अपने उदे्श्यों पर प्रकाश डालते हुए शुक्लजी ने जो भाव इस पत्र के प्रथम अंक के सम्पादकीय लेख में प्रकट किये थे, उनसे यह भली भाँति विदित हो जाता है कि उनके मन में अंग्रेजों की कूटनीति और अंग्रेजी भाषा के बढ़ते हुए प्रभाव के प्रति कितनी गहन पीड़ा थी। यद्यपि वे कलकत्ता की दीवानी कचहरी में 'प्रोसीडिंग रीडर' थे, परन्तु उनके मन में अंग्रेजों के बढ़ते अत्याचारों के प्रति गहन असंतोष था।

वे कई भाषाओं के जानकार थे और भाषा, नाम तथा व्याकरण आदि के बारे में समसामयिक बांग्ला पत्रों से भी टक्कर लिया करते थे। 'उदन्त मार्तण्ड' का वार्षिक शुल्क उस समय केवल दो रूपया था। उसमें प्रकाशित खबरों तथा अन्य सामग्री को देखने से यह भली–भाँति विदित हो जाता है कि उन दिनों हिन्दी–पत्रकारिता की नींव संघर्ष, त्याग, बलिदान और निर्भीकता पर रखी गई थी। उसमें देशी–विदेशी तथा स्थानीय समाचारों के अतिरिक्त हास्य–व्यंग्य आदि की टिप्पणियाँ एवं लेख भी प्रकाशित हुआ करते थे। साथ ही उसमें सरकारी अफसरों की नियुक्ति, पाक्षिक इश्तहार, जहाजों के आने–जाने का समय और कलकत्ता के बाजार–भाव भी रहा करते थे। कभी–कभी इस पत्र में जोधपुर, भरतपुर, और लाहौरपति महाराज रंजीत सिंह की खबरें, भी छपा करतीं थीं। इस पत्र के नियमित रूप से प्रकाशित करते रहने के लिए शुक्लजी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। बहुत प्रयास करने पर भी जब इसकी ग्राहक संख्या में वृद्धि नहीं हुई तो उन्होंने 'उदन्त मार्तण्ड' के एक अंक के सम्पादकीय में अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये थे– "शूद्र चाकरी

आदि नीच काम करते हैं, उन्हें पढ़ाई–लिखाई आदि से मतलब नहीं। कायस्थ फारसी–उर्दू पढ़ा करते हैं और वैश्य अक्षर–समूह सीखकर बही–खाता करते हैं, खत्री बजाजी आदि करते हैं, पढ़ते–लिखते नहीं, और ब्राम्हणों ने तो कलियुगी ब्राम्हणों बनकर पठन–पाठन को तिलांजलि दे रखी है फिर हिन्दी का समाचार पत्र कौन पढ़े और खरीदे ?''

शुक्लजी को पूर्ण विश्वास था कि उनके इस पत्र को सरकार तथा जनता का पूर्ण समर्थन और सहयोग प्राप्त होगा और यह निर्विघ्न चलता रहेगा, किन्तु उनकी यह आशा पूर्ण नहीं हुई। सीमित साधनों और स्वल्प–सी पूँजी के बल पर लगभग डेढ़ वर्ष तक इसे निकाल कर उसके 4 दिसम्बर, 1827 के अंक में 'मार्तण्ड' के अस्त होने की सूचना उन्होंने इस प्रकार प्रकाशित कर दी :

आज दिवस लौं उगि चुक्यो मार्तण्ड उदन्त।
अस्ताचल को जात है दिनकर दिन अब अन्त।।

'उदन्त मार्तण्ड' को बंद कर देने के बाद भी जब–तब उनके हृदय में छिपी पत्रकारिता की भावना और जोर मारती रहती थी। उन्होंने 1850 में 'साम्यदन्त मार्तण्ड' नामक एक और पत्र प्रकाशित करना प्रारंभ किया। यह उनकी जीवन्त पत्रकारिता का उज्ज्वल प्रतीक था। इससे उनकी अदम्य इच्छा–शक्ति तथा उत्कट उत्साह का परिचय मिलता है। किन्तु दुर्भाग्य ने यहाँ भी पीछा न छोड़ा और पूँजी के अभाव में लगभग दो वर्ष चलाकर इसे भी बंद कर देना पड़ा। यह उन जैसे कर्मठ व्यक्तित्व का ही साहस था कि बिना किसी प्रकार की

शासकीय सहायता के इतने दिन तक उन्होंने उसे प्रकाशित करते रहने का उपक्रम रचा।

'उदन्त मार्तण्ड' के प्रकाशन की अनुमति 16 फरवरी, 1826 को प्राप्त हुई थी। पं. युगल किशोर शुक्ल ने लायसेंस की तत्कालीन व्यवस्था के अंतर्गत जो आवेदन पत्र प्रेषित किया था, वह इस प्रकार है– "हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में एक साप्ताहिक समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' के प्रकाशन का आकांक्षी होकर मैं आपकी अनुमति से मजिस्ट्रेट के सम्मुख अपने और मन्नू ठाकुर द्वारा परिपुष्ट अपेक्षित 'शपथ–पत्र" प्रेषित करके उसके लिए सरकारी स्वीकृति का अनुरोध करता हूं।

हस्ता/युगल किशोर

उनके आवेदन के उत्तर में सरकार के प्रमुख सचिव सी. लुशिंगन ने 16 फरवरी,1826 को अनुमति प्रेषित की थी। वह इस प्रकार है–"सपरिषद् गवर्नर जनरल शपथ–पत्र में उल्लिखित भवन (कलकत्ते के कोल्हू टोला के अमर तल्ला की गली के 37 अंक की हवेली) तथा स्थान अमर तल्ला लेन कलकत्ता से अन्य किसी स्थान से नहीं, मन्नू ठाकुर को एक समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' के मुद्रित एवं प्रकशित करने का अधिकार प्रदान करते हैं। किसी भी दशा में मन्नू ठाकुर के अतिरिक्त और कोई भी व्यक्ति या समूह प्रकाशक नहीं हो सकता और न युगल किशोर के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति या व्यक्ति समूह संचालक ही हो सकता है।

आदेशानुसार

सपरिषद महामहिम गवर्नर जनरल

16 फरवरी, 1826

पं. युगल किशोर शुक्ल ने 'उदन्त मार्तण्ड' क्यों निकाला ? इसका उल्लेख उन्होंने स्वयं पत्र के पहले अंक में ही किया है, इसे ज्यों का त्यों उद्धत किया जा रहा है–"यह उदन्त मार्तण्ड अब पहले पहल हिन्दुस्तानियों के हित के हेत जो, आज तक किसी ने नहीं चलाया पर अंगरेजी ओपारसी ओ. बंगले में जो समाचार का कागज छपता है उसका सुख उन बोलियों के जान्ने ओ पढ़ने वालों को ही होता है। और सब लोग पराये सुख सुखी होते हैं। जैसे पराये धन धनी होना ओ अपनी रहते परायी आंख देखना वैसे ही जिस गुण में जिसकी पैठ न हो उसको उसके रस का मिलना कठिन ही है और हिन्दुस्तानियों में बहुतेरे ऐसे हैं कि परायी चाल देखकर अपनी यहां तक भूले हैं कि परायों में जो बुद्धिमन्त हैं वे अपनी तो बनाई है पर भले–बुरे का बराव करने का बाना बांधते हैं ऐसी को धन कहा चाहिए जो इसमें बे बड़े कायर हैं जो इतने पर भी भाग टटोलते हैं वहि जो आँखों से सहज में देख सकेंगे उसको धोखे भी न देख कर आंखों को व्यर्थ माथे चढ़वाते हैं, ऐसी ऐसी बातों के विचार से नाना देश के सत्य समाचार हिन्दुस्तानी लोग देखकर आप पढ़ ओ समझ लेंय ओ पराई अपेक्षा जो अपने भाषे के उपज न छोड़ें, इसलिये बड़े दयावान करूणाओ, गुणनि के निधान सबके कल्यान के विषय श्रीमान गब्रनर जेनरेल बहादुर की आयस से ऐसे साहस में चित्त लगाय के एक प्रकार से यह नया ठाट–ठाटा जो कोई प्रशस्त लेई इस खबर के कागज से लेने की इच्छा करें तो अमर तल्ला की गली 37 अंक

मार्तण्ड छापा घर में अपना नाम ओ ठिकाना भेजने ही से सतवारे के सतवारे यहां के रहने वाले घर बैठे ओ बाहर के रहने वाले डाक पर कागज पाया करेंगे इसका मोल–महीने में दो रूपया ओ जो डाक के महसूल की तेहाई लिई जायगी और यहां से बाहिर रहते हैं उनको यहां रूपये की मनौती कर देनी होयगी काहे से कि महीने महीने के अन्तर रूपये भर पावने की रसीद भेजने में किसी जगह डेढ़ ओ कहीं एक रूपया डाक का महसूल लगेगा। ओ कोई कारण पाय करके उस मध्ये फिर लखना पड़े तो फिर उतना खरच बैठेगा। इसमें दो रूपये के पटने में दो तीन रूपया महसूल का देना लगेगा इससे यहां की मनोती रहने से इतना खरच ओ अबेर ओ क्लेश न होयगा।'

16 वें अंक से अंक दर आठ आना लिखा हुआ मिलता है। 'उदन्त मार्त्तण्ड' का आकार 12 गुणा 8 इंच था तथा पृष्ठ संख्या आठ थी। इसकी भाषा कलकतिया हिन्दी थी। इस पत्र के निकालने की खबर 'समाचार–चन्द्रिका' नामक बांग्ला पत्रिका के 11 मार्च, 1826 के अंक में प्रकाशित हुई जिसके अनुसार 'अंगरेजी और बांग्ला के पत्रों के बाद फारसी में, उर्दू में भी पत्र प्रकाशित हुए और अब नागरी भाषा में 'उदन्त मार्त्तण्ड' प्रकाशित हुआ है, जिससे हमें बड़ी प्रसन्नता हुई है।''

17 जून, 1826 का 'समाचार दपर्ण' लिखता है– नागरी समाचार पत्र। हाल में इस कलकत्ता नगर से 'उदन्त मार्त्तण्ड' नामक एक नागरी का नूतन समाचार पत्र प्रकाशित हुआ है, इससे हमारे आल्हाद की सीमा नहीं है, क्योंकि समाचार पत्र द्वारा सम्पत्ति संबंधी और नाना देशों के राजा सम्पर्कीय वृतान्त प्रकाशित होते हैं, जिनके जानने में अवश्य ही उपकार होता है।''

पत्र के आवरण पृष्ठ के ऊपर काफी बड़े—बड़े अक्षरों में 'उदन्त मार्त्तण्ड' नाम अंकित रहता था। 'उदन्त मार्त्तण्ड' अर्थात्

" दिवाकान्तकान्ति विनाध्वान्तमन्तं।

न चाप्नोति तद्वज्जगत्यज्ञ लोकः।

समाचार सेवामृते ज्ञत्वमाप्तं

न शक्नोति तस्मात्करोमीति यत्नं।।

31 वें अंक के बाद इस संस्कृत श्लोक के नीचे यह पद्य जोड़ दिया गया—

"दिनकर—कर प्रगटत दिनहि यह प्रकाश अठ याम।

ऐसो रवि अब उग्यो महि जेहि तेहि सुख को धाम।

उत कमलनि बिगसति करत, बढ़त चाव चित बाम।

लेत नाम या पत्र को होत हर्ष अरु काम।"

पद्य के नीचे दो आड़ी लकीरों के बीच में 'उदन्त मार्त्तण्ड' का अंक, बार एवं मूल्य लिखा रहता था। पृष्ठ दो कालमों में विभाजित होता था।

शुक्ल ने हिन्दी पत्रकारिता में जो परम्परायें डालीं, उनमें से कुछ पर देश के स्वाधीन होने तक अमल होता रहा। उन्होंने हिन्दी समाचार पत्रों के लिए उपयुक्त भाषा शैली भी निर्धारित कर दी थी। उनके बाद

के पत्रकार प्रायः उसी शैली का अनुसरण करते रहे। उस समय हिन्दी में दो तरह की लेखन शैलियाँ प्रचलित थीं। बृजभाषा की शैली का परिचय स्वयं 'उदन्त मार्त्तण्ड' का पौषवदी एक संवत् 1884 तारीख 11 दिसम्बर 1827 के अंक से मिलता है—

"प्रथम यह काज को जो कारणं कह्यो ताको विस्तार सयानिकौ जनावनो उचित है, ताते अब कछु मध्य देशीय भाषा लिखतु हों।"

कलकत्ता से जो भी हिन्दी पत्र निकले उन पर स्थानीय भाषा और संस्कृति का प्रभाव स्वाभाविक है। उस समय कलकत्ता में जन—जागृति का जो वातावरण था, उसकी स्पष्ट छाप 'उदन्त मार्त्तण्ड' पर भी पड़ी। पं. शुक्ल अपने पत्र में भारत की तत्कालीन राजनीति, व्यापार, ज्ञान—विज्ञान और सारे देश के प्रमुख समाचार देते थे। उनकी व्याख्या भी स्थानीय व्यापारी वर्ग के लिए करते थे, क्योंकि अधिकांश व्यापारी वर्ग की भाषा हिन्दी ही थी।

उनके 'उदन्त मार्त्तण्ड' में खड़ी बोली की शैली में महत्वपूर्ण व्यक्तियों संबंधी समाचार भी छपा करते थे। 19 सिम्बर, 1826 के अंक में गवर्नर लार्ड ऐम्सहर्स्ट के लखनऊ दौरे का विवरण इस प्रकार प्रकाशित हुआ था— "जिस समय ए नगर में पैठे उतने समय देखने में आया कि राजमार्ग के दोनों ओर छोटी—छोटी हवेलियों के बाजार पर मुसज्जर और कमखाब और ताश बादले के कामों के सोनहले ओ रूपहले ओ कारचोबियों के काम के कपड़े लोगों ने लटकाये थे और लखनौ शहर भीतर जितनी दुकानों जिस—जिस पदार्थ की थी उस समय सामग्री से सुची उसकी शोभा देखते ही बन आवती है। और

जेंब–जेंब सबारी शहर में धंसी, तेंब ठौर–ठौर नाच रंग भी देखने में आये। फिर जब वे आसफुद्रदोला के महल के पास हो के निकले उस समय बादशाह की जेठी बहिन की डेवड़ी की तैनाती फौज आके सलामी की।''

''उदन्त मार्त्तण्ड' में सब तरह के समाचार छपते थे, जैसे– ''अंगरेजी विलायत की बड़ी सभा'', 'रंगून की खबर', 'जहाज की चोरी', 'गवनर जेनरेल बहादुर की खबर'' आदि। उपर्युक्त उदाहरणों से उस समय की भाषा एवं लेखन शैली का भी परिचय मिलता है। अैसा, तुर्त, मनोर्थ, सुन्न जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता था। उसमें ब्रजभाषा की छाप झलकती है, बंगाल का प्रभाव परिलक्षित होता है। जैसे–'इसका मोल सब सुद्धा' आदि। तब अरबी, फारसी के शब्द बहुत कम मिलते हैं। विरामादि चिन्हों का भी प्रयोग नहीं मिलता। वाक्य बहुत बड़े–बड़े हैं। 'जिससे' के स्थान पर जिस्से, जिनने के स्थान पर जिन्ने जैसे शब्दों का उपयोग है।

पं. शुक्ल के सम्पादन की बड़ी विशेषता यह भी थी कि उनकी लेखनी तथ्यों को पूर्ण और आकर्षक स्वरूप में प्रकट करने में समर्थ थी। उदाहरणः ''अंगरेजी 1826 साल 19 को सरकार कम्पनी अंगरेज बहादुर जो ब्रह्मा के बीच में परस्पर संधि हो चुकने के प्रसंग से यह दरबार शोभनागार हो के श्रीमान लार्ड एमहर्स्ट गवरनर जेनरेल बहादुर के साक्षात से मौलवि महम्मद खलिलुद्दीन खाँ अवध बिहारी बादशाह की ओर से वकालत के काम पावने के प्रसंग से सात पारचे की खिलअत और जिगा सर पेच जड़ाऊ मुलाहर और पालकी झालदार ओ मृत महाराजा सुखमणि बहादुर के संतति राजा शिवनंद राय बहादुर

औ राजा नृसिंह चन्द्र रायबहादुर राज्य औ बहादुरी पदवो मिलने के प्रसंग से सात–सात पारचे को खिलअत जिगा सर पेच जड़ाऊ मुक्ताहार ढाल तरवार और चार घोड़े की गाड़ी की सवारी की अनुमति और राय गिरधारी लाल बहादुर और मिर्जा महम्मद कामिल खाँ नवाब नाजिम बहादुर के विवाह के प्रसंग में छह पारचे कि खिलअत जिगा सरपेच जड़ाऊ ओ कृपाराम पण्डित नवाब फेज महम्मद खाँ बहादुर के ओर से पुरी वकालत का पद होने के प्रसंग से दो शालां गोशवारा नीमे आस्तीन सरपेच जड़ाऊ पगड़ी ओ मृत विशम्भर पण्डित की स्त्री के एक्टिंग वकील देविप्रसाद तिवाड़ी दो शालां ओ महम्मद सओद खाँ साहिब जो राजा भूप सिंह बहादुर मोटि के एक–एक हार से मुक्ति ओ कृतकृत्य हुए ओ जालवन के रईस के वकील शिवराम ने श्री श्रीनरवर गवरनर जेनरेल बहादुर के साक्षातकार इस संधि के बधाई की कविता भेंट धरी ओ नरैः श्रेष्ठ उस कविता का भाव बूझे पर बहुत रीझे।''

'उदन्त मार्त्तण्ड' के आषाढ़ 1883 सं. के अंक में एक गहरा व्यंग्य मिलता है– ''एक यशी वकील वकालत का काम करते–करते बूड्ढा होकर अपने दामाद को वह सौंप के आप सुचित हुआ। दामाद कई दिन वह काम करके एक दिन आया ओ प्रसन्न होकर बोला हे महाराज आपने जो फलाने का पुराना ओ संगीन मोकद्दमा हमें सौंपा था सो आज फैसला हुआ यह सुनकर वकील पछता करके बोला कि तुमने सत्यानाश किया। उस मोकद्दमे से हमारे बाप बढ़े थे तिस पीछे हमारे बाप मरती समय हमें हाथ उठा के दे गए ओ हमने भी उसको बना रखा ओ अब तक भली–भांति अपना दिन काटा ओ वही

मोकद्दमा तुमको सौंप करके समझा था कि तुम भी अपने बेटे पोते परोतों तक पलोगे पर तुम थोड़े से दिनों में उसको खो बैठे।''

बांग्ला पत्र 'समाचार चन्द्रिका' में उत्तर भारतीय और मारवाड़ी व्यापारियों के विरूद्ध एक चिट्ठी छपी थी। इसके उत्तर में 'उदन्त मार्त्तण्ड' ने उसी शैली में दो–तीन चिठ्ठियाँ छापीं तथा एक टिप्पणी भी लिखी जिसके उत्तर में 4 अप्रैल, 1827 को 'समाचार चन्द्रिका' के सम्पादक भवानी चरण बनर्जी ने उनके विरूद्ध सुप्रीम कोर्ट में अपमानजनक सामग्री छापने के आरोप में कार्यवाही प्रारंभ करने की सूचना दी। यह दुर्भाग्य की बात है कि जिन व्यापारियों के हित के लिए श्री शुक्ला ने कानूनी कार्यवाही को आमंत्रित किया, उन्होंने उनका समर्थन करना तो दूर 'उदन्त मार्त्तण्ड' का ग्राहक चंदा भी अदा नहीं किया। परिणामस्वरूप यह पत्र बंद करना पड़ा।

''जबते या कलकत्ता नगरी में 'उदन्त मार्त्तण्ड' को प्रकाश भयों तबते लै आज दिवस लों काहू प्रकार ते ढाढस बांध विद्या के बीज बबैको हिन्दुस्तानियन के जड़ता के खेत को बहुविधि जोत्यों पहिले तो ऐसी कठोर भूमि काहे को जुतै ताहू पै काया कष्ट कर जैसो तैसौ हर चलाय वा क्षेत्र में गांठ की ब्यू बखेर बड़े यतन से सींच फल लुन्यौ चाह्यौ तो समय लोभ रूपी टाड़ी परिवा खेत के फल–फूल पाती सिगरी चरि गई अब तो फिरि फिरि या नाशे क्षेत्र को गोडियो तो श्रमही के फल फलैंगे।''

''यहां मूरख को मान ज्ञान चर्चा को बूझै।

हँसी तू अपनी रोक जगत् अधियारौ ही सूझै।

जड़ता जर नशि चल्यौ गात को होइगो पतझर।

काकौ है परतीत बहुरि चलिहैं सुब बैहर।।"

हिन्दी भाषी लोगों में प्रारंभ से ही समाचार पत्र पढ़ने के लिए पैसा खर्च करने का उत्साह नहीं रहा। यह बात युगल किशोरजी के इस वक्तव्य से भी सिद्ध होती है– इस 'उदन्त मार्त्तण्ड' के नांव पड़ने के पहिले पछाहियों के चित्त का इस कागज न होने से हमारे मनोर्थ सफल होने का बड़ा उतसा था इसलिए लोग हमारे बिन कहे भी इस कागज की सही की बही पर सही करते गये पै हमें पूछिए तो इनकी मायावी दया से सरकार अंगरेज कम्पनी महाप्रतापी, की कृपा कटाक्ष जैसे औरों पर पड़ी, वैसे पड़ जाने की बड़ी आशा थी और मैंने इस विषय में उपाय यथोचित किया पै करम की रेख कौन मैटै। तिस पर भी सही की बही देख जो सुखी होता रहा अन्त में नटों कैसे आम दिखाई दिए इस हेतु स्वारथ अकारथ जान निरे परमारथ को कहां तक बनीजए अब अपने व्यवसाई भाइयों से मन की बात बताय बिदा होते हैं। हमारे कुछ कहे सुने का मन में न लाइयो जो देव और भूधर मेरी अंतर व्यथा और इस गुण को विचार सुधि करैंगे ते मेरे ही हैं। सुभमिति।"

इन पंक्तियों में शुक्लजी की हताशा स्पष्ट झलक रही है। साथ ही यह भी सिद्ध होता है कि पं. शुक्ल को 'उदन्त मार्त्तण्ड' का प्रकाशन एक वर्ष सात माह बाद इसलिए बंद करना पड़ा कि उन्हें सरकार, व्यवसायी वर्ग एवं ग्राहक–वृन्द किसी से भी समुचित सहायता न मिली। उस समय कम्पनी सरकारी फारसी के 'जामे जहाँनुमा' और

बंगला के 'समाचार–दर्पण' नामक पत्रों को आर्थिक सहायता देती थी। कलकत्ते के हिन्दी भाषा भाषी भी दो रू. महीना खर्च करके 'उदन्त मार्त्तण्ड' खरीदने के लिए तैयार नहीं थे। बिना स्थानीय लोगों की सहायता के कोई भी समाचार पत्र नहीं चलाया जा सकता, यह मूलभूत तथ्य 'उदन्त मार्त्तण्ड' के अस्ताचल गामी होते ही पूरी तल्खी के साथ स्पष्ट हो गया। यह बात 'उदन्त मार्त्तण्ड' के बंद होने के समय जितनी सुस्पष्ट थी, उतनी ही खरी आज भी है।

'उदन्त मार्त्तण्ड' हिन्दी पत्रकारिता की नींव का वह पत्थर है जहां से न केवल पत्रकारिता का उदय हुआ वरन् पत्रकारीय भाषा, शैली, अभिव्यक्ति की विभिन्न अन्तर्धाराएं भी प्रवाहित हुईं।

लोकमान्य तिलक :

''स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा'' लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक द्वारा दिया गया नारा केवल नारा नहीं, बल्कि स्वतंत्रता प्राप्ति का 'बीज मंत्र' था।

तिलक का जन्म 23 जुलाई, 1856 को महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले में हुआ था। पिता गंगाधर तिलक अध्यापक के साथ त्रिकोणमिति व व्याकरण की पुस्तकों के लेखक थे। 10 वर्ष की अवस्था में माता और 16 वर्ष की अवस्था में पिता का सिर पर से साया उठने के बाद भी ने पढ़ाई जारी रखी। उन्होंने वेदों के गहन अध्ययन के साथ–साथ पश्चिमी साहित्य का भी गंभीर अध्ययन किया था। 1880 में पूणे में न्यू इंगलिश स्कूल की स्थापना की। 1884 में डक्कन एजुकेशन सोसाइटी बनाई, जिसके तत्वावधान में 1885 में फर्ग्युसन कॉलज की स्थापना

हुई। उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर मराठी में 'केसरी' और अंग्रेजी में 'मराठा' समाचार पत्र निकाला। तीखे, सटीक और कटाक्ष भरे लेखों से जनसाधारण में लोकप्रियता बढ़ने लगी और विदेशी शासक बौखलाने लगे। 'बंग–भंग' का उन्होंने पुरजोर विरोध किया। उनके कई मौलिक विचारों यथा:विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, स्वदेशी, भारतीयता का गर्व सत्याग्रह आदि को गांधीजी ने आंदोलन के रूप में विकसित किया। हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिए 1916 में एनी बेसेंट और जिन्ना के साथ मिलकर लखनऊ में इंडियन होम रूल लीग का गठन किया। गांधीजी ने तिलक को आधुनिक भारत का निर्माता कहा तथा नेहरूजी ने उन्हें भारतीय क्रांति के जनक की उपाधि दी। प्लेग की महामारी के समय जब अनेक नेताओं ने पूणे से पलायन किया तब भी वे वहीं डटे रहे, हिन्दू प्लेग अस्पताल शुरू किया। उन्होंने जनसाधारण में आत्म–विश्वास जगाने की दृष्टि से और स्वयं की शक्ति को परखने के उद्देश्य से गणेशोत्सव और शिवाजी महोत्सव जोर–जोर से मनाने की प्रेरणा दी। उनकी अकाट्य तर्कक्षमता उनके वकालत के पेशे में कई बार उजागर हुई।

राष्ट्रवाद की नयी उष्मा को जीवित रखने के लिए प्राणाहुति देने को उत्साह–स्फूर्त स्वदेशी आंदोलन के नायक तिलक–पथ को ही देश की मुक्ति की राह मानते थे। कुशासन–सुशासन का प्रश्न उनकी दृष्टि में गौण हो गया था, स्वराज्य उनका एकमात्र लक्ष्य था। इस आदर्श से अनुप्राणित राजनीति के देशमान्य नायक तिलक थे। उनके सक्षम लोमनायकत्व को रेखांकित करते श्री अरविन्द ने लिखा है कि सभी वर्गों के लोगों को संगठित करने की उनमें क्षमता थी। वे शिक्षितों के

ही नेता नहीं थे, बल्कि व्यापारियों, उद्योगपतियों और किसानों के नेता थे, जनता के नेता थे।)

(श्री अरविन्द द्वारा लिखित बंकिम–तिलक दयानंद पेज 24

लोकमान्य तिलक और उस युग के दूसरे विशिष्ट राजनेताओं का जीवन अध्यात्म–सुमुख था, किन्तु अध्यात्म की उनकी अवधारणा कर्मकांड–शास्ति क्लीव धर्म–उपासना की बहुमान देने के पक्ष में नहीं थी। ब्रम्ह तेज की महत्ता को स्वीकारते हुए भी वे क्षात्र–धर्म की महत् भूमिका को समझते, उसे अपरिहार्य मानते थे। 'केशरी' के अपने एक सम्पादकीय वक्तव्य में आयरलैंड के प्रसंग में तिलक ने लिखा था, 'स्वातंत्र्य रूपी अमूल्य रत्न की प्राप्ति के लिए नरमेध–यज्ञ को छोड़कर अन्य समस्त लौकिक साधन व्यर्थ सिद्ध होते हैं। इस ऐतिहासिक सिद्धांत को मिथ्या कौन कर सकता है ? यही दृष्टि बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक दशक की जातीय संवेदना को अनुशासित कर रही थी। युवा पीढ़ी के भाव के अनुरूप तिलक की ही संस्कार–चेतना थी।

(संघर्ष, वर्ष 20, अंक–26)

हिन्दी दैनिक 'आज' के प्रथम अग्रलेख (5 सितम्बर, 1920) को सम्पादक पं. बाबूराव विष्णु पराड़कर ने लिखा, 'आज' के पहले ही अंक में लोकमान्य तिलक की मृत्यु पर शोक प्रकाश करने का अवसर उपस्थित हुआ है। आपकी अकाल मृत्यु से भारतवर्ष की जो भीषण हानि हुई है उसका परिचय शब्दों में नहीं दिया जा सकता। आपकी राजनीतिक दूरदर्शिता, दृढ़प्रतिज्ञा तथा अगाध देशभक्ति के उपयोग से देश वंचित हो चुका है। भारत यदि लोकमान्य के गुण न जानता होता

उदरम्भरों की जितनी निंदा की जाय उतनी थोड़ी ही है। इनमें भी नेतृस्थान कलकत्ते के 'स्टेटमैन' नामक पत्र ने ग्रहण किया है। क्यों न हो ? इस पत्र की स्थापना भारतवासियों के धन से हुई थी तथा पन्द्रह वर्ष पूर्व तक इसके सहायक भारतवासी ही थे। इसके वर्तमान मालिक के पिता परलोकवासी राबर्ट नाइट के समय यह पत्र भारतवासियों की उच्च आकांक्षा का समर्थक था। मि. रेटक्लिफ के सम्पादनकाल में इस पत्र का गौरव कितना बढ़ गया था, यह बात वे ही जान सकते हैं जिन्होंने उस समय इसके लेख पढ़े हैं। पर इधर यह भारतवासियों का कट्टर शत्रु हो गया है। इसके लिए हम इसे दोष नहीं दे सकते, क्योंकि अपने अपने मतों की स्वतत्रता सबको है। पर लोकमान्य तिलक की मृत्यु पर इस पत्र ने जो लिखा था वह सर्वथा कुरूचिपूर्ण, असभ्यजनोचित और उत्तेजक था। बंगालियों ने इस पत्र का बहिष्कार कर इसका प्रतिवाद किया है तथा गत बुधवार पहली सौर भाद्रपद को कलकत्ते की म्युनिसिपल कारपोरेशन ने भी बहुमत से निश्चिय किया कि इस पत्र को विज्ञापन देना बंद कर दिया जाय। इस पर कारपोरेशन में बहुत कुछ विचार हुआ था। एक–दो वक्ताओं ने कहा था कि यद्यपि 'स्टेट्समैन' पत्र का लेख बहुत ही बुरा था पर कारपोरेशन राजनीतिक संस्था नहीं है इसलिए उसे इस काम में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। दूसरे वक्ता ने मुँह तोड़ जवाब दिया कि कारपोरेशन जैसे राजनीतिक संस्था नहीं है, उसी प्रकार वह देश के शत्रुओं के लालन–पालन के लिए कोई आश्रय भी नहीं है तथा करदाताओं का धन उनके शत्रु को देने का कारपोरेशन को कोई अधिकार नहीं है।

इस प्रस्ताव पर मत लिये गये तो मालूम हुआ कि 22 बंगाली सदस्यों ने विज्ञापन बंद करने के पक्ष में तथा तीन बंगाली और तीन यूरोपियन कुल 6 सदस्यों ने विपक्ष में मत दिया था। कर्नल लेसली नामक यूरोपियन तथा मि. डी.सी. घोष नामक बंगाली कुल दो सदस्य उदासीन रहे। इन बातों से स्पष्ट मालूम होता है कि भारतवासी अब सिर झुकाकर गाली सुनने के लिए प्रस्तुत नहीं हैं। यह भी लोकमान्य की शिक्षा का फल है। यदि भारत में राष्ट्रीय भाव उत्पन्न करने के लिए उन्होंने आमरण उत्पीड़न न सहन किया होता तो भारत में, संभवतः आज यह जागृति न दिखायी देती। 'स्टेट्समैन' पत्र के सम्पादक जोन्स भी कलकत्ता कारपोरेशन के मेम्बर थे पर वे सरकार द्वारा नियुक्त किये गये थे। जोन्स को भी उस दिन कारपोरेशन में कहना ही पड़ा था कि लोकमान्य तिलक के गुणों का मुझे पहले इतना परिचय नहीं था, पर देश भर में उनके लिए जो शोक प्रकाश किया गया था उसे देखकर मेरी आँखें खुल गयीं। शाबाश ! पर हमारे मत से आँखें खुलने का कारण कुछ और ही है और उसका अनुभव सम्पादक की अपेक्षा व्यवस्थापक को ही अधिक होगा। जोन्स ने अपने लेख के लिए दुःख प्रकाश भी किया है, पर हमारे मत से वह अलम नहीं है। जो हो, इस विषय में हमें कुछ कहना नहीं है। मर कर भी लोकमान्य धारवाड़ के कलेक्टर और मि. जोन्स जैसे सम्पादक को कुछ शिक्षा दे गये, यह भी महापुरूष के महत्त्व का ही परिचायक है।

महात्मा गांधी

मोहनदास करमचंद गाँधी की पहचान स्वाधीनता संग्राम के पुरोधा के रूप में तो है ही, वे एक श्रेष्ठ और कालजयी पत्रकार भी थे। महात्मा गांधी पत्रकारिता के क्षेत्र में एक समर्थ संपादक के रूप में मान्य और लोकसमादृत हुए। उन्होंने पत्रकारिता के जो प्रतिमान स्थापित किए, वे आज भी पत्रकारों के लिए अनुकरणीय हैं। उन्हें दक्षिण अफ्रीका के डरबन से 'इंडियन ओपीनियन' तथा भारत से 'नवजीवन', 'यंग इंडिया', 'हरिजन' जैसी प्रमुख पत्रिकाओं को प्रकाशित करने का श्रेय प्राप्त है। देश के अनेक प्रख्यात पत्रकारों ने उनसे प्रेरणा लेकर पत्रकारिता की और स्वाधीनता संग्राम में पत्रकारिता के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। यही कारण है कि भारत में 1920 के बाद की पत्रकारिता को गांधी युग की पत्रकारिता कहा जाता है।

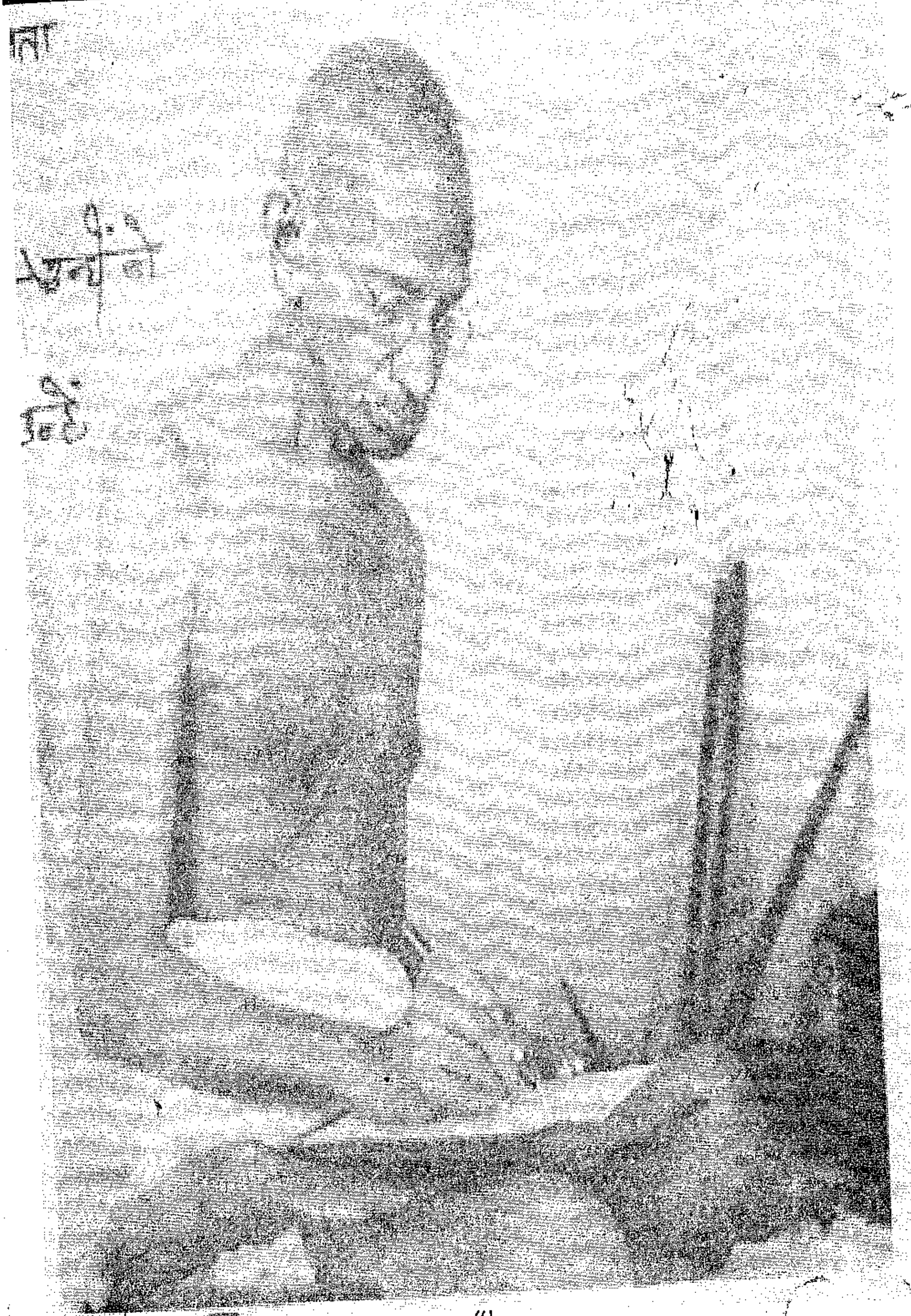

महात्मा गांधी की प्रेरणा से दक्षिण अफ्रीका से 4 जून, 1903 में 'इंडियन ओपीनियन' का प्रकाशन आरंभ हुआ। चार भाषाओं अंग्रेजी, गुजराती, हिंदी एवं तमिल में प्रकाशित होने वाले इस पत्रिका का लाइसेंस मदन जीत ने मैनेजर के रूप में लिया था। इसके पहले यह मनसुखलाल हीरालाल नागर के संपादकत्व में छपता था। 'सत्य के प्रयोग' अथवा 'आत्मकथा' में प्रकाशित तथ्यों के अनुसार नागर के संपादक होने के बावजूद संपादन का सच्चा बोझ तो गांधीजी पर हीथा। 'इंडियन ओपीनियन' के प्रवेशांक में 'अपनी बात' शीर्षक से एक आलेख लिखा था, जो वस्तुतः संपादकीय जैसा ही था। प्रवेशांक में छह अन्य टिप्पणियाँ भी लिखीं, किन्तु उनका नाम नहीं था।

महात्मा गांधी ने 3 फरवरी, 1906 के इंडियन ओपीनियन में लिखा है कि संपादकों और कंपोजिटर की कमी के कारण इसके तमिल और हिंदी के संस्करणों को नहीं चाहते हुए भी बंद करना पड़ा। यद्यपि उन्होंने यह भी लिखा कि इसके बंद होने का एक कारण आर्थिक संकट भी था। 'सत्य के प्रयोगं अथवा 'आत्मकथा' में गांधीजी ने लिखा है– मैं 'इंडियन ओपीनियन' में प्रति सप्ताह अपनी आत्मा उड़ेलता था और जिसे मैं सत्याग्रह के रूप में पहचानता था, उसे समझाने का प्रयत्न करता था।

उन्होंने सता से संघर्ष के लिए पत्र–पत्रिकाओं की भूमिका को महत्वपूर्ण माना था। इसकी उपयोगिता और उपादेयता को समझ कर ही उन्होंने 'दक्षिण अफ्रीका' से 'इंडियन ओपीनियन' का प्रकाशन किया था। उन्होंने 'दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास' नामक पुस्तक में पत्र–पत्रिकाओं की महत्ता का उल्लेख करते हुए लिखा है, "मेरी

मान्यता है कि जिस लड़ाई का आधार आंतरिक बल हो, वह लड़ाई अखबार के बिना चलाई जा सकती है, किन्तु साथ ही मेरा अनुभव यह भी है क 'इंडियन ओपीनियन' के होने से हमें कौम को आसानी से शिक्षा दे सकने और संचार में जहाँ–जहाँ हिंदुस्तानी रहते थे, वहाँ–वहाँ हमारी हलचलों की खबरें भेजते रहने में आसानी हुई। यह सब काम कदाचित् दूसरी नीति से नहीं किए जा सकते थे। इसलिए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि लड़ाई के साधनों में 'इंडियन ओपीनियन' भी एक बहुत उपयोगी और सबल साधन था।

भारतीय पत्रकारिता कोश में विजयदत्त श्रीधर ने लिखा है– मुंबई के जमनादास द्वारकादास द्वारा प्रकाशित 'यंग इंडिया' 8 अक्टूबर,1919 को महात्मा गांधी के संपादकत्व में साप्ताहिक से अर्द्ध साप्ताहिक होकर प्रकाशित हुआ। 'यंग इंडिया' में बारह सौ ग्राहक थे। 'यंग इंडिया' की नीति अन्याय की ओर ध्यान आकर्षित कराने, सत्याग्रह के पक्ष में वातावरण बढ़ाने और जन–प्रतिरोध खड़ा करने की थी। गांधीजी ने पत्रकारिता को लोकशिक्षा का माध्यम बनाया था।

महात्मा गांधी ने 'सत्याग्राही' नामक अपंजीकृत समाचार–पत्र, 7 अप्रैल, 1919 को निकाला। 'भारतीय प्रेस अधिनियम' के विरोध में मुंबई से प्रकाशित इस साप्ताहिक के संपादक महात्मा गांधी थे। इसका दूसरा अंक 14 अप्रैल, 1919 को प्रकाशित हुआ, जिसमें उन्होंने 'आत्मनिरीक्षण' शीर्षक से एक लेख लिखा है। 'संपूर्ण गांधी वाङ्‌मय' के खंड 15 के अनुसार गांधी जी अपने लेख में सत्याग्रह की परिभाषा और स्थिति पर प्रकाश डाला तथा सत्य के पालन एवं मन, वाणी, कर्म से किसी को हानि न पहुँचाने को आवश्यक माना। एक टिप्पणी में यह

सूचना दी गई कि 'सत्याग्रह प्रेस' खोला गया है और यह समाचार–पत्र वहीं से छपेगा, परन्तु सत्याग्रही के नाम से पहला अंक छापने के बाद 21 अप्रैल, 1919 को छप कर बंद हो गया। महात्मा गांधी के संपादकत्व में 01 सितंबर, 1919 के 'नवजीवन' (गुजराती) मासिक से साप्ताहिक हो गया। गौरतलब है कि मासिक नवजीवन इंदूलाल याज्ञिक निकालते थे। गांधीजी के संपादकत्व में प्रकाशित 'नवजीवन' राजनीतिक और सामाजिक चेतना जाग्रत करने का एक महत्वपूर्ण साधन बना और स्वाधीनता संग्राम में इसकी महत्वूपर्ण भूमिका मानी जाती है।

1922 से 1924 तक सत्याग्रह आंदोलन के कारण महात्मा गांधी को जेल की यातना भोगनी पड़ी। इस दौरान भी 'नवजीवन' स्वामी आनंद और उनके सहयोगियों द्वारा निकलता रहा, किन्तु 6 अप्रैल, 1924 को जेल से वापस आने के बाद उन्होंने पुनः संपादन का दायित्व सँभाला। उन्होंने 'नवजीवन' के संपादकीय में लिखा– मैं दो वर्ष के वियोग के बाद जब जेल से छूटा हूँ। आपसे फिर परिचय करने के लिए छटपटा रहा हूँ। मुझे जेल में आपके स्नेह को याद करके हर्ष होता था और बार बार सोचता था कि मैं कब अपने चिंतन का परिणाम आपके सम्मुख रखूँगा, लेकिन वे कोई नया विचार प्रस्तुत नहीं करते। उन्हें जेल में देश की उन्नति के लिए कोई नवीन साधन नहीं मिले, और वे अपने पुराने सत्याग्रह, चरखा एवं देश–सेवा से ही स्वराज्य लेने का मत दुहारते हैं। साप्ताहिक 'हरिजन' का प्रकाशन पुणे से 11 फरवरी, 1933 को आर.व्ही. शास्त्री के सम्पादकत्व में हुआ था, किंतु गांधीजी के हस्ताक्षर युक्त सम्पादकीय इसमें छपता था। इसके

प्रवेशांक में 'अस्पृश्यता' शीर्षक से गांधीजी ने लिखा कि जातीय छुआछूत भारतीय समाज के लिए अहितकर है। 'हरिजन' के प्रकाशन के उद्‌देश्यों के विषय में गांधीजी ने लिखा है– 'मुझे आशा है कि इसके विरोधी भी इसे स्वीकार करेंगे। मैं अत्यंत आशावादी हूँ और मैं विरोधियों के प्रति दुर्भावना नहीं रखता। यह पत्र ऐसे विरोधियों के लिए भी है और सुधारवादियों के लिए भी। 'हरिजन' की आत्मा सत्यता पर आधारित है तथा यदि सुधारक कुछ धैर्य से काम लेंगे, तब विरोधी भी भविष्य में सुधार पर विश्वास करने लगेंगे।''

डॉ. कमलकिशोर गोयनका ने गांधी पत्रकारिता के प्रतिमान में लिखा है कि गांधीजी ने पत्रकारिता को व्यापार बनाना अस्वीकार किया और जनता को स्वामित्व सौंपा। इस कारण उन्होंने 'इंडियन ओपिनियन' को ट्रस्ट को सौंप दिया। उनके इस प्रतिमान से कुछ अन्य प्रतिमान भी सामने आए, जैसे व्यापारिक विज्ञापनों का बहिष्कार, कर्मचारियों को निम्नतम वेतन, ग्राहकों की संख्या घटने पर समाचार–पत्र का आकार–प्रकार घटाना, संपादक–प्रबंधक को सेंसरशिप में कठोरता दंड के लिए सहर्ष तैयार होना, माफी माँगकर समाचार–पत्र न निकालना, स्वयं आचार संहिता बनाना और पालन करना, सर्वोपरि रूप में देशाभिमान और राष्ट्र–प्रेम को प्रेरणा एवं कर्म शक्ति मानकर चलाना। उनकी पत्रकारिता का यह ऐसा मॉडल था, जिस पर वे स्वयं चले और भारत आकर 'यंग इंडिया', 'नवजीवन', 'हरिजन' आदि में भी इन्हीं प्रतिमानों एवं सिद्धांतों का प्रयोग किया और तीन दशकों तक सफल पत्रकारिता की।

श्री कृष्ण बिहारी मिश्र के मत में, गाँधी युग की हिंदी–पत्रकारिता की सबसे बड़ी उपलब्धि है कि इस युग में साहित्यिक पत्रकारिता राजनीतिक पत्रकारिता से पृथक हुई। 'मतवाला', 'सुधा', 'चाँद', 'माधुरी', 'हंस' और 'विशाल भारत' जैसी पत्रिकाएँ इसी समय निकलीं इन पत्रिकाओं में गांधी युग की मूल चेतना मुखर है। ज्योतिष जोशी ने साहित्यिक पत्रकारिता में गांधी युग की पत्रकारिता पर लिखा है कि यह वह समय था, जब गांधीजी का पदार्पण हुआ और अपने अहिंसात्मक सत्याग्राहों से वे राष्ट्रीय राजनीति पर छा गए। कांग्रेस की रीति–नीति तब पत्रकारिता का ध्येय बनी, क्योंकि तब एक बड़ा लक्ष्य सबके सामने था– अँगरेजों की गुलामी से मुक्त कराकर भारत को संपूर्ण आजादी दिलाना। इसी अवधि में कोलकाता में लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, जिसमें गांधी जी के सत्याग्रहपूर्ण आंदोलनों को स्वीकृति मिली। उनके प्रादुर्भाव ने पत्रकारिता को एक बड़े मिशन में बदल दिया, तब बाल गंगाधर तिलक की क्रांतिकारी पत्रकारिता भी इसी में विन्यस्त हो गई। इस युग की पत्रकारिता पर गांधीजी के आदर्श और सिद्धांतों की झलक स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। उनके विचारों से प्रेरणा लेकर पत्रकारों की एक पीढ़ी तैयार हुई। अनेक पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं, जिसमें उनके विचारों की अनुगूँज सुनाई पड़ती है। उपर्युक्त उद्धरणों से यह भी प्रमाणित होता है कि तब राजनीतिक पत्रकारिता को एक नयी दिशा मिली थी। नवीनचंद्र पंत ने पत्रकारिता के मूल सिद्धांत में लिखा है–' महात्मा गांधी के नेतृत्व में देश की स्वतंत्रता के लिए पत्रकारिता ने संघर्ष करने वाले प्रमुख संगठनों का रूप ग्रहण किया। गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों और असहयोग आंदोलन के प्रचार के

लिए देश में अनेक दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों का प्रकाशन हिंदी तथा अन्य भाषाओं में प्रारंभ हुआ। हिंदी पत्रकारिता की स्वस्थ एवं पुष्ट परंपरा की भूमि इसी काल में दृढ़ हुई। इस युग की पत्रकारिता पर गांधीजी की विशेष छाप रही।'

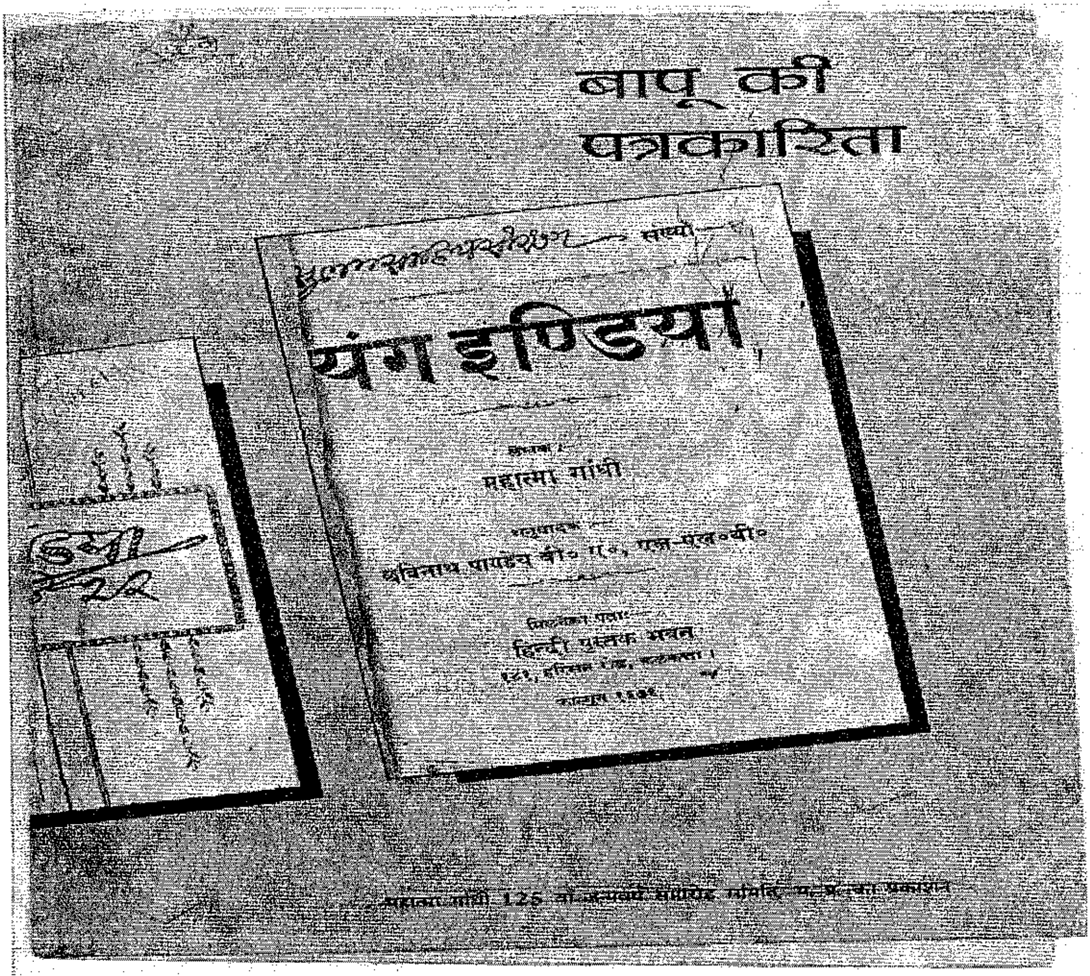

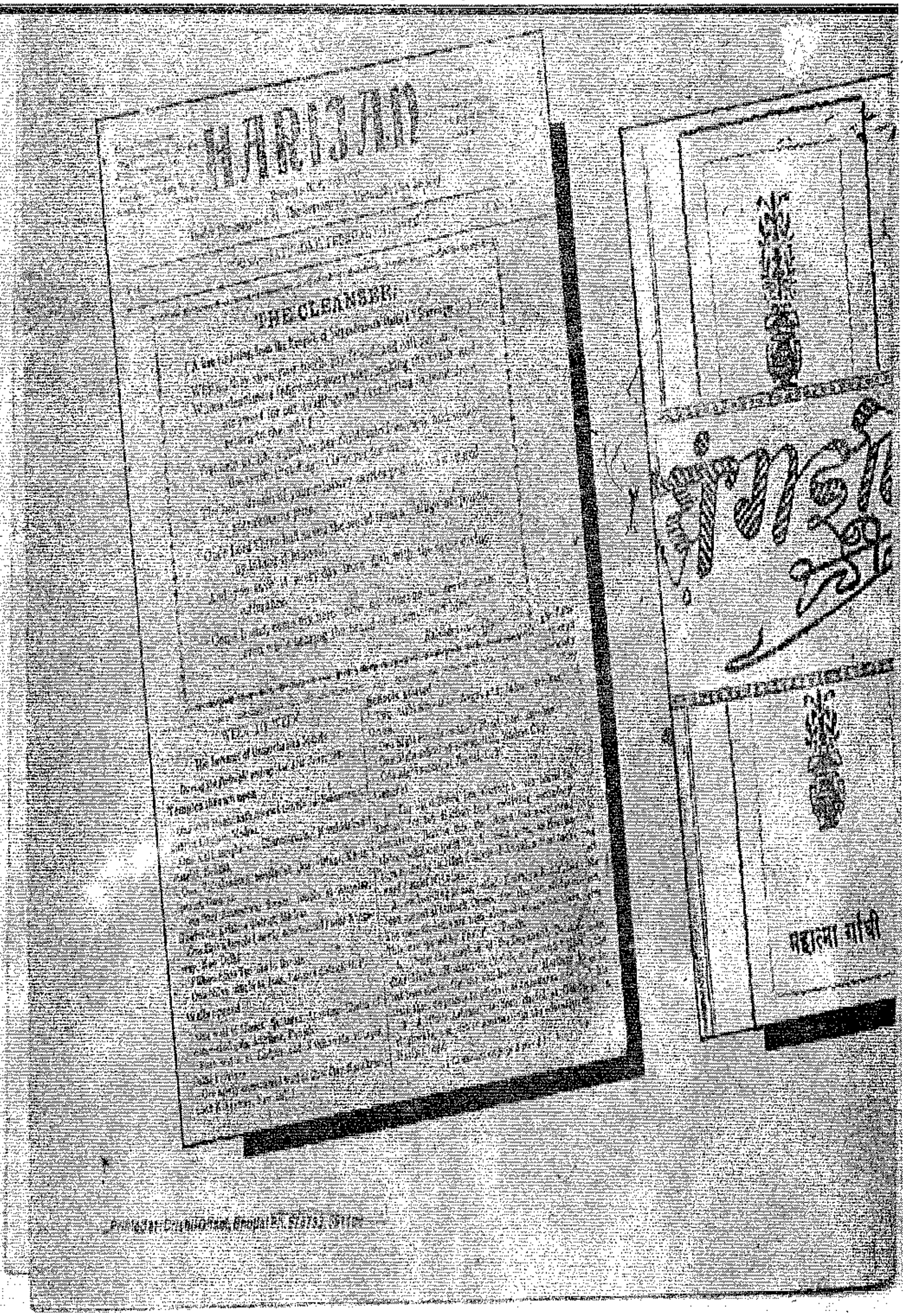
HARIJAN
THE CLEANSER
महात्मा गांधी

भारत से लौटने के बाद जब गांधीजी पुनः दक्षिण अफ्रीका पहुंचे तो 'नेटाल एडवरटाइजर' नामक पत्र का प्रतिनिधित्व ने उनसे कई प्रश्न पूछे थे। उनके उत्तर में उन्होंने लिखा कि मैं प्रत्येक आरोप का पूरा–पूरा जबाव दे सका था। सर फीरोजशाह मेहता प्रताप से उस समय मैंने हिन्दुस्तान में एक भी भाषण बिना लिखे नहीं किया था। अपने उन सब भाषणों और लेखों का संग्रह तो मेरे पास था ही। मैंने वह सब उसे दिया और सिद्ध कर दिखाया कि मैंने हिन्दुस्तान में ऐसी एक भी बात नहीं कही जो अधिक तीव्र शब्दों में दक्षिण अफ्रीका में न कही हो। मैंने यह भी बता दिया कि कुरलैण्ड और नादरी के यात्रियों को लाने में मेरा हाथ बिल्कुल न था। उन दिनों नेटाल में मंदी थी। ट्रांसवाल में बहुत अधिक कमाई होती थी। इस कारण अधिकतर हिन्दुस्तानी वहीं जाना पसंद करते थे। इस खुलासे का और हमलावरों पर मुकदमा दायर करने से मेरे इनकार करने का इतना ज्यादा असर पड़ा कि गोरे शर्मिन्दा हुए। समाचार पत्रों ने मुझे निर्दोष सिद्ध किया और हुल्लड़ करने वालों की निंदा की।

उन्होंने अपने जीवनकाल में मजदूर, किसान, धर्म, राजनीति, कानून, चिंतन आदि अनेक विषयों से जुड़े अनेक प्रश्नों के सत्य और अहिंसा का सहारा लेकर सुलझाया और उनका सटीक निराकरण किया। उनके सिद्धांत व्यावहारिक कसौटी पर हर बार खरे उतरे हैं। अनेक अवसरों पर उन्होंने सत्याग्रह करके लोगों को समझाया कि जो सत्य है, शाश्वत है, उसका आग्रह करना कभी गैर–कानूनी नहीं हो सकता। उन्होंने कहा–'मैं जानता हूँ कि अहिंसात्मक संघर्ष शुरू करके मैं पागलों का सा साहस कर रहा हूँ, वैसा ही जोखिम उठा रहा हूँ,

लेकिन जोखिम उठाये बिना और अक्सर भारी से भारी जोखिम उठाये बिना सत्य की कभी जीत नहीं हुई। उन्होंने अपनी आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग में' स्वीकार किया कि उनके जीवन पर तीन व्यक्तियों का गहरा प्रभाव पड़ा। ये थे रामचंद भाई, टाल्सटाय और रस्किन। वे रामचंद भाई के प्रत्यक्ष आचरण से बहुत प्रभावित हुए, टाल्सटाय की पुस्तक 'द किंगडम ऑफ गॉड इज विदिन यू' ने पक्का अहिंसावादी बनाया और रस्किन जिनकी पुस्तक 'अन टु दिस लास्ट' सर्वोदय विचार का प्रेरणास्त्रोत बनी। उनकी विचारधारा 'गीता–दर्शन' की बुनियाद पर ही खड़ी है। गीता का स्थितप्रज्ञ उनका आदर्श था। स्वधर्म कल्पना के आधार पर ही स्वेदशी की उनकी अवधारणा विकसित हुई। रोटी के लिए श्रम करने के उनके सिद्धांत की जड़ गीता की यज्ञ कल्पना में है।

'इंडियन ओपिनियन' के बारे में गांधीजी ने लिखा है, 'इंडियन ओपिनियन' के पहले महीने के कामकाज से ही मैं इस परिणाम पर पहुँच गया था कि समाचार पत्र केवल सेवाभाव से ही चलाना चाहिए। समाचार पत्र एक जबर्दस्त शक्ति है, परन्तु जिस प्रकार निरंकुश पानी का प्रवाह गांव के गांव डुबो देता है और सफल को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार कलम का निरंकुश प्रवाह भी हानिकारक होता है। यदि ऐसा अंकुश बाहर से आता है तो वह निरंकुशता से भी अधिक विषैला सिद्ध होता है।

गांधीजी ने उल्लेख किया कि 'इंडियन ओपिनियन' के शायद ही कोई अंक ऐसे होंगे जिनमें मैंने कुछ न लिखा हो। इसमें मैंने एक भी शब्द बिना विचारे, बिना तौले, लिखा हो, किसी को केवल खुश करने

के लिए लिखा हो, अथवा जान–बूझकर अतिशयोक्ति की हो, ऐसा मुझे याद नहीं पड़ता। गांधीजी के समाचार पत्रों में न तो अवांछनीय विज्ञापन छप सकते थे और न ही ऐसी बात, जो उनके सिद्धांतों के विरूद्ध या उनसे भिन्न हो, इसलिए उन्होंने कहा था कि मेरे पत्र मनोरंजन के लिए नहीं, अपने दैनिक जीवन को ढालने के लिए चलाये गये हैं। महात्मा गांधी ने 'यंग इंडिया' में महत्वपूर्ण पत्र प्रकाशित किये थे। उनमें पहला पत्र उन भारतवासियों को लिखा गया है, जो महात्मा गांधी के विचारों से सहमत नहीं थे और उनका विरोध करते थे। दूसरा पत्र परिचित तथा अपरिचित अंग्रेज मित्रों के नाम है, जिसमें वायसराय से समझौता न करने के कारण बताते हुए वे अपनी मांग को अपने भारतीय नागरिकों के सामने इस प्रकार व्यक्त करते हैं– यदि ब्रिटिश मंत्रिमंडल का इरादा अच्छा है, तो कांग्रेस के इस सम्मेलन में भाग न लेने से निस्संदेह कोई क्षति न होगी। जिन्हें विश्वास हो वे इसमें जा सकते हैं। यदि वे कोई वस्तु प्राप्त करेंगे जो पूर्ण स्वाधीनता की दृष्टि से देखने योग्य होगी, तो कांग्रेस उसको उपयोगी मानेगी।

4 फरवरी, 1932 को 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' बंद हो गये, परन्तु गांधी जी बेचैन हो उठे। उन्होंने बिड़लाजी को 8 जनवरी, 1933 को चिट्ठी लिखी कि हरिजनों के उत्थान के लिए एक साप्ताहिक पत्र हिंदी और अंग्रेजी में निकाना चाहिए। तदनुसार अंग्रेजी का 'हरिजन' 11 जनवरी 1933 को आर.वी. शास्त्री के सम्पादन में निकला। इसके बाद 'हरिजन' हिंदी में भी निकलने लगा। उनके द्वारा चलाये गये 'हरिजन' आंदोलन और ग्रामोद्योग के लिए एक राष्ट्रीय प्रवक्ता ही हरिजन बन गया। उन्होंने फिर दोहराया कि पत्रकारिता का उद्देश्य

सेवा होना चाहिए। 24 सितम्बर, 1938 के 'हरिजन' में गांधीजी ने खुलासा कियां हरिजन एक समाचार पत्र नहीं है, अपितु एक विचार पत्र है और यह भी समझ लेना चाहिए कि यह समाचार पत्र से सर्वथा भिन्न है। प्रेस के कार्य व्यवहार में सरकार की दखलंदाजी और सेंसरशिप के खिलाफ तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए 24 अक्टूबर को उन्होंने 'हरिजन' में लिखा– यदि मुझे सत्याग्रह पर लिखी एक–एक पंक्ति नई दिल्ली में बैठे प्रेस सलाहकार को भेजना पड़े तो मैं स्वतंत्रापूर्वक काम नहीं कर सकता। तीन साप्ताहिक सत्य के पक्ष में संचालित हैं, जो सर्व संबंधित के हितों के लिए कार्यरत हैं लेकिन यदि सम्पादक को सजा की धमकी के साये में कार्य करना पड़े तो मैं किसी का हित नहीं कर सकता। प्रेस की आजादी तो एक प्रिय विशेषाधिकार है। प्रेस कानून और नियम का एक ऐसा संघातिक प्रहार है कि कोई भी बात और प्रत्येक बात उस प्रकोप के दायरे में लाई जा सकती है।

'यंग इंडिया' में अपने निर्भीक लेख के लिए गांधीजी को पहली बार जेल जाना पड़ा। लेखन की स्वतंत्रता का गला घोंटने वाले किसी भी सरकारी आदेश के आगे समर्पण नहीं किया। जब भी उन्हें अपने विचार पूरी तरह से व्यक्त करने के लिए रोका गया, उन्होंने लिखना बंद कर दिया। कई वर्षों तक पत्रकार रहने के कारण गांधीजी श्रेष्ठ पत्रकारिता की परम्परा पर अधिकार के साथ बात कर सकते थे। वे कहते थे कि लोगों के लिए समाचार पत्र तेजी से बाइबल, कुरान और गीता का संयुक्त रूप लेते जा रहे हैं। पत्रकारिता का फर्ज लोगां को बहादुर बनाना है न कि उनमें भय की भावना का विचार करना।

पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य सेवा होना चाहिए। समाचार पत्र एक बहुत बड़ी ताकत है। जैसे—बाढ़ गांव और खेती को डुबो देती है, उसी तरह अनियंत्रित कलम सब कुछ नष्ट कर सकती है। यदि नियंत्रण बाहर से होता हो, तो वह विषैला सिद्ध हो सकता है। फायदेमंद तभी होगा जब उसे मन में लागू किया जाए। यदि यह तर्क सही है तो विश्वास के कितने अखबार इस कसौटी पर खरे उतरेंगे। फिर निर्णय कौन करेगा ? इसलिए उपयोगी और रद्दी, अच्छे और बुरे की तरह दोनों साथ—साथ चलने चाहिए और लोगों को खुद ही उनमें से चुनाव करना चाहिए। उन्होंने लिखा कि मैं गुस्से या द्वेषवश नहीं लिखता हूँ। मैं भावनाएँ भड़काने के लिए नहीं लिखता। सत्याग्रह और सर्वसाधारण, उसकी भलाई, उसका कल्याण दो ही उद्देश्य लेकर वे चलते थे। उनकी पत्रकारिता की विशेषता थी कि वे जो कुछ भी लिखते या कहते, वह सर्वसाधारण के लिए होता था।

गणेश शंकर विद्यार्थी

स्वतंत्रता संग्राम, समाज सुधार और पत्रकारिता के क्षेत्र में गणेश शंकर विद्यार्थी का अवदान असाधारण और अनन्य रहा। आजीवन कौमी एकता के लिए काम किया और जब कानपुर साम्प्रदायिक दंगे की ज्वाला में जलने लगा तब शांति और सद्भावना की स्थापना के प्रयासों में सक्रिय रहते हुए दंगाइयों के हाथों बलिदान हो गये। उनकी शहादत की महत्ता को रेखांकित करते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, "गणेश की अहिंसा सिद्ध अहिंसा थी।" वे एक समर्थ सम्पादक, प्रखर चिन्तक, मुखर वक्ता और कुशल संगठनकर्मी के रूप में मूर्तिमान आदर्श थे।

दो नवम्बर, 1911 में 'सरस्वती' में सहकारी सम्पादक के रूप में कार्यारम्भ कर विद्यार्थी के पत्रकार जीवन का प्रारंभ हुआ। लेकिन 'सरस्वती' का विशुद्ध साहित्यिक रूझान और विद्यार्थी की राजनीकि अभिरूचि में तालमेल नहीं बैठ सका। दिसम्बर, 1912 में वे 'अभ्युदय' में चले गये, जहाँ 23 सितम्बर, 1913 तक कार्यरत रहे। अंततः 9 नवम्बर, 1913 को उन्होंने कानपुर से साप्ताहिक 'प्रताप' निकाला। प्रवेशांक में 'प्रताप' के मंतव्य और नीति की घोषणा करते हुए सम्पादक ने अग्रलेख लिखा— "आज अपने हृदय में नई–नई आशाओं को धारण करके और अपने उद्‌देश्यों पर पूर्ण विश्वास रखकर 'प्रताप' कर्म क्षेत्र में आता है। समस्त मानव जाति का कल्याण हमारा परमोद्‌देश्य है, और इस उद्‌देश्य की प्राप्ति का एक बहुत बड़ा और बहुत जरूरी साधन हम भारतवर्ष की उन्नति को समझते हैं। उन्नति से हमारा अभिप्राय देश की कृषि, व्यापार, विद्या, कला, वैभव, मान, बल, सदाचार और सच्चरिता की वृद्धि से है। भारत को इस उन्नतावस्था तक पहुँचाने के लिये असंख्य उद्योगों, कार्यों और क्रियाओं की आवश्यकता है। इनमें से मुख्यतः एकता सुव्यवस्थित, सार्वजनिक और सर्वांगपूर्ण शिक्षा का प्रचार, प्रजा का हित और भला करने वाला सुप्रबंध और सुशासन की शुद्ध नीति का राज कार्यों में प्रयोग, सामाजिक कुरीतियों और अत्याचारों का निवारण तथा आत्मावलम्बन और आत्मशासन में दृढ़निष्ठा है। हम इन्हीं सिद्धांतों और साधनों को अपनी लेखनी का लक्ष्य बनायेंगे। हम अपनी प्राचीन सभ्यता और जातीय गौरव की प्रशंसा करने में किसी से पीछे नहीं रहेंगे और अपने पूजनीय पुरूषों के साहित्य, दर्शन, विज्ञान और धर्मभाव का यश सदैव गायेंगे।

किन्तु अपनी जातीय निर्बलताओं और सामाजिक कुसंस्कारों तथा दोषों को प्रकट करने में हम कभी बनावटी जोश या मसहल वक्त से काम न लेंगे, क्योंकि हमारा विश्वास है कि मिथ्याभिमान जातियों के सर्वनाश का कारण होता है। किसी की प्रशंसा या अप्रशंसा, किसी की प्रसन्नता या अप्रसन्नता, किसी की घुड़की या धमकी हमें अपने सुमार्ग से विचलित न कर सकेगी। साम्प्रदायिक और व्यक्तिगत झगड़ों से 'प्रताप' सदा अलग रहने की कोशिश करेगा। उसका जन्म किसी विशेष सभा, संस्था, व्यक्ति या मत के पालन, पोषण, रक्षण या विरोध के लिए नहीं हुआ है, किन्तु उसका मत स्वातंत्र्य विचार और उसका धर्म सत्य होगा। मनुष्य की उन्नति भी सत्य की जीत के साथ बँधी है, इसलिये सत्य का दबाना हम महापाप समझेंगे और उसके प्रचार और प्रकाश को महापुण्य। हम जानते हैं कि हमें इस काम में बड़ी–बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और इसके लिये बड़े भारी साहस और आत्मबल की आवश्यकता है। हमें यह भी अच्छी तरह मालूम है कि हमारा जन्म पराधीनता और अल्पज्ञता के वायुमण्डल में हुआ है, तो भी हमारे हृदय में केवल सत्य की सेवा करने के लिए आगे बढ़ने की इच्छा है और हमें अपने उद्देश्य की सच्चाई और अच्छाई पर अटल विश्वास है, इसीलिए हमें, शुभ और कठिन कार्य में सफलता मिलने की आशा है।''

''लेकिन जिस दिन हमारी आत्मा इतनी निर्बल हो जाये कि अपने प्यारे आदर्श में डिग जावें, जान–बूझकर असत्य के पक्षपाती बनने की बेशरमी करें और उदारता, स्वतंत्रता और निष्पक्षता को छोड़ देने की भीरूता दिखावें, वह दिन हमारे जीवन का सबसे अभाग्य दिन

होगा और हम चाहते हैं कि हमारी उस नैतिक मृत्यु के साथ ही हमारे जीवन का भी अन्त हो जाये।

गणेशजी के आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की लिखी पंक्तियां 'प्रताप' का ध्ययेवाक्य बनीं–

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।

वह नर नहीं, नर–पशु निरा है, और मृतक समान है।

26 अक्टूबर, 1916 को प्रताप प्रेस से छपी पुस्तक 'कुली प्रथा" को सरकार ने जब्त कर लिया। 30 अक्टूबर, 1916 को एक हजार रूपये की जमानत माँगी गई। 22 अप्रैल, 1918 को नानक सिंह हमदत की कविता 'फिदा–ए–वतन के कारण 'प्रताप' की 1916 में ली गई जमानत सरकार ने राजद्रोह का आरोप लगाकर जब्त कर ली। एक माह तक प्रकाशन बंद रहा। 14 अप्रैल, 1919 के 'प्रताप' में 'संग्राम का आरंभ' शीर्षक अग्रलेख में गांधीजी के प्रति विद्यार्थीजी की श्रद्धा और गांधी–मार्ग के प्रति प्रतिबद्धता का परिचय मिलता है। वे लिखते हैं, "गांधीजी की गिरफ्तारी के समाचार ने भारतवर्ष के हृदय को हिला दिया है। वे हिल गये जो सत्याग्रह के महामंत्र पर मुग्ध हैं और वे भी हिल गये जो उस पर दुविधा या चिन्ता से सिर हिलाते हैं।"..... परन्तु किसे मालूम था कि न्यायनीति का वह आडम्बर अपने कमाल दिखाने के लिये और भी रंग धारण करके, और हम शीघ्र ही अधिकारों के इस दुरूपयोग, स्वेच्छारिता के इस विकास बाहुबल के इस प्रदर्शन को देखेंगे। गांधीजी सीधे–साधे हैं, वे सरलता, शांति और निर्दोषिता की मूर्ति हैं। वे भीषण अग्नि के लिए शीतल जल हैं। वे घनघोर घटा के

लिए बलवान वायु हैं। जहाँ वे हों, वहाँ उनका पहुँचना शांति के राज्य का पहुँचना है। ऐसे आदमी पर भारत रक्षा कानून का प्रयोग ! भारत रक्षा कानून ! क्या यह कानून इस नाम से पुकारे जाने योग्य है ? एक गैर कानूनी कानून ! गाढ़े समय में बनाया गया और एक, गाढ़े समय (युद्ध)।

देहली में युद्ध नहीं हो रहा था। पंजाब की भूमि मनुष्य के रक्त में तर नहीं हो रही थी। गांधी ने बम नहीं बनाये थे और न वे इसके लिए देहली जा रहे थे। फिर भी इस कानून के इस्तेमाल की जरूरत का पड़ जाना एक ऐसा मुअम्मा है जो छोटी मोटी अकल में तो आता ही नहीं। परन्तु हमारे हाकिमों की बुद्धि उतनी ही विशाल जितनी कि उनकी क्षमता। उनकी निर्विकारिता, उनकी निभ्रान्तिता उतनी ही असंदिग्ध है जितना कि उसका अस्तित्व....''।

22 नवंबर, 1920 को 'प्रताप' साप्ताहिक से दैनिक हो गया। रायबरेली के किसान आंदोलन को गणेशजी ने जबर्दस्त समर्थन दिया। जनवरी, 1921 में इस घटनाक्रम पर अग्रलेख 'प्रताप' ने छापा। ताल्लुकेदार वीरपाल सिंह ने मानहानि का नोटिस भेजा। 'लीडर' और 'इंडिपेंडेंट' ने तो माफी मांग ली, लेकिन 'प्रताप' ने क्षमायाचना से इंकार कर दिया। विद्यार्थी जी को सजा हुई और 'प्रताप' के संचालकों से तीन हजार रूपये की जमानत और मुचलका माँगा गया। 'प्रताप' फिर दैनिक से साप्ताहिक हो गया। 30 जुलाई, 1921 को उन्हें तीन माह की कैद की सजा और पांच सौ रूपये जुर्माना हुआ। ग्वालियर, इंदौर, उदयपुर आदि रियासतों में 'प्रताप' के प्रवेश पर पाबंदी लगा दी गई थी। 10 मार्च, 1924 से उन्होंने प्रताप का सम्पादन पुनः आरंभ

किया। निहित स्वार्थों के लिये धर्म का इस्तेमाल प्रताप की चिन्ता का विषय रहा।

'प्रताप' के 27 अक्टूबर, 1924 के अंक में धर्म की आड़ में शीर्षक सम्पादकीय में उन्होंने जो कहा था, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है, ''इस समय देश में धर्म की धूम है। उत्पात किये जाते हैं, तो धर्म और ईमान के नाम पर और जिद की जाती है तो धर्म और ईमान के नाम पर। रमुआ पासी और बुद्धू मियां धर्म और ईमान को जानें या न जानें, परन्तु उनके नाम पर उबल पड़ते हैं और जान लेने और जाने देने के लिये तैयार हो जाते हैं। देश के सभी शहरों का यही हाल है। उबल पड़ने वाले साधारण आदमी का केवल इतना ही दोष है कि वह कुछ भी नहीं समझता–बूझता और दूसरे लोग उसे जिधर जोत देते हैं, उधर जुत जाता है। साधारण से साधारण आदमी तक के दिल में यह बात अच्छी तरह बैठी हुई है कि धर्म और ईमान की रक्षा के लिये प्राण तक दे देना वाजिब है। बेचारा साधारण आदमी धर्म के तत्वों को क्या जाने, लकीर पीटते रहना ही वह अपना धर्म समझता है।''

एक तरफ गणेशजी में गांधीजी के व्यक्तित्व–चरित्र के लिए अटूट श्रद्धा है तो दूसरी तरफ उनकी विचारधारा एवं रणनीति के लिए मिश्रित प्रतिक्रियाएँ । क्रांतिकारी दल को लेकर कांग्रेस की जो वैचारिक लाइन थी, उससे गणेशजी सहमत नहीं हुए। कांग्रेस की संघर्ष की नीति गांधीजी तय कर रहे थे और गांधीजी के लिए 'अहिंसा' धर्म की तरह थी। गणेशजी भी अहिंसा के सिद्धांत का सम्मान करते थे, पर उस सम्मान के कारण उन्होंने क्रांतिकारी लाइन का कभी निरादर नहीं किया। भगत सिंह के साथ उनके संबंध बेहद

मधुर रहे। गांधीजी भी एक बार प्रताप कार्यालय आये थे। विद्यार्थी ने गांधीजी को अपने सशस्त्र क्रांति में विश्वास के बारे में बताया। जवाब में गांधीजी ने कहा, 'मैं उस क्रांति को नहीं समझ सकता जो अपने लिए की जाती हो और औरों को मारने दौड़ती है।''

विद्यार्थी ने पत्रकारिता को देश–सेवा का सर्वोत्तम साधन माना था और इसीलिए उन्होंने 'प्रताप' के माध्यम से देश की जो सेवा की, वह इतिहास के पृष्ठों में सदा सवर्णाक्षरों में अंकित की जायेगी। इस कार्य में उनका एक पैर सदा कारावास में रहा और उनके सिर पर सदैव आर्डिनेंसों का डंडा घूमता रहा। लेकिन अपना स्वाभिमान कभी भी न बेचा। अनेक प्रलोभनों में भी उन्होंने अपनी अस्मिता को बचाये रखा।

हिंदी पत्रकारिता का विद्यार्थी मॉडल :

गणेशशंकर विद्यार्थी की जेल डायरी

(शनिवार, 30 दिसंबर, 1922)

डायरी के ये अंश संकेत करते हैं कि गणेशजी के दिमाग में हिंदी पत्रकारिता का एक मुकम्मिल मॉडल था। उस दौर में राष्ट्रीय आंदोलन के कई राजनेता साहित्य और संस्कृति के काम को गौण मानते थे या फिर राजनीति का कृपाकांक्षी काम। उधर साहित्य के दिग्गजों का भी यही रवैया था।

- डायरी में याद्दाश्त वाले पृष्ठों पर दी गई टीपें :
- फोटोग्राफी अवश्य सीखना –

- देशी राज्यों पर सिरीज आफ बुक्स निकालना।
- वाल्मीकि रामायण का सुबोध सचित्र रूपांतर
- रामस्वरूप आदि से हिंदी शार्टहैंड के लिए कहना—

डायरी के इस अंश में और भी कुछ टिप्स हैं, जैसे द्विवेदीजी की पुस्तकें लेना, रवीन्द्र बाबू के ग्रंथों के लिए आज्ञा लेना, देवी प्रसाद पूर्ण की किताब, टॉलस्टॉय अर्थशास्त्र, प्रकृति के अद्भुत कर्म रहस्य 'ल मिजरबल' का अनुवाद विद्यार्थी ने 'आहुति' नाम से किया था। 'आहुति' कभी प्रकाशन का मुंह नहीं देख पाया। 1930 की हरदोई जेल यात्रा के दौरान उन्होंने एक कहानी भी लिखीं थी—'हाथी की फांसी' जो उनकी एकमात्र हिंदी कहानी है। 'सरस्वती' पत्रिका में काम करते हुए विद्यार्थी ने बच्चों के लिए 'शेखचिल्ली की कहानियां'' नाम की पुस्तक लिखी थी। उसका प्रकाशन तो हुआ, अनेक पुनर्मुद्रण भी हुए, लेकिन उस पर लेखक के रूप में विद्यार्थी का नाम कभी नहीं छपा। वे मानते थे—संसार में इतने बड़े लोगों की इतनी अच्छी—अच्छी पुस्तकें हैं कि अपनी मौलिक कृति भेंट करने की अपेक्षा उनके अनुवाद को लोगों के सामने रखना अधिक अच्छा है। वह आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की एक जीवनी हिंदी में लिखना चाहते थे।

4 फरवरी, 1930 को उन्होंने बनारसीदास चतुर्वेदी को एक पत्र में लिखा—''आप जानते हैं कि जॉनसन बड़ा होते हुए भी इतना बड़ा न समझा जाता, यदि उसकी जीवनी का लेखक बासबेल न बनता। आप पूज्य द्विवेदीजी के पास कुछ दिन अवश्य रह जाइए। आप उनके बासवेल बन जाइए। 23 मार्च, 1931 का सरदार भगत सिंह, सुखदेव

और राजगुरू को फांसी हुई। 24 मार्च को कानपुर में दंगा फैल गया। साम्प्रदायिकता के इस ज्वार को रोकने का प्रशासन ने कोई प्रयास नहीं किया। साथियों और सुहृदों के मना करने के बावजूद गणेशजी दंगाग्रस्त इलाकों में गये। शांति स्थापित करने का प्रयास करते हुए गणेशजी की कुछ उन्मादियों द्वारा हत्या कर दी गयी ।

बाबू राव विष्णु राव पराड़कर

हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में बाबू राव विष्णु राव पराड़कर का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य है। 'आज' के सम्पादन द्वारा उन्होंने पत्रकारिता के जो मानदण्ड स्थापित किये थे, उनके आलोक में आज भी हिंदी पत्रकार नई प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं। अपने ादकीय आदर्शों और उद्देश्यों की घोषणा उन्होंने 5 सितम्बर, 20 को 'आज' के प्रथम अंक के अग्रलेख में इस प्रकार की थी– 'हम लोग पूर्व गौरव का गान गाते हैं और भविष्य के स्वप्न देखा करते हैं पर आज का विचार ही नहीं करते, जिससे भारत को सर्वदा आज का स्मरण रहे। अपनी निर्भीक टिप्पणियों और अग्रलेखों के लिए उन्हें अनेक बार ब्रिटिश नौकरशाही का कोपभाजन बनना पड़ा था।

उनके पिता श्री विष्णुरावजी अपनी शैशवावस्था में ही वहाँ से काशी चले आए थे। श्री पराड़कारजी का अक्षर–ज्ञान काशी में ही हुआ था, किन्तु कुछ दिन बाद वे पिता के पास बिहार चले गए थे, जहाँ पर पिता एक हाई स्कूल में अध्यापक थे। उनकी आरंभिक शिक्षा पहले छपरा में हुई, किन्तु कुछ दिन वे पिताजी के पास भागलपुर चले गए, किन्तु दुर्भाग्य ने उनका पीछा न छोड़ा वे अभी केवल 15 वर्ष के ही थे

कि पिताजी का देहावसान हो गया। परिवार का सारा उत्तरदायित्व अपने ऊपर आ जाने पर भी पढ़ाई बंद नहीं की और हाई स्कूल करने के उपरांत 'इण्टरमीडिएट' में प्रवेश ले लिया। इसके उपरांत उन्हें विवश होकर काशी लौटना पड़ा और वहाँ पर पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह करने के लिए ट्यूशन आदि करके जीवन को चलाना पड़ा। संघर्षमय परिस्थितियों में जीवन–यापन कर ही रहे थे कि एक–मात्र आशाकिरण माताजी के वियोग का दुःख भी उठाना पड़ा।

ट्यूशन आदि करने के साथ–साथ वे नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में जाकर अपने ज्ञान को बढ़ाने लगे। जब वे रोजाना तरह–तरह की पुस्तकें लिया करते थे तो एक दिन तत्कालीन पुस्तकालयाध्यक्ष केदारनाथ पाठक ने कौतूहलवश उनसे यह प्रश्न कर दिया–'क्यों भाई, रोज केवल किताबें ले जाते हो या पढ़ते भी हो।" पराड़करजी को यह बात बहुत बुरी लगी। उन्होंने अपने स्वाभिमान को चोट पहुँचती अनुभव करके तत्काल यह उत्तर दिया, अगर आपको किसी प्रकार का संदेह हो तो जिन पुस्तकों को मैं पढ़ चुका हूँ, उनके संबंध में कुछ पूछ देखियेगा।" जब पुस्तकालयध्यक्ष को उनके इस कथन पर भी विश्वास न हुआ तो उन्होंने अपना कौतूहल शांत करने के लिए कुछ प्रश्न कर दिए। पराड़करजी के उत्तरों को सुनकर पुस्तकालयाध्यक्ष महोदय के आश्चर्य का ठिकाना न रहा वे और उनका मुँह ताकने लगे। पराड़करजी की इस स्वाध्याय–वृत्ति का ही यह सुपरिणाम था कि वे अपने सारे पत्रकार–जीवन में नई–से–नई पुस्तकों को ढूँढ़–ढूँढकर पढ़ते थे। उन्हीं दिनों उन्होंने कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दी बंगवासी' के लिए एक उपसम्पादक की

आवश्यकता का विज्ञापन कहीं देखा। अपना प्रार्थनापत्र वहाँ भेज दिया। उन दिनों 'हिंदी बंगवासी' का सम्पादन हरिकृष्ण जौहर किया करते थे। उन्होंने तुरन्त पराड़करजी को अपने यहाँ बुला लिया।

कलकत्ता में पराड़करजी के मामा श्री सखाराम गणेश देउस्कर भी रहा करते थे और वे वहाँ से प्रकाशित होने वाले बांग्ला के सुप्रसिद्ध पत्र 'हितवार्ता' के प्रधान सम्पादक थे। पराड़करजी कलकत्ता जाकर उन्हीं के पास ठहरे। उनके सम्पर्क में रहकर पराड़करजी के व्यक्तित्व तथा बौद्धिक विकास में जो निखार आया, उससे उनका उत्साह दिनानुदिन द्विगुणित होता गया। वहाँ रहते हुए उन्होंने अपने हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा के ज्ञान में वृद्धि करने के साथ–साथ बांग्ला भाषा में भी अच्छी प्रगति कर ली। 'हिन्दी बंगबासी' में कार्य करते हुए उन्होंने अपने स्वाध्याय की आदत को नहीं छोड़ा, जिसके फलस्वरूप उनके जीवन में उत्कृष्ट पत्रकार बनने के सभी गुण आते जा रहे थे। जब 'हिन्दी बंगबासी' के संचालकों से उनकी प्रतिक्रियावादी नीति के कारण पराड़करजी का मतभेद हो गया तो उन्होंने वहाँ से कार्य छोड़कर अपने मामा देउस्कर जी के साथ ही 'हितवार्ता' के हिन्दी संस्करण में कार्य करना प्रारंभ कर दिया। पत्रकारिता के इस कठिन कार्य में अहर्निश व्यस्त रहने के साथ–साथ वे वहाँ के 'नेशनल कॉलेज' में हिन्दी तथा मराठी के अध्यापन का कार्य भी करते थे। यह कालेज बांग्ला के तत्कालीन क्रांतिकारी युवकों का अड्डा था और उसके प्रधानाचार्य योगी अरविन्द घोष थे। पराड़करजी ने इन्हीं दिनों अपने मामा श्री देउस्कर द्वारा बांग्ला में लिखी क्रांतिकारी पुस्तक 'देशेर कथा' का हिन्दी अनुवाद करने में

माधवप्रसाद मिश्र को सहयोग दिया था और वह 'देश की बात' नाम से प्रकाशित हुई थी। हिन्दी में प्रकाशित होते ही, पुस्तक जब्त कर ली गई थी, हालाँकि इससे पूर्व प्रकाशित उसके बांग्ला संस्करण की ओर सरकार का ध्यान तक नहीं गया था।

धीरे–धीरे पराड़करजी की पत्रकार–कला में निखार आता गया और वे फिर वहाँ से ही प्रकाशित होने वाले 'भारत मित्र' के सम्पादकीय विभाग में चले गये। क्रांतिकारी युवकों और उनके आंदोलन से तादात्म्य होने के कारण उनके विचारों और भावनाओं में भी वैसी ही प्रखरता आती जा रही थी और "भारत मित्र" में उनकी यह विचार–धारा यदा–कदा प्रकट रहती थी। फलतः उन्हें भी 1916 में क्रांतिकारी समझाकर गिरफ्तार कर लिया गया। राजबंदी के रूप में पराड़करजी ने लगभग साढ़े तीन वर्ष बंगाल की विविध जेलों में काटे थे। इस संबंध में पराड़करजी प्रायः कहा करते थे— "मैं गुप्त समितियों में कार्य करने के लिए ही कलकत्ता गया था, पत्रकार बनने नहीं। पत्रकारिता तो मेरे गले पड़ गई थी।" 1920 में जब वे जेल से मुक्त हुए तो परिवार के लोगों के परामर्श पर काशी लौट आए। उन्हीं दिनों काशी के विख्यात जन–सेवी शिवप्रसाद गुप्त ने अपनी 'ज्ञानमण्डल' संस्था की ओर से 'आज' नामक हिन्दी दैनिक के प्रकाशन का निश्चय किया और पराड़करजी उससे सम्बद्ध हो गए। 'आज' में रहते हुए पराड़करजी ने पत्रकारिता के जो मानदंड स्थापित किये, वे उनकी ध्येय निष्ठा और कर्म–कुशलता के ज्वलंत प्रमाण हैं। उनका आदर्श था— "पत्रकारिता का क्षेत्र सेवा का क्षेत्र है, इसमें पहले सेवा और बाद में मेवा की अभिलाषा रखनी चाहिए। भले ही अन्धड़ और तूफान आए,

भूकम्प और दमन का चक्र चले, कोई भी सहयोगी बीमार पड़े या मरे, पत्रकार को तो समय पर पत्र निकालना ही होगा।"

अपनी इस पुनीत धारणा की परिपालना उन्होंने अपने जीवन के अंतिम क्षण तक की और किसी प्रकार के प्रलोभन के सामने उन्होंने घुटने नहीं टेके। यहाँ तक कि जब 'आज' की आर्थिक स्थिति नाजुक थी, तब वेतन में कटौती कराके भी वे उसकी सेवा में संलग्न रहे और 'वेंकटेश्वर समाचार में जाना स्वीकार न किया। उन्होंने 'आज' के माध्यम से भारतीय राष्ट्रीयता की अस्मिता को बचाने का जो प्रयास किया था, उसकी उपमा पराड़करजी स्वयं ही थे। उनकी पत्रकारिता के आदर्श बाल गंगाधर तिलक और गणेश शंकर विद्यार्थी थे। अपने इसी आदर्श की रक्षा के लिए वे यावज्जीवन संघर्ष ही करते रहे। 'आज' की सम्पादकीय टिप्पणियों को हिंदी में जिस चाव से पढ़ा जाता था, उसके मूल में पराड़करजी की वही ध्येयनिष्ठा थी। नमक–सत्याग्रह के दिनों में जब प्रतिबन्धों के कारण 'आज' का प्रकाशन स्थगित हो गया था, तब उन्होंने 'रणभेरी' नामक एक गुप्त पत्र का भी सम्पादन किया था। अनेक विदेशी शब्दों के हिंदी रूपों के मानकीकरण करने की दिशा में पराड़करजी का योगदान अत्यंत अभिनन्दनीय था। 'नेशन' के लिए राष्ट्र इनफ्लेशन के लिए मुद्रास्फीति आदि शब्द हिन्दी पत्रकारिता में पराड़करजी की ही देन माने जाते है। उन्होंने पत्रकारिता के द्वारा हिन्दी की शब्द सम्पदा की भी अभिवृद्धि की। सम्पादन–काल में 'आज' द्वारा हिंदी में चलाए गए अनेक शब्द आज पत्रकारिता में ही नहीं, अपितु साहित्य में सर्वत्र प्रचलित हो गए हैं। 'मिस्टर' के स्थान पर 'श्री' और 'मैसर्स' के स्थान पर 'सर्वश्री'

शब्दों को सर्वप्रथम प्रचलित किया था। वे एक उत्कृष्ट कोटि के पत्रकार होने के साथ–साथ बहुत अच्छे साहित्यकार भी थे। इन्हीं सेवाओं के कारण उन्हें अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के 1938 में हुए शिमला अधिवेशन का अध्यक्ष बनाया गया था। प्रेमचंदजी के निधन के उपरांत उनकी स्मृति में प्रकाशित 'हंस' के विशेषांक का भी सफल सम्पादन किया था।

कुछ दिन तक किन्हीं सैद्धांतिक मतभेदों के कारण उन्होंने आज से संबंध विच्छेद कर लिया था। उन दिनों भी वे खाली नहीं रहे और 'संसार' दैनिक के सम्पादन के द्वारा अपनी पत्रकारिता को यथापूर्व बनाए रखा था। कुछ दि तक काशी से प्रकाशित कमला नामक मासिक पत्रिका का भी सफलता पूर्वक सम्पादन किया था। इस पत्रिका में उनको सहकारी शांतिप्रिय द्विवेदी थे। अपने दीर्घकालीन पत्रकार जीवन में उन्होंने जहाँ पत्रकारिता को नये मानदण्ड प्रदान किये, वहीं भाषा–परिष्कार तथा वर्तनी आदि की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। पत्रकारिता तथा साहित्य के क्षेत्र में की गई उल्लेखनीय सेवाओं के लिए अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन ने 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानित उपाधि भी प्रदान की थी। निधन 12 जनवरी, 1955 ई. को हुआ था।

पत्रकारिता के प्रति वे कितनी समर्पण–भावना रखते थे, इसका सही अनुमान उनके इन विचारों से भली भाँति हो जाता है जो उन्होंने 1927 के एक सम्पादकीय अग्रलेख में इस प्रकार प्रकट किए थे–"हमारा कर्तव्य बुरे की बुराई को प्रकट करना है। हमारा कर्तव्य सार्वजनिक अधिकारों की रक्षा करना है। हमारा कर्तव्य सार्वजनिक

जीवन को पवित्र करके देश में एकता और प्रीति को बढ़ाना है। हम वर्तमान शासन–पद्धति की निंदा कर सकते हैं और उसकी जगह लोकसत्तामूलक पद्धति चलाने का प्रयत्न कर सकते हैं। पर भिन्न–भिन्न शासकों और विचारकों पर जातीय पक्षपात, भ्रष्टाचार और अत्याचार का अभियोग बिना अखण्डनीय प्रमाणों के लगाना अपने पवित्र कर्तव्य की अवहेलना करना है। हमारा जिनसे मत नहीं मिलता, या जो अन्य धर्म के अनुयायी हैं, उन्हें पक्षपाती अथवा अन्यायी कहने का हमें कोई अधिकार नहीं है।''

माखनलाल चतुर्वेदी

1919 में इतिहास–प्रसिद्ध आयोजन हुआ– फकीर गांधी का आयोजन। उसमें आमंत्रित देश के तमाम प्रसिद्ध राज–महाराजा आए। गांधीजी का भाषण सुना। अधिसंख्या महाराजा अपने–अपने स्थान से उठकर चले गए। इसी स्थल पर गांधीजी ने देश के क्रांतिकारियों को भी आमंत्रित कर रखा था। आमंत्रण के वक्त ही सूचना भेज दी थी कि 'आज तक आप मेरी बात सुनने के लिए अपने साथ पिस्तौल लाना नहीं भूले। लेकिन अब आप मेरे पास आते समय अपनी पिस्तौलें लाने का कष्ट न करें। बिना पिस्तौल ही आएं और देखें कि मैं वही काम करता हूँ, जो आपका अभीप्सित काम है।' उनके इस निमंत्रण पर सभी गंभीर चिंतक क्रांतिकारी अपनी पिस्तौलें घर पर ही छोड़कर पहुंचे। इनमें से एक थे माखनलाल चतुर्वेदी–सीधे–सादे वेश में, कोसे का फेंटा बांधे हुए।

माखनलालजी ने गांधीजी की बातें बड़े ध्यान से सुनीं। उनके भाषण से आश्वस्त नहीं हुए, लेकिन आयोजन में फकीर की बानी से राजा–महाराजाओं के पानी उतरने का जो नजारा देखा, उससे निश्चय किया कि अब वही कार्यक्रम स्वीकार करना है, जिसे गांधीजी अपनाएंगे। प्रकट रूप में वह अपने सशस्त्र क्रांति के विचार की सक्रियता से विश्राम लेकर गांधीजी की राजनीति में संगी–यात्री हो गए। अप्रैल, 1919 में तृतीय मध्यप्रांतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन हुआ। उसमें प्रस्ताव पारित हुआ कि मध्य प्रांत के हिंदी क्षेत्रों से एक हिंदी पत्र निकलना चाहिए। जुलाई तक कोई धनिक शक्ति इस प्रस्ताव के अनुरूप सहयोग के लिए आगे नहीं आई। तब पं. विष्णुदत्त शुक्ल, पं. माधवराव सप्रे और उनके विश्वसपात्र संगी–साथी होने के नाते उन्होंने फैसला किया– 'हम यह काम करके दिखाएंगे।'

वे लोग अच्छी तरह जान–समझ चुके थे कि देश के समाचार–पत्रों का गला विदेशी सरकार के कानून के शस्त्रों से बार–बार रेता जा रहा है, लेकिन उन्हें आजादी के आंदोलन में राजनीति के हथियार के साथ–साथ पत्रकारिता क हथियार को निरंतर धारदार बनाना है और 'वार' करने के किसी भी मौके से चूकना नहीं है। इसलिए समाचार–पत्रों को ब्रिटिश हुकूमत के दायरे में ही अपनी आजादी के बचाव की रणनीति तैयार करनी है। युवा माखनलालजी और वरिष्ठ सहयोगियों ने बतौर रणनीति तीन बातें स्वीकार कीं–1. हम इतना बचकर लिखें कि कानून का दैत्य हमें निगल न जाए 2. कानून द्वारा लिखने के साधन और उसकी स्फूर्ति छिन जाने के बाद भी ऐसी कौन–सी बातें हैं जिन्हें लिखकर हम राष्ट्र को खड़ा करने का

बल उसमें ला सकें, और 3. ऐसे कौन से साधन हैं जो व्यवसाय की दृष्टि से समाचार–पत्रों को जिंदा रख सकें।

तब तत्परता से तैयारी हुई 1919 की जुलाई–अगस्त में 'पत्रिका' (साप्ताहिक) का डिक्लेरेशन लिया गया। सब साधन एकत्रित किए गए। जबलपुर से 1920 की 11 जनवरी से 'कर्मवीर' की छपाई शुरू हो गई। इस तैयारी में करीब 9 महीने लगे।

पत्रिका के नामकरण को लेकर तो वे कई–कई दिन बेचैन रहे। रातों की नींद गई। उन दिनों मराठी में 'केसरी' निकलता था। हिन्दी में 'सरस्वती' पत्रिका थी और कानपुर से 'प्रताप चलता था। माखनलालजी पाठक, लेखक, समर्थक, किसी न किसी हैसियत से सबसे जुड़े थे। लेकिन उन्हें लगता था कि उन नामों में जो सदाशयता थी, वह आधुनिक जीवन के लक्ष्यों की द्योतक नहीं है। उन्होंने नाम की समस्या पर और उसके प्रति बरती जाने वाली उदासनीता पर गंभीरता से विचार किया और इस निर्णय पर पहुंचे कि जब गांधीवादी विचारधारा का पत्र निकालना है तो उसे जोखिम के साथ यह आपदा भी खुलेआम झेल ली जाए कि नाम भी किसी ऐसे लोकनायक जीवित व्यक्ति के पर्याय के अनुरूप ही रखा जाए जो राष्ट्र को अधिकतम नवप्राण देने की तपस्या कर रहा हो। प्रारंभ में झिझक बहुत रही, क्योंकि 'कर्मवीर' शब्द में अतिसाहसिकता की ध्वनि निकलती थी। पर आखिर यही नाम रखने का निश्चय किया गया। उन दिनों गांधीजी जनजीवन में 'कर्मवीर गांधी' कहलाते थे।

वह रौलेट एक्ट के आतंकवाद का युग था। लोग राजनीतिक समाचार–पत्र निकालना जेल में सांघातिक यंत्रणा उठाने से कम नहीं मानते थे। जब उन्होंने पत्र निकालने का अंतिम फैसला कर लिया और आगे की कार्यवाही के लिए निकटस्थ मित्रों से परामर्श किया, तब उनके एक मित्र ने सलाह दी–'डिक्लेरेशन की अर्जी में लिख दो कि यह पत्र केवल रोजी–रोटी कमाने के लिए निकाला जा रहा है। तब बहुत ही सुविधा से डिक्लेरेशन मिल जाएगा।'

यह सुनकर वे बेहद मर्माहत हुए– केवल रोटी कमाने के लिए क्या अब यह शरीर शेष रहा है ? क्या सिर्फ इसी के लिए यह तरूणाई पकी है ?

उनका कवि तिलमिला उठा। तत्काल उन्होंने एक कविता लिखी–

फिसल जाऊंगा, ललचा रहे,
तुम्हारी आज्ञा है मत हटो।
लिए वे दंड–भेद कस रहे,
और तुम कहते हो मर मिटो।
आपदाओं के जीवन–प्राण,
घूरते हैं मुझे भगवान।

जहां खुल पड़ती जरा जबान,

बनाते कांटो वाला स्थान।

पाप से मिलती हो तो देव

नहीं है देशभक्ति की चाह।

कहो, व्याकुल हूं, कैसे करूं ?

बताओ, परम मुक्ति की राह।

कविता ने उनकी ऊर्जा को मुक्त किया। और वह निडर होकर 'कर्मवीर' का नया इतिहास रचने के लिए चल पड़े।

माखनलाल 'कर्मवीर' का डिक्लेरेशन लेने के लिए जिला मजिस्ट्रेट मिथाइस, आई.सी.एस. के बंगले पर पहुंचे। उस समय रायबहादुर शुक्लजी ने माखनलाल को एक पत्र थमाया, जिसमें लिखा गया था कि मैं बहुत गरीब हूँ और उदर–पूर्ति के लिए कोई रोजगार करने के उद्देश्य से कर्मवीर नामक साप्ताहिक पत्र निकालना चाहता हूँ। उन्होंने जिला मजिस्ट्रेट को अपनी ओर से इस तरह का पत्र देने से इंकार किया। उन्होंन फैसला कर लिया था कि जमानत देकर भी यह कर्मवीर निकालेंगे। रायबहादुर शुक्लजी समझते थे कि मिस्टर मिथाइस के सामने उनकी घिग्घी बंध जाएगी और वह कुछ बोल नहीं सकेंगे। उस दिन माखनलाल के साथ जबलपुर पहुंचने वालों में रायबहादुर पं. विष्णुदत्त शुक्ल सहित गुरूवर्य पं. माधवराव सप्रे, दीवान बहादुर, वल्लभदासजी, रायसाहब, गोविंदलालजी पुरोहित और

दीवानबहादुर के वकील श्री कनछेदीलालजी जैन भी थे। दीवानबहादुर वल्लभदासजी ने माखनलाल को 2,500 रूपये के नोट दिए थे।

'एक अंग्रेजी वीकली के होते हुए आप हिंदी साप्ताहिक क्यों निकालना चाहते हैं ? जिला मजिस्ट्रेट मिस्टर मिथाइस ने पूछा। उन्होंने माखनलाल ने दो टूक लहजे में कहा– आपका अंग्रेजी पत्र तो दब्बू है। मैं वैसा पत्र नहीं निकालना चाहता हूँ। मैं एसा पत्र निकलाना चाहूंगा कि ब्रिटिश शासन चलते–चलते रूक जाए।

सब स्तब्ध–चकित !

मिस्टर मिथाइस आयरिश अधिकारी थे। उन्होंने माखनलाल को निहारा। गहरी तौलती नजरों से देखा। बोले–'ठीक है। मैं ऐसे पत्र को देखना चाहता हूँ। मैं आइरिश हूँ और आइरिश जन यह देखना चाहते हैं कि आप शासन बिगाड़ें और मैं शासन को ठीक से चलाऊं। 'इसके पहले कि मिस्टर मिथाइस और कुछ कहें, माखनलाल ने 2,500 रू. के नोट उनकी टेबल पर रख दिए। लेकिन मिस्टर मिथाइस ने कहा–'नो, मैं तो आपसे जमानत भी नहीं लूंगा। इसलिए यह रूपया अपनी ही जेब में रख लीजिए। मैं तो शासन को ठीक बनाऊंगा और आपको आलोचना का मौका न दूंगा। 'बस, कर्मवीर के डिक्लेरेशन की अर्जी मंजूर हो गई।

मिस्टर मिथाइस ने कर्मवीर के प्रकाशन को मंजूरी देते हुए कहा–'मिस्टर चतुर्वेदी, आप भरपूर कोशिश कीजिए कि आपका पत्र सफल हो। मैं अपने शासन को अच्छा रखूंगा। ब्रिटिश शासन छुईमुई का पौधा नहीं। वह फूंक से नहीं उड़ाया जा सकता। 'माखनलाल

चुपचाप मिस्टर मिथाइस की बात सुनते रहे। इच्छा तो थी कि दो–टूक जवाब दें। लेकिन साथ आए रायबहादुर पं. विष्णुदत्त शुक्लजी के खयाल से उत्तर नहीं दिया। उस समय 1910 का प्रेस एक्ट प्रचलित था, जिसमें जमानत लेने पर कोई कारण डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट को नहीं बताना पड़ता था। जमानत न होने पर कारण बताना पड़ता था। यह स्पष्ट था कि मिस्टर मिथाइस उस सबको और प्रेस एक्ट को भी पढ़कर वहां बैठे हुए थे, इसलिए चिट जाते ही उन्हें बुलावा भेज दिया था।

कुछ ही मिनट की बातचीत के बाद 'कर्मवीर' के प्रकाशन से संबंधित औपचारिकता पूरी हो गई। चंद मिनट की बातचीत से ही मिस्टर मिथाइस इतने प्रभावित हुए कि उसी स्पष्टवादिता से वह माखनलाल के मित्र हो गए। यहां तक कि बाद में उनके घर पर आकर उन्होंने चाय भी पी। इस तरह 17 जनवरी, 1920 से कर्मवीर का प्रकाशन जबलपुर में आरंभ हुआ। माखनलालजी ने पहले अंक का प्रथम अग्रलेख लिखा—–'हम।'

''हम चल पड़े हैं। हमारी आंखों में भारतीय जीवन गुलामी की जंजीरों से कसा दीखता है। हृदय से पवित्रतापूर्वक हम प्रयत्न करेंगे कि वे जंजीरें फिसल जाएं या टुकड़े–टुकड़े होकर गिरने की कृपा करें। हम जिस तरह भीरूता नष्ट कर देने के लिए तैयार रहेंगे उसी तरह अत्याचारों को भी। हम स्वतंत्रता के हामी हैं। मुक्ति के उपासक हैं। राजनीति में या समाज में, साहित्य में या धर्म में जहां भी स्वतंत्रता का पथ रोका जाएगा, ठोकर मारने वाले का पहला प्रहार और घातक के शस्त्र का पहला वार आदर से लेकर मुक्त होने के लिए प्रस्तुत

रहेंगे। दासता से हमारा मतभेद रहेगा। फिर चाहे वह शरीर की हो या मन की, व्यक्तियों की हो या परिस्थितियों की, दोषियों की हो या निर्दोषियों की, शासकों की हो या शासितों की।

''जिनके पास बल है किन्तु मनुष्यता नहीं, उनकी हम मनुष्यता की याद दिलावेंगे। जिनके पास मनुष्यता है, किन्तु संसार का कोई बल नहीं, उन निर्बलों को उनके बल की याद दिलावेंगे। संसार के इस सिद्धांत की शंखध्वनि में साथ देंगे कि 'अपने–आप पर शासन करने के लिए तैयार हो, राक्षसीय आकांक्षाओं को बल–पूर्वक दबा डालने वाले शरीर और मन वीर हों। एक शासकों के आगे अनेक देशों का शासक भी कोई कीमत की चीज नहीं। हमारा विश्वास है कि संसार के सब विभागों की गुलामी खड़ी नहीं रह सकती, यदि हम अपने–आपके शासक हो जाएं।''

पहले अंक से ही जाहिर हो गया कि 'कर्मवीर' सिर्फ विरोध की नहीं, विकल्प की पत्रिका है। सिर्फ सत्य को प्रकट करने वाली नहीं, बल्कि सत्याग्रह की पत्रिका है। विरोध वे करते हैं, जो कमजोर हैं और सत्याग्रह वह करता है जो बलवान है। सत्याग्रह वहां भी विजयी होता है जहां कमांडरों की क्रूरता, मनुष्यता को रक्तस्नान करा रही हो।' कर्मवीर देश और विदेश की हर उस घटना को ताजा खबर के रूप में पेश करता है, जो स्वाधीनता के संपूर्ण अर्थ को समझने और ग्रहण करने में मदद करे। उन खबरों पर संपादकीय टिप्पणियां, जो प्रजा की वाचा फोड़ दे और प्रभुओं की बोलती बंद कर दें, अलग से लगतीं। 'भारतीय खजाने पर साढ़े साती', 'अंग्रेजी सभ्यता का नमूना', 5,00,000 जमानत में प्रेस एक्ट का दुष्चक्र 'क्या पंजाब में बलवा हुआ था ?

'हंटर कमिटी की मेजॉरिटी रिपोर्ट और माइनॉरिटी रिपोर्ट', 'देश की स्वाधीनता की तैयारी जैसी दर्जनों रिपोर्टें यू पेश हुई जैसे भारत का लोकमानस अपना आकलन कर रहा है। 'कर्मवीर' के प्रखर और निर्भीक संपादकीय स्वतंत्रता–संघर्ष के धधकते इतिहास को अत्यंत प्रामाणिक रूप से पेश करने लगे।

"भारत के लिए कौन–सा पथ है ? क्या वह भी धोखेबाज बने ? आज तक भरपूर प्रयत्न किया गया कि भारत खूब धोखेबाजी सीखे। प्रत्येक पढ़े–लिखे की यह उम्मीद रही कि हम चालबाजियों और राजनीतिक दांव–घातों से स्वराज्य ले लेंगे। प्रतिवर्ष 'बाकायदा' अधिकारों की मांग की गई। हमारे यहां के बड़े–बड़े दिमागों ने खूब राजनीतिक चाले चलीं और वे देश–हित–चिंतक भी कहाते रहे और शासकों के विश्वास–पात्र भी। किंतु उनके संपूर्ण प्रयत्नों के रहते हुए भी स्वराज्य मंदिर नजदीक नहीं, दूर ही होता दीखने लगा। और पूजनीय गोखले महोदय के मुख से निकला भारत के भाग्य में निराशाओं में काम करना बदा है, अपार काम सामने है और काम करने वालों का टोटा है। यदि स्वाधीनता की उस लड़ाई में गोखले महोदय ने देश के उस समूह की भी मांग की होती जो बेपढ़ा कहलाता है और जो 100 में 94 हैं, निराशा में भी उन्होंने आशा का संदेश दिया होता, तो जिन वस्तुओं की प्राप्ति वे चाहते थे, उन्हें प्राप्त कर लिया होता। भरतीय राष्ट्र में जो सज्जन कर्मण्य समझे जाते हैं, उन्होंने अपने शासक से सीखकर यह पथ पकड़ा कि कहा जाए कुछ और किया जाए कुछ। नतीजा यह हुआ कि हमारे प्रयत्न 'तमाशा' कहे जाने लगे और हमें छोटी–छोटी साधनाओं के लिए बड़े–बड़े दांव–घात

करने पड़े। इस नाटक के सहारे हमने डेढ़ शताब्दी की गुलामी दिखाई और परिणाम देखा कि हम दुनिया में कोई चीज नहीं और हमारी कोई पूछ नहीं। इसलिए, जिन सज्जनों को यह ख्याल है कि वे धोखेबाजी से, कूटनीति से--भारत को स्वाधीन कर देंगे, वे न तो अब खुद ही अधिक धोखे में रहें और न देश को अधिक धोखा दें। कूटनीतिज्ञ अंग्रेज जाति का मुकाबला करने के लिए भारत को वह धोखेबाजी नहीं चाहिए जो सदियां गुजार कर भी 'दास' बनाए रखे। भारत को उस ताकत की जरूरत है, जिसमें चाहे प्राण देने पड़ें, चाहे अपने बच्चों को कटवाना पड़े, किन्तु जिसका एकमात्र लक्ष्य हो स्वाधीनता। यदि नपुंसक डिप्लोमेसी, जो मनुष्य जाति की कायरता है, भारत को स्वराज्य दे भी सकती तो वह बिना मजबूत कलेजे और सशक्त भुज--दंडों के उन्हें संभाल नहीं सकता। जिस स्वाधीनता के लिए देश की हजारों जानें कुर्बान न हों, वह स्वाधीनता भारत की स्वाधीनता नहीं। भारत के लिए एक ही पथ है-- प्राण देकर स्वाधीनता प्राप्त करना। डिप्लोमेसी नहीं, जो कायरता का चिन्ह है और जो हथियार, बम गोले और मशीनगनें अपने साथ न रखने वाली जाती की बेड़ियां नहीं तोड़ सकतीं। भारत के बच्चे मरे और भारत स्वाधीन हो। भारत धोखेबाज न हो, उसके लिए सच्चा मार्ग 'अहिंसात्मक असहकारिता' ही है...."

6 महीने बाद 'कर्मवीर' ने वह रिपोर्ट छापी, जिसने मध्य प्रांत में रतौना आंदोलन को जन्म दिया और देखते ही देखते यह आंदोलन अखिल भारतीय स्तर पर धधक उठा--'गोवध की सरकारी तैयारी।' उसमें रतौना कसाईखाने की प्रस्तावित योजना का रहस्योद्घाटन

किया गया। फिर फॉलोअप स्टोरी। करीब 6 महीने तक यह ज्वाला 'कर्मवीर' के पन्नों पर प्रज्वलित रही– 'गायें कटेंगी, किंतु दयालुता' से 'यूरोपियन दयालुता का भीषण चित्र', 'दयालु क्रूरता' जैसी तथ्यात्मक रिपोर्टों के साथ–साथ 'मुसलमानी शासनकाल में गोवध बंद' जैसे प्रामाणिक आलेख छपे। अंततः ब्रिटिश शासन को परास्त होना पड़ा। रतौना कसाईखाना खोलने की योजना वापस ले ली गई। यह घटना अंग्रेजों की भारत में शिकस्त का आगा बनी।

'कर्मवीर' अंग्रेज प्रभुओं को ही नही, बल्कि स्वाधीनता आंदोलन के नेताओं को भी विनम्र लेकिन दो टूक शब्दों में कहता था– "भारत को स्वाधीन बनाने के पथ में हमने टुकड़े–टुकड़े हुए बिना, दल बनाए बिना कार्य नहीं चलाया। हमने यह कल्पना ही लोगों के सामने नहीं जाने दी, जिसके द्वारा कभी किसी प्रश्न पर हम आदर से एकमत हो पाते। हमने यह कह–कहकर कि दलों के बिना प्रजा–सत्ता का सपना देखना भूल हैं– देश को अनेक खंडों में बांट दिया और एक ही उद्देश्य के लिए हजारों को हजारों के प्रति संशयवादी बना दिया। हम चाहते हैं कि सब भारतवासी मिलकर बल लगावें। नेताओं को चेता दिया जाए कि अपना–अपना टाट बाजार में बिछाने की अपेक्षा, आप करोड़ों की शक्ति को केंद्रीभूत करने के लिए भारतीयों को आमंत्रित कीजिए और तभी आशा कीजिए कि लोक–सत्ता प्राप्त करने में मर–मिटने के समय भारतीय जनता आपको अपना सेनापति मानेगी। हम प्रजा की सत्ता चाहते हैं। देश को दल–सत्ता नहीं, प्रजा–सत्ता चाहिए।"

नया साल आया और 'कर्मवीर' में छपा—"इस समय हम अपने गरीब किसान और मजदूर भाइयों का स्मरण करते हैं। देश उनका है और देश की स्वाधीनता उनकी स्वाधीनता होगी। 'कर्मवीर' दुखियों की आवाजों से भरा रहने के लिए है, इसी से वह अपने द्वारा किसी प्रकार की साहित्य—सेवा न हो सकने का अपराधी है। किन्तु यह अपराध वह जान—बूझकर करता है और करता रहेगा, क्योंकि काव्यशास्त्र का विनोद उस दिन सूझेगा जिस दिन उसके शरीर पर चिथड़ा, पेट में टुकड़ा और रहने के लिए अपना मुल्क होगा।"

और जो जोना था, वही हुआ। 'कर्मवीर' के अहिंसक सत्याग्राही रूप के तेज से ब्रिटिश हुकूमत की आंखें चौंधियाने लगीं। 'सभ्य—सुसंस्कृत' ब्रिटिश साम्राज्य की 'अच्छाई', 'सदाशयता' और 'न्यायप्रियता' का आवरण परत दर परत उतरने लगा। उसका पाखंड सामने आ गया। प्रशासन बौखला गया। उसने 124 ए (राजद्रोह) का अपना ब्रह्मास्त्र छोड़ा। 'कर्मवीर' के 11 जून, 1921 के अंक के प्रकाशन के दूसरे दिन दिनांक 12 जून, 1921 को पं. माखनलाल चतुर्वेदी राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार कर लिए गए। वह भी कर्मवीर में प्रकाशित किसी रिपोर्ट या आलेख के लिए नहीं 12 मार्च, 1921 को बिलासपुर जिला कॉनफ्रेंस में दिए गए भाषण के लिए। हालांकि कर्मवीर के संपादक माखनलाल का संकल्प था कि वह जैसा बोलेंगे, उसे वैसा ही लिखेंगे और जो लिखेंगे, उसे वैसा ही जीएंगे। अदालत ने उन पर आरोप तय किया कि उनके सारे भाषण का झुकाव ब्रिटिश भारत में कानून के अनुसार जो सरकार स्थापित हैं, उसकी ओर घृणा और द्वेष उत्पन्न करने और उसके प्रति अप्रीति फैलाने की ओर था।

उन्होंने भाषण में वर्तमान सरकार को अत्याचारी कहा और समझाया कि उसका अंत कर दिया जाए। उन्होंने 1857 के सैनिक गदर की तारीफ की कि यह विदेशी शासन से अपने देश को मुक्त करने के लिए हिंदुस्तानियों का प्रशंसनीय प्रयत्न था। उन्होंने कहा कि सरकार के विरूद्ध उन हिंदुस्तानियों ने जो दलीलें पेश कीं उसका एक उदाहरण यह है कि अंग्रेजों को नुकसान पहुंचाने वाला हिंदुस्तान का कपड़ा उद्योग, जो उस समय उन्नति पर था, उसे नष्ट कर देने के लिए ब्रिटिश लोगों ने हिंदुस्तानी जुलाहों के अंगूठे काट डाले। उन्होंने अंग्रेजों को हिंदुस्तानियों का दुश्मन कहा और उन्हें देश से निकाल देने के लिए अनुरोध किया। उन्होंने इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया कि हिंदुस्तानियों की संख्या ब्रिटिश लोगों से अधिक है और श्रोताओं को समझाया कि तैंतीस करोड़ हिंदुस्तानी मुट्ठी भर अग्रेजों को कितनी सुगमता से निकाल सकते हैं।

इन्हीं आरोपों में उन्हें आठ महीने की कड़ी कैद की सजा दी गई। माखनलालजी कर्मवीर का संचालन अपने सहकारी ठाकुर लक्ष्मण सिंह चौहान को सौंपकर जेल चले गए। अदालत में उनकी पेशी से लेकर जेल तक की यात्रा और जेल–जीवन भी राजनीतिक पत्रकार का रोमांचक इतिहास बना। इस इतिहास का आंखों देखा हाल कर्मवीर के कई अंकों में छपा। इसके लिए विशेष संवाददाता लगाए गए। स्पॉट रिपोर्टिंग के साथ महात्मा गांधी की :यंग इंडिया' में लिखी टिप्पणी भी 'कर्मवीर' के जुलाई महीने के अंक में छापी गई। उसमें महात्मा गांधी ने माखनलालजी और उनके तुरंत पूर्व गिरफ्तार 'कर्मयोगी' के संपादक पं. सुंदरलालजी के कर्तृत्व का समर्थन करते

हुए अहिंसक लड़ाई का 'मर्म' रेखांकित किया। फिर तो फॉलोअप रपटों के जरिये देशा–भर में यह संदेश फैल गया कि अहिंसा से हम स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। वह निर्बलों का ही नहीं, बल्कि बलवानों का भी हथियार है।

माखनलालजी के जेल जाते ही 'कर्मवीर' की अर्थव्यवस्था डगमगाने लगी। 8 महीने की सजा काटकर जब लौटे तो देखा– कर्मवीर का वातावरण बदला हुआ है। 1921 के आंदोलन में मध्यप्रांत की कांग्रेस अपेक्षित भूमिका नहीं निभा पाई थी। स्वराज्य पार्टी का दबदबा कायम हो रहा था। जिन राघवेन्द्र राव के हाथ में प्रांतीय कांग्रेस कमेटी थी, वही स्वराज्य पार्टी की मध्यप्रांतीय शाखा के कर्णधार बने थे। पं. विष्णुदत्त शुक्ल का स्वर्गवास होने के कारण कर्मवीर का भाग्यसूत्र भी राव के हाथों में आ गया था। यह एक लिमिटेड कंपनी द्वारा संचालित हो रहा था– पं. विष्णुदत्त शुक्ल, दीवान बहादुर वल्लभदास, पं. गोविंदलाल पुरोहित, ब्योहार रघुवीर सिंह और राघवेन्द्र राव। शुक्लजी ही कर्मवीर के मुख्य कर्ता–धर्ता थे। उनकी मृत्यु के उपरांत राव की तूती बोलने लगी थी। राव ने माखनलालजी से कहा–आप कर्मवीर का संपादन कीजिए, किंतु स्वराज्य दल का समर्थन करते हुए। माखनलालजी ने एकबारगी इंकार कर दिया। यह तो अखबार की मूल नीति में बदलाव से जुड़ा मामला है! यह कैसे संभव है ? इस पर उनसे कहा गया कि तब इस्तीफा दे दीजिए। माखनलालजी समझ गए कि जेल में उन्हें जब ब्रिटिश हुकूमत घटिया 'खिचड़ी' खिलाकर असहयोग और सत्याग्रह की रचनात्मक शक्ति को तोड़ने की साजिश कर रही थी, उसी वक्त

'कर्मवीर' में उनके खिलाफ 'देशभक्त संचालक' ने भी अपने दलीय आग्रहों की घटिया खिचड़ी पकाई और उनके साथियों को खिला भी दी। जेल की घटिया खिचड़ी खाकर तन से बिखरे, लेकिन मन से निखरे संपादक माखनलालजी ने प्रबंधकों से दो टूक शब्दों में कहा–''तमाम अवरोधों के बावजूद संपादक 'कर्मवीर' की मूल नीति पर कायम रहेगा, और प्रबंधकों के कहने पर इस्तीफा भी नहीं देगा।

उन्होंने स्पष्ट कहा– 'कर्मवीर' के आदि प्रतिष्ठाता थे पं. विष्णुदत्त शुक्ल। उन्हीं के परामर्श से इसकी नीति निश्चित हुई थी। और वह नीति थी–कांग्रेस नीति। अब शुक्लजी नहीं रहे, किंतु मैं अपने को स्वर्गीय आत्मा के प्रति जिम्मेदार मानता हूं। फलतः उनकी नीति पर ही कर्मवीर को चलाऊंगा।'' लेकिन प्रबंधन की घटिया खिचड़ी का असर कर्मवीर के वातावरण में फैले संशय और द्वेष की गंध के रूप में नजर आने लगा था। सत्याग्रही माखनलालजी ने कहा–''अगर आपको कर्मवीर की बुनियादी नीति नापसंद हो, तो मुझे डिसमिस कर दीजिए।''

राव के लिए ऐसा करना बाएं हाथ का खेल था। उन्होंने एक भारतीय आत्मा को कर्मवीर के संपादक पद से डिसमिस कर दिया। जिस कर्मवीर को माखनलाल चतुर्वेदीजी ने अपने खून–पसीने से सींचा, उसी से उन्हें डिसमिस कर दिया गया। हालांकि, जल्द ही यह साबित हो गया कि माखनलालजी को डिसमिस कर राव खुद मिसफिट हो गए।

दूसरी उड़ान–

4 अप्रैल, 1925 से रामनवमी के दिन 'कर्मवीर' दुबारा प्रकाशित हुआ– इस बार वह खंडवा से निकला। अब यह माखनलाल चतुर्वेदी का निजी प्रकाशन था। अपनी दूसरी उड़ान के प्रथम संपादकीय में माखनलालजी ने लिखा–"कर्मवीर का जन्म हो रहा है। ऐसे समय कुछ कहने की प्रथा है, किन्तु मैं तो फिर भी यही कहूंगा कि कहकर दिखाने के लिए पास कुछ भी नहीं है.... यदि गत 16 वर्षों के नम्र प्रयत्न अभी तक कुछ नहीं कर सके, तो आज की दो–चार पंक्तियां क्या कर देंगी। हां, क्षेत्र की कठिनाइयों और बेसमझियों को हटाने और स्पष्ट करने के लिए कुछ कहना आवश्यक है। दोष हों या गुण, हमें यह बात स्पष्ट कहनी चाहिए कि राष्ट्र की सेवा के सन्मुख किसी दल–विशेष का कोई पक्ष हमारे पास न होते हुए भी, हमारे सामने 'असहयोग' जीवन का एक हिस्सा, जरूरत की आवश्यक पूर्ति और राष्ट्रीयता का एक अग्रगामी स्वरूप है।

हमारा उद्देश्य है :

- शासन प्रणाली के पापों और अत्याचारों से झगड़कर किसी भी अन्य देश के हमें पराधीन बनाए रखने वाले मीठे और कड़वे सादे और तीक्ष्ण सब प्रकार के संबंधों को तोड़ना।
- अपनी तथा अपने देश की उस कमजोरी का अंत करना जो राष्ट्र को हानि पहुंचाकर व्यक्ति को महत्व देती है, और जो हमारे आडंबर, अभिमान, आकर्षण और अज्ञान को उभाड़कर, हमें

देश की महान शक्तियों का संयुक्तकारी और निर्माणकर्ता बनाने के बजाय देश के टुकड़े–टुकड़े करने वाला साबित करती है।

- अपने देश की स्वाधीनता और अपने हृदय के विकास को हर स्थान पर आगे बढ़ाना और उस स्वाधीनता को किसी भी कीमत पर भगवान का स्मरण रखते हुए बेचने को तैयार न होना।

'कर्मवीर' चला, खूब चला। इसमें माखनलालजी की लेखनी ने उनके अंदर के एक ऐसे पत्रकार को साकार किया जिसकी मानव और परिस्थिति के मनोविज्ञान में गहरी पैठ हो और जो भविष्य को उसके वर्तमान बनने से काफी पहले पहचान लेता हो। चंद अंकों से 'कर्मवीर' अखिल भारतीय ख्याति का पत्र बन गया। चारों तरफ उसकी धाक जमने लगी। सामान्य बोलचाल की भाषा में लिखे गए प्रखर सुचिंतित और उत्प्रेरक संपादकीय समाचार पत्रों, जनसभाओं और असेंबलियों में बार–बार उद्धृत किए जाने लगे। कर्मवीर सहस्रों पाठकों की आशा–आकांक्षाओं का पुनः प्रतीक बन गया। उसके वैचारिक तेजस्विता और आधुनिकता से भयभीत होकर अनेक रियासतों–भोपाल, झाबुआ, धार, इंदौर, ग्वालियर एवं देवास और साथ ही राजस्थान की कुछ रियासतों ने कर्मवीर का प्रवेश अपने यहां निषिद्ध कर दिया। इंदौर के नरेश और मुमताज संबंधी आंदोलन में इसने खुलकर भाग लिया। यही नहीं, वह जिनके पास पाया जाए, उन्हें भी दंड देने की व्यवस्था की गई। फिर भी उसके स्वर में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

कर्मवीर 11 जुलाई, 1959 तक ठाठ से निकलता रहा। माखनलालजी ने उसका अनवरत संपादन किया। 1925 से 1930 तक चमक–धमक के साथ चलते हुए भी यह स्वावलंबी नहीं बन सका था।

स्वतंत्रता आंदोलन की गति में अपनी ताकत लगा रहा था और फिर उसी ऊर्जा से अपनी गति बढ़ा रहा था। संपादक माखनलालजी ने 1930 में बैतूल (मध्य प्रांत) के जंगल सत्याग्रह में सहयोग किया। मार्च (22 मार्च, 1930, भड़ौंच, गुजरात नमक सत्याग्रह) में उन्होंने गांधीजी से भेंट की और जबलपुर आकर वह असहयेग आंदोलन में गिरफ्तार हो गए। 'कर्मवीर' बंद हो गया। लेकिन जेल से निकलते ही वह इसके स्वावलंबन और अनवरत प्रकाशन के लिए पुख्ता इंतजाम करने में भिड़ गए। 4 अप्रैल, 1931 से प्रकाशन पुनः शुरू हुआ तो फिर रूकने का नाम नहीं लिया। आजादी के बाद भी करीब 12 साल चलने के यह थका।

उन्होंने पाठकों से लेकर लेखकों और व्यवस्थापकों के बीच प्रतिष्ठा के साथ पत्रकारिता और पत्र उद्यम व व्यवसाय चलाने के लिए निम्न पैमाने रखे— सिर्फ विचार के लिए नहीं, बरतने के लिए :

- 'कर्मवीर' के संपादन और 'कर्मवीर' परिवार की कठिनाइयों का उल्लेख न करना।
- कभी धन के लिए अपील न निकालना।
- ग्राहक संख्या बढ़ाने के लिए कर्मवीर के कालमों में न लिखना।
- क्रांतिवादी पार्टी के खिलाफ गांधीजी के (भी) वक्तव्य छापने से इंकार करना।
- सनसनीखेज खबरें कभी न छापना।
- विज्ञापन जुटाने के लिए किसी आदमी की नियुक्ति न करना।

केवल दल–विशेष के लोग ही उसे नहीं पढ़ते थे। वह जितनी तीक्ष्णता से ब्रिटिश शसन के पायों पर आक्रमण करता था, उतनी ही तीक्ष्णता से उन लोगों को चुनौती देता था, जो देशद्रोह और शोषण का घृणित खेल खेलते थे।

उन्होंने इसके माध्यम से एक ऐसे राष्ट्रीय चिंतन को जन्म दिया, जिसे अंतरराष्ट्रीय कहा जा सकता है। अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय प्रश्नों पर उनका साधिकार लेखन पाठकों में जानकारी और उत्तेजना उत्पन्न करता था। टर्की–प्रश्न का निपटारा, अफगान युद्ध, आयरलैंड का स्वराज्य–कानून, रूस की क्रांति, अमेरिका का रंगभेद और गुलामों की खरीद, न्यूजीलैंड में भारतीयों का बहिष्कार आदि अनेक अंतरराष्ट्रीय समस्याओं पर इसके संपादकीय एवं लेख इतिहास के प्रामाणिक दस्तावेज हैं। भारत में पंचायत चुनाव, मजदूर और मजदूरी, खिलाफत का प्रश्न, स्त्रियों पर अत्याचार, सहकारिता, शिक्षा, धर्म, पूंजीवाद और साम्राज्यवाद जैसे विषयों पर इस पत्र का चिंतन और विश्लेषण आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि कुछ प्रश्न चाहे पुराने हो गए हों, पर अभी जीवित हैं। (संपादक भी माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली)।

साहित्य, समीक्षा, कला और अन्य ललित विषयों से भी कर्मवीर का गहरा सरोकार रहा। आधुनिक पीढ़ी के निर्माण में और नई प्रतिभाओं के उन्नयन में उसने प्राणवान, संप्रेरक और अत्यंत आत्मीय भूमिका निभाई। वह अपने युग के असहायों, दलितों, मजदूरों, किसानों और शोषितों की ताकत और आवाज बना। 25 दिसंबर, 1925 को एक प्रसंग में माखनलालजी ने लिखाः हम भारतीय वस्त्र व्यवस्था को देश की आवश्यक धरोहर समझते हैं। इसी वजह से पूंजीपति

मिल–मालिकों से हम कहना चाहते हैं कि आप विदेशी वस्त्रों के मुकाबले अपने व्यवसाय की उन्नति कीजिए। स्वयं धन और यश कमाइए, परन्तु यह न भूल जाइए कि आपका धन, मिलों के मजदूरों की वजह से पैदा होता है। आपका धन आपके वस्त्र को खरीदने वाले भारतीय खरीददारों से पैदा होता है। आज सरकार ने आपकी मदद की है, पर आपकी सच्ची सहायता उन लोगों से आती है जो आपके खरीददार हैं और जो मर–खपकर आपका कपड़ा बनाते हैं।''

24 अप्रैल, 1926 को रॉयल कमीशन के संदर्भ में 'कर्मवीर' ने अत्यंत निर्भीकता से लिखा– ''रॉयल कमीशन चाहता है कि भारतवासी खेती पर ही जीने के लिए विवश हों। यह भारत के भूखे पेटों, सूखी हड्डियों और गरीब किसानों को चुनौती है। क्या हम इस चुनौती को चुपचाप बर्दाश्त कर लेंगे ? हमें एक स्वर से गर्जना करनी चाहिए– 'हमें खेती का ब्रह्मास्त्र मत सिखाओ'। हमें व्यापार की कुंजी चाहिए। हम प्राण रहते अपने बचे–खुचे कुछ बाजार तुम्हें हरगिज न हथियाने देंगे।'' (लॉर्ड रीडिंग के भारतीयों को खेती पर निर्भर रहने के वक्तव्य पर)।

उनके द्वारा लिखित संस्मरण –

'साहित्य नहीं, समय बोला'

महात्मा गांधी ने नमक सत्याग्रह छेड़ा, मैं तारीख 22 मार्च, 1930 को भड़ौंच पहुंच गया। डॉक्टर चंदूलाल के साथ वहां का गांधी सेवाश्रम देखा। महात्माजी की डांडी–यात्रा के बारह सिपाही वहां शुश्रूषा कर रहे थे। मेरे साथ वर्धा के (स्वर्गीय) बाबा साहब

नीलकंठराव देशमुख और जबलपुर के श्री बद्रीनाथजी थे। बाबा साहब जंबूसर गांव में महात्माजी से मिलकर लौट आए थे। मैं भड़ौंच से समनी गांव गया। बुआ नामक ग्राम से महात्माजी और नमक सत्याग्रहियों की टोली समनी आ रही थी। समनी आकर मैंने देखा कि गुजरात के गांवों में नमक सत्याग्रही बापू के स्वागत के लिए समनी गांव आ रहे है। समनी गांव की आबादी नौ सौ पैंसठ है। वह बहुत छोटा सा गांव हैं। किन्तु आसपास के गांवों से गुजराती किसानों के झुंड के झुंड बापू के दर्शन के लिए एकत्रित हो रहे थे। विशेषता यह है कि उनमें से शायद पंचानबे प्रतिशत के लगभग तो पैदल ही मीलों का प्रवास करके आए थे। गुजराती किसान के दर्शन मैंने वहीं किए। उनकी पीठ पर एक झोला होता जिसमें एक लोटा, एक धोती और खाने के लिए गांठिया नामक गुजरात का बना पदार्थ होता। शाम को साढ़े पांच बजे मैं गुजराती किसानों से बात करता हुआ गांव से समनी आने के लिए रास्ते में पड़ने वाले केरंवाड़ा और सूड़ी गांवों की ओर चला। गांवों में लोगों ने पानी खींच रखा था। बिछायतें बिछा रखी थीं, हाथ–कते सूत की मालाएं तैयार थीं। उस समय मुझे गुजरात के गांवों में बापू के दर्शनार्थ रास्ते में दस–दस, पांच–पांच की टोलीमें गुजराती किसान पुरूष और स्त्रियां साथ चलते दीखे। अंधेरा होने पर किसान लैंपों की कतार अनेक रेलवे स्टेशनों का भ्रम पैदा कर रही थी। जिस टोली को समझाइए कि बापू आते ही होंगे मत जाओ, उनके उत्तरों के वाक्यों को सुनिए: 'हमारा बापू दुबला–पतला' है, कहीं वह बीमार नहीं हो गया हो। कहीं उसे कंकड़–पत्थरों में चोट आ गई हो। कहीं कांटा लगने से वह रास्ते में ही बैठ न गए हों।'

"शायद इस पापी सरकार ने उन्हें बुआ से चलते समय ही गिरफ्तार कर लिया हो....."

उस समय वहां दो ही रस विद्यमान थे। श्रद्धा का शांत रस और दर्शन की बेचैनी का करूण रस कि इतने में ही दूर पर एक लालटेन दिखाई पड़ी और गुजराती किसान नर–नारी जोर से चिल्ला उठे–बापू आवे छे बधावी लेज्यो! लोग इतने बेचैन कि दूर की लालटेन को देखने के लिए पास के झाड़ों पर चढ़ गए, सो भी अपने–अपने लालटेन लेकर मानो बापू के आगमन पर लालटेनों के रूप में वृक्षों में प्रकाश के फल फले हों। ठहरने की बात सहन न करने में नरसेना मानो वानरसेना बन गई थी और त्रेता के राम–युग को दोहराने बैठ गई थी। जरा उन किसानों की बातें सुनिए :

"भाई, तूने बापू को देखा है ?'

"हां रे।'

"फिर तुम लोगों ने जंबूसर से इतनी पैदल यात्रा करने के लिए बापू को रोका नहीं ?'

"साथ चलते दूसरे किसान ने अपनी पाग संभाली और बोला, बापू जलालपुर क्यों जाते हैं, यही मेरे गांव के पास तो बहुत नमक बनता है, यहीं बनावें। मेरे गांव के लोग तो बापू के जाते ही मीठू नमक बनाने लगेंगे। एक किसान उत्साह में कह उठा, अमें आडा पड़ि जइ शूं यानी हम औंधे पड़ जाएंगे, और बापू से कहेंगे कि तुम तकलीफ नहीं भोगो, तुम्हारी आज्ञा से सारा गुजरात जेल जाने के

लिए प्रस्तुत है.... कि एक आवाज आई– आव्या, आवी गया! और दूसरे ने आवाज लगाई, बापू आवे छे, बधावी लेज्यों!

"एक बहन सड़क पर थक कर बैठे हुए पुरूषों को फटकारकर बोली, साम याने चालोने शूं, बेठवाने आ छौ ? गरज यह कि गुर्जर गांवों की वसुंधरा अपने लालटेनों का लंगर लिए, दीवाली–सी सजाती चल पड़ी। ज्योंही बापू और उनकी टोली पास आई, गुर्जर किसानों की बातचीत बंद हो गई, मानो शील और संयम के रूप बनकर वे नमक सत्याग्रहियों के साथ चलने लगे। आगे–आगे गुजरात की किसान महिलाएं बापू और वल्लभभाई का गुणगान अपने गीतों में करते हुए चल रही थीं। मेरा मन मुझसे पूछ रहा था– इन बिल्कुल ताजे गीतों को गांवों की भाषा में इतने शीघ्र कौन बना गया ? फिर मन ने ही उत्तर दिया– ये भगवान काल की घड़ियां है, जो किसी साहित्यिक या किसी रचना कौशल के लिए नहीं ठहरतीं। यह साहित्य नहीं, समय बोल रहा है।"

"सूढ़ी से समनी के लिए पक्की सड़क थी–ढाई मील लंबी किन्तु बापू अपने सत्याग्रहियों को लेकर धूल–भरी कच्ची सड़क से आए। गड्ढे, गरमी, जमीन में पड़ी दरारें और कांटे, उस सड़क में सब कुछ था। हां, यह मालूम हुआ कि गुजराती किसान नर–नारी दिन–भर उस सड़क के कांटे चुनकर दूर फेंक दिया करते थे, जिस सड़क से बापू जाते थे। बापू लंबे–लंबे चल कर आए। सिर में खादी का एक श्वेत टुकड़ा बंधा था। घुटनों तक खादी की एक धोती पहने हुए थे। उनके एक हाथ में लाठी थी, दूसरा हाथ एक स्वयं–सेवक के कंधे पर रखा

हुआ था। बदन खुला था। दो–दो की कतार में सारी सेना कह रही थी : रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम।'

''मानो यह नमक सत्याग्रह के युद्ध में रण–वाहिनी का घोषणा मंत्र था।''

आधुनिक काल के हिन्दी के कवियों में चतुर्वेदीजी ही अकेले ऐसे हैं जिन्होंने अपनी प्रतिभा तथा योग्यता का पूर्ण सदुपयोग राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेकर किया। 1923 में नागपुर में हुए ऐतिहासिक झण्डा सत्याग्रह में डटकर भाग लिया था। 1924 में गणेश शंकर विद्यार्थी की गिरफ्तारी पर कानपुर जाकर 'प्रताप' का सम्पादन भी किया था। कानपुर में रहते हुए 'प्रभा' का पुर्नप्रकाशन भी किया था और उसके द्वारा देश की नई उठती पीढ़ी में राष्ट्रीयता की अद्भुत चेतना जाग्रत की थी। इन साहित्यिक कार्यो में संलग्न रहते हुए 1926 में केन्द्रीय धारा–सभा के चुनावों में महाकोशल कांग्रेस का सफल नेतृत्व किया था और 1929 में सम्पन्न हुए अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भरतपुर अधिवेशन के अवसर पर आयोजित सम्पादक सम्मेलन की अध्यक्षता भी की थी।

'कर्मवीर और प्रभा' के सम्पादन काल में उन्होंने हिन्दी में राष्ट्रीय काव्य धारा का जो प्रचलन किया था, उससे प्रभावित होकर सामान्यतः समग्र देश तथा विशेषतः मध्य प्रदेश में अनेक कवि इस ओर अग्रसर हुए थे। उन्होंने जहाँ पत्रकारिता के क्षेत्र में एक ऐसी पीढ़ी तैयार की थी जो स्वतंत्रता को आदर्श मानकर उसकी प्राप्ति के लिए बड़े–से–बड़े त्याग के लिए तत्पर थी, वहाँ दूसरे क्षेत्र में भी अनेक ऐसे

थे, जिनकी प्रतिभा उन दिनों उनकी जागरूक मेधा से प्रेरणा पाकर ही विकसित हुई थी। सुप्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान की अकेली 'झाँसी की रानी' कविता ने ही देश में जागृति का जो भैरव–मंत्र फूँका था, वह उनका ही 'प्रताप' था। राजनीति में आकण्ठ निमग्न रहते हुए भी उनकी साहित्य–साधना में किसी भी प्रकार की कोई कमी नहीं आई थी। व्यक्तित्व की यह एक और विशेषता थी कि लेखन तथा भाषण एक जैसा ही होता था। पत्रकारिता में उन्होंने सर्वश्री कालूराम गंगराडे, विष्णुदास शुक्ल और माधवराव सप्रे को अपना आदर्श समझा था, जबकि राजनीति में लोकमान्य तिलक की उग्रता को भी पूर्णतः अपनाया था। उनकी प्रथम काव्य–कृति 'हिम किरीटिनी' ने हिन्दी काव्य को जहाँ नया मोड़ दिया, वहाँ 'हिम तरंगिनी' को साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली ने सर्वप्रथम पुरस्कृत किया था।

वे शब्दों के ऐसे शिल्पी थे कि एक–एक शब्द का प्रयोग बहुत सावधानी से करते थे। यही कारण है कि उनके गद्य तथा पद्य में हार्दिकता तथा संवेदनशीलता पूर्णतः एकाकार हुई सी लगती है। सागर विश्वविद्यालय ने डी.लिट. से सम्मान किया था। 1967 में भारत सरकार ने राष्ट्रभाषा संशोधन विधेयक पारित करके हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने की अवधि बढ़ाई थी, तब विरोध में सरकार द्वारा प्रदत्त 'पद्मभूषण' के अलंकरण को वापस करके हिन्दी के गौरव की रक्षा की।

इकाई–2

स्वतंत्र भारत में पत्रकारिता का विकासः

शताब्दियों की दासता के पश्चात् स्वतंत्रता प्राप्ति किसी भी राष्ट्र के लिए निविड़तम अन्धकारपूरित रात्रि की समाप्ति पर हुए अरूणोदय के समान होती है। तमस रूद्र नेत्रों से जब राष्ट्र स्वतंत्रता के सूर्य के दर्शन करता है तो जाने कितनी आशा–आकांक्षाएँ उसके हृदय के हर कोने में मचलने लगती हैं। हमारे देश के प्रखर स्वतंत्रता संग्राम ने राष्ट्र में जहाँ एक ओर प्रचण्ड आत्मविश्वास जगाया, वहाँ दूसरी ओर भविष्य के प्रति गहन आस्था भाव भरे, उत्साह को भी जन्म दिया। राष्ट्र बहुमुखी विकास के पथ पर अग्रसर हुआ– औद्योगिक, तकनीकी, शिल्पविद्या, व्यवसाय आदि विभिन्न क्षेत्रों में नये–नये आयामों की स्थापना हुई। इसकी एक सहज परिणति हुई, स्वाधीनता के बाद अनेक नये–नये विषयें की पत्रिकाओं के प्रकाशन के रूप में।[1]

पराधीनता काल में पत्रकारिता का जो आदर्श था, वह टूटने लगा, उसकी तेजस्विता धूमिल हो चली। इसी को लक्ष्य करके गणेश शंकर विद्यार्थी ने कहा है कि 'जिन लोगों ने पत्रकारिता के पवित्र कार्य को अपना काम बना रखा है, उनमें बहुत कम ऐसे लोग हैं जो अपने चित्त को इस बात पर विचार का अवसर देते हैं कि हमें सच्चाई

[1] डॉ. रामचन्द्र तिवारीः पत्रिका सम्पादन कला : अपनी ओर से, पृ. 5

की लाज रखनी चाहिए, केवल अपनी मक्खन–रोटी के लिए दिनभर में कई रंग बदलना ठीक नहीं । इस देश में भी दुर्भाग्य से समाचार–पत्रों और पत्रकारों का यही मार्ग बनता जा रहा है– यहाँ भी अब बहुत से समाचार–पत्र सर्वसाधारण के कल्याण के लिए नहीं रहें सर्वसाधारण उनके प्रयोग की वस्तु बनते जा रहे हैं... ।[2]

स्वातन्त्रयोत्तर वर्षों में समाचार पत्रों का स्वरूप काफी बदल गया है। आज इसका मूल ध्येय राष्ट्रीयता के पुनः निर्माण संबंधी तत्वों की ओर है। विशेष रूप से ये प्रवृत्तियाँ इस प्रकार हैं–देश का आर्थिक विकास, समाज का आधुनिकीकरण और प्राचीन तकनीकों को आधुनिक तकनीकों में बदलना। [3]

साहित्यिक एवं सांस्कृतिक :

"साहित्यिक पत्र–पत्रिकाएँ राजनीति के क्षुब्ध वातावरण से ऊपर उठाकर पाठकों को सांस्कृतिक स्तर पर रसविभोर कर देती हैं। दोनों का (समाचार पत्र और साहित्यिक पत्र) अपना–अपना मूल्य है। एक बाजार–भाव है तो दूसरा सामान्य मूल्य। एक समुद्र की लहर की तरह ऊपर उठती है तो दूसरी अन्तर तक पैठ कर मानस को शांत और तृप्त करती है।[4]

आन्ध्रप्रदेश से– सांकल्य (1974, हैदराबाद), आधे (1969, सिकन्दराबाद), मधुवन्ती (1964, हैदराबाद), **बिहार से–** विप्लव (1971, पटना), परिकल्पना (मोतीहारी, 1969), ज्योत्सना (1947, पटना), नारी

[2]गणेश शंकर विद्यार्थी का मनत– डॉ. कृष्णबिहारी मिश्र की पुस्तकः हिन्दी पत्रकरिता में उद्धृत, पृ. 413
[3]डॉ. सुकमाल जैनः भारतीय समाचार पत्रों का संगठन और प्रबन्ध, पृ. 27
[4]हिंदी साहित्यः पिछला दशक (सं. विश्वनाथ) में नरेन्द्र भानावत का लेख, दशक की पत्र–पत्रिकाएं, पृ. 170

जगत (1965, पटना), नर–नारी (1969 पटना), समीक्षा (1967, पटना), **हरियाणा से–** सर्वहितकारी (1973, रोहतक), ज्ञानोदय (1976, हिसार), **हिमाचल प्रदेश से–** हिमाचल सौन्दर्य (1968, शिमला), **केरल से–** केरल ज्योति (1966, त्रिरूवन्तपुरम), **मध्यप्रदेश से–** सप्तवर्णा (1967, भोपाल), उषा (1951, इंदौर), **महाराष्ट्र से–** अमर चित्रकथा (1970, बम्बई), **राजस्थान से –** लहर (1957, अजमेर), मनदर्शी (1972, फालना), **तमिलनाडु से–** हिन्दी प्रचार समाचार (1939, मद्रास), **उत्तर प्रदेश से–** मनोरमा (1924, इलाहाबाद), अरूण, हंसादेव, मनोहर कहानियाँ, (1940, इलाहाबाद), माया (1929, इलाहाबाद), नीहारिका (1962, आगरा), नूतन कहानियाँ (1976, इलाहाबाद), साथी (1960, मुरादाबाद), सत्यकथा (1974, इलाहाबाद), **पं. बंगाल से–** परम्परा (1961, कलकत्ता), रूप–लेखा, **अण्डमान निकोबार और द्वीप समूह से–** द्वीप प्रभा (1973), **दिल्ली से–** दीवाना तेज साप्ताहिक (1965, दिल्ली), साप्ताहिक हिन्दुस्तान (1950, दिल्ली), मुक्ता (1960), वामा, गृहशोभा, माधुरी, सुषमा (1959), मधु मुस्कान, आजकल, (1965, दिल्ली), **पाण्डिचेरी से–** अग्नि शिखा (1970) इनके अतिरिक्त साहित्य संदेश, आलोचना, गवेषणा, वैचारिकी, शोध–पत्रिका, शोध–भारती, पुराकल्प (वाराणसी), लोक संस्कृति (जोधपुर), कला सुमन (दिल्ली), संस्कृति (दिल्ली) आदि।

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा :

बिहार से– डाक्टर भाई (1935, दानापुर छावनी), होम्योवाणी (1970, पटना), **हरियाणा से–** आयुर्वेद विकास, **मध्यप्रदेश से–** स्वास्थ्य और जीवन, **महाराष्ट्र से–** स्वास्थ्य और जीवन (1950, पूना), **पंजाब**

से– जीवन रक्षा (1974, बटाला), **उत्तर प्रदेश से–** होम्योपैथी जगत (1973, हरिद्वार), आरोग्य (1957, गोरखपुर), आयुर्वेद संदेश (1967, लखनऊ), **दिल्ली से–** चिकित्सक, आरोग्य संदेश (1965, दिल्ली), औषध संसार (1978), **राजस्थान से–** शुचि (1969, बीकानेर), आपका स्वास्थ्य (वाराणसी), प्राकृतिक जीवन (लखनऊ), धन्वंतरि (अलीगढ़), चिकित्सक (दिल्ली)

विज्ञान पत्रकारिता :

मध्यप्रदेश से, वैज्ञानिक महाराष्ट्र–से वैज्ञानिक, बम्बई, दिल्ली से विज्ञान प्रगति (1952), विज्ञान लोक, विज्ञान जगत, लोक विज्ञान, आविष्कार, विज्ञान डाइजेस्ट, बालस्पूतनिक, (1965) विज्ञान वैचारिक, विज्ञानदूत, विज्ञान भारती।

खेल पत्रकारिता :

1960 से ही खेल पत्रकारिता की शुरूआत मानी जाती है। आज शायद ही कोई ऐसा दैनिक, साप्ताहिक मासिक होगा जो खेलकूद से संबंधित सामग्री न देता हो। नवभारत टाइम्स में शुरू–शुरू में एक–आध कॉलम पर खेल समाचार छप जाया करता था पर बाद में लोगों की रूचि देखकर पूरा एक पृष्ठ इसके लिए निर्धारित कर दिया गया। राजधानी से प्रकाशित होने वाले दैनिक हिन्दुस्तान के अलावा उत्तरप्रदेश राज्य से निकलने वाले 'आज, स्वतंत्र भारत, दैनिक जागरण तथा राजस्थान से प्रकाशित होने वाले राष्ट्रदूत, दैनिक नवज्योति, भास्कर, राजस्थान पत्रिका, मध्यप्रदेश ये नई दुनिया, नवभारत और अन्य राज्यों से प्रकाशित होने वाले दैनिकों में इसे काफी

स्थान मिलने लगा है। इसमें सर्वश्री सुशील जैन, आनंद दीक्षित, शिवशंकर सिंह, केशव झा, अजमत हाशमी, सुरेश गावडे, अशोक कुमार मुखर्जी जैसे खेल लेखकों का नाम गिना जा सकता है। धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, दिनमान ने भी अनेक खेल विशेषांक निकाले। जैसे–ओलम्पिक विशेषांक, क्रिकेट विशेषांक, एशियाई खेल विशेषांक,। साथ ही इनमें स्थायी खेल स्तम्भ भी आते थे। इनमें हरिमोहन शर्मा, प्रमोदशंकर भट्ट, योगराज थानी, देवेन्द्र भारद्वाज, अजयकुमार भूषण, सरहिन्दी, प्रशांत कुमार, सुशील कुमार दोषी, नरोत्तम मित्र, अरविन्द लवकरे आदि लेखक सामने आये। आजकल तो बाल–पत्रिकाओं में भी खेल–कूद से संबंधी सामग्री छपने लगी है, ताकि बच्चों में शुरू से ही खेल के प्रति रूझान पैदा हो।

खेल–खेल (1976, जालन्धर), क्रीड़ा जगत (जयपुर से पाक्षिक), भारतीय कुश्ती, क्रिकेट सम्राट (1929, दिल्ली), खेल–खिलाड़ी (1970, दिल्ली), खेल सम्राट (1976), स्पोर्ट्स वर्ल्ड (1976), क्रीड़ालोक (1976), स्पोर्ट्स सिटी (1973), खेल भारती आदि काफी लोकप्रिय हैं।

उद्योग व्यवसाय पत्रकारिता :

बिहार से– उद्योग बन्धु (1974, पटना), ग्राम श्री (1959, बम्बई), महाराष्ट्र– जागृति (1956 बम्बई), खादी ग्रामोद्योग (1954, बम्बई), उद्यम (1954, नागपुर), उत्तरप्रदेश– अलीगढ़ उद्योग समाचार (1978), व्यापार संदेश, उद्योग विकास, इंदौर से– भावताव, पश्चिम बंगाल से– इंडस्ट्रियल गजट, दिल्ली से– व्यापार उद्योग समाचार (1974), स्टेशनरी टाइम्स (दिल्ली), सुपर बाजार पत्रिका, (दिल्ली), आर्थिक

चेतना, आर्थिक जगत, उत्पादकता, योजना, सम्पदा आदि उद्योग संबंधी पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं।

फिल्म पत्रकारिता :

दैनिक पत्रों ने आरंभ में तो फिल्मों के प्रति उपेक्षा का बर्ताव किया, पर शनैः—शनैः इसमें भी फिल्मी पत्रकारिता को महत्व मिलता गया। 'नवभारत टाइम्स' ने आरंभ से ही फिल्मी पत्रकारिता को स्थान दिया। 'हिन्दुस्तान' ने प्रारंभ में थोड़ी सामग्री दी पर बाद में उसने भी सप्ताह में एक बार एक पृष्ठ फिल्मी समाचारों पर देना शुरू किया। इस तरह धीरे—धीरे वीर प्रताप, पंजाब केसरी, हिन्दी मिलाप, आज, नवजीवन, स्वतंत्र भारत, नवभारत, जागरण, नई दुनिया, राजस्थान पत्रिका, दैनिक नवज्योति, भास्कर आदि ने फिल्मों से संबंधित सामग्री का प्रकाशन शुरू किया। सरिता एकमात्र ऐसी पत्रिका है जिसने शुरू से ही श्रेष्ठता के आधार पर फिल्मों के वर्गीकरण की परिपाटी आरंभ की। धीरे—धीरे साप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग, जैसे साप्ताहिकों ने भी फिल्मी जगत पर गंभीर सामग्री देना शुरू की। हिंदी पाठकों में फिल्मों के प्रति रूझान तो था ही, साथ ही फिल्मों ने भी राष्ट्र—निर्माण में अपनी भूमिका अदा करनी शुरू की। सरकार ने भी इसे प्रोत्साहन दिया। कुछ अखबार तो सप्ताह में एक फिल्म संस्करण भी निकालते हैं। जैसे—पंजाब केसरी, हिन्दी मिलाप, तथा वीर प्रताप, आदि आज कई साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक प्रमुख फिल्मी पत्र—पत्रिकाएँ निकल रही हैं। जैसे महाराष्ट्र से —उर्वशी (1959, बम्बई), रजनीगंधा (1975, बम्बई), चित्रावली (1959, बम्बई), चित्रा, माधुरी (1965, बम्बई), रस नटराज (1963, बम्बई), राजस्थान से— सिनेपत्र (1974, अजमेर),

उत्तर प्रदेश से– सिने समाचार, फिल्म संसार (1970, मेरठ), पश्चिमी बंगाल से– सिने एडवांस (1971, कलकत्ता), स्क्रीन (1960, कलकत्ता), दिल्ली से– छायाकार (1976, दिल्ली), चित्रलेखन (1948, दिल्ली), फिल्म रेखा (1968), फिल्मी संजोग (1976), मनोरंजन, मेनका, नव–चित्रपट (1947), प्रिया (1962), रंगभूमि (1941), युगछाया (1977), सिने दर्पण (1979, दिल्ली), मायापुरी (1974, दिल्ली), फिल्मी दुनिया (1958), पालकी, फिल्मी कलियाँ, (1968), सिने एडवाइजर (1974), फिल्मी ऐरा (1979), फिल्में ही फिल्में (1975), मूवी, प्रिया, सुचित्रा, राधिका आदि।

बाल–पत्रिकाएं :

मासिक पत्रों के अतिरिक्त साप्ताहिक पत्रों में बाल स्तम्भ के अंतर्गत सुरूचिपूर्ण सामग्री दी जाती है। बाल दिवस पर साप्ताहिक हिन्दुस्तान के बाल–विशेषांक अच्छे निकलते थे पर अब यह पत्रिका बंद हो गई है। धर्मयुग भी हमेशा बाल स्तम्भ देती थी। इसी प्रकार दैनिक पत्रों में नवभारत टाइम्स, हिन्दुस्तान, आज, नई दिल्ली, विश्वमित्र, जागरण, वीर अर्जुन, राजस्थान पत्रिका, दैनिक नवज्योति, राष्ट्रदूत आदि दैनिक पत्र रविवार के दिन प्रचुर मात्रा में बाल सामग्री देते थे। दैनिक नवज्योति मयूर पंख, नाम से बालकों के लिए दो पृष्ठों की सामग्री हर सप्ताह देता है। आज बच्चों की पत्रिकाएँ काफी अच्छी तरह मुद्रित और चित्रित होकर निकलने लगी हैं। प्रमुख पत्र–पत्रिकाएँ हैं।

महाराष्ट्र— इन्द्रजाल कॉमिक्स (1964, बम्बई), राजस्थान से— वैज्ञानिक बालक, बिहार से— बालक (1926, पटना), उभरते सितारे (1977, नालन्दा), किशोर, तमिलनाडु से— चन्दामामा (1949, मद्रास), गुडिया (1973,मद्रास), चम्पक (1968), राजा भैया (1959), बाल भारती (1948), नन्दन (1964), पराग (1958, अब बंद), इन्द्रजाल कॉमिक्स (दिल्ली, अब बंद), मधु मुस्कान (1960, दिल्ली), मिलिन्द (1965), सुमन सौरभ (दिल्ली), बालहंस (जयपुर)।

कृषि पत्रकारिता :

दैनिक पत्रों में आज, नवभारत टाइम्स, अमर उजाला, देशबन्धु, नई दुनिया, नवज्योति, राजस्थान पत्रिका, राष्ट्रदूत, आदि में खेती के साप्ताहिक स्तम्भ देने शुरू हो गये हैं। नवभारत टाइम्स व हिन्दुस्तान आदि शीर्षस्थ अखबारों ने इस स्तम्भ को निरंतर जीवित रखा है। आज देश में हरित—क्रांति और श्वेत—क्रांति की बातें होती हैं। भारत में लाखों गाँवों में करोड़ों ग्रामीणों के पास ये पत्र—पत्रिकाएँ आधुनिक व नये तकनीकी ज्ञान व संदेश लेकर पहुँचती हैं। इन पत्रिकाओं के सामने कई चुनौतियाँ हैं। विज्ञापन की कमी, कागज की महँगाई, रेल बस व डाक की कोई विशेष सुविधा न होना, उत्तम व रोचक सामग्री का अभाव, ब्लॉक बनाने की सुविधा न होते हुए भी आज मुख्य रूप से निम्नलिखित हैं—

हिमाचल प्रदेश से—हिमाचल कृषि सूचना (1961, शिमला), पंजाब—हार्टिकल्चर बुलेटिन (1963, पटियाला), युवा रिश्मा (1975, लुधियाना), राजस्थान से— कृषि विकास (1977), उत्तर प्रदेश से—कृषि

केतु (1978, सुल्तानपुर), खेती किसानी (1972, फैजाबाद), किसान भारती (1969, नैनीताल), बिहार से– कृषक मित्र (1970, पटना), ग्रामीण दुनिया, सेवा ग्राम, गौ–संवर्द्धन, कृषि चयनिका, भू–भारती, खेत और किसान, खेती, कृषि–दर्शन, धरनी, चौपाल, गाँव की बात, कृषक क्रांति, देहाती आदि।

एक मूल्यांकन : स्वतंत्रता के बाद बड़ी तीव्र गति से पत्र–पत्रिकाओं का विकास और प्रचार हुआ। इस प्रचार और विकास के मूल में परिवर्तित परिस्थितियाँ स्वातंत्र्य भावना और अभिव्यक्ति की स्वाधीनता के मनोभाव प्रबल रहे हैं। स्वातन्त्र्योत्तर वर्षों में प्रायः यह धारणा प्रबल हुई है कि लेखकीय अभिव्यक्ति पर कोई अंकुश नहीं लगाया जा सकता। लेखकीय स्वाधीनता और अभिव्यक्ति की निर्भीकता प्रेरक स्वाधीनता ने अनेक दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्र–पत्रिकाओं को जन्म दिया। यदि दैनिक पत्रों को लें तो स्पष्ट होता है कि मूलतः राजनीतिक गतिविधियाँ, दैनिक जीवन की उथल–पुथल और सामाजिक घटनाक्रम को प्रस्तुत करती हैं। ये पत्र अपने शीर्षक से सूचित कर देते हैं कि दैनिक जीवन में जो गतिविधियाँ हैं, उनमें साहित्य का स्थान अपेक्षाकृत कम है। इस कमी की पूर्ति दैनिक पत्रों के विशेषांक रविवारीय परिशिष्ट आदि से हो जाती है। ये परिशिष्ट और विशेषांक या तो वर्ष के अंत में या फिर सप्ताह के मध्य और अंत में प्रकाशित होते हैं।

(क) दैनिक–पत्र

हिन्दुस्तान

हिन्दी का राष्ट्रीय दैनिक हिन्दुस्तान 12 अप्रैल, 1936 में कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन के अवसर पर प्रकाशित हुआ। इसके प्रथम सम्पादक सत्यदेव विद्यालंकार थे। उनके बाद 1946 से 1963 तक मुकुटबिहारी वर्मा सम्पादक रहे। उनके पश्चात् कुछ दिनों तक हरिकृष्ण त्रिवेदी ने स्थानापन्न सम्पादक के रूप में कार्य किया और इसके पश्चात् रतनलाल जोशी सम्पादक बने। 1976 में उनके अवकाश ग्रहण के बाद चन्दूलाल चन्द्रकार ने कार्यभार सम्भाला। विनोद मिश्र, हरिनारायण निगम, मृणाल पाण्डे, अजय उपाध्याय, आलोक मेहता, सटीखे पत्रकार संपादक रहे। यह दिल्ली के अतिरिक्त, उत्तरप्रदेश, बिहार उत्तराखण्ड, झारखण्ड राज्यों से प्रकाशित होता है वर्तमान में शशि शेखर प्रधान संपादक हैं।

राज्यों की राजधानियों में हिन्दुस्तान के अपने विशेष संवाददाता व कार्यालय संवाददाता नियुक्त हैं जो कि अपने–अपने जिलों के समाचार भेजते हैं। पत्र विभिन्न भारतीय संवाद समितियों की सेवाएँ भी लेता है। यह दैनिक पत्र ए.आई.एन.ई.सी./आई.ई.एन.एस./ए.बी.[5] का सदस्य है। हर रविवार को इसके रविवारीय परिशिष्ट में विशेष आवरण कथा, सृजन, परिवार, कहानी, वातायन, कसौटी आदि प्रमुख भाग बँटे हुए हैं जिनके अंतर्गत कहानी कला, कविता, संस्कृति, विज्ञान,

[5] ए.आई.एन.ई.सी.–ऑल इण्डिया न्यूजपेपर्स एडीटर्स कॉन्फ्रेस
आई.ई.एन.एस.– इण्डियन एण्ड ईस्टर्न न्यूजपेपर्स सोसाइटी
ए.बी.सी.– ऑडिट ब्यूरो आफ सरक्यूलेशन लिमिटेड

काव्यधारा, बच्चों से संबंधित सामग्री, महिलोपयोगी लेख, वार्ता आदि प्रकाशित होते हैं। हिन्दुस्तान सप्ताह के हर वार को कोई न कोई स्तम्भ निकालता है, जैसे, रविवार को रविवारीय परिशिष्ट के अतिरिक्त खुला मंच, मनोरंजन (सिनेमा से संबंधित), सोमवार को (नारदजी खबर लाये हैं), खबरनामा मंगलवार को लोकवाणी, खेल संसार, बुधवार को स्वास्थ्य और विज्ञान, गुरुवार को कला–संस्कृति, शुक्रवार को 'उपभोक्ता', शनिवार को नई पीढ़ी आदि। इस प्रकार के स्तम्भ के जरिए यह सभी वर्गों के लोगों की जिज्ञासा को सहज ही शांत करता है। इसके रविवारीय परिशिष्ट का प्रथम व अंतिम पृष्ठ रंगीन होता है। हिन्दुस्तान हर शनिवार को रंगोली नामक चार पृष्ठीय रंगीन परिशिष्ट निकाल रहा है जो कि पूर्णतया फिल्मों पर आधारित होती है। इसके अलावा प्रतिदिन रंगीन फीचर पृष्ठ रंग–तरंग में दिलचस्प और दुर्लभ जानकारियाँ दी जा रही हैं। जैसे खेल खिलाड़ी की दुनिया, नई पीढ़ी के लिए शिक्षा, कैरियर, प्रतिभाशाली चेहरों से पहचान, सेहत से जुड़ी समस्याएँ और समाधान के तरीके, सिनेमा व टी.वी. से जुड़ी अन्तर्कथाएँ, महिलाओं का घर संसार, उनकी साज–सज्जा, सैर–सपाटे, खरीददारी, जीवन शैली, बच्चों की दुनिया से जुड़े दिलचस्प रंगारंग लेख, चित्र कथाएँ आदि पढ़ी जा सकती हैं।

'हिन्दुस्तान' की सबसे बड़ी विशेषता है कि घटनास्थल पर समाचार एकत्र करके उसे पूर्ण विवरण के साथ देना। 1965 के भारत–पाकिस्तान युद्ध, राजस्थान व बंगाल के शरणार्थियों के आगमन के समय हिन्दुस्तान के सम्पादक तथा संवाददाताओं ने युद्ध मोर्चों पर जा कर जो समाचार दिये, वे वास्तव में सराहनीय हैं और सभी

अखबारों के प्रति प्रतिस्पर्धा का विषय है। देवदास गांधी के मार्गदर्शन में इस पत्र ने उच्च आदर्शों को अपने समक्ष रखा और स्वस्थ परम्पराएँ स्थापित कीं। हिन्दुस्तान का संचालन प्रारंभ से ही राष्ट्रीय विचारधारा से ओतप्रोत लोगों के हाथ में रहा। यह स्वाधीनता आन्दोलन का ध्वजवाहक समझा जाता था। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में हिन्दुस्तान लगभग 6 महीने सेंसरशिप के कारण बंद रहा क्योंकि एक लेख पर इससे 6 हजार रूपये की जमानत मांगी गई थी। गांधीजी की प्रार्थना, भाषण, जवाहरलाल नेहरू और लौहपुरूष सरदार पटेल के ओजस्वी भाषण अविकल रूप से 'हिन्दुस्तान' में प्रकशित होते रहे। ये भाषण इस तरह से छपते थे मानो वक्ता माइक के सामने मौजूद हो। देश के स्वाधीन होने तक इसका प्रमुख उद्देश्य राष्ट्रीय आंदोलन को बढ़ावा देना था। इसे महात्मा गांधी व कांग्रेस का अनुयायी पत्र माना जाता है। गांधी–सुभाष पत्र–व्यवहार को 'हिन्दुस्तान' ने अविकल रूप से प्रकाशित किया था। इसने प्रसिद्ध क्रांतिकारी यशपाल की कहानियाँ कई सप्ताह तक छापी थीं। कई बार यह अपनी उत्कृष्ट साज–सज्जा तथा छपाई के लिए पुरस्कृत हो चुका है।

नवभारत टाइम्स

'नवभारत टाइम्स' को बेनेट कोलमैन एण्ड कम्पनी ने दिल्ली से 4 अप्रैल, 1947 को प्रारंभ किया। 1950 में कलकत्ता और बम्बई से भी इसके संस्करण प्रकाशित किये गये, पर 1953 से कलकत्ता संस्करण बंद कर दिया गया और बम्बई संस्करण अभी भी निकल रहा है। इसके अतिरिक्त 1983 में लखनऊ से, 1985 में जयपुर से, 1986 में पटना से भी इसके संस्करण निकले पर ये सभी बंद हो गये। इसके

प्रथम सम्पादक हरिशंकर द्विवेदी थे। सत्यदेव विद्यालंकार, मातादीन भगेरिया, अक्षयकुमार जैन, साहित्यकार सच्चिदानन्द हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', राजेन्द्र माथुर, विद्यानिवास मिश्रा, सुरेंद्रप्रताप सिंह इसके सम्पादक रहे। मातादीन भगेरिया के समय में प्रसार खूब बढा। इनके सम्पादकीय काफी तीखे होते थे। 1955 में अक्षय कुमार जैन जब इसके सम्पादक बने तब यह पत्र दैनिक हिन्दुस्तान से काफी पीछे था, पर इन्होंने अपने सूझबूझ से नये–नये शब्दों का प्रयोग, नये–नये विषयों का समावेश तथा नयी–नयी साज–सज्जा करके इसे आगे बढ़ाया। इस पत्र में साहित्य, संस्कृति तथा आध्यात्मिक आयोजनों को सदैव महत्व दिया जाता है। इस पत्र में चौथे पृष्ठ पर छपने वाले लेख, फीचर आदि अपनी अलग ही विशेषता लिए होते हैं। यह एक राष्ट्रीय दैनिक पत्र है। प्रारंभ से ही इसका लक्ष्य था कि किसी भी तरह अंग्रेजी दैनिकों के एकाधिकार को खत्म किया जाए और यह काम उसने पूरी निष्ठा से किया। ये पत्र आठ पृष्ठीय है और रविवार को इसकी पृष्ठ संख्या बारह होती है जिसमें यह चार पृष्ठीय रविवारीय परिशिष्ट निकालता है जिसका प्रथम व अंतिम पृष्ठ रंगीन होता है। अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रादेशिक और स्थानीय समाचारों को बिना लाग–लपेट के नियमित रूप से उचित स्थान मिलता है। यही नहीं, इसके नियमित कॉलम, शिक्षा, विज्ञान, आर्थिक जगत आदि से पाठकों को संपूर्ण देश की जानकारी से अवगत कराया जाता है। सभी हिन्दीभाषी प्रान्तों में इसने अपने संवाददाता नियुक्त कर रखे हैं।

अमर उजाला :

दैनिक पत्रों की लम्बी श्रृंखला में अमर उजाला का भी अपना स्थान है। यह आगरा, बरेली, मेरठ, मुरादाबाद, कानपुर के अतिरिक्त लखनऊ, बनारस, गाजियाबाद, चण्डीगढ़, जलांधर, लुधियाना, शिमिला, जम्मू से प्रकाशित होता है। इसका प्रकाशन व सम्पादन 1948 में डोरीलाल अग्रवाल और मुरारीलाल माहेश्वरी के सम्पादकत्व में प्रारंभ हुआ।

रोजाना इसका पाँचवाँ पृष्ठ रंगीन आभा लिए प्रकाशित होता है तथा अपने कलेवर में विभिन्न प्रकार की सामग्री का संकलन लाया जाता है, जैसे रविवार को कारोबार से संबंधित सामग्री, सोमवार को छोटा पर्दा, (सिनेमा से संबंधित), मंगलवार को बच्चों का कोना, बुधवार को घर, खेल, गुरूवार को कारोबार, शुक्रवार को झरोखा, शनिवार को कारोबार आदि। रविवारीय अंक में कुछ स्तम्भ और होते हैं, जैसे स्वास्थ्य चर्चा, काव्य सरिता, बच्चों का कोना आदि क्योंकि इस रोज साप्ताहिक परिशिष्ट अलग से निकलता है।

रविवार को अमर उजाला किंचित परिवर्तित रूप लेकर सामने आता है। उसमें नित्य प्रकाशित होने वाले स्तम्भ तो होते ही हैं, अलग से 4 पृष्ठ विशेष साज—सज्जा लिए प्रस्तुत होते हैं। ये इसके रविवारीय परिशिष्ट के नाम से निकलते हैं। इस परिशिष्ट में लाल और काले दोनों रंगों के शीर्षक होते हैं तथा साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक सामग्री से यह भरा होता है। इसके पहले पृष्ठ पर साहित्यिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक लेखमालाएँ होती हैं। दूसरे

पृष्ठ पर इसी प्रकार के लेख होते हैं तो तृतीय पृष्ठ पर विभिन्न प्रकार की कविताएँ, गजलें आदि प्रकाशित होती हैं। ये कविताएँ दो कॉलम में रहती हैं। तीसरे ही पृष्ठ पर बच्चों को कोना प्रकाशित होता है। 'बच्चों को कोना' में कुछ कविताएँ, कहानियाँ, चुटकुले, पहेलियाँ तथा एक रेखांकित कॉमिक्स प्रकाशित होते हैं। चतुर्थ पृष्ठ फिल्मी मसालों से भरा रहता है। इसमें कुछ सफल अभिनेताओं, अभिनेत्रियों सफल व सर्वोत्तम फिल्मी गानों आदि की रोचक चर्चा होती है।

दैनिक जागरण :

कानपुर से दैनिक जागरण का प्रारंभ 1947 में पूर्णचन्द्र गुप्त ने किया, था कानपुर के अलावा यह पत्र गोरखपुर, लखनऊ, वाराणसी, झाँसी, मेरठ, आगरा, बरेली, नई दिल्ली, पटना, मुजफ्फरपुर, भागलपुर, रांची, जमशेदपुर, धनबाद, चण्डीगढ़, लुधियाना, जलांधर, जम्मू, शिमला धर्मशाला से भी निकल रहा है।

यह पृष्ठ सभी के लिए उपयोगी बनाया गया है जो हर वार को अपना अलग ही शीर्षक देकर लेख आदि प्रकाशित करता है, जैसे, सोमवारः कला–संस्कृति, मंगलवारः खेलकूद, बुधवारः महिला, गुरूवारः फिल्म, शुक्रवारः टेलीदर्शन, शनिवारः बाल क्लब, रविवारः सप्तरंग। इसके अतिरिक्त साप्ताहिक परिशिष्ट में कहानी, कविता, आदि प्रकाशित किये जाते हैं।

पंजाब केसरी

लाला जगतनारायण ने 1965 में जलांधर से पंजाब केसरी दैनिक पत्र की नींव डाली। यह दिल्ली, धर्मशाला, शिमला से भी प्रकाशित होता है। पंजाब केसरी स्वतंत्र नीति का समर्थक है।

सन्मार्ग

18 अप्रैल, 1948 को सनातन धर्म के प्रसिद्ध संत स्वामी करपात्रीजी के आर्शीवाद से सन्मार्ग का प्रकाशन वाराणसी में हुआ। अनन्तः मिश्र तथा चन्द्रशेखर शास्त्री भी इस पत्र के सम्पादक रहे हैं। कुछ समय तक इसके सम्पादक आनन्द बहादुर सिंह रहे। इनके बाद सम्पादक बी.एस.गुप्त ने और बाद में रामअवतार गुप्त ने कार्यभार संभाला।

इस पत्र का मूल उद्देश्य सनातन धर्म के स्वरूप की रक्षा करना तथा हिन्दू धर्म के प्रति लोगों में चेतना व जागृति की भावना भरना रहा है। राजनीतिक समाचारों के साथ–साथ 'सन्मार्ग' ने भाषा, साहित्य और संस्कृति की परम्परा को सामने लाने में भी भरपूर योगदान दिया। अखिल भारतीय धर्म संघ इसका संचालन करता है। इसके स्थायी स्तम्भ सुनो भाई साधे (व्यंग्य चित्र), श्री रामचरित्र मानस, लस्टम–पस्टम, आदि हैं। प्रसार काफी कम है।

विश्वमित्र

1916 में हिन्दी समाचार–पत्रों की जननी बंगभूमि कलकत्ता से एक हिन्दी पत्र ने और जन्म लिया, वह था विश्वमित्र। इसके

जन्मदाता बाबू मूलचंद अग्रवाल थे। इन्होंने अपने अथक प्रयास और कठिन मेहनत से इस पत्र को सींचा। यह बम्बई, कलकत्ता, पटना, कानपुर से प्रकाशित हुआ। इसका बम्बई संस्करण 1942 व कानपुर संस्करण 1948 से शुरू हुआ। कृष्णचन्द्र अग्रवाल काफी समय तक सम्पादक रहे। इसके बाद सम्पादक सुन्दरलाल त्रिपाठी बने। मारवाड़ी क्षेत्रों में विशेष रूप से यह पत्र लोकप्रिय था। दैनिक विश्वमित्र के स्थायी स्तम्भों में सबके दाता राम, कलकत्ते की हलचल, रमता योगी लोकप्रिय था। अब यह पत्र बंद हो गया है। ब

नई दुनिया

स्वतंत्रता के प्रभात से कुछ ही मास पूर्व 5 जनवरी, 1947 को नई दुनिया ने जन्म लिया। इसका जन्म श्री कृष्णचन्द्र मुद्गल तथा श्री कृष्णकांत व्यास के प्रयत्नों से हुआ। आज की नई दुनिया जिस रूप में हमारे सामने है, वह उसका शीर्ष और प्रौढ़ रूप है। पहले अपने प्रारंभिक रूप में वह एक छोटा सा सांध्यकालीन दैनिक पत्र था। मध्यप्रदेश के गठन के पश्चात् नई दुनिया का प्रकाशन रायपुर एवं जबलपुर से ही प्रारंभ हुआ, पर 1971 में ये दोनों संस्करण बंद कर दिये गये। 1967 में नई दुनिया ने अपना मुद्रण ऑफसेट रोटरी मशीन पर प्रारंभ किया। इस प्रकार की मशीन भारत में पहली बार नई दुनिया के पास ही आई। यही नहीं, नई दुनिया को इस बात का भी श्रेय प्राप्त है कि इसने सर्वप्रथम संपूर्ण मध्यप्रदेश में पहला टेलीप्रिंटर स्थापित करके वैज्ञानिक और तकनीकी पत्रकारिता की शुरूआत की। यह पत्र केवल मध्यप्रदेश का ही पत्र नहीं है वरन् साहित्यकारों, बुद्धिजीवियों और समाजसेवियों का संगम है। देश के प्रसिद्ध

साहित्यकार तथा विद्वान जिनमें शरद जोशी, डॉ. श्याम परमार, डॉ. वेदप्रताप वैदिक, श्याम व्यास, मदनमोहन मदारिया, रणवीर सक्सेना, प्रभाष जोशी, विष्णु खरे, बालकवि बैरागी आदि प्रमुख हैं जो नई दुनिया से किसी न किसी रूप से जुड़े रहे है।

इंदौर से प्रकाशित नई दुनिया सोलह पृष्ठीय समाचार प्रधान समसामयिक दैनिक था। इसके सम्पादक बाबू राव विष्ण पराड़ेर, राहुल बारपुते, राजेन्द्र माथुर रहे। 1988 से भोपाल से भी इसका संस्करण निकलने लगा।

नवभारत

मध्यप्रदेश का लोकप्रिय दैनिक नवभारत सर्वप्रथम नागपुर से 1938 में प्रकाशित हुआ। मायाराम सुरजन इसके प्रथम सम्पादक होकर आये। इनके बाद कालका प्रसाद दीक्षित, मदनलाल माहेश्वरी, रामगोपाल माहेश्वरी इसके सम्पादक बने। 1950 में जबलपुर से, 1956 से भोपाल से, 1959 में रायपुर से और 1960 में इंदौर बिलासपुर से भी इसके संस्करण निकले

स्वदेश

1966 की विजयादशमी को इंदौर से दैनिक हिन्दी स्वदेश प्रकाशित हुआ। 1971 में ग्वालियर से भी निकलने लगा। इंदौर संस्करण के प्रथम सम्पादक गंगाप्रसाद शर्मा थे फिर सत्यव्रत रस्तौगी रहे। माणिकचंद वाजपेयी और जयकृष्ण गौड़ लंबे समय समय तक

इसके सम्पादक रहे। यह पत्र अपनी स्पष्टवादिता के कारण या यों कहें कि शासन विरोधी नीतियों के कारण दो बार बंद हो चुका है। वर्तमान में संपादक श्री शक्ति सिंह परमार है।

राजस्थान पत्रिका

दैनिक राजस्थान पत्रिका प्रमुख समाचार–पत्रों में गिना जाता है। कर्पूरचंद कुलिश ने 7 मार्च, 1956 को सायंकालीन दैनिक के रूप में जयपुर से शुरू किया और यह दैनिक 1956 से 1961 तक सायंकालीन दैनिक के रूप में ही चलता रहा। पहले यह चार पृष्ठ का दैनिक था। आज यह 16 पृष्ठीय अखबार है। राजस्थान में राजस्थान पत्रिका पहला अखबार है जिसने छपाई में स्टीरियो, रोटरी मशीन का प्रयोग शुरू किया। यही नहीं, इसी ने पहली बार राज्य के मुख्य–मुख्य शहरों को टेलीप्रिन्टर लाइन से जोड़ा। राजस्थान पत्रिका ने ही पहली बार सीधे ब्लॉक बनाने के लिए इलेक्ट्रॉनिक मशीन मंगवाई और इसी ने लाइनो कम्पोज शुरू किया। भारत में प्रथम बार इसी पत्र ने फेसीमल फोटो शुरू की। यह फेसीमल फोटो 19 नवम्बर, 1982 को एशियाड खेल से शुरू की गई। इसकी सेवा जयपुर, उदयपुर व दिल्ली को प्राप्त हुई। राजस्थान पत्रिका पत्रों की स्वतंत्रता का पूर्ण समर्थक है। यही कारण था कि 3 सितम्बर, 1982 को इसने बिहार प्रेस बिल के विरोध में पूर्ण हड़ताल रखी और 4 सितम्बर को अपना कोई भी अंक नहीं निकाला। राजस्थान पत्रिका की पाठ्य–सामग्री भी इस प्रकार की है जो अन्यत्र देखने को नहीं मिलती। अब यह 8 राज्यों राजस्थान, मध्यप्रदो, छत्तीसगढ़ कर्नाटक, गुजरात, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और दिल्ली से प्रकाशित होता है और इसके 37 संस्करण हैं।

वीर अर्जुन

दिल्ली से निकलने वाले वीर अर्जुन का जन्म 1954 में हुआ। यह एक छोटा–सा चार पृष्ठीय दैनिक समाचार–पत्र था, पर वर्तमान में यह 8 पृष्ठ का है। किसी जमाने में महाशय कृष्णजी की लौह लेखनी इसमें आग उगलती थी। आज प्रसार संख्या नगण्य है।

स्वंतत्र भारत

स्वतंत्र भारत का 15 अगस्त, 1947 को अशोकजी के सम्पादन में लखनऊ प्रकाशन शुरू हुआ। वे 1947 से 1953 तक इसे संवारते रहे और इसके बाद वह भारत सरकार में आ गये। योगिन्द्रपति त्रिपाठी इसके सम्पादक बने और 1971 तक रहे। भारत सरकार से सेवानिृत्त होने पर अशोकजी पुनः 1972 में इसके सम्पादक बन गये और 1978 तक इस पत्र को विभिन्न प्रकार की सामग्री देकर इसके स्तर को बढ़ाते रहे। जनवरी, 1979 में इसके प्रधान सम्पादक डॉ. के.पी. अग्रवाल व सम्पादक शिवसिंह सरोज बने। उत्तर प्रदेश में स्वतंत्र भारत का अच्छा प्रभाव था। यह पायोनियर प्रेस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित होता था। आज प्रसार संख्या नगण्य है।

आज

सर्वप्रथम आज कलकत्ता से शिवप्रसाद गुप्त ने 5 सितम्बर, 1920 को आरंभ किया और प्रकाशजी इसके प्रथम सम्पादक बने। बाद में इसके प्रधान सम्पादक प्रसिद्ध पत्रकार पं. बाबूराव विष्णु पराड़कर बने। 1924 से लेकर 13 अगस्त, 1942 तक पराड़करजी 'आज' के

प्रधान सम्पादक रहे। इन तीन दशकों में पराड़करजी ने इसके माध्यम से पत्रकारिता का मानदण्ड तो स्थापित किया ही साथ ही हिन्दी पत्रकार कला को नई गति व नई दिशा प्रदान की। आज में प्रकाशित पराडकरजी व कमलापति के अग्रलेखों ने असंख्य पाठकों को प्रभावित कर इसे हिन्दी का श्रेष्ठ दैनिक बना दिया। इसकी लोकप्रियता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि आज संस्करण कानपुर (1975), पटना (1979), गोरखपुर (1980), राँची (1984), आगरा (1986), लखनऊ (1989), जमशेदपुर (1989), ग्वालियर वाराणसी से शुरू हुए। अब यह अंतिम सांस ले रहा है।

दैनिक भास्कर

'दैनिक भास्कर' विश्वम्भर दयाल अग्रवाल द्वारा नोबल प्रिंटिंग प्रेस, इब्राहिमपुरा, भोपाल से मुद्रित तथा प्रकाशित होता था। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन 1958 में हुआ। पहले इसके सम्पादक काशीनाथ चतुर्वेदी थे, बाद में इसके प्रधान सम्पादक महेशचन्द अग्रवाल रहे। यह आठ पृष्ठीय दैनिक आठ कॉलम में विभक्त था। दैनिक भास्कर का प्रकाशन भोपाल (1958), ग्वालियर (1967), इंदौर (1985), से शुरू हुआ। यह मध्यप्रदेश के अतिरिक्त छत्तीसगढ़, राजस्थान, झारखण्ड, बिहार, पंजाब, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, जम्मू, महाराष्ट्र से प्रकाशित होता है।

युगधर्म

1951 में नागपुर से युगधर्म दैनिक का प्रकाशन हुआ। यह पत्र नरकेसरी मुद्रणालय, नागपुर से प्रकाशित होता है। 1956 में जबलपुर से और 1972 में रायपुर से भी यह प्रकाशित होने लगा। प्रधान सम्पादक भगवती प्रसाद वाजपेयी रहे। ओम प्रकाश सिंह, रमेश नैयर, बबन प्रसार मिश्रा, राधेश्याम शर्मा, प्रमुख संपादकों में शामिल थे। अब यह पत्र बंद है।

नवजीवन

नेशनल हैराल्ड (अंग्रेजी) व कौमी आवाज (उर्दू) की प्रकाशन संस्था दि एसोसिएटेड जर्नल्स लिमिटेड ने आजादी के उषाकाल में लखनऊ से नवजीवन दैनिक का सर्वप्रथम 1947 में प्रकाशन किया। यह कांग्रेस नीति का समर्थक था। शुरू से ही अनेक वरिष्ठ नेताओं का इस पर वरहस्त रहा है, जैसे पं. जवाहरलाल नेहरू, श्रीमती इन्दिरा गांधी, डॉ. युद्धवीर सिंह, उमाशंकर दीक्षित आदि। यह आठ पृष्ठ का दैनिक था। कोई विषय ऐसा नहीं है जो इससे अछूता हो। नेशनल हैराल्ड के.एम. चलपतिराव जैसे प्रमुख सम्पादकों और पत्रकारों का पूर्ण सहयोग नवजीवन को मिलता रहा। अब यह बंद है।

प्रदीप

सर्चलाइट प्रेस, पटना से प्रकाशित दैनिक प्रदीप काफी लोकप्रिय था। बिहार जर्नल्स लिमिटेड ने 15 अगस्त 1947 को प्रदीप के प्रथम

अंक का प्रकाशन किया। उसी समय अंग्रेजी में दैनिक सर्चलाइट का भी प्रकाशन हुआ। बाद में सर्चलाईट द हिन्दुस्तान टाइम्स और प्रदीप दैनिक हिन्दुस्तान के रूप में प्रकाशित होने लगा।

वीर प्रताप

पंजाब से प्रकाशित हिन्दी पत्रों में 'वीर प्रताप' काफी लोकप्रिय था। 26 जनवरी, 1955 को पंजाब से दैनिक वीर अर्जुन का प्रकाशन हुआ, पर यही वीर अर्जुन 1958 में परिवर्तित होकर वीर प्रताप हो गया। यह जयहिन्द प्रिण्टिग प्रेस, जालन्धर से वीरेन्द्र ललित मोहन व चन्द्रमोहन द्वारा मुद्रित व प्रकाशित होता था।

तरूण भारत

लखनऊ से दैनिक तरूण भारत का प्रकाशन 1974 में हुआ। यह विनोदचन्द 'माहेश्वरी द्वारा राष्ट्रधर्म प्रकाशन लिमिटेड, स्वदेश प्रेस से मुद्रित एवं प्रकाशित होता था।

देशबन्धु

नवभारत, जबलपुर संस्करण के सम्पादक मायाराम सुरजन ने अपने अथक परिश्रम से 1959 में रायपुर से देशबन्धु का प्रकाशन किया। यह रायपुर, बिलासपुर, जबलपुर, भोपाल और दिल्ली से एक साथ प्रकाशित हो रहा है।

जनसत्ता

1952 से 1954 तक स्व. इन्द्र विद्यावाचस्पति एवं श्री वैंकटेश नारायण तिवारी के सम्पादन में चल कर बंद हो गया। इण्डियन एक्सप्रेस प्राइवेट लिमिटेड ने 17 नवम्बर, 1983 को दिल्ली से जनसत्ता हिन्दी दैनिक का प्रकाशन पुनः किया। यह दैनिक 12 पृष्ठीय समसामयिक समाचार पत्र है। रविवार को यह अपना रविवारी नाम से परिशिष्ट निकलाता है। यह चण्डीगढ़ से भी प्रकाशित होता है। रायपुर व लखनऊ संस्करण अब बंद हो गये।

राष्ट्रीय सहारा

15 अगस्त, 1991 को नई दिल्ली से इसका प्रकाशन आरंभ हुआ। शुरू में ही 16 पृष्ठों के साथ प्रकाशित होने वाले हिन्दी का यह पहला समाचार पत्र है। साथ ही यह पहला हिन्दी 'उमंग' दैनिक है जो प्रतिदिन चार रंगीन पृष्ठ प्रकाशित करता है। यह 'हस्तक्षेप' नाम से अपना विशेष परिशिष्ट भी निकलता है। इसका प्रकाशन सहारा इण्डिया समूह के अधीन सहारा इण्डिया मॉस कम्यूनिकेशन ने प्रारंभ किया। 16 फरवरी, 1992, से इसका एक संस्करण लखनऊ से भी प्रकाशित हो रहा है। यह पटना और देहरादून से भी प्रकाशित हो रहा है। वित्तीय कमी के कारण इसकी स्थिति काफी खराब है।

(ख) साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक पत्र–पत्रिकाएँ :

धर्मयुग :

धर्मयुग का प्रथम अंक 1950 में बम्बई में प्रकाशित हुआ। यह टाइम्स ऑफ इण्डिया द्वारा प्रकाशित की जाती थी। प्रथम सम्पादक प्रसिद्ध साहित्यकार इलाचन्द्र जोशी थीं। प्रमुख सम्पादकों में हेमचन्द्र जोशी, सत्यदेव विद्यालंकार, धर्मवीर भारती, गणेश मंत्री शामिल है। धर्मयुग ने हरेक सम्पादक के काल में एक नया मोड़ लिया यह पत्रिका निरंतर देश व साहित्य को नई दिशा देती हुई आगे बढ़ती रही। केवल भारत ही नहीं, दुनियाभर में हिन्दी भाषी लोगों में यह विशेष प्रिय थी। व्यावसायिक– साप्ताहिक होते हुए भी यह एक साहित्यिक व सांस्कृतिक पत्रिका के रूप में पाठकवर्ग में विशेष लोकप्रिय रही। इसने अनेक नये–नये लेखकों को तो जन्म दिया ही, इसके अतिरिक्त यह पाठकों को साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक सामग्री प्रदान करती रही। इस पत्रिका की एक सबसे बड़ी विशेषता यही थी कि जैसी जनरुचि होती थी वैसी ही यह पाठकों को सामग्री देती थी। पहले यह पत्रिका साप्ताहिक थी, पर जुलाई, 1990 से यह पत्रिका पाक्षिक हो गई थी।

साज–सज्जा से भरपूर बहुरंगी यह पत्रिका 60–75 पृष्ठ की और तीन तथा चार कॉलमों में इसकी सामग्री होती थी। इसका प्रस्तुतिकरण उत्कृष्ट था। मुख्य पृष्ठ रंगीन, पारदर्शी, मन को मोहने वाला, ताजा घटनाओं के चित्रों से सजा रहता था। इसी मुख्यपृष्ठ पर

रंगीन चित्र से संबंधित आवरण कथा रहती थी। इसमें रंगीन रेखांकन व सादे चित्र तो घटनाओं को प्रदर्शित करते हुए मुद्रित होते थे, साथ ही पैनापन लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यंग्य–चित्र भी होते थे। उपन्यास व कहानियों में विविध मनःस्थितियों को चित्रित करने वाले चित्र रहते तो बच्चों के पन्नों पर बच्चों के मन का छूने वाले चित्र कथानक रहते थे।

साप्ताहिक उपन्यास, कहानी, लेख, निबन्ध, साक्षात्कार, संस्मरण, रिपोर्ताज आदि के साथ–साथ घूमता आइना, खबरों के आगे–पीछे, देश–देशांतर, हास–परिहास, मुस्कान, बात–बतंगड़, उड़ते–उड़ते, दूसरी आवाज, युवाओं के लिएं तरूण मंच, आपकी लेखनी, सुर्खियों के पीछे, व्यंग्य चित्रकथा, ढब्बूजी तथा बच्चों के लिए चित्रकथा इसके स्थाई स्तम्भ थे।

साप्ताहिक हिन्दुस्तान :

हिन्दुस्तान टाइम्स लि. द्वारा प्रकाशित साहित्यिक व सांस्कृतिक पत्रिका साप्ताहिक हिन्दुस्तान का प्रथम अंक 2 अक्टूबर, 1950 को निकला था। राजधानी से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिकों में यह प्रमुख साप्ताहिक पत्र था। इसके प्रथम सम्पादक मुकुटबिहारी वर्मा थे। उनके बाद इसके सम्पादक बाँकेबिहारी भटनागर बने। अपनी लगन, निष्ठा व मेहनत से इन्होंने साप्ताहिक हिन्दुस्तान को लोकप्रिय बनाया। उस समय के सभी प्रसिद्ध साहित्यकारों, लेखकों, कवियों का जितना सहयोग ले सकते थे, उन्होंने लिया। इन्होंने अनेक विशेषांक निकाले जो काफी लोकप्रिय हुए। भटनागरजी के बाद इसके सम्पादक

मनोहरश्याम जोशी बन कर आये। इसकी सम्पादिका शीला झुन्झुनवाला और मृणाल पाण्डे भी संपादक रहीं।

56 से 64 पृष्ठ का यह साप्ताहिक तीन और चार कॉलम में विभक्त होता था। साप्ताहिक हिन्दुस्तान का सम्पादकीय प्रमुख रूप से राष्ट्रीय होता था जिसमें सम–सामयिक समस्याओं, राजनीति, अर्थनीति की चर्चा होती थी। इसका आवरण पृष्ठ बहुरंगी चित्र लिये आकर्षक होती थी। मुख–पृष्ठ के चित्र की कथा कलेवर में दी जाती थी। सुर्खियों में घर–घर की, व्यंग्य चित्रकथा मुख्य थे। स्थायी स्तम्भों के अतिरिक्त यह लेख, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, कविता तथा विशेष अवसरों पर विशेष सामग्री भी देता था।

दिनमान

हिन्दी जगत् में साप्ताहिक पत्रों का योगदान महत्वपूर्ण है। ऐसे ही साप्ताहिकों में दिनमान का नाम सर्वोपरि था। यह वह पत्र था जिसने समाचार साप्ताहिकों में नया मानदण्ड स्थापित करने का कार्य किया था। इसका प्रारंभ बहुमुखी प्रतिभा के धनी सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के सम्पादकत्व में जनवरी, 1965 में हुआ। बाद में रघुवीर सहाय काफी समय तक इसके सम्पादक रहे और उन्होंने इसे सजाया व संवारा। कन्हैयालाल नन्दन भी इसके सम्पादक रहे। सशक्त भाषा के समाचार लिखने, उसकी पृष्ठभूमि और संबंधित प्रवृत्तियों पर बेलाग विश्लेषण देने में यह साप्ताहिक बेजोड़ था। इसका लेखन स्तर और विचार गंभीर होते थे। इसी से यह बौद्धिक वर्ग में काफी लोकप्रिय था। सम्पादकीय सशक्त होता। इसके लेखों में

गंभीरता और विषय की सूक्ष्म पैठ रहती थी। यह टाइम्स ऑफ इण्डिया का प्रकाशन था और नेशनल प्रिण्टिग वर्क्स से मुद्रित होता था। पहले यह 48 पृष्ठ का समाचार व सामयिक खबरों का महत्वपूर्ण साप्ताहिक था जिसमें चित्र, लेखाचित्र, ग्राफ तथा व्यंग्य आदि यथास्थान होते थे। दिनमान के स्थायी स्तम्भ थे—मत और सम्मत, पिछले सप्ताह, देश—विदेश, पत्रकार संसद, राष्ट्र, प्रदेश, समाचार भूमि, विश्व खेल और खिलाड़ी, रंगमंच, कला। आवरण दुरंगा होता था जिस पर रंग—बिरंगा चित्र अन्दर दी गयी घटना पर आधारित होता था। यही नहीं, आवरण पर दिनमान में समाहित घटनाओं को छोटे—छोटे व सशक्त शीर्षकों में भी दिया जाता था।

रविवार

आनन्द बाजार पत्रिका लिमिटेड का प्रकाशन रविवार साप्ताहिक 1977 में प्रकाशित हुआ। इतने कम समय में इसने अपना स्थान अच्छे साप्ताहिकों में बना लिया था। इसके प्रथम सम्पादक एम.जे. अकबर थे। बाद में इसके सम्पादक उदयन शर्मा रहे। कलकत्ता से निकलने वाली यह पत्रिका समाचार व समसामयिक विचारों की संवाहिका थी। तीन कॉलम में निकलने वाली इस पत्रिका ने अपनी विषय—सूची को चार भागों में बाँट रखा था— आमुख कथा, देश—देशान्तर, साहित्य तथा विविध। रविवार का मुखपृष्ठ दुरंगा होता था। इस पृष्ठ पर उस सप्ताह में घटित घटनाओं से संबंधित व्यक्ति का चित्र तथा मुखपृष्ठ पर आवरण कथा भी दी जाती थी।

रविवार के शीर्षक आमुख कथा में उन विषयों को लिया जाता था जो मुखपृष्ठ से तो संबंधित होते थे, साथ ही उस सप्ताह के मध्य घटित सामाजिक, राजनीतिक आदि घटनाएँ भी होती थीं। देश–देशान्तर में देश तथा विदेशों में घटित राजनीतिक खबरें और साहित्य के अंतर्गत कहानी, संस्मरण, उपन्यास, कविता और विविध में विविध प्रकार की सामग्री जैसे क्रीड़ा जगत, फिल्मी जीवन, चित्रकथा, नाटक आदि होते थे। लगभग 40 पृष्ठ की यह पत्रिका समसामयिक कार्टून भी निकालती थी और बौद्धिक विचारणीय व मनन योग्य पठनीय सामग्री प्रस्तुत करने में बेजोड़ थी। पत्र में धारावाहिक नवीन उपन्यास भी रहता था, यह अक्टूबर, 1989 को बंद हो गई।

इतवारी पत्रिका

राजस्थान पत्रिका से जुड़ी है इतवारी पत्रिका। राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक गतिविधियों की विवेकपूर्ण व्याख्या करने वाली साप्ताहिक इतवारी पत्रिका का प्रारंभिक प्रकाशन वर्ष 1973 है। इसका प्रकाशन 22·36 के आकार में चार पृष्ठों से आरंभ किया गया था। वरिष्ठ पत्रकारों सी.एल.माथुर, गोपाल पुरोहित और डॉ. इन्दु चन्द्रशेखर ने इसको संवारने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। दो वर्ष तक राजेश रेड्डी इसके सम्पादकीय सहयोगी रहे। कैलाश मिश्र भी इसके सम्पादक रहे।

ब्लिट्ज

साप्ताहिक हिन्दी ब्लिट्ज 17 फरवरी, 1962 को प्रकाशित हुआ। इसे आर.के. करंजिया ने बम्बई से प्रकाशित किया। यह पत्र अंग्रेजी

साप्ताहिक ब्लिट्ज का ही हिन्दी संस्करण है। इसके आकार–प्रकार व समाचारों में अंग्रेजी का अनुसरण है। इसके प्रथम सम्पादक एम.बी. मिस्री थे। उनके बाद इसके सम्पादक बने मुनीश सक्सेना। इनके बाद नन्दकिशोर नोटियाल सम्पादक तथा आर.के. करंजिया इसके प्रधान सम्पादक थे। हिन्दी में इस प्रकार का अन्य पत्र न होने से इसका स्थान विशिष्ट हो गया था। यह सनसनीखेज समाचार प्रधान साप्ताहिक था। समाचारों का संकलन जिस विशेष रंगत के साथ होता था, उसी रंगत के साथ उसका प्रकाशन करना इसकी अपनी विशेषता थी। सम्पादन भाषा और प्रस्तुतिकरण का इसका अपना अलग ही स्थान था।

इन्द्रजाल कॉमिक्स

दि टाइम्स ऑफ इण्डिया का प्रकाशन इन्द्रजाल कॉमिक्स बाल कार्टून पत्रिका थी। यह पत्रिका बेनेट कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए मॉडर्न आर्ट प्रिंटिंग वर्क्स, बम्बई से मुद्रित एवं प्रकाशित होती थी। इन्द्रजाल कॉमिक्स सर्वप्रथम 1964 में प्रकाशित हुई, परन्तु इसकी ख्याति कुछ ही साल में काफी बढ़ी और यह 1964 से पाक्षिक निकलने लगी। अपनी लोकप्रियता के कारण यह साप्ताहिक हो गई। आनन्द जैन, महावीर अधिकारी, मुकुल शर्मा तथा विनोद तिवारी इसके सम्पादक रहे।

सारिका

साहित्यिक व सांस्कृतिक पत्रिका सारिका 1960 में प्रकाशित हुई। इसके प्रथम सम्पादक रतनलाल जोशी थे। उनके बाद चन्द्रगुप्त

विद्यालंकार, मोहन राकेश रहे। 1967 से 1978 तक कमलेश्वर ने इसका सम्पादन किया। उन्होंने इसे नये—नये आयाम देकर कहानी विधा की महत्वपूर्ण पत्रिका बनाया। रचनाधर्मी, कहानीकारों को और भावना के स्तर पर पाठकों को आन्दोलित कर उन्हें व्यावहारिक दिशा भी प्रदान की। इसके बाद कन्हैयालाल नन्दन ने इसको सजा—संवार कर आगे बढ़ाया। बाद में इसके सम्पादक श्रवण नारायण मुद्गल रहे। समानान्तर कहानी का लेखक खुद तनावों में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं के बीच जीता है और उसे ही कहानी के रूप में अभिव्यक्त करता है। इसी प्रकार की कहानी को स्थान मिलता था। 'सारिका' की कहानियों में आदमी की दारूण स्थितियों का सजीव चित्रण किया जाता था। 'सारिका' ने श्रेष्ठ कथा से ही पाठकों को परिचित नहीं कराया वरन् विदेशों की उत्कृष्ट कहानियों से भी हिन्दी—जगत की श्रीवृद्धि की थी।

10.75 ×8 के आकार में छपने वाली यह पत्रिका प्रायः 100 पृष्ठों की होती थी तथा कहीं दो, कहीं तीन और कहीं चार कॉलम में विभक्त होती थी। इसमें हर कहानी को मुखरित करने के लिए रंगीन व सादे चित्र रेखांकित रहते थे। यह बेनेट कोलमेन कम्पनी द्वारा नयी दिल्ली से मुद्रित एवं प्रकाशित होती थी। पहले यह पत्रिका मासिक थी, पर अपनी लोकप्रियता के कारण यह पाक्षिक निकली। इसमें कहानियाँ, कविताएँ, गजल, लघु—कथाएँ, साक्षात्कार, रिपोर्ताज आदि तो स्थान पाते ही थे। इसके अतिरिक्त पाठकों का पन्ना, पखवारे की पुस्तकें, हलचल, तस्वीर बोलती है, उसने कहा था आदि स्तम्भ भी प्रकाशित होते थे। जरियाँ—नजरियाँ में सम्पादक के विचार सम्पादकीय

रूप में रहते थे जिसमें समसामयिक जीवन की झलक होती थी। साथ में राजनीतिक कुचक्र की खुलकर भर्त्सना की जाती थी। 'उसने कहा था' स्तम्भ में किसी विद्वान या चित्रकार के द्वारा कहे गये व्यंग्य वाक्य रहते थे। 'हलचल' के अंतर्गत प्रसिद्ध उपन्यासों, कहानियों आदि पर चर्चा की जाती थी। 'पखवारे की पुस्तक' शीर्षक में नवप्रकाशित चर्चित उपन्यासों और कहानियों की समीक्षा प्रस्तुत की जाती थी जबकि गप्पार्थ में चुटकुले होते थे।

सरिता

साहित्यिक एवं सांस्कृतिक पत्रिका सरिता 1945 में प्रकाशित हुई थी। जिस समय यह पत्रिका निकली उस समय वह मासिक थी। इसने समय–समय पर निष्पक्ष, निर्भीक होकर समाज में फैली बुराइयों और कुरीतियों के विरूद्ध जनमत जगाने का प्रयत्न किया। 1964 में यह पाक्षिक बन गई। इसमें हमेशा पुरानी मान्यताओं को वैज्ञानिक कसौटी पर कसकर देखा जाता है। अवैज्ञानिक बातों पर इसने हमेशा चोट की है। यही कारण है कि यह रूढ़िवादियों के आक्रोश का कारण भी बनी, पर इसकी लोकप्रियता में कमी नहीं आई।

सरिता का मुखपृष्ठ रंग–बिरंगा होता है जिस पर सदा ही किसी युवती का चित्र रहता है। सरिता में जगह–जगह दिये गये व्यंग्य चित्र, प्रभावशाली, चुटीले व सामयिक होते हैं। बीच–बीच में दुरंगी छपाई करके यह अपना आकर्षण और बढ़ा लेती है। 8.50 ×5.50 आकार की यह पत्रिका 150 पृष्ठ से लेकर 200 पृष्ठ तक निकलती है और दो कॉलम में विभक्त रहती है। कविता, गजल, कहानी, लेखों के

अतिरिक्त छोटे–छोटे शेरो–शायरी व स्वर्णिम वाक्य भी प्रकाशित करती है। इसके स्थायी स्तम्भों में, आपके पत्र, सरित–प्रवाह, श्रीमतीजी, ये पत्नियाँ, दिन–दहाड़े, जीवन की मुस्कान, बच्चों के मुख से, यह भी खूब रही, चंचल छाया, बिम्ब–प्रतिबिम्ब आदि हैं।

मुक्ता

साहित्यिक व सांस्कृतिक पत्रिका मुक्ता दिल्ली प्रेस से मुद्रित व प्रकाशित होती है। मुक्ता 1960 में मासिक पत्रिका के रूप में आई, पर दिन–ब–दिन यह लोकप्रियता प्राप्त करती गई और 1972 में पाक्षिक बन गयी। 'मुक्ता' युवक व युवतियों को मनोरंजन के साथ–साथ शिक्षा की भावना लेकर चलती है। समय–समय पर छपी कहानियाँ, लेख, वार्ता, प्रसंग व इसके स्थायी स्तम्भ कुछ सोचने को मजबूर कर देते हैं। इसमें सादे चित्रों के साथ रंगीन चित्रों की भी भरमार रहती है। कहानी के साथ कहानी के मूलभाव को भी अंकित करता हुआ रेखाचित्र देना इसकी अपनी विशेषता है। व्यावहारिक सुझाव, हृदयस्पर्शी कहानियाँ, कविताएँ, लेख, देश–विदेशों की जानकारी देकर यह मानसिक विकास में सहायक बनती है।

चम्पक

छोटी आयु वर्ग के बच्चों के लिए रंग–बिरंगी पाक्षिक पत्रिका चम्पक है। इसका सर्वप्रथम अंक 1968 में मासिक रूप में निकला, परन्तु कुछ समय पश्चात् ही इसने पाक्षिक निकलना शुरू कर दिया। यह पत्रिका दिल्ली प्रेस से प्रकाशित होती है। बच्चों में यह पत्रिका काफी लोकप्रिय है। 8÷5.50 आकार में निकलने वाली यह पत्रिका एक

या दो कॉलम में विभक्त रहती है तथा लगभग 68 पृष्ठ की होती है। पूरी पत्रिका दो–तीन रंगों से सजी रहती है। यह पत्रिका गुजराती, मराठी, अंग्रेजी, तमिल, मलयालम और तेलगू भाषाओं में भी प्रकाशित होती है।

चम्पक का मुखपृष्ठ किसी सुन्दर चित्र या आकर्षक कार्टून से सजा रहता है। बच्चों की समझ के अनुसार प्रेरक कविताएँ, कहानियाँ, लेख–निबंध आदि प्रकाशित करती है। इसकी विषय–सूची, सुनो कहानी, ज्ञान बढ़ाओ, जाने–बूझो, गाओ तथा गुनगुनाओं भागों में बँटी हुई है। सुनो कहानी में आठ–दस कहानियाँ दी हुई होती है। ये कहानियाँ रोचकता तो लिए होती ही हैं, प्रेरक व शिक्षाप्रद भी होती हैं। इन कहानियों के नायक या नायिकाएँ जरूरी नहीं है कि मनुष्य हों, अधिकतर पशु–पक्षियों के माध्यम से भी बच्चों को शिक्षा दी जाती है।

बच्चों की यह एक ज्ञानवर्धक पत्रिका है जो उन्हें परी, राक्षसों की तिलिस्मी काल्पनिक दुनिया और अंधविश्वास के भ्रमजाल से निकालकर यथार्थ की दुनिया से परिचित कराती है।

कल्याण

धार्मिक पत्रिकाओं में प्रमुख मासिक पत्र कल्याण अगस्त, 1926 से शुरू हुआ। धार्मिक, नैतिक, पौराणिक, दार्शनिक सामग्री को प्रकाशित करने वाली यह पत्रिका अनूठी है। यह गीता प्रेस, गोरखपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित होती है। इसके सम्पादक हनुमान प्रसाद पोद्दार, चिमनलाल गोस्वामी, रामसुखदास, मोतीलाल जालान रहे। यह दो कॉलम में विभक्त है। यह जनवरी में विशेषांक निकालती है।

'कल्याण' के अंतर्गत हिन्दू धर्म संबंधी लेख, कहानियाँ, संस्मरण आदि तो होते ही हैं साथ ही शुद्धाचरण, ईश्वर में आस्था जगाने वाली कहानियाँ और संस्मरण भी प्रकाशित होते हैं। जनता को आध्यात्मिक, शिक्षाप्रद, चारित्रिक सामग्री प्रदान करना ही इस पत्रिका का प्रमुख उद्‌देश्य है। 'कल्याण' के मुखपृष्ठ पर किसी न किसी देवी–देवता का चित्र रहता है। इसमें विज्ञापन नहीं होते। धार्मिक, सांस्कृतिक और नैतिकता का प्रचार–प्रसार करने वाली पत्रिका का भारतीय भाषाओं में अपना विशिष्ट स्थान है।

कादम्बिनी

हिन्दुस्तान टाइम्स का मासिक प्रकाशन कादम्बिनी साहित्यिक व सांस्कृतिक पत्रिका है। इसका प्रकाशन बालकृष्ण राव ने नवम्बर, 1960 में इलाहाबाद से किया। बाद में यह दिल्ली से प्रकाशित होने लगी। 1962 में इसके सम्पादक रामनानंद दोषी बने और 1972 तक उन्होंने इस पत्रिका को संवारा, स्वरूप को उभारा और इसे स्तरीय पत्रिका बनाया। 1972 के बाद राजेन्द्र अवस्थी सम्पादक बने जो कई दशक तक रहे। कादम्बिनी का प्रमुख आकर्षण इसकी सज्जा है। इसमें रंगीन चित्र तो जगह–जगह सुशोभित होते हैं, साथ ही स्थान–स्थान पर व्यंग्य चित्र अपने आप में एक अनूठा पैनापन लिए हुए होते हैं।

7.50 ग5.50 आकार में निकलने वाली यह पत्रिका दो कॉलम में विभक्त है तथा करीब दो सौ पृष्ठों की भरपूर पठनीय सामग्री पाठकों को देती है। इसमें निबन्ध, कहानियाँ, लेख, कविताएँ, गज़ल, गीत, संस्मरण, रेखाचित्र तो प्रकाशित होते ही हैं, अनेक बार साहित्यिक और

चिन्तनपरक आलोचनात्मक लेख भी प्रकाशित होते हैं। हिन्दी की यह एकस्तरीय और विशिष्ट प्रत्रिका है। इस पत्रिका में कतिपय स्तम्भ हैं पैनी नजर, शब्द सामर्थ्य, समस्या, पूर्ति, आस्था के आयाम, ज्ञानगंगा।

कादम्बिनी विशेष अवसरों पर विशेष सामग्री प्रदान करती है तथा समयानुसार अपने स्तम्भों को बदलती रहती है। यह एक ऐसी पत्रिका है जो प्रकाशन की ओर से तो भारतीय भाषा विशिष्ट पत्रिका कही जाती है, किन्तु पाठकीय दृष्टि से इसे सांस्कृतिक चिन्तन की पत्रिका कहा जा सकता है।

नीहारिका

साहित्यिक और सांस्कृतिक पत्रिका नीहारिका कहानियों की ासिक पत्रिका है। यह पत्रिका 1961 में प्रकाशित हुई। यह जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा सैट, प्रेस आगरा से मुद्रित व प्रकाशित होती है। यह पूर्णतया कहानी पत्रिका है। समस्त पत्रिका विभिन्न कहानियों से भरी रहती है। साहित्यिक, सामाजिक, यौन अपराध आदि से संबंधित कहानियाँ ही यह अपने कलेवर में समेटे रहती है। 'नीहारिका' जीवन के प्रत्येक पहलू पर बारीकी से विचार करती है। सुरूचिपूर्ण आडम्बररहित भाषा ही इसकी विशेषता है। इसका प्रत्येक वाक्य सीधा, सरल और स्पष्ट होता है। रोजमर्रा की जिन्दगी के बीच जो कुछ घटित होता है वही घटनाएँ इसमें स्थान पाती हैं।

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट 'नवनीत' ज्ञानबर्द्धक, साहित्यिक व सांस्कृतिक पत्रिका है। इसको श्री गोपाल नेवटिया ने बम्बई से 1952 में प्रकाशित किया। इसके प्रथम सम्पादक रतनलाल जोशी रहे। सत्यकाम विद्यालंकार, नारायणदत्त गिरजाशंकर तिवारी इसके सम्पादक रहे। वर्तमान में संपादक विश्वनाथ सचदेव है। यह पत्र अब भारतीय विद्या भवन से संबंद्ध है। यह नवनीत प्रकाशन लिमिटेड द्वारा वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से मुद्रित व प्रकाशित होती है। 7.50 ×5.50 आकार की यह पत्रिका दो कॉलम में विभक्त रहती है। इसके सम्पादकीय का मूल उद्देश्य प्राचीन व नवीन ज्ञान–विज्ञान की रोचक जानकारी देना है। यह कहानियाँ, कविताएँ, गजल, लेख, निबन्ध, प्रेरक–प्रसंग आदि तो प्रकाशित करती ही है साथ ही विभिन्न भाषाओं की कहानियों व उपन्यासों का हिन्दी रूपांतर भी देती है।

कुरूक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नयी दिल्ली से निकलने वाली पत्रिका कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका है। यह 1955 से निकल रही है। यह गाँवों के जीवन पर प्रभाव डालने के उद्देश्य को लेकर चलती है। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को जन–जन तक पहुँचाना ही इसका ध्येय हे। इनमें ऐसे लेख छपते हैं जो पंचायतीराज व ग्राम्य विकास से संबंधित होते हैं। यह ऐसे लेख प्रकाशित करती है जो लोगों को गाँवों के रहन–सहन को जानने को प्रेरित करें। साथ ही

यह कृषि–उद्योगों को बढ़ावा देती हुई कुटीर–उद्योग, लघु–उद्योग को भी प्रकाश में लाती है। वस्तुतः यह ग्राम विकास की पत्रिका है।

विज्ञान प्रगति

वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद, दिल्ली की मासिक पत्रिका विज्ञान–प्रगति हिन्दी में प्रकाशित की जाती है। इस पत्रिका की शुरूआत वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद ने 1962 में की। रामचन्द्र तिवारी 1964 तक इसके सम्पादक बने रहे। इनके समय में पत्रिका में उपयोगी सामग्री तो होती ही थी साथ ही साज–सज्जा भी बहुत होती थी। इसके बाद आये सम्पादक श्यामसुन्दर शर्मा। इन्होंने अपने समय में इसके महत्त्वपूर्ण संस्करण निकाले जो अपने आप में संग्रहणीय हैं। स्वास्थ्य संकट, खनिज सम्पदा, ऊर्जा विशेषांक काफी चर्चित रहे।

मनोहर कहानियाँ

अपने को साहित्यिक और सांस्कृतिक कहने वाली पत्रिका 'मनोहर कहानियाँ' के संस्थापक क्षितीन्द्र मोहन मित्र थे। यह पत्रिका सर्वप्रथम 1940 में प्रकाशित हुई थी। वर्षों तक इसके सम्पादक आलोक मित्र रहे। यह वीरेन्द्रनाथ घोष द्वारा मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड के लिए प्रकाशित व माया प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद से मुद्रित होती थी। इस पत्रिका में सामान्य जनरुचि के अनुरूप कथा सामग्री प्रकाशित की जाती थी। 9.50 ×7.50 आकार की यह पत्रिका दो तीन कॉलम में विभक्त रहती है तथा सामान्यः 156 पृष्ठ की निकलती थी। रोमांचकारी कारनामे, जो समाचार पत्रों में सिर्फ शीर्षक देकर रह जाते

हैं उनका पूर्ण विस्तृत विवरण यह देती थी। यहाँ तक कि उन घटनाओं से संबंधित फोटो भी यह प्रकाशित करती थी। काले—कारनामों का पर्दाफाश करने के लिए बड़े—बड़े अधिकारियों को भी नहीं छोड़ती। घटना से संबंधित पत्र, फोटो, प्रतिलिपियाँ आदि देकर यह जनता को ठगों, कालाबाजारी लोगों से तो परिचित कराती थी साथ ही अत्यंत ही रहस्यभरी घटनाएँ भी प्रकाशित करती थी। कालांतर में इसने सस्ती रूचि की सामग्री प्रकाशित करना शुरू किया। बाद में यह बंद हो गई।

माया (पाक्षिक)

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद का एक और प्रकाशन मासिक माया है। इसका प्रकाशन 1929 में हुआ। बाद में यह पाक्षिक पत्रिका बन गई। इसके संस्थापक क्षितीन्द्र मोहन थे। आलोक मित्र वर्षों संपादक रहे । धीरे—धीरे इसने व्यावसायिक रूप धारण कर लिया और दृष्टिकोण बदलने लगी।

'माया' मनोहर कहानियाँ का ही दूसरा रूप लेकर सामने आयी थी। इसमें अधिकतर राजनीति से संबंधित कच्चे चिठ्ठे, अफसरों की विलासिता, भ्रष्टाचार की कहानियाँ ही स्थान पाती थी। पूर्व में यह पत्रिका साहित्यिक कहानियाँ प्रस्तुत करती थी। यह सेक्स विशेषांक, प्रेम विशेषांक जैसे शीर्षक से पाठकवर्ग को बांधे रखती थी। प्रेम, घृणा, सोतिया डाह, पर—परूष प्रेम, राजनीति—कूटनीति आदि मनोवृत्तियों के दुष्चक्रों पर यह बेलाग लिखती रही। अब यह बंद हो गई।

अखण्ड ज्योति

धर्म व आध्यात्मिकता के क्षेत्र में कल्याण के बाद अखण्ड ज्योति पत्रिका प्रसिद्ध है। अखण्ड ज्योति मथुरा से प्रकाशित होती है। इसका प्रकशन 1940 में शुरू हुआ। गायत्री यज्ञ के प्रणेता पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने अध्यात्मवाद के प्रसाद की दृष्टि से इस पत्रिका का प्रकाशन किया। आचार्यजी इसके सम्पादक भी थे। यह मृत्युन्जय. शर्मा, अखण्ड ज्योति संस्थान द्वारा जनजागरण प्रेस, मथुरा से मुद्रित व प्रकाशित होती है। 9.50 ‧7.50 आकार में निकलने वाली यह पत्रिका तीन कॉलम में विभक्त है तथा यह 50 से 60 पृष्ठ में निकलती हैं। पूर्णतया धर्म व दर्शन, आध्यात्म तथा सांस्कृतिक पत्रिका है। यह पौराणिक कथाओं द्वारा शिक्षाप्रद व चारित्रिक सामग्री भी प्रदान करती है।

नन्दन

हिन्दुस्तान टाइम्स का प्रकाशन नन्दन बच्चों के पत्रों में सबसे श्रेष्ठ माना जाता है। यह नवम्बर, 1964 को दिल्ली से शुरू हुआ। इसके सबसे पहले सम्पादक राजेन्द्र अवस्थी बने। वर्षा तक जयप्रकाश भारती संपादक रहे। 7.9‧7 के आकार की यह पत्रिका दो कॉलम में विभक्त है। इसका साधारण अंक 64 पृष्ठ का होता है। यह वर्ष में तीन विशेषांक प्रकाशित करती है, जिसमें दो विशेषांक 80 पृष्ठों के व एक विशेषांक 128 पृष्ठों का होता है। हर पृष्ठ दुरंगा–चौरंगा होता है जो बच्चों के मन को शीघ्र ही मोह लेता है। यह अपनी छपाई व सज्जा के कारण कई बार राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त कर चुकी है।

प्रसिद्ध कवियों व कहानीकारों की रचनाएँ इसमें प्रकाशित होती रहती हैं। इसके मुख्य स्तम्भ एलबम, आप कितने बुद्धिमान हैं, तेनालीराम, चटपट, ज्ञान–पहेली, चीटू–नीटू, पत्र मिला, पुरस्कृत कथाएँ, चित्र पहेली, शीर्षक बताइये, बच्चों का अखबार आदि हैं।

पराग

बच्चों की संपूर्ण पत्रिका टाइम्स ऑफ इण्डिया का प्रकाशन पराग मार्च, 1958 से आरंभ हुआ। इसके प्रथम सम्पादक सत्यकाम विद्यालंकार थे। इनके बाद आनन्द प्रकाश जैन कन्हैयालाल नंदन। जैन ने 1960 में इसे ऐतिहासिक महत्व का बनाया। उस समय नये व पुराने लेखकों ने इसमें काफी लिखा। इसमें बाल एकांकी व शिशु गीतों का प्रकाशन करके बाल साहित्य को प्रोत्साहन दिया गया। यह पहला बाल–पत्र था जिसने शिशु भीतों सरीखीं अविकसित विद्या की तरफ ध्यान दिया। पहले यह मासिक बम्बई से प्रकाशित होता था, पर जब यह बम्बई से दिल्ली आया तो इसे किशोर पत्र बना दिया गया, परन्तु इस रूप में यह ज्यादा लोकप्रियता हासिल नहीं कर सका और पुनः बाल पत्रिका बन गया। बाल साहित्यकार डॉ. हरिकृष्ण देवसर भी इसके सम्पादक रहे।

यह बच्चों का मधुर मासिक था जो बच्चों के लिए प्रतिमास कहानियाँ, कविताएँ, संस्मरण, एकांकी, चुटकुले, धारावाहिक, उपन्यास, प्रतियोगिताएँ आदि लेकर आता था। इसके स्थायी स्तम्भों में सवाल तुम्हारे जवाब हमारे, पिटारा, नई पुस्तकें, ये रही तुम्हारी चिट्ठियाँ,

विशेष लेखमाला, खेलकूद, प्रश्नोत्तर, बिल्लू, छोटू और लम्बू, खबरों की दुनिया, शीर्षक प्रतियोगिता, नयी निगाहें चर्चित रहा।

चन्दामामा

चन्दामामा चेन्नई से तेरह भारतीय भाषाओं हिन्दी, तेलुग, तमिल, मलयालम, कन्नड़, गुजराती, बांग्ली, मराठी, पंजाबी, असमिया, उड़िया, अंग्रेजी, सिंहली में प्रकाशित होती है। प्रकाशन सितम्बर 1949 से आरंभ हुआ। इसके सर्वप्रथम सम्पादक पी. वेंकटाचल शर्मा थे। रामानंद शर्मा, आलूरी बैरागी, चौधरी आरिगपूड़ि, रमेश चौधरी व बाल शौरि रेड्डी आये भी संपादक रहे। वर्तमान में सम्पादक चक्रमणि और संचालक नागिरेड्डी हैं।

यह समय–समय पर अपने स्थायी स्तम्भ निकालती है– वह कौन था? इसके अंतर्गत देश–विदेश की महान् विभूतियों के जीवन के संबंध में जानकारी होती है। 'क्या आप जानते हैं भारतः को इसमें भारत के वर्तमान व अतीत शहरों के बारे में जानकारी होती है। प्रकृति के अजूबे' स्तम्भ बालकों को रोचक सामग्री तो प्रदान करती ही है, साथ ही उनके ज्ञान में वृद्धि भी करता है।

बालहंस

राजस्थान पत्रिका का प्रकाशन बालहंस 15 जुलाई, 1986 को आरंभ हुआ। इसके पहले संपादक अनन्त कुशवाहा थे। 27 ⁊20 से.मी. आकार की पत्रिका 32 पृष्ठ से आरंभ हुई और इसका मूल्य मात्र 2.00

रू. था। अपनी लोकप्रियता के कारण 1987 में यह 48 पृष्ठ की, 1988 में 68 पृष्ठ की तथा 1989 से यह 84 पृष्ठ की पत्रिका हो गई है।

गृहशोभा

दिल्ली प्रेस प्रकाशन प्रा.लि. ने दिल्ली से 1979 में गृहशोभा (मासिक) का प्रकाशन किया। यह पत्रिका महिलोपयोगी है। समाचार–दर्शन, ये पड़ोसी, पति–पत्नी, उलझाव–सुलझाव, फुहार, हाय मैं शर्म से लाल हुई, आदि इसके स्थायी स्तम्भ हैं। इसके अतिरिक्त, कथा–साहित्य, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, फिल्म, बागवानी, परिवार, फैशन, सिलाई, पकवान, साज–सज्जा आदि पर भी सामग्री होती है। यह समय–समय पर अपने विशेषांक भी प्रस्तुत करती है। जैसे, फैशन विशेषांक, दीपावली विशेषांक, सिलाई–कढ़ाई विशेषांक, बुनाई विशेषांक आदि। इसके मुख्य पृष्य पर एक युवती का चित्र शोभायमान रहता है। यह चित्र त्यौहार आदि से संबंधित होता है या कोई आवरण कथा अपने में समेटे रहता है।

मेरी सहेली

महिलाओं के लिए विशेष रूप से उपयोगी पत्रिकाओं में मेरी सहेली का एक विशेष स्थान है। यह पायोनियर बुक कम्पनी प्रा.लि. द्वारा बम्बई से 1987 में जानी मानी सिने–तारिका हेमामालिनी के सम्पादन में निकाली गई। थोड़े से समय में ही इसने अपनी उत्कृष्ट छपाई, लेख आदि के कारण विशेष लोकप्रियता हासिल कर ली।

इसका मुख्य पृष्ठ सुन्दर–सलोनी महिला से सुसज्जित रहता है। मुखपृष्ठ पर ही पत्रिका में स्थान पाने वाले लेख, वार्ता आदि के शीर्षक विद्यमान रहते हैं जो सहज ही मन को मोह लेते हैं।

संवाद समितियों का विकास :

परिभाषा :

- एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटेनिका के अनुसार, 'समाचार समिति वह समिति है जो समाचार–पत्र, पत्रिकाओं, क्लब, संगठनों व निजी व्यक्तियों को तारों, पांडुलिपियों, प्रूफ, टेप मशीनों, प्रतिलिपियों, दूरमुद्रक (टेलीप्रिन्टर) और कभी–कभी टेलीफोन द्वारा समाचार प्रेषित करती है।' समाचार समितियाँ स्वयं समाचार प्रकाशित नहीं करतीं वरन् निजी स्तर पर अपने ग्राहकों को सूचनाएँ प्रदान करती हैं।
- संयुक्त राष्ट्र शिक्षा सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठन संस्था (यूनेस्को) के मत में 'समाचार समिति एक उद्यम है जिसका मुख्य उद्देश्य चाहे उसका कानूनी स्वरूप कैसा भी हो, समाचार एवं सामयिक सामग्री एकत्र करना एवं तथ्यों का प्रकटीकरण या प्रस्तुतिकरण करना है तथा उन्हें समाचार संस्थाओं को, विशेष परिस्थितियों में निजी व्यक्तियों को भी, इस दृष्टि से वितरित करना है कि उन उपभोक्ताओं को व्यावसायिक, विविध एवं

- नियमानुकूल स्थितियों में मूल्य के एवज में जहाँ तक संभव हो संपूर्ण एवं निष्पक्ष समाचार सेवा प्राप्त हो सके।'

समाचार समितियों का मुख्य कार्य समाचार—पत्रों, रेडियो तथा सामूहिक संचार के अन्य साधनों को समाचार वितरण तथा सम—सामयिक घटनाओं के समाचार, प्रकाशनोपयोगी सामग्री संकलन करना है। अधिकांश समाचार—पत्र देश—विदेश में अपने संवाददाता नियुक्त नहीं कर सकते। समाचार समिति यह कार्य दूरमुद्रकों के माध्यम से शीघ्र कर देती है। यही कारण है कि समाचार समितियों का कार्य बहु—आयामी तो है ही, साथ ही व्यापक और दायित्वपूर्ण भी है।

समाचार समितियों का स्थान वास्तव में समाचार—पत्रों से भी बड़ा है क्योंकि ये राष्ट्रीय—अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाचार—पत्रों को वे समाचार या संवाद देती हैं जिनकी सहायता से समाचार—पत्रों का कलेवर बनता है। इन संवाद समितियों से कुछ अपेक्षाएँ भी की जाती हैं। जैसे, समिति जो भी समाचार प्रेषित करे वह पूर्णतया निष्पक्ष हो, साथ ही विश्वसनीय व तथ्यात्मक भी हो। समाचार राष्ट्रहित में और समाज हित से भी सम्बद्ध हो। समाचार संकलन करते, समय भी समिति को उन्हीं घटनाओं का संकलन करना चाहिए जिनमें समाचार तत्व हो। उसे अपनी विश्वसनीयता बनाये रखने के लिए बड़े व्यापारिक समूह तथा बड़े समाचार—पत्रों के दबावों से भी मुक्त रहकर कार्य करना होता है। इन समाचार समितियों को राजनीतिक समाचारों के अतिरिक्त जनजीवन—विषयक मानवीय सुरूचिपूर्ण संवादों की ओर ध्यान देना चाहिए। इसके साथ—साथ बड़ी—बड़ी राजधानियों के समानान्तर स्थानीय और प्रादेशिक समाचार केन्द्रों का निमाण करके

ग्रामीण इलाको के समाचारों को भी जनता के समक्ष रखना चाहिए। साथ ही भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक, मान्यताओं और परम्पराओं को समुचित महत्व देना चाहिए। यदि ये समाचार समितियाँ इन तथ्यो को ध्यान में रखेंगी तो वास्तव में ये लोकतंत्रीय समाज में एक विशेष भूमिका निभाती हुई जीवन्त समिति तो बनेंगी ही, साथ ही अपने ग्राहकों के प्रति भी पूरा न्याय करेंगी।

भारत में समाचार समितियों का उद्भव :

19वीं शताब्दी के प्रथम दशक में पायनियर, स्टेट्समैन, इंग्लिशमैन तथा इंडियन डेली न्यूज–चार प्रमुख अंग्रेजी पत्र प्रकाशित होते थे जो ब्रिटिश सरकार के समर्थक थे। इन चारों में हैंसमैन के व्यक्तित्व के कारण पायनियर अधिक प्रभावशाली था। अतः स्टेट्समैन के कार्ट्स, इंगलिशमैन के बक तथा इण्डियन डेली न्यूज के डालस ने मिलकर 'एसोसिएटेड प्रेस आफ इण्डिया' (ए.पी.आई.) के नाम से 1905 में समाचार समिति की स्थापना की। इन्हें पत्रकार केशवचन्द राय का पूरा सहयोग मिला। लेकिन जब उन्हें समिति का निदेशक बनाने से इंकार किया गया तो इन्होंने उषानाथ सेन के सहयोग से प्रेस ब्यूरो का गठन किया जिसके फलस्वरूप इन्हें निदेशक बनाना पड़ा। इस प्रकार राय ए.पी.आई. को पूरी तरह सशक्त बनाने और विकसित करने में जुट गये। राय को भारत में समाचार समितियों का जनक कहा जाता है।

धीरे–धीरे ए.पी.आई. की कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई में शाखाएँ स्थापित हुई, पर इसकी हालत खस्ता थी। अतः 1915 में इसका

रायटर ने अधिग्रहण कर लिया। इस अनुबंध के बाद इस समिति ने अंग्रेजों को समर्थन देना शुरू कर दिया जिससे भारतीय पत्रकारों व समाचार पत्रों को काफी चिंता हुई। अतः इस स्थिति से निपटने के लिए 1927 में सदानंद ने फ्री प्रेस एजेंसी ऑफ इण्डिया का गठन किया। राष्ट्रवादी दृष्टिकोण के कारण एफ.पी.आई. को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। मई, 1930 के प्रेस अध्यादेश द्वारा जो समाचार–पत्र इसके समाचार लेते थे, उन्हें दंडित किया जाता रहा। एजेंसी के तार भी सेन्सर किये जाते थे, पर सदानंद ने हिम्मत न खोकर जून, 1930 में बम्बई से फ्री प्रेस जनरल नाम का दैनिक आरंभ किया। अनेक कठिनाइयों से जूझती हुई अन्त में 1935 में एफ. पी.आई. बंद हो गई।

1 सितम्बर, 1933 में कलकत्ता से बी.सेन गुप्ता ने यूनाइटेड प्रेस आफ इण्डिया की शुरूआत हुई। प्रारंभ में इस समिति को वित्तीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, 1948 में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने टेलीप्रिन्टर लाइन का उद्घाटन किया। यू.पी.आई. प्रथम समाचार समिति थी जिसने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या का समाचार जारी किया था, पर दुर्भाग्यवश आर्थिक कठिनाइयों के कारण 1958 में यू.पी. आई. बंद हो गई।

पी.टी.आई. :

ब्रिटिश काल की कुछ न्यूज एजेंसियों ने भी हवा का रंग–ढंग देखकर मुखौटे बदलने में सफल–असफल प्रयास किये। ब्रिटिश काल में रायटर की सब्सिडियरी ए.पी.आई. ही भारत की प्रमुख संवाद समिति

थी। 1947 में सत्ता हस्तांतरण के बाद यह तार्किक प्रश्न था कि रायटर अपने कार्यकलाप किसी भारतीय संस्थान को हस्तांतरित कर देती। रायटर से ए.पी.आई. को ले लेने का विचार 1946 में इंडियन एंड इस्टर्न न्यूज पेपर्स सोसाइटी (आ.ई.एन.एस.)की लाहौर की बैठक में आया था। रायटर प्रस्तावित हस्तांतरण के लिए तो सहमत था, लेकिन विदेशी समाचार सेवा प्रभाग पर अपना ही नियंत्रण रखना चाहता था। तत्कालीन गृहमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल इस बात पर अड़े थे कि रायटर अपने सभी क्रियाकलाप किसी भारतीय एजेंसी को सौंप दें। पटेल ने स्पष्ट कर दिया कि यदि रायटर ऐसा नहीं करेगी तो जुलाई, 1947 को उसके टेलीप्रिंटर लाईन के लाइसेंस के समाप्त होने पर उसका नवीनीकरण नहीं किया जाएगा। इसने इस विवाद का निर्णय कर दिया। अगस्त 1947 में प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया नाम (पी.टी. आई.) एक ज्वांयट स्टाक कम्पनी स्थापित हुई और उसने ए.पी.आई. का व्यवसाय संभाल लिया। पी.टी.आई ने अपना काम फरवरी, 1947 से प्रारंभ कर दिया।[6]

रायटर से गठबंधन तोड़ने के बाद पी.टी.आई. 1952 में देश की पहली भारतीय समाचार एजेंसी बनी। एस. सदानंद ने ब्रिटिश प्रभुत्व की एसोसिटेड प्रेस के मुकाबले में फ्री प्रेस की स्थापना जरूर की, किन्तु 1935 में इसे बंद करना पड़ा। निःसंदेह फ्री प्रेस एक राष्ट्रवादी समाचार एजेंसी थी, किन्तु यह अब भी राष्ट्रीय एजेंसी का रूप नहीं ले सकी। बी.एस. गुप्ता ने यूनाइटेड प्रेस को सक्रिय करने में बड़ी भूमिका निभाई। इस संस्था के निर्माण में भारतन का उल्लेखनीय योगदान है।

[6]रिपोर्ट आफ सेकंड प्रेस कमीशन, वॉल्युम-2 पृष्ठ 380

1930 में वे संवाददाता के रूप में रायटर के लिये नियुक्त हुए थे और जिस समय पी.टी.आई. तथा रायटर में पत्र व्यवहार हो रहा था, उस समय वे पूरब के लिए रायटर के उप–प्रधान व्यवस्थापक थे। वे पी.टी. आई. के प्रधान कार्याधिकारी नियुक्त किये गये। उन्होंने पूंजी इक्ट्ठी की। देश के अंदर 25 हजार मील तक टेलीप्रिंटर का जाल बिछा दिया और तीन वर्ष के भीतर शाखों में बैठाये गये यंत्री की संख्या 20 से बढ़ाकर 60 तक पहुँचा दी। संस्था की वित्तीय साधनों में भी काफी वृद्धि कर दी गई। ब्रिटेन यात्रा के दौरान रायटर जैसी अंतर्राष्ट्रीय समाचार–प्रेषण व्यवस्था के संचालन की अच्छी जानकारी भी प्राप्त कर ली। उनका लक्ष्य पी.टी.आई. को प्रभावशाली बनाना था। समुद्र पार के देशों को समाचार भेजने की व्यवस्था शुरू की और बड़ी संख्या में ग्रहक बनाये गये। 1952 के मध्य में इसने अपने विदेशी ग्राहकों के लिये प्रतिदिन बेतार के तार द्वारा विशिष्ट संकेत प्रणाली से समाचार भेजने का काम आरंभ कर दिया। पी.टी.आई. एक ट्रस्ट है जिसके स्वत्वाधिकारी भारत के समाचार पत्र हैं। पहले मुख्य कार्यालय मुम्बई में था और अब दिल्ली है। इसके विपरीत 'यूनाइटेड प्रेस आफ इंडिया' के हिस्सेदार कुछ समाचार पत्रों के मालिक तथा कतिपय व्यवसायी थे। कोलकाता में उसका प्रधान कार्यालय था और 50 से ज्यादा शहरों में यह फैला था। वित्तीय साधनों की कमी के कारण कई अवरोध पैदा हुए।

ब्रिटेन की श्रमदलीय सरकार ने भारत से जाते–जाते रायटर को सलाह दी कि वह भारत में अपना कार्य किसी भारतीय समाचार समिति को हस्तांतरित करने हेतु भारतीय सरमाचार पत्रों से जल्दी ही

समझौता करे। आ.आई.एन.एस. से काफी लंबी बातचीत के बाद 'रायटर' का एक समझौता हुआ था, जिसके अनुसार उसे भारत में विदेशी समाचार सेवा पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त था। केवल अंदरूनी समाचार सेवा 'ए.पी.आई.' भारतीय कंपनी को स्थानांतरित की जानी थी। इस समझौते के अनुसार भारत के हाथ में नियंत्रण तो कम आता, किंतु व्यय अधिक उठाना पड़ता। इस कूटनीतिक समझौते तक पहुंचने के लिए 'रायटर' की एक चाल और थी– भारत सरकार के निर्णय के अनुसार टेलीप्रिंटर लायसेंस भारतीय समिति को ही दिये जा सकते थे। 'रायटर' के लायसेंस की मियाद जुलाई, 1947 में समाप्त हो रही थी। इसलिये 'रायटर' ने दिखावे के लिए भारतीय न्यूज एजेंसी के साथ समझौते का नाटक रचा। सरदार पटेल ने इस अवसर पर अपनी सुदृढ़ शक्ति का परिचय दिया। आई.ई.एन.एस. के अध्यक्ष जब उनसे आशीर्वाद लेने पहुंचे तब उन्होंने कहा, 'आशीर्वाद का सवाल ही नहीं उठता, वे देखेंगे कि यह समझौता रद्दी की टोकरी में फेंका जाएगा। और भारत में रायटर का कार्य पी.टी.आई. को हस्तांतरित किया जायेगा। उन्होंने आई.ई.एन.एस. के अध्यक्ष से कहा कि वे रायटर को सूचित कर दें कि यदि वह नये निर्देश को पूरा नहीं करेगी तो उसके टेलीप्रिंटर के लायसेंस का नवीनीकरण नहीं होगा। यह संदेश रायटर को भेजा गया और उसे मानना पड़ा। सरदार पटेल की सहायता से भारतीय प्रतिनिधि और रायटर प्रतिनिधियों के मध्य लंबी बातचीत के बाद सितम्बर, 1948 में समझौता हुआ। पी.टी.आइ. ने भागीदारी समझौते के अंतर्गत 1 फरवरी, 1949 से कार्य शुरू किया। ए.पी.आई. के सामान के भुगतान के लिये धन की कमी को भी सरदार पटेल ने

पूरा किया। इस मदद के बाद पी.टी.आई. अंतर्देशीय और अंतर्राष्ट्रीय कार्य द्रुत गति से करने लगी।

1948 के समझौते के अनुसार पी.टी.आई. रायटर ट्रस्ट का एक सदस्य बन गया। उसने रायटर के 90 हजार साधारण हिस्सों में से साढ़े 12 हजार हिस्से खरीद लिये। 60 हजार पौंड की कीमत पर पी.टी.आई. का ए.पी.आई. की खरीद का समझौता हुआ। तीन वर्षों तक यह जारी रहा। इस अवधि में रायटर को 30 हजार पौंड वार्षिक दिया गया। उसे समाचार संकलन के लिए रायटर ने काहिरा से सिंगापुर तक का क्षेत्र दिया। इस कार्य में भी प्रबंध का नियंत्रण रायटर के ही हाथ में था। तीन वर्ष बाद 1951 में पी.टी.आई. ने यह समझौता समाप्त कर दिया तथा रायटर से विदेशी समाचारों की खरीद और अंतर्देशीय समाचारों की बिक्री के लिए एक सादा समझौता किया। इसी समय से इसे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समाचार क्षेत्र में कार्य करने का स्वतंत्र अवसर मिला। इसका स्वामित्व एवं क्षेत्र समाचार–पत्र तक सीमित है। इस पर स्वामित्व पत्र रखने वाले समाचार पत्रों के लिए इसकी सेवाएं क्रय करना आवश्यक है। नियमों में विशेष प्रावधान किया गया है कि इसका स्वामित्व अथवा नियंत्रण कभी भी एक हित–समूह अथवा विभाग के हाथ में नहीं जा सकेगा।

दिल्ली में पार्लियामेंट स्ट्रीट पर इसका कार्यालय है। देश की सभी प्रादेशिक राजधानियों तथा प्रमुख समाचार केन्द्रों पर पी.टी.आई. के कार्यालय स्थापित हैं। छोटे नगरों एवं कस्बों में इसके अंशकालीन संवाददाता नियुक्त हैं। टेलीप्रिंटर सेवा के लिये डाक–तार विभाग से एक लाख किलोमीटर लाइन किराये पर ली गई थी। आज इसकी

जरूरत नहीं है। इंटरनेट के जरिये काम होने से गुणवत्ता अच्छी मिल रही है। वेबसाइट है ूण्चजपदमूण्बवउ विदेश में भी बड़ी संख्या में इनके संवाददाता नियुक्त हैं। अंग्रेजी और हिन्दी समाचार सेवाओं के अतिरिक्त, एजेंसी की अन्य सेवाओं में फोटो सेवा, फीचरों का मेटर पैकेज, ग्राफिक्स, विज्ञान, आर्थिक, व्यापार, फीचर, सेवा, डाटा इंडिया, स्क्रीन आधारित न्यूज स्कैन स्टाक्स स्कैन, सेवाएँ शामिल हैं।

पी.टी.आई. का एक टेलीविजन विंग पी.टी.आई.टी.वी. भी है, जो मौके पर जाकर कवरेज करता है तथा माँग पर नियमों के लिए वृत्तचित्र भी बनाता है। यह एक समझौते के तहत ए.पी. और ए.एफ. पीं. के समाचार भारत में वितरित करता है। इसी प्रकार का समझौता एसोसियेटेड प्रेस के साथ उसकी फोटो सेवा और अंतर्राष्ट्रीय यावसायिक सूचना के वितरण के लिए भी है। इस कंपनी का गठन एशियाई देशों में आर्थिक विकास और व्यापारिक अवसरों के बारे में आनलाइन डाटा बैंक उपलब्ध कराने के लिए पी.टी.आई. और पांच अन्य एशियाई मीडिया संगठनों ने किया। यह एशियानेट में भी भागीदार है, जो एशिया–प्रशांत क्षेत्र की 12 समाचार एजेंसियों के बीच निगम और सरकारी प्रेस विज्ञप्तियों के वितरण के लिए एक सहकारी व्यवस्था है। यह गुटनिरपेक्ष देश के समाचार पूल और एशिया प्रशांत समाचार एजेंसी संगठन का प्रमुख भागीदार है। यह द्विपक्षीय समाचार विनियम व्यवस्था के तहत एशिया, अफ्रीका, यूरोप और लातिन अमेरिकी देशों की कई समाचार एजेंसियों से समाचारों का आदान–प्रदान करती है।

यूनाईटेड न्यूज ऑफ इण्डिया (यू.एन.आई.) :

यू.एन.आई. का मुख्यालय 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली में स्थित है। पी.टी.आई. के बाद यह देश की दूसरी बड़ी एजेंसी है जो अंग्रेजी में समाचार देती है। प्रथम प्रेस आयोग के सुझावानुसार इस समिति का गठन किया गया क्योंकि देशभर में एक ही उच्चस्तर की न्यूज एजेंसी थी जिसका समाचार संकलन और वितरण पर एकाधिकार था। ऐसी स्थिति में समाचारों का निष्पक्ष होना संदिग्ध था और जब दो समाचार समितियाँ काम करेंगी तो दोनों में अच्छे समाचार देने की होड़ लगेगी। फलस्वरूप समाचार संकलन वितरण की व्यवस्था स्तर, शिल्प और तकनीकी आदि में सुधार की बात सोचकर 1961 में इसका गठन किया गया।

यू.पी.आई.जी. को धनाभाव के कारण बंद हो गई थी, उसी के टेलीप्रिंटर मशीनों पर यू.एन.आई. ने 12 मार्च, 1961 से विधिवत कार्य प्रारंभ किया। इस संस्था का पंजीकरण 10 नवम्बर, 1959 को हुआ था। समिति का कार्य संचालन एक महाप्रबंधक की देख–रेख में होता है।

यह संस्था एक लाख कि.मी. से भी अधिक लम्बी टेलीप्रिंटर लाइन से जुड़ी है तथा देशभर में इसके सैकड़ों केन्द्र हैं, अधिकतर दैनिक समाचार पत्र इसके ग्राहक हैं, जो देश की सबसे बड़ी न्यूज एजेंसी बना रहे हैं। ये समाचार पत्र विभिन्न भाषाओं से संबंधित हैं। विश्व की 15 संवाद समितियों से इसने समाचारों के आदान–प्रदान की

व्यवस्था की है जैसे, ए.पी.आई., तास (रूस) डी.पी.ए. (प. जर्मनी), एगर प्रेस (रूमानिया), सी.टी.के. (चेकोस्लोवाकिया), जी.जी. ग्रेस (जापान)।

यूनिवार्ता :

"पहली बार इस बात की कोशिश की गई कि हिन्दी और भारतीय भाषा–भाषी पत्रों की एक ऐसी समिति हो जो सब दृष्टि से परिपूर्ण हो अर्थात् उसमें राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय, प्रादेशिक, राजनीतिक, सामाजिक, खेल कूद, व्यापार, मनोरंजन आदि सभी क्षेत्रों के समाचार उपलब्ध हो। इस आधार पर यू.एन.आई. ने 1 मई, 1982 में हिन्दी में यूनिर्वता नाम से सेवाएँ देना प्रारंभ किया। इसे संक्षेप में वार्ता लिखा जाता है। हिन्दी प्रदेशों में इसकें 300 से अधिक कार्यालय हैं। पिछले आठ वर्षो से देश व विदेशों में जितनी भी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटीं, जैसे, सातवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन, नवाँ एशियाई खेल, लेबनान पर इस्राइल आक्रमण या भारत–पाक और भारत वेस्टइंडीज क्रिकेट श्रृंखला, राष्ट्राध्यक्ष शिखर सम्मेलन आदि के बारे में यूनिवार्ता ने जो भी समाचार प्रेषित किये वे खूब छापे गये।

इसका ध्येय वाक्य –'छोटे समाचार–पत्रों को कम व्यय में हिन्दी में देश–विशेष के समाचार उपलब्ध कराना है' वर्तमान में यह भाषाई समाचार समिति है। हिन्दी में प्रकाशित होने वाले देश के सभी लघु व बड़े दैनिक सभी प्रमुख पत्र इसके ग्राहक हैं। इसे हिन्दी की सबसे बड़ी समाचार समिति होने का गौरव प्राप्त है।

आज यह समाचार समिति इतनी विविधता लिए हुए समाचार प्रेषित कर रही है जिसकी सहायता से संपूर्ण समाचार पत्र निकाला

जा सकता है और जो अंग्रेजी की संवाद समितियों से स्पर्द्धा कर सकती है। यूनिवार्ता की सेवा हिन्दी पत्र के अतिरिक्त कई अन्य भाषाओं के पत्र भी ले रहे हैं। पूर्व में कलकत्ता से लेकर पश्चिम में बीकानेर, जोधपुर तथा उत्तर में चण्डीगढ़ से लेकर दक्षिण में नर्मदा तक यह फैली हुई है।

हिन्दुस्तान समाचार :

हिन्दुस्तान समाचार वृत्त संस्था का जन्म इस बात को महसूस करके हुआ था कि देशवासियों को स्वतंत्रता संग्राम की गतिविधियों की जानकारी मिलती रहे। देश में जो वृत्त संस्थाएं थीं, उनका झुकाव ब्रिटिश शासकों की ओर होने के कारण, राष्ट्रीय संग्राम की कुछ हद तक उपेक्षा होती थी और इस बड़े आंदोलन का चित्र प्रायः लोगों के सामने रखा नहीं जाता था। जब वीर सावरकर ने इस संस्था के संस्थापक आपटे के समक्ष यह बात रखी, तब एक स्वतंत्र राष्ट्रीय वृत्त संस्था की स्थापना के लिए पहला पग उठाया गया, जो इस कमी को पूरा कर सकें।[7]

भारत की जनभावनाओं की भारतीय भाषाओं में अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए दिसम्बर, 1948 में मुंबई के शिवरामशंकर आपटे के प्रयास से हिन्दुस्तान समाचार की स्थापना हुई। 1954 तक लगभग सभी राज्यों में समाचार संकलन का कार्य प्रारंभ हो गया था। 1954 से

---

[7]बासप्पा दानप्पा जत्ती, भाषायी पत्रकारिता और हिन्दुस्तान समाचार, हिन्दुस्तान समाचार केन्द्रीय रजत स्मारिका, 1975 संपा. रामशंकर
अग्निहोत्री, 1975, पृष्ठ 17

नागरी लिपि में समाचार प्रेषण का कार्य शुरू कर इस एजेंसी ने भारतीय समाचार जगत में युगांतकारी परिवर्तन किया। देवनागरी में समाचारों की उपलब्धता के साथ ही समाचार पत्र महानगरीय सीमा रेखा को लांघ कर छोटे नगरों से भी प्रकाशित होने लगे। भाषाई समाचार पत्रों के विस्तार में भी नगरी दूरमुद्रक ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसका लाभ यह हुआ कि देश–विदेश के छोटे–बड़े समाचार भी तहसील और कस्बों तक पहुंच जाते थे।

सहकारी समिति भारतीय समाचार माध्यमों के प्रबंधन क्षेत्र को एक नया आयाम मिला जब एजेंसी के कार्यकर्ताओं ने 1956 में एक सहकारी समिति का गठन किया तथा व्यवस्थापकों ने समाचार समिति का संचालन सहकार समिति को सौंप दिया। सहकारिता के आधार पर एक समाचार समिति का संचालन न केवल भारत में अपितु पत्रकारिता जगत में पहला प्रयास था। अनेक प्रतिष्ठित समाजसेवी व पत्रकार संवाद समिति के सदस्य रहे जिनमें उल्लेखनीय हैं सुरेन्द्र मोहन घोष (पार्यानियेर, लखनऊ,) ए.डी.मणि (हितवाद, नागपुर), कृष्ण चन्द्र अग्रवाल (विश्वमित्र, कोलकाता), डोरीलाल अग्रवाल (अमर उजाला, आगरा), वी.एन. नायर (मातृभूमि, कालीकट), मुकुन्दराव किर्लोस्कर आदि । इनके अतिरिक्त, समिति के सदस्यों में प्रकाशवीर शास्त्री, श्यामधर मिश्र, सेठ गोविन्ददास, अनन्त प्रसाद शर्मा, प्रफुल्ल चन्द्र बरुआ (सभी सांसद) आदि प्रमुख हैं।

आरंभ में वैधानिक दृष्टि से यह कंपनी थी परन्तु दादा साहेब आपटे (उपाख्य शिवशंकर आपटे) के नेतृत्व में काम करने वाले पन्द्रह जीवन वृतियों की एक टोली थी जो संवाद समिति के कार्य को

राष्ट्रीय समझ कर करती थी। सबसे पहले कार्यालय मुंबई में खुला। फिर नागपुर, दिल्ली, पटना, कोलकाता, बेंगलूर, काठमांडू इत्यादि नगरों में खोले गये। आपटे के साथ काम करने वालों में बापूराव लेले, नारायण राव तर्टे, जी.आर. माधवराव, मनोहरराव डोंगरे, बालेश्वर अग्रवाल प्रमुख थे।

1957 से 1965 तक एजेंसी ने तीव्र गति से प्रगति की। विदेशों में भी संवाददाता नियुक्त होने लगे। अनेक राज्य सरकारें, समाचार पत्र, आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्र इसके ग्राहक थे। 1964 में दादा साहेब आपटे डेढ़ दशक तक सेवा करने के बाद एजेंसी छोड़ दूसरे सामाजिक कार्य में जुट गये। 1964 से एजेंसी का काम बालेश्वर अग्रवाल के कंधों पर था। हिन्दी की एक अन्य संवाद समिति 'समाचार भारती' ने भी इस क्षेत्र में कार्य करना शुरू कर दिया था। सरकारी संरक्षण के कारण उसकी वित्तीय स्थिति अत्यंत सुदृढ़ थी। परन्तु समस्त भारतीय भाषाओं में मौलिक सूचनाएं देने वाली समिति तब भी हिन्दुस्तान समाचार ही थीं। 1966 में इसनें हिन्दुस्तान वार्षिकी का प्रकाशन प्रारंभ किया। पहली बार वार्षिक हिन्दी में छपी इसमें विज्ञापन भी काफी मिल जाते थे जो आर्थिक कमी को कुछ कम करता था। हिन्दी के समाचार पत्रों को आलेख, फीचर हिन्दी में मिले, इसे ध्यान में रखते हुए 1968 में युगवार्ता नाम से प्रसंग लेख सेवा प्रारंभ की गई। 1975 के अंत तक इनके पास देश के श्रेष्ठ पत्रकारों की टीम थी जिनमें बालेश्वर अग्रवाल, बाबूराव लेले, रामशंकर अग्निहोत्री, ओम मेहता, जगन्नाथ शास्त्री, मनोहर डोंगरे, ओमप्रकाश पंडित, अनिल वर्मा, ए.पी. केसरी, भूपत भाई पारिख, वसंत देशपाण्डे, कनु भाई मेहता,

अमरेन्द्र सिन्हा, अमलेन्द्र कुन्डु, लोकपाल सेठी, सुरेन्द्र द्विवेदी, बनवारी बजाज, ज्ञानेन्द्र भारद्वाज, कैलाश गौड़, श्यामसुन्दर आचार्य, ओमप्रकाश कुंदरा, आनंद मोहन उल्लेखनीय हैं।

आपातकाल में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने देश की चारों संवाद समितियों, पी.टी.आई., यू.एन.आई., समाचार भारती और 'हिन्दुस्तान समाचार' को भंग कर देश में एक ही संवाद समिति 'समाचार' का गठन किया। इससे हिन्दुस्तान समाचार का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो गया। आपातकाल के खिलाफ देशव्यापी आंदोलन में इससे जुड़े अनेक पत्रकारों ने भी भूमिगत समाचार बुलेटिन निकाली।

आपातकाल खत्म होते ही जनता पार्टी की सरकार ने एकीकृत संवाद समिति 'समाचार' को समाप्त कर पुरानी चारों एजेसियों को चालू कर दिया। हिन्दुस्तान समाचार संवाद समिति 14 अप्रैल, 1975 से पुनः प्रारंभ हो गई। तत्कालीन महाप्रबंधक बालेश्वर अग्रवाल ने लिखा था–"आपातकाल में हिन्दुस्तान समाचार का भी अन्य समाचार समितियों के साथ 'समाचार' में विलयन कर दिया गया था। पृथक कार्य करने में जो स्वतंत्रता हमें पहले थी और अब पुनः है, वह दो वर्षों के कालखण्ड में उपलब्ध नहीं थी। परन्तु हिन्दी पत्रकारिता को समाचार का प्रयोग एक वरदान के रूप में कुछ अंशों तक सिद्ध हुआ। विलयन के पूर्व हिन्दी समाचार सेवा पूरक मात्र होती थी। चार–छः घंटे दूरमुद्रक कार्य करते थे और अंग्रेजी समाचार सेवा की सहायता के बिना कोई दैनिक पत्र प्रकाशित भी नहीं हो सकता था। 'समाचार' के दो वर्ष से जीवनकाल में हिन्दी समाचार सेवा को भी अंग्रेजी के

समकक्ष लाने का प्रयास किया गया और ऐसे अनेक समाचार पत्र देश में प्रकाशित होते हैं। जो केवल हिन्दी समाचार सेवा पर ही आधारित थे। समाचार के विघटन के बाद यह संभव नहीं था कि हिन्दुस्तान समाचार हिन्दी पत्रों को पूरी सेवा न दे। अतः 14 अप्रैल, 1978 से 'हिन्दुस्तान समाचार' ने पुनः पृथक रूप से कार्य प्रारंभ किया तो 14 घंटे की दूरमुद्रक सेवा प्रातः 10 बजे से प्रारंभ कर दी गयी और इसी के फलस्वरूप आज 1200 से भी अधिक दैनिक समाचार पत्र हमारी समाचार सेवा का उपयोग कर रहे हैं।[8]

शासकीय नाराजगी और वित्तीय कठिनाई के कारण एजेंसी लड़खड़ाने लगी। दिल्ली प्रशासन ने 11 मई, 1982 को प्रबंध समिति को भंग कर उसकी जगह प्रशासक नियुक्त कर दिया और 17 अगस्त, 1985 को प्रशासक ने अपनी इच्छानुसार चुनाव करबाकर एक प्रबंध समिति का गठन कर दिया। उसके कुछ माह बाद ही संवाद समिति को समाप्त करने का भी नोटिस जारी कर दिया। इसको लेकर एक अंशधारक चंद्रमोहन भारद्वाज ने अदालत में लंबी लड़ाई लड़ी। सरकारी समितियों के रजिस्ट्रार ने 17 जनवरी, 2000 को समिति को समाप्त करने का नया नोटिस जारी किया। 14 अगस्त, 2001 को समिति के अंशधारकों ने नये चुनाव करबाये और एक विधिवत प्रबंध समिति का गठन किया गया। नई समिति के अध्यक्ष जी.आर. माधवराव और सचिव डॉ. नंदकिशोर त्रिखा बने। लम्बे समय तक कार्य ठप होने से उसकी संपत्ति काफी नष्ट हो गई।

[8]हिन्दुस्तान समाचार के तीन दशक, 1980, ग्वालियर, हिन्दुस्तान समाचार, पृष्ठ 2–4

नई यात्रा की शुरूआत हुई और दिल्ली, मुंबई, अहमदाबाद, गुवाहाटी, पोर्ट–ब्लेयर, काठमाण्डू, जयपुर, भोपाल, पटना, नागपुर, लखनऊ, इलाहाबाद, कोलकाता, हुबली, बेंगलूरू, शिमला, चण्डीगढ़ आदि नगरों में कार्यालय खुले। कई राज्य सरकारों और समाचार पत्रों तथा विश्वविद्यालयों ने इसकी सेवा लेना शुरू कर दी। हिन्दी के अतिरिक्त, गुजराती, नेपाली, मराठी, असमिया, बांग्ला, तेलुगू, उड़िया भाषा में भी सेवा दी जा रही है। अनेक भारतीय भाषाओं के पत्र–पत्रिकायें इसके ग्राहक हैं। आधुनिक युग की आवश्यकताओं को देखते हुए समिति ने विशेष साफ्टवेयर एचएसलाईव नेट का निर्माण कराया। नेट सुविधा के कारण सेकेण्ड में समाचार ग्राहक के पास पहुंच जाते हैं। कन्वर्टर की सुविधा होने के कारण अब तकनीकी दिक्कत भी समाप्त हो गई।

बालेश्वर अग्रवाल के मुताबिक, हिन्दुस्तान समाचार ने नागरी दूरमुद्रकों (टेलीप्रिंटर) का प्रयोग समाचार प्रेषण के लिये पहली बार किया। धीरे–धीरे संपूर्ण देश में इसकी शाखायें प्रारंभ हुइं और कई समाचार पत्र केवल हिन्दुस्तान समाचार की समाचार सेवा पर निर्भर करने लगे।

'हिन्दुस्तान समाचार' संवाद समिति की स्थापना भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता के इतिहास में एक नये युग का सूत्रपात माना जा सकता है। ब्रिटिश शासन की समाप्ति के बाद भी पत्रकारिता के सामने मुख्य प्रश्न था कि देश में संवाद की भाषा क्या हो ? जनसाधारण से संवाद की भाषा निश्चय ही भारतीय भाषाएं ही हो सकती थी, लेकिन दुर्भाग्य से सूचना स्त्रोतों पर अंग्रेजी भाषा का

आधिपत्य था। इसलिए भारतीय पत्रकारिता जगत के सामने अनुवाद की जूठन परोसने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। दो महायुद्धों, स्वदेशी, आंदोलन और बाद में महात्माजी के आंदोलन तथा साक्षरता के प्रसार ने हिन्दी जनता में समाचार प्राप्त करने की भूख बढ़ा दी थी और जगह–जगह से अनेक दैनिक हिन्दी पत्र निकलने लगे। किन्तु भारत के विभिन्न प्रान्तों और संसार के अन्य देशों के समाचार प्राप्त करने के लिए उनके पास कोई प्रबंध नहीं था। वे अंग्रेजी की समाचार एजेंसियों से ही खबर प्राप्त करते थे।[9]

यह स्थिति राष्ट्रीय अस्मिता के लिए अपमानजनक तो थी ही, भविष्य में भारतीय पत्रकारिता के विकास के मार्गो को भी अवरूद्ध कर सकती थी।

- हिन्दुस्तान समाचार द्वारा पत्रों को समाचार सीधे हिन्दी में ही मिलने से इन्हें बहुत सुविधा होगी।

  —डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

- भूदान आंदोलन को जनता तक पहुंचाने में हिन्दुस्तान समाचार ने पूरी सहायता की।

  —लोकनायक जयप्रकाश नारायण

- हिन्दुस्तान समाचार भारतीय भाषाओं में समाचार प्रेषण का एक महत्वपूर्ण कर्य कर रहा है।

  —लाल बहादुर शास्त्री

[9] नारायण चतुर्वेदी, हिन्दी समाचार समिति, हिन्दुस्तान समाचार केन्द्रीय रजत जंयती स्मारिका, 1975, संपा. रामशंकर अग्निहोत्री, पृ–24

- जिस दिन भारत के समाचार पत्र अंग्रेजी वाले भी हिन्दुस्तान समाचार के समाचारों से ही अपने कलेवर को सजा सकेंगे, वह दिन भारत का परकीय भाषा, विचारों और धन के प्रभाव से मुक्ति का दिन होगा।

  —पं. दीनदयाल उपाध्याय

- स्वतंत्र भारत में समाचार संकलन का काम राष्ट्रभाषा में न हो, यह एक ऐसा अभाव था जो खटक रहा था। हिन्दुस्तान समाचार समिति इस अभाव की पूर्ति करेगी।

  —पं. कमलापति त्रिपाठी

मध्यप्रदेश की पत्रकारिता का संक्षिप्त परिचय :

मध्यप्रदेश की विविधतापूर्ण संरचना की तरह ही वैविध्य से भरा है— मध्यप्रदेश की पत्रकारिता का इतिहास। जिस तरह निसर्ग के नाना भाँति उपादान मध्यप्रदेश की शस्य श्यामला धरती को सजाते सँवारते हैं, वैसे ही विविध भाषाओं की मणियों से जममगा रही है— मध्यप्रदेश की पत्रकारिता की माला। हिंदी के अलावा मराठी, अंग्रेजी और उर्दू पत्रकारिता की भी उत्तम परंपरा मध्यप्रदेश में पल्लवित रही है। उन्नीसवीं सदी के अंतिम तीन दशक और बीसवीं शताब्दी के पहले पाँच दशक तक फैली मध्यप्रदेश की पत्रकारिता के इतिहास का अध्ययन यह भी बताता है कि यहाँ की तत्कालीन उर्दू पत्रकारिता देश में तब सिरमौर रही है। मध्यप्रदेश में पत्रकारिता का उद्भव, भारत में पत्रकारिता के प्रादुर्भाव से छः दशक और हिंदी पत्रकारिता के जन्म से लगभग डेढ़ दशक पश्चात् हुआ, तथापि विकास, स्तर एवं संघर्ष से

जुझारू तेवरों में मध्यप्रदेश की पत्रकारिता देश के किसी भी अंचल की पत्रकारिता से पीछे कदापि नहीं रही है।

"अखबार ग्वालियर"

मध्यप्रदेश का प्रथम समाचार पत्र अखबार ग्वालियर 1840 के आसपास ग्वालियर से प्रकाशित हुआ था। यद्यपि इसकी कोई प्रति उपलब्ध न हो पाने के कारण अखबार ग्वालियर के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह भी लगाया जाता है, किन्तु मौलाना इमदाद साबरी द्वारा लिखित 'तारीखे सहाफते उर्दू' और व्यंकटलाल ओझा की हिन्दी समाचार पत्र सूची में अखबार ग्वालियर का अस्तित्व स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है। चूंकि मध्यप्रदेश में पत्रकारिता के प्रारंभिक दिनों में समाचार पत्रों में एक ही पृष्ठ को दो हिस्सों में विभक्त कर एक तरफ हिन्दी और दूसरी तरफ उर्दू के मजनून छापे जाते थे, इसलिए दोनों विद्वानों के प्रामाणिक ग्रंथों में अखबार ग्वालियर का उल्लेख है। हरिहर निवास द्विवेदी ने मध्यप्रदेश का इतिहास (चतुर्थ खण्ड, पृष्ठ 375) में अखबार ग्वालियर का प्रकाशन वर्ष 1944 ठहराया है।

"मालवा अखबार"

6 मार्च, 1849 को इंदौर से पंडित प्रेमनारायण के संपादन में 'मालवा अखबार' का प्रकाशन आरंभ हुआ। पंडित प्रेमनारायण इंदौर मतअब मदर्सह शिक्षा अधीक्षक भी थे। अखबार का आकार 11"ग8" था और इसका मुद्रण लिथो प्रेस पर होता था। शुरू में इसकी 108 प्रतियाँ बिकती थीं। वार्षिक मूल्य 12 रूपए और एक प्रति की कीमत 4 आने थी। प्रारंभ में यह अखबार प्रत्येक मंगलवार, बाद में हर बुधवार

और प्रकाशन के अंतिम वर्षों में प्रत्येक शुक्रवार को प्रकाशित हुआ करता था। आठ पृष्ठ के इस अखबार में प्रत्येक पृष्ठ को बीचोबीच से दो हिस्सों में बाँट कर आधे पृष्ठ में उर्दू और आधे पृष्ठ में हिंदी में समाचार दिए जाते थे। अशिकांशतः दोनों भाषाओं में एक ही मजमून दिया जाता था। इस समाचार पत्र में अधिकतर ब्रिटिश सरकार के अधिकारियों के दौरों के विवरण छपते थे अथवा देश के अन्य राज्यों की राजधानियों के वृत्तान्त दिए जाते थे। इंदौर के अलावा धार, देवास, उज्जैन, भोपाल आदि की खबरें प्रायः प्रकाशित हुआ करती थी। के प्रारंभिक अंकों को देखने से ज्ञात होता है कि यह अख़बार बाहरी विज्ञापन नहीं छापा करता था। अखबार में किसी प्रकार की सजावट नहीं होती थी और भाषा की दृष्टि से ही हिंदी की तुलना में उर्दू की कसावट अच्छी थी। कभी–कभी उर्दू के मजमून में सबसे अंत में प्रेस और प्रबंधक का नाम भी इस तरह छपा रहता था– ''बाई तमाम पंडित प्रेमनारायण मतअब मदर्सह, इंदौर में छपा।''

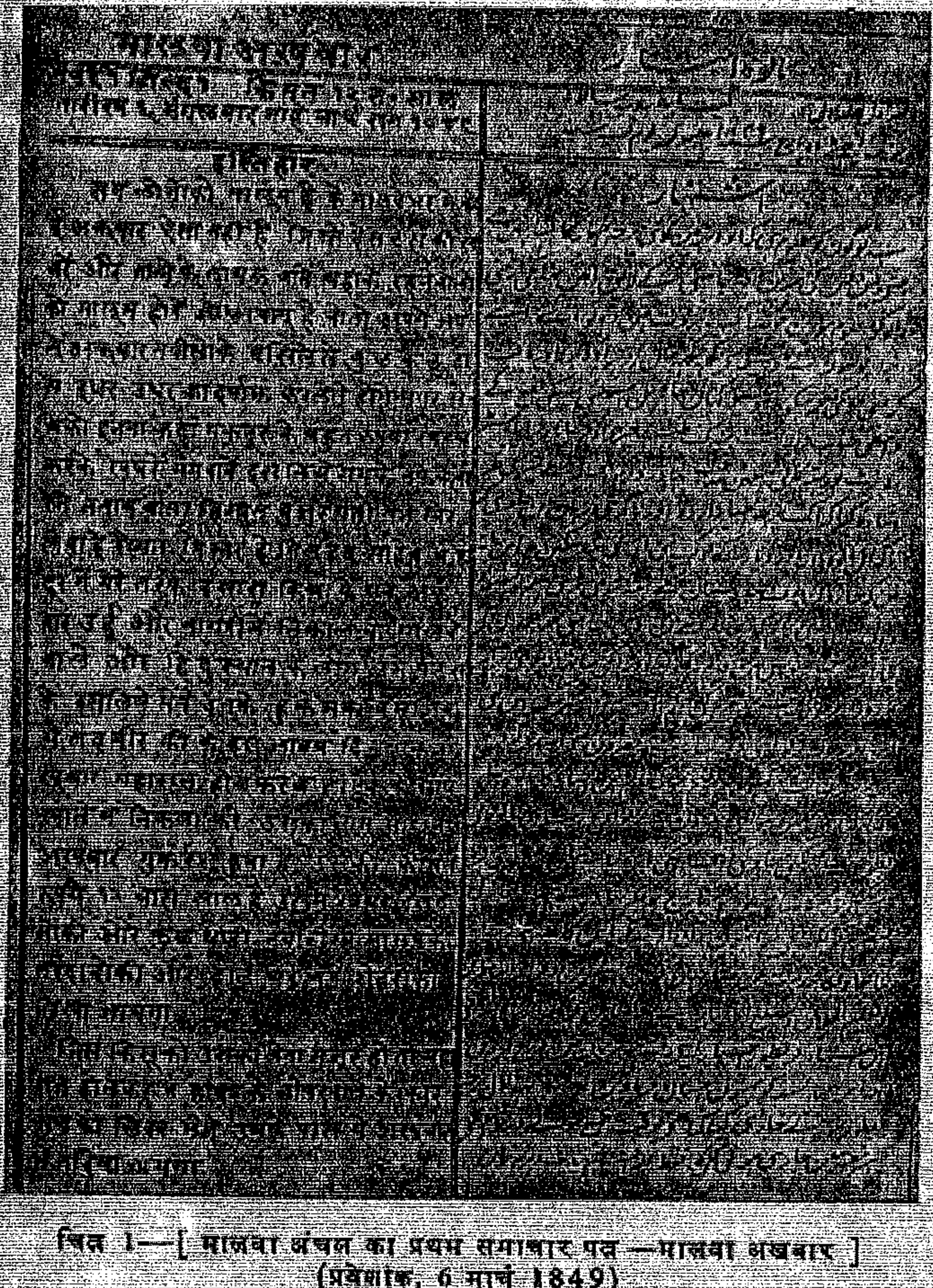

चित्र 1—[मालवा अंचल का प्रथम समाचार पत्र —मालवा अखबार]
(प्रवेशांक, 6 मार्च 1849)

प्रकाशनों के जो विज्ञापन छपते भी थे, वे बिलकुल खड़ी भाषा में हुआ करते थे और पाठकों को आकर्षित करने के बजाय सीधी सूचना पहुँचाने का उनका स्वर हुआ करता था। एक फरवरी, 1853 के अंत में प्रकाशित विज्ञापन द्रष्टव्य है :

"इश्तहार— पंचाग संवत् 1910 का छप कर तैयार हो चुका है। जिसे लेना मंजूर हो, मँगा लें। कीमत फी जिल्द 4 आना है।"

इसी तरह 8 फरवरी, 1853 के अंक में इश्तहार दिया गया—"दो खंड अमरकोष हमारे छापेखाने में छप कर तैयार हो चुका है। जिस किसी को खरीदना मंजूर हो, 3 रूपए की जिल्द के हिसाब से मँगा लें। बाद छपने तीसरे खण्ड के जो कोई ले, 4 रूपए पड़ेंगे।"

6 मार्च, 1849 को अपने प्रकाशन के प्रथम दिन ही 'मालवा अखबार' में संपादक ने अपने प्रकाशन का उद्देश्य घोषित करते हुए लिखा— 'सब लोगों को मालूम हो के मालवे भर में कोई अकबार ऐसा नहीं है, जिससे देस—देस की खबरें और जानने लायक बातें यहाँ के रहने वालों को मालूम होवें। जो धनवान हैं वो तो अपने—अपने अकबारनवीसों के वसीले से कुछ—कुछ हाल इधर—उधर का दर्याफ्त कर लेते होंगे, मगर सबको कहाँ इतना मकदूर के बहुत रूपया खरच करके खबरें मँगवाएँ, इसके लिए सबके नफे के वास्ते जनबा वाला हिम्मत बुजुर नेमत खैर ख्वाहै रैयत मिस्तर हेमिल्टन साहेब बहादुर ने मेरे तरफ इशारा किया के एक अकबार उर्दू और नागरी में निकालो के मालवे और हिन्दुस्थान के लोग पढ़ सकें, इसलिए मैंने हुक्म के बमुजिब यह तदबीर की के हर आठवें दिन एक अकबार महाराज

होलकर बहादुर के छापेखाने में निकला करे। उसका नाम 'मालवा अखबार' मुकर्रर हुआ। उसकी कीमत रूपये 12 (बारा) साल है। उसमें खबरें देश विदेशों की और कुछ थोड़ी तवारीख मालवे के सरदारों की और हाल बड़े–बड़े शेहरों का लिखा जाएगा। 'जिस किसू को उसका लेना मंजूर हो तो महाराज होलकर बहादुर के छापेखाने के कारकून को लिख भेजें, उनके पास यह अखबार भेज दिया जाएगा।"

यह उद्घोषणा जहाँ मालवा अखबार के प्रकाशन के उद्देश्य पर प्रकाश डालती है, वहीं यह भी बतलाती है कि उस समय जो धन संपन्न लोग रहे हैं, वे निजी तौर पर अखबारनवीस अथवा वाकयानवीस रखते थे, जो अपने नियोजक को देश दुनिया की खबरें सुनया करते थे। यह भी कि जनसंचार के साधन के रूप में समाचार पत्र का महत्व भली भाँति समझा जाने लगा था। यही नहीं, आगे चल कर अखबार निकालने और पत्रकारिता के मायने क्या होते हैं ? इस संबंध में भी 23 जनवरी 1861 के अंक में सम्पादक ने अपनी राय इस तरह जाहिर की :

"अखबार लिखना"

'एक मित्र ने हमसे पूछा कि अखबार लिखने के क्या मायने हैं और अखबार लिखने वाले को कौन सी बातें जाननी चाहिए ? मालूम हो के अखबार लिखने वाला लोगों का अगुवा होता है और उसको सब चीज जाननी चाहिए। नहीं तो वो ही मसल होगी कि 'आँख का अंधा और नाम नैनसुख" बहुत से हिन्दुस्तानी अखबार वालों ने ये समज लिया है के खबरें देने भर से अखबार हो जाता है। ये झूठ है।

अखबार लिखने के मायने अगर ये है के फलानी फौज ने फलानी जगे से फलानी जगा को कूच किया या फलाने कप्तान साहब मर गए और बकरी ने दो मूँ का बच्चा दिया तो हम अखबार लिखने के लायक नहीं और हमको चाहिए के इस्तिफा दे दें और कोई धन्दा कर लें। हमको ऐसा अखबार लिखना नहीं आता और न हम इसे अखबार कहते हैं। अगर कही लड़ाई होती हो तो वहाँ की खबर लिखनी चाहिए न कि फलाने शहर में नाज का भाव ये है और फलाने साहब पहाड़ में शिकार को गए हैं। हाँ, जब कहीं काल पड़े तो लिखना चाहिए, मगर ये नहीं कि हर हफ्ते में दो सफे इसी से भर दिए। अखबार लिखने वाला मादा हो तो एक बात भी है और यों तो जो है सो है। दूसरी बात ये है के अखबार लिखने वालों के सवालों में बड़ा मजा आता है। एक साहब पूछते हैं के रजीडेंट और अजंट में क्या फर्क। भला ये भी कोई सवालों में सवाल है। जिसको जरा सी भी अंग्रेजी आती होगी तो ताव देकर बता देगा। हमने इसका जवाब लिखा और उनने भी अपने अखबार में इसे छापा। फिर उनोने एक ऐसा ही सवाल किया और फिर हमने जवाब लिखा। अब वो गवरमेंट गजट पर तकरार करते हैं के परचा गजट से अलग हो गया और उसमें कई परचे थे और एक परचे में लिखा था के ज़ो गजट इसके साथ है वो सई नहीं। मालूम नहीं वो कौन सा गजट है। फकत भला ये क्या अखबार लिखना इसी को कहते हैं। हम को तो लिखते हुए शरम आती है। अगर वो साहब मेहरट के दफतर में जा के पूछते तो मालूम हो जाता। हमसे ये सवाल कर्ते हैं। इसमें वक्त खोना है और कुछ हासिल नहीं। हाँ किसी मुकदमें में कोई बात पूछे तो बता भी है। इनकम टेक्स पर उनोने पूछा था और हमने उसका जबाव भी लिखा। शायद उनके पसंद न आया

हो। मगर हमने जो तजबीज बताई है, वो बावन तोले पाव रत्ती है। हाँ, उसमें बकवर का बहुत सा काम है और उनकी बकवर आता ही होगा क्यों कि बगैर बकबर के क्या अखबार लिखा जाएगा क्योंकि वो तो उसका तत्व है। बम्बई के अंग्रेजी अखबार में लिखा था के हिन्दुस्तानी अखबार वालों को उपदेस का ख्याल नहीं। वाल्घात लिखा करते हैं। ताना पक्का दिया। हम तकसीर मानते हैं और यही उसका डंड है। अंग्रेजी अखबार सबके पास नहीं पौंचता और हिन्दुस्तानी अखबार सब जगे पौंचता है। अगर अखबार वाले वाहियात खबरों की जगे दो एक मजमून लिखा करें तो बहुत फायदा होगा। ये सच है कि हम माफ तो कुछ नहीं करते और दूसरों को समझाते हैं। मगर अब हमने ठान लिया है के लोगों को थोड़ा–थोड़ा कर सीधे रास्ते पर लावें और दूसरे तीसरे हफ्ते पर दो–एक मजमून लिखें। मगर ये नहीं के खबर बिलकुल न होगी। एक दो खबरें लिख कर कोई बात छेड़ देंगे और समाज में आवेगा, वो लिखेंगे। अब मुश्किल तो ये है कि अखबार के 4 सफे तो उर्दू मं उड़ जाते हैं, बाकी 4 सफे में क्या हम अपना सर लिखें। कल रात को एक मित्र ने हिन्दुस्तानी किस्सों का जिक्र किया और सबने मिल कर कहा के देव, भूत, जिन्द, परी के सबब से किस्सा उड़ जाता है और लिखने वाले का नाम हो जाता है और फिर देखो तो उसे अकल नही मानती के किस्से में किसी आदमी की मुसीबत का जिक्र होता है तो चाहिए कें उसमें ऐसी हो के जो हर रोज हुआ करती है। अंग्रेजी किस्सों का भी जिक्र आया। हमने कहा के पहले वो लोग भी भूत प्रेत का हाल लिखते थे। मगर लोग अब उनको पसंद नहीं करते और दस्तूर उठ गया। एक मत्र ने कहा के मालवा अखबार में किसी अंग्रेजी किस्सों की बात छपे तो अच्छा है।

हम उनकी बात दिल जान से मानते हैं मगर अखबार में जगे नहीं। अगर दस बीस किस्से हिन्दी में छप जाएं तो अच्छा। अगर हमारे किस्से से कोई साहब नाराज हों तो उनकी खुशी। मगर हमने कोई बात ऐसी नहीं लिखी। हमको अपने मुल्क की बहोत मोहब्बत है और इस सबब से ये हाथ घिसाई की। अगर अखबार वाले हमारी बा को मानेंगे तो बहोत फायदा होगा। मेहेनत तो है मगर इसका अंजाम बहुत अच्छा होगा।''

1857 के प्रथम स्वतंत्रता समर और उसके परिणाम आने वाले वर्षों तक समाचार पत्रों के लिए चर्चा का विषय बने रहे थे। 5 मार्च, 1862 के 'मालवा अखबार' ने लिखा है– इंग्लैड के उच्च अधिकारी मिस्टर लीड, जिन्हें गदर की जाँच करने भारत भेजा था, ने अपनी रिपोर्ट में यह कहा कि ज्यादती अंग्रेजों की तरफ से हुई तथा बहुत से निर्दोष लोगों को गोली से मार दिया गया तथा फाँसी पर लटकाया गया। वही अधिकारी अब बम्बई के गवर्नर मुकर्रर हुए है।''

इसी तरह 11 मार्च, 1862 के 'मालवा अखबार' में खबर है कि एक शहर के कुछ लोगों ने विचार किया कि शहर के सब अंग्रेजों को एकदम मार डाला जाए। इस वास्ते उन्होंने 8 दिसम्बर, इतवार तै किया तथा गिरजाघर के सामने सुरंग लगा दी। मगर समय से पहले उनमें से एक ने यह खबर सरकार को दे दी। 60–70 लोग गिरफ्तार किए गए हैं।

इसी तारीख के अखबार की दूसरी खबर है– 'लार्ड अलबेरून की यह राय है कि स्कूलों में अंग्रेजी पढ़ाना बंद कर दिया जाए,

क्योंकि अंग्रेजी पढ़ने के लोग सरकार से सामना करने लगते हैं। मगर वे भूल गए कि गदर में अंग्रेजी पढ़ने वालों ने ही उनका साथ दिया था।' यह खबर तत्कालीन परिस्थितियों का संकेत तो देती ही है, यह तथ्य भी उजागर करती है कि सर्वांश में न सही, कुछ अंग्रेजीदाँ लोग अपनी मातृभूमि की बनिस्बत अंग्रेज हुकूमत के ज्यादा वफादार थे और यह भी कि अपने जमीर के लिए अपनी ही भाषा एक अपरिहार्य तत्व है।

9 जुलाई, 1862 का 'मालवा अखबार' बताता है– जनता में फू डालने के लिए सांप्रदायिकता को बनाए रखना सरकार का एक शलन था।" 'मालवा अखबार' ने लिखा–'यूनान में एक ऐसा कानून था, जिसके मुताबिक मुल्क में आपस में फसाद होने पर हर शख्स को किसी न किसी पक्ष का साथ देना जरूरी था, जो शख्स ऐसा नहीं करता, उसे यूनानी नहीं माना जाता था और यूनान से बाहर निकाल दिया जाता था।' इस खबर का जिक्र करते हुए मालवा अखबार ने आगे लिखा– मजहब हरेक का अपना–अपना व्यक्तिगत मामला है, जिसका मतलब सिर्फ पूजा पाठ और दैनिक आचार–विचार तक सीमित है। अगर यह बात भारत में लागू की जाए तो इसका मतलब है कि हिंदू मुसलमान के बीच खाई को और बढ़ाया जावें। यह कानून नाइंसाफी है। कानून बने तो ऐसा जिससे हिन्दू, मुसलमान और ईसाइयों में भेदभव बढ़ने की जगह कम हो और आपस में प्रेम से रह सकें।'

20 अगस्त, 1862 के 'मालवा अखबार' में एक अंग्रेजी समाचार पत्र के लेखों में हैदराबाद के शासन की आलोचना के जवाब में

'मालवा अखबार' ने खुलासा किया— कंपनी के शासन काल में कंपनी और देशी राजाओं के बीच बराबरी का व्यवहार रहता था, मगर कंपनी का शासन समाप्त होने पर अंग्रेज सरकार ने यह दस्तूर बदल दिया और देशी राजाओं को इंग्लैड की मलिका और उसके प्रतिनिधिस्वरूप वायसराय से नीचे का ओहदा दिया गया, यानी अब बराबरी के स्थान पर मातहती के संबंध चालू हो गए। हैदराबाद के शासक ने इसका विरोध करते हुए "सितारा ए हिंद" का खिताब लेने से इंकार कर दिया था।"

महंगाई तब भी सरकार की न केवल चिंता का विषय होती थी, बल्कि सरकार को उस पर काबू पाने के लिए कदम उठाना पड़ते थे। 17 अक्टूबर, 1860 को 'मालवा अखबार' ने खबर दी कि "ग्वालियर राज्य में गल्ले की भयंकर तंगी हो गई। व्यापारियों ने गल्ला छिपा दिया तथा चौदह सेर का बेचने लगे। राजा ने स्वयं बाजार में छापा मार कर अनाज बरामद किया और सोलह सेर का बिकवाया। प्रजा बहुत खुश हुई।"

आबादी विस्फोट आज ही नहीं, सवा सौ साल पहले भी चिन्ता का बड़ा कारण था। एक मार्च, 1853 का 'मालवा अखबार' लिखता है—छः साल बाद आगरा जिले की जनगणना एक ही दिन में पूरी की गई और छः साल में आबादी एक लाख बढ़ी। फिर 17 अक्टूबर, 1860 का 'मालवा अखबार' लिखता है चीन की आबादी इतनी अधिक हो गई है कि वहाँ लोग बीमार लोगों को घर से बाहर कर देते हैं तथा सड़क पर लोग उन बीमारों को मारते हैं।

'मालवा अखबार' के 18 नवंबर, 1860 के अंक में देश में पहली बार आमदनी कर (इनकम टेक्स) लगाने और बड़े नगरों में उसका विरोध होने की खबर है। उस समय समाचार पत्रों में दूसरे अखबारों के हवाले से समाचार देने का खासा प्रचलन रहा है। 'मालवा अखबार' में 28 नवंबर, 1860 के अंक में लंदन के समाचार पत्र को उद्धृत करते हुए लिखा गया है– "संसार की कुल आबादी एक अरब है और प्रति मिनट 60 लोग मरते हैं। मरने वालों में से 50 प्रतिशत 7 वर्ष से कम की उम्र में मरते हैं।"

तकनीकी एवं वैज्ञानिक आविष्कारों की सूचना पाठकों तक पहुँचाने की ललक तबके अखबारों में भी रही है। 27 मार्च, 1861 के 'मालवा अखबार' में छपा–बर्ट फिल्लू नामक एक अमेरिकी ने एक हवा का जहाज बनाया है और उस पर बैठ कर इंग्लैड जाने का इरादा रखता है। यह सफर 48 घंटे में पूरा होगा। जहाज का नाम करेक्टिव लेटर है। इसकी लंबाई 300 फुट और चौडाई 135 फुट है और उसमें 30 फुट लंबी एक नाव भी लगी है। जहाज के कप्तान के अलावा एक नजूमी भी होगा। जरूरत पड़ने पर यह जहाज पानी में भी चल सकता है।

एक मई, 1861 के 'मालवा अखबार' में बताया गया कि 1860 के परिपत्र क्रमांक 33 पर अखबारों को (पी.पी.) पोस्ट पेमेंट द्वारा भेजने के आदेश दिए गए, जिसमें अभी तक बैरंग होने वाले अखबार, अब बैरंग नहीं होंगे। 'मालवा अखबार' का 31 जुलाई, 1861 का अंक स्वेज नहर के निर्माण की कहानी बताता है। अखबार लिखता है– मिस्र के शाह ने फ्रांस के बादशाह से एक नहर बनाने का करार किया है, जिसके

कई भागीदार हैं। इसकी लागत तीन करोड़ रूपये है तथा इसमें दस हजार मजदूर काम करते हैं।"

'मालवा अखबार' की राष्ट्रीयता की तड़प 2 अक्टूबर, 1861 के अंक में इस तरह प्रकट होती है– एक ऐसी मशीन का इजाद हुआ है, जिसे घुमाने से गर्मी कम हो जाती है। मिस्टर जॉन आडपी तथा मिस्टर बराट कोर, सिविल इंजीनियर्स ने मिलकर एक ऐसा यंत्र तैयार किया है, जो हवा के जोर से पानी ऊपर फेंक सकता है। इससे नहर का पानी ऊपर फेंक कर सिंचाई की जा सकती हैं। अखबार ने आगे हिन्दुस्तानियों को बहुत कोसा है, जो अपना समय चौपड़े खेलने और नाच–गाने में बरबाद कर रहे हैं तथा ये लोग हुनर सीखना नहीं चाहते। अखबार ने लिखा है कि भारतीयों को यह अकल नहीं है कि विलायत से कपड़ा बन कर आता है तथा हमारा रूपया विलायत जा रहा है। ये कपड़ों को अपने यहाँ इसलिए नहीं बनाते, क्योंकि यह काम सिर्फ जुलाहे का है।

सन् 1862 में इंग्लैड में 1105 समाचार पत्रों के प्रकाशन की सूचना देते हुए 7 मई, 1862 के 'मालवा अखबार' ने लिखा है—कम कीमत के अखबार जैसे डेली टेलीग्राम, स्टार, और स्टैंडर्ड की खपत काफी बढ़ गई है। यहाँ तक कि अखबार वालों को इसे छाप कर ग्राहकों को देना मुश्किल पड़ रहा है। 'डेली टेलीग्राफ' के एक लाख ग्राहक और 'स्टार' के पैंतालीस हजार ग्राहक है। ये सब अखबार भाप की मशीन से चलते हैं और एक घंटे में छप कर तैयार हो जाते हैं। संपादक ने इस बात पर बहुत अफसोस जाहिर किया कि "हिन्दुस्तान में जहाँ की आबादी अट्ठारह करोड़ है, उसमें सौ अखबार भी इस

हिसाब से नहीं छपते। जितने अखबार 'डेली टेलीग्राफ' के एक घंटे में छपते होंगे, वे पूरे हिन्दुस्तान में एक दिन में भी नहीं छपते होंगे।"

तकनीकी कारीगरों के मान सम्मान की एक घटना 22 जनवरी, 1862 के 'मालवा अखबार ने दी है– इलाहाबाद में छोटेलाल नामक एक महाजन ने अपनी अकल से एक धुएँ की गाड़ी ऐसी बनाई है कि उसके वास्ते लोहे की सड़क की जरूरत नहीं। घोड़े की डाक गाड़ी की तरह कंकड़ की सड़क पर दौड़ी जाती है। यह हाल, लाट साहब ने महारानी, लंदन को लिखा। वहाँ से इस कारीगरी के एवज में सर्टिफिकेट महाजन को आया है– हिन्दुस्तान के हाकिमों में से जहाँ भी मुलाकात को वो जाएँ, दरवाजे तक पेशवाई हो और अपने से ऊँचा बिठाएँ।

उस समय की 'मालवा अखबार' की प्रतियाँ देखने से यह भी पता चलता है कि तब के अखबारों में शीर्षक के रूप में शहर का नाम दिया जाता था। सन् 1870 के आसपास मालवा अखबार के संचालकों ने इसका प्रकाशन बंद कर दिया था। 1873 में तत्कालीन होलकर नरेश तुकोजी राव द्वितीय ने लिथो मशीन खरीद ली और उसे मोती बंगला में स्थानांतरित कर दिया गया। यहीं से मराठी में 'मालवा अखबार' का प्रकाशन फिर से आरंभ हुआ, लेकिन उसका स्वरूप अब

पूरी तरह सरकारी हो गया था। कुछ वर्ष पश्चात् 'मालवा अखबार' पुनः मूल स्वरूप में प्रकाशित हुआ।

1852 में इंदौर से 'दिल्ली अखबार' निकला। मध्यप्रदेश में यह उर्दू भाषा का प्रथम समाचार पत्र रहा। इससे पहले अखबार द्विभाषी थे।

सन् 1853 में ग्वालियर से मुंशी लछमनदास के संपादन में ग्वालियर गजट (चित्र--2) का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके लिए आलीजाह दरबार प्रेस की स्थापना की गई थी। गजट के संपादक प्रेस के सुपरिटेंडेट

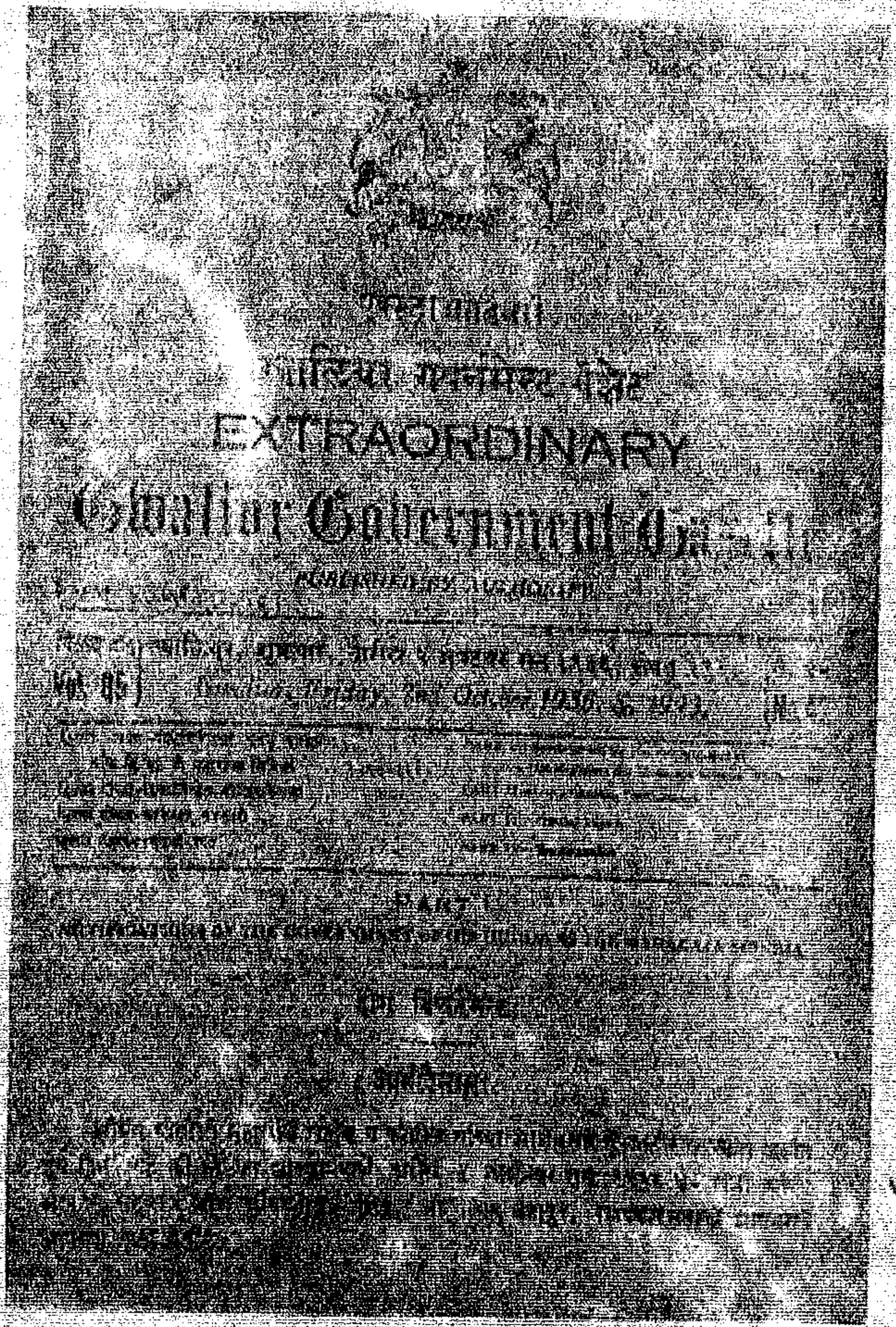
EXTRAORDINARY

Gwalior Government

चित्र 2—[ग्वालियर गजट : 1853]

टेंडेण्ट ही हुआ करते थे। इसका आकार 20ग26 था और

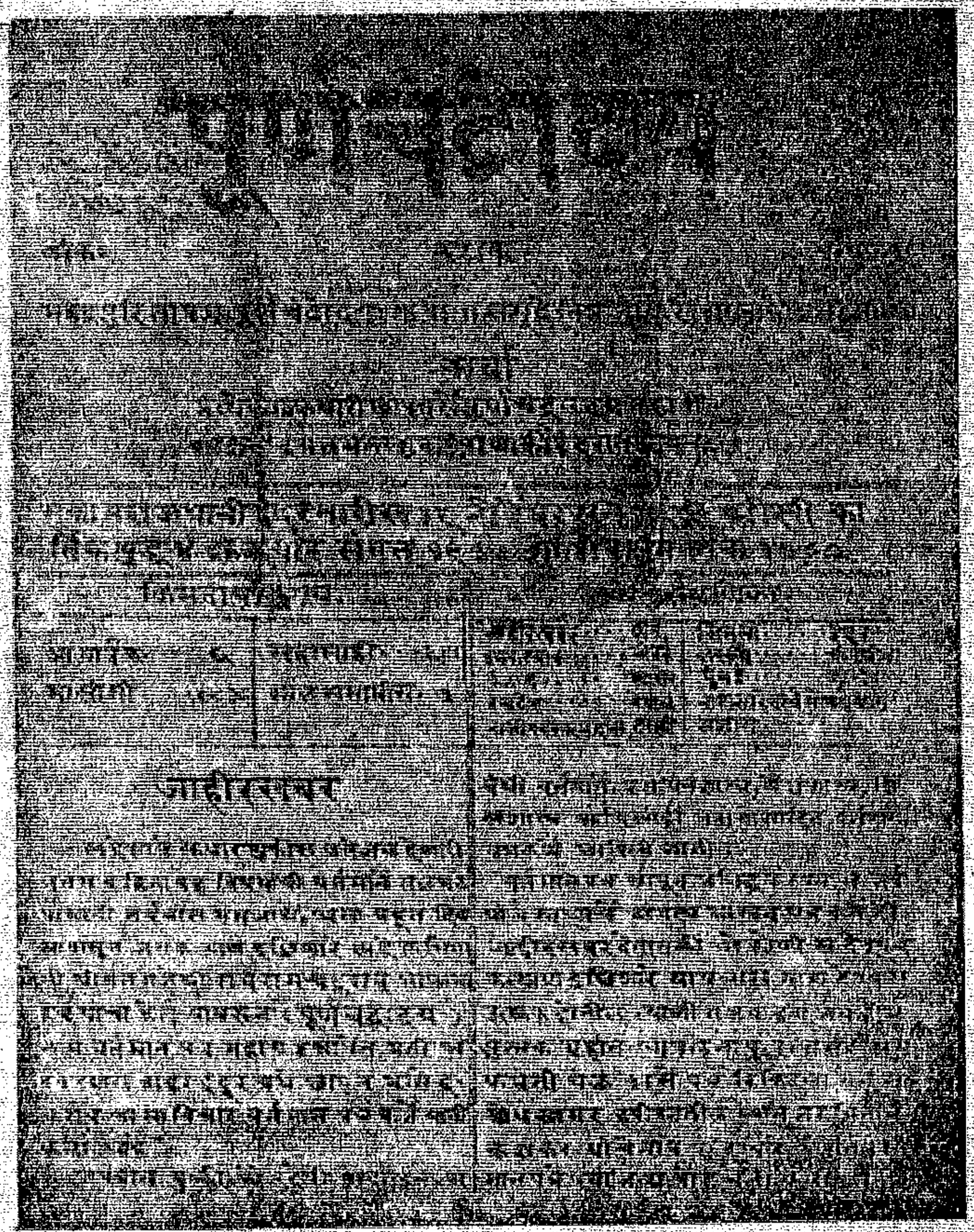

चित्र 3—प्रदेश में मराठी का प्रथम समाचारपत्र—'पूर्ण चन्द्रोदय' — 1860

वार्षिक मूल्य 8 रूपए था। ग्वालियर गजट के शीर्ष पर ग्वालियर का राज चिन्ह कुण्डली धारी सर्पराज छप जाता था और इसमें हिंदी, उर्दू के अखबारों की खबरें और कभी कदा पायोनियर से भी अंग्रेजी समाचार लिए जाते थे। जुलाई, 1896 में 'ग्वालियर गजट' हिन्दी उर्दू में अलग–अलग छपने लगा। गजट के अवलोकन से पता चलता है कि यह पूरी तरह ग्वालियर राज्य का सरकारी प्रकाशन था, जो प्रति सप्ताह प्रकाशित होता था। इसके चार भाग हुआ करते थे– पहले भाग में महाराजा सिंधिया की सरकार के आदेश, दूसरे भाग में विभागीय आदेश, तीसरे भाग में सरकारी कागजात और चौथे भाग में सामान्य सूचनाओं का ब्यौरा हुआ करता था। दो अक्टूबर, 1936 के 'ग्वालियर गजट' के असाधारण अंक में जो मराठी हिन्दी, अंग्रेजी तथा उर्दू–चार भाषाओं में एक साथ प्रकाशित हुआ, श्री जीवाजी राव सिंधिया के 2 नवम्बर, 1936 से शासन की बागडोर अपनी माँ तथा कौंसिल से ग्रहण करने संबंधी घोषणा प्रकाशित हुइ। 95 वर्ष तक प्रकाशित होने के बाद 1948 में यह 'मध्यभारत राजपत्र में परिवर्तित हो गया।

इंदौर से एक नवम्बर 1860 को मराठी साप्ताहिक पूर्ण चंद्रोदय (चित्र–3) का प्रकाशन आरंभ हुआ। श्री रामचंद्रराव भाउ साहब द्वारा प्रकाशित इस पत्र का उद्देश्य देश में स्वदेशी भाषा समाचार पत्र प्रकाशित कर जनसाधारण को उपलब्ध कराना था। इसके संपादक श्री वासुदेव बल्लार मुड़े थे। पत्र के मुखपृष्ठ पर श्लोक प्रकाशित होता था। 'पूर्ण चन्द्रोदय' प्रति शुक्रवार को छपता था और इसका वार्षिक

मूल्य छः रूपए था। इस पत्र के 13 दिसम्बर, 1861 के अंक में प्रख्यात बंडखोर नाना साहेब शीर्षक से नाना साहेब तथा तात्या टोपे के जीवित होने तथा उनके नेपाल और तिब्बत में होने के समाचार प्रकाशित हुए। 8 दिसम्बर, 1861 के टाइम्स ऑफ इंडिया के हवाले से समाचार दिया गया कि करॉंची में एक मनुष्य को नाना साहेब होने के शक में गिरफ्तार किया गया और उसे पूछताछ की जा रही है। यह साप्ताहिक 1865 तक प्रकाशित हुआ।

इंदौर से 1863 में मराठी साप्ताहिक 'वृत्त लहरी' का प्रकाशन किया गया।

जबलपुर में सन् 1862 तक मुद्रण की सुविधाएँ उपलब्ध हो गई थीं।

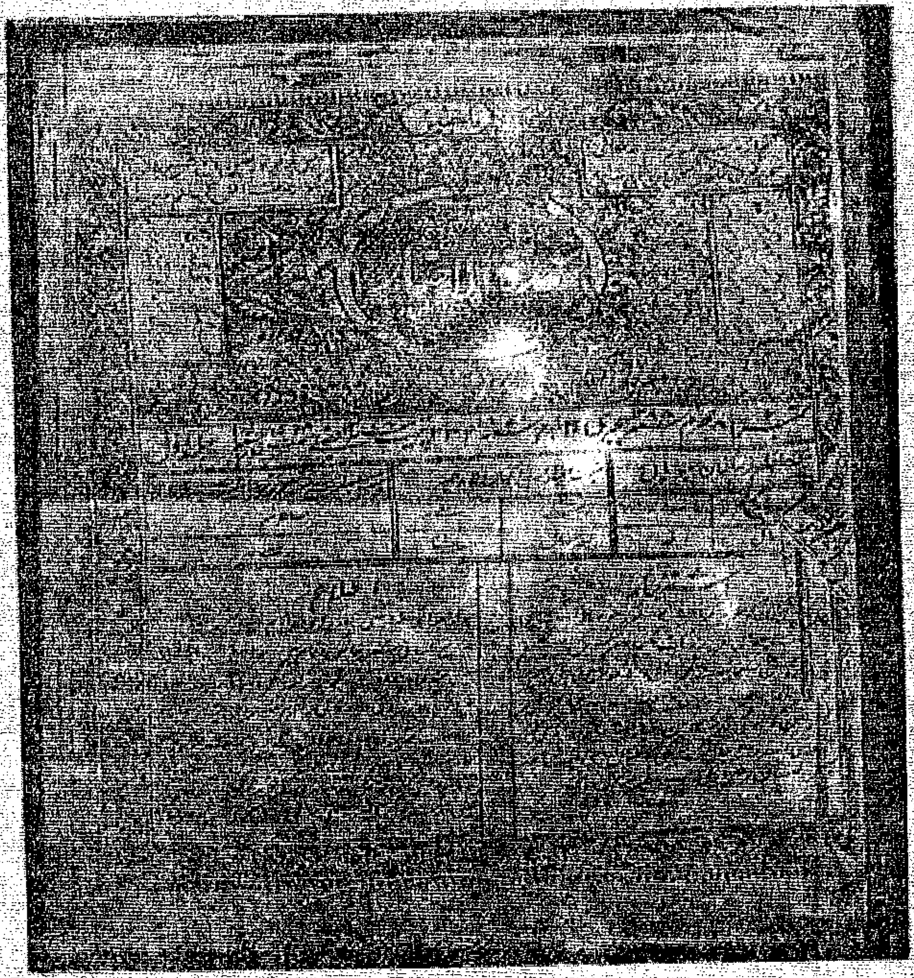

चित्र 4 — भोपाल अंचल का पहला अखबार—

उम्दतुल अखबार—24 मार्च 1871

भोपाल में जहाँ नवाब सिकंदर जहाँबेग के दौर से सन 1851 में पहला उर्दू छापाखाना 'मतबा सिकंदरी' कायम हुआ था सन् 1871 से पत्रकारिता का

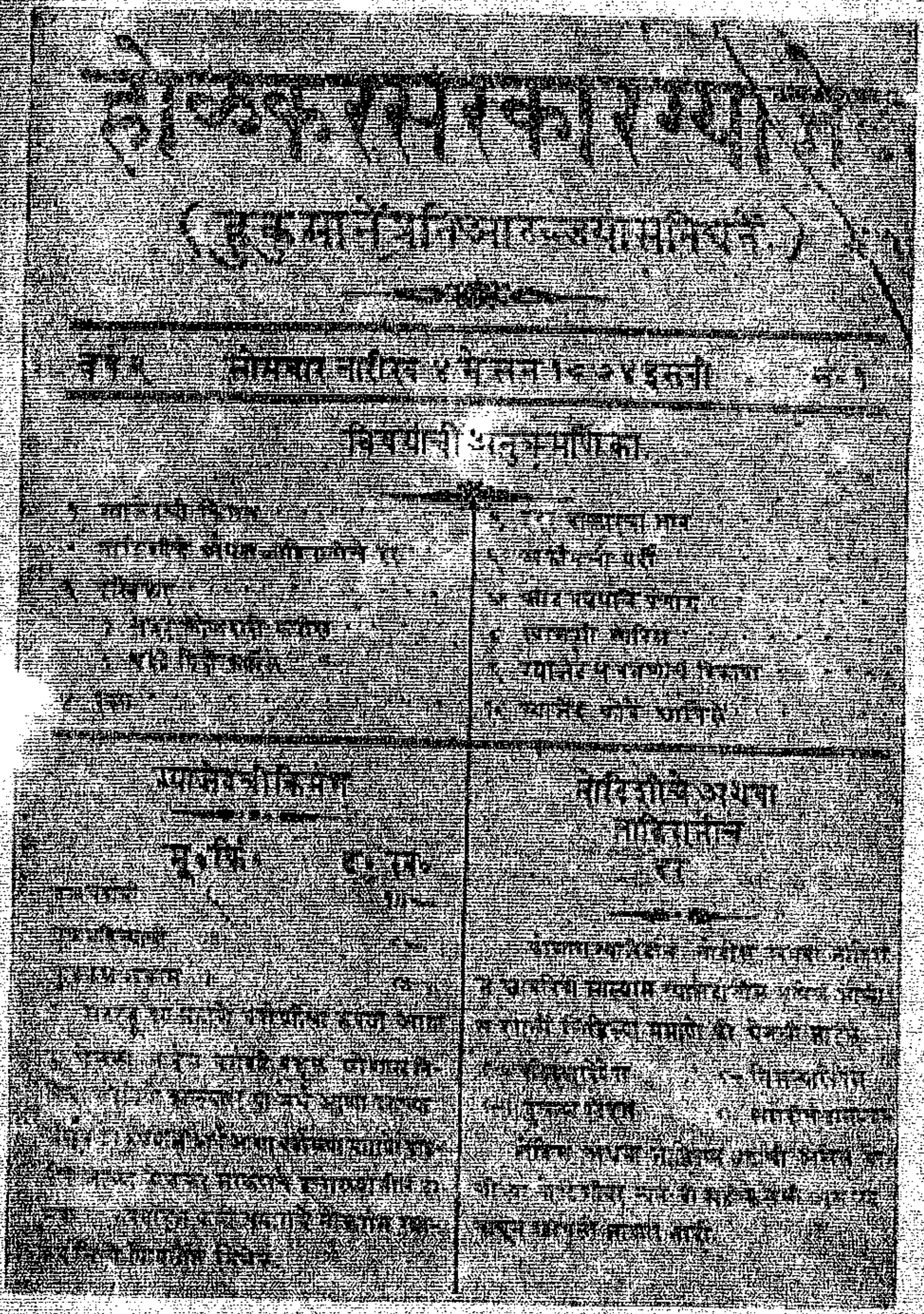

चित्र 5—[होलकर सरकार गजट—1873]

सूत्रपात हुआ। श्री असगर हुसैन ने 24 मार्च, 1871 को उर्दू का साप्ताहिक पत्र 'उम्दतुल अखबार' (चित्र–4) निकाला। यह पूरी तरह सरकारी साप्ताहिक था। बाद में नबाव शाहजहां बेगम के दौर से शाहजहाँनी प्रेस अस्तित्व में आया।

21 अप्रैल, 1873 से इंदौर में साप्ताहिक होलकर सरकार गजट (चित्र–5) का प्रकाशन प्रति सोमवार आरंभ हुआ। इस साप्ताहिक में सरकारी आदेश, विज्ञापन, बाजार भाव, पंचाग तथा निजी नोटिस विज्ञापन में प्रकाशित किए जाते थे। शुरू में गजट केवल मराठी भाषा में प्रकाशित होता था, किंतु बाद में मराठी के साथ अंग्रेजी एवं हिंदी में भी छापा जाने लगा। चार से आठ पृष्ठों वाले इस गजट के मुख पृष्ठ पर होलकर राज्य का राजचिन्ह अंकित हुआ करता था। गजट का वार्षिक मूल्य छः रूपए, मासिक मूल्य 12 आने तथा प्रति अंकि 4 आने था। डाक खर्च के लिए एक रूपया 10 आना वार्षिक लिया जाता था। सन् 1948 तक इस गजट का प्रकाशन होता रहा।

धार रियासत की ओर से 1873 में एक साप्ताहिक अखबार 'वृत्त धारा' का प्रकाशन धार से आरंभ हुआ। 1893 तक इसके प्रकाशन का हवाला मिलता है।

जबलपुर से 'इंडियन रेलवे सर्विस गजट' नामक साप्ताहिक पत्र 1873 में निकला जो रेल कर्मचारियों के लिए ही प्रकाशित होता था। जबलपुर से प्रथम प्रामाणिक समाचार पत्र एक मार्च, 1873 को जबलपुर समाचार के नाम से निकला। यह द्विभाषी अखबार था जो हिन्दी और अंग्रेजी में छपता था। यह मासिक पत्र था, जिसकी एक

प्रति की कीमत चार आने हुआ करती थी। इस समाचार पत्र के संबंध में दिलचस्प तथ्य है कि जबलपुर से प्रकाशित होने वाले इस अखबार का मुद्रण बनारस के मेडिकल हाल प्रेस से होता था और इसके संपादक श्री कृष्णराव होशंगाबाद में रहते थे।

उन्नसीवीं शताब्दी के आखिरी दशक तक जबलपुर में अंजुमन प्रेस, शुभचिंतक प्रेस, शिव भरोस यंत्रालय, यूनियन प्रेस कंपनी, रेजिमेंटल छापाखाना, नर्मदा लहरी प्रिटिंग वर्क्स आदि मुद्रणालय स्थापित हो चुके थे एवं इस तरह मध्यप्रांत में सर्वाधिक मुद्रण सुविधाएँ जबलपुर में उपलब्ध थीं।

1877 में खण्डवा से 'रेलवे समाचार' का प्रकाशन आरंभ हुआ जो `2 में इंदौर से साप्ताहिक के रूप में निकला। यह हिंदी, उर्दू और राठी में प्रकाशित होता था। 1877 में जबलपुर से मेसोनिक रिकार्ड जॉफ वेस्टर्न इंडिया नाम का मासिक निकला।

1883 में जबलपुर के शुभचिंतक प्रेस से साप्ताहिक शुभचिंतक का प्रकाशन आरंभ हुआ। रामगुलाम अवस्थी इसके संपादक थे। शुभचिंतक का साहित्य पूर्ति अंक पृथक से काव्य सुधा निधि के नाम से प्रकाशित किया जाता था और इसका संपादन रघुवरप्रसाद द्विवेदी करते थे। 'शुभचिंतक' का वार्षिक मूल्य चार रूपए था। इसमें मुख्य रूप से धार्मिक तथा पौराणिक आख्यान, लेख, कविता तथा समसामयिक महत्वपूर्ण सूचनाएँ छापी जाती थीं। इसका प्रकाशन दो वर्ष के अंदर ही बंद हो गया।

1883 का वर्ष भोपाल अंचल की पत्रकारिता की दृष्टि से इसलिए महत्त्वपूर्ण माना जाएगा कि इसी साल भोपाल से उर्दू साप्ताहिक 'सदाकत' का मोहम्मद अब्दुल करीम 'औज' ने प्रकाशन आरंभ किया। 'सदाकत' भोपाल से निकलने वाला ऐसा पहला अखबार रहा, जो जनता जनार्दन के लिए निकला और जिसमें बड़ी निर्भीकता के साथ रियासत के गलत कामों की खुली और कड़ी आलोचना की जाती थी। स्वाभाविक ही नवाबी शासन की कोपदृष्टि इस अखबार पर हो गई और 1884 में भोपाल रियासत से निर्वासित किए जाने पर श्री औज ने होशंगाबाद से 'मौजे–ए–नर्बदा' नाम से इस अखबार का प्रकाशन किया, जिसने अपनी प्रखर लेखनी से उस दौर में हलचल मचा दी थी। 1884 में नरसिंहपुर से मासिक 'सरस्वती विलास' निकला। नन्हेलाल इसके संपादक थे। 1890 तक इस साहित्यिक पत्रिका के प्रकाशन का उल्लेख मिलता है। बाद में यह कुछ समय तक नागपुर से भी प्रकाशित हुई। 1884 में ही होशंबाबाद से गोपालप्रसाद व्यास ने 'सत्यवक्ता' नामक पत्र का प्रकाशन किया, जो लगभग एक वर्ष तक प्रकाशित हुआ। 1885 में इंदौर से मराठी मासिक 'सत्यबोधिनी' का प्रकाशन ब्रम्ह समाज की ओर से किया गया। 1886 में जबलपुर से अंग्रेजी साप्ताहिक 'सेंट्रल इंडिया न्यूज' का प्रकाशन आरंभ हुआ।

"भारत भ्राता"

1887 में रीवा से "भारत भ्राता" (चित्र–6) का प्रकाशन उस काल खंड की पत्रकारिता के इतिहास की सबसे बड़ी घटना मानी जाती है, क्योंकि भारत 'भ्राता हिन्दी' का ऐसा पहला समाचार पत्र रहा

जो किसी सरकार का मुख पत्र अथवा मुखापेक्षी होने के बजाय आरंभ से ही राष्ट्रीयता से जुड़ा रहा । विक्रम संवत् 1945 (सन् 1887) में रीवा में "भारत भ्राता" प्रेस की स्थापना की गई। कालांतर में इसी प्रेस की सामग्री से 'दरबार प्रेस' की स्थापना हुई। अप्रैल, 1887 में "भारत भ्राता" का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके संस्थापक–संपादक रीवा राज्य के सेनापति लाल बलदेव सिंह थे। संपादक की सजगता का यह एक प्रमाण ही माना जायेगा कि समाचारों और सूचनाओं के आदान–प्रदान के लिए रीवा और सतना के बीच तार की लाइन डाली गई थी। आठ पृष्ठ का "भारत भ्राता" नियमित रूप से माह की एक और 15 तारीख को प्रकाशित होता था। साहित्य और शिक्षा के अलावा राजनीति पर भी "भारत भ्राता" में लेख आदि प्रकाशित किए जाते थे और महत्वपूर्ण समाचार 'समाचार सारावली' स्तंभ के अंतर्गत प्रकाशित किए जाते थे।

"भारत भ्राता" के संपादक राष्ट्रीय गौरव की ज्योति जलाने के प्रति सचेष्ट थे। अगस्त, 1892 का "भारत भ्राता" का अंक इसका प्रमाण है, जिसमें दादा भाई नौरोजी को ब्रिटेन की संसद का सदस्य चुने जाने पर संपादकीय टिप्पणी दी गई है। लाल साहब ने लिखा–"भारतवासी आज इस आनंद समाचार को सुन कर फूले नहीं समाएँगे कि लार्ड साल्सबरी का वही काला आदमी उनके एक भाई बंबई निवासी पारसी कांग्रेस के मुख्य नेता, भारत भूषण मिस्टर दादा भाई नौरोजी गत छः जुलाई को पार्लियामेंट के मेम्बर चुने गए।

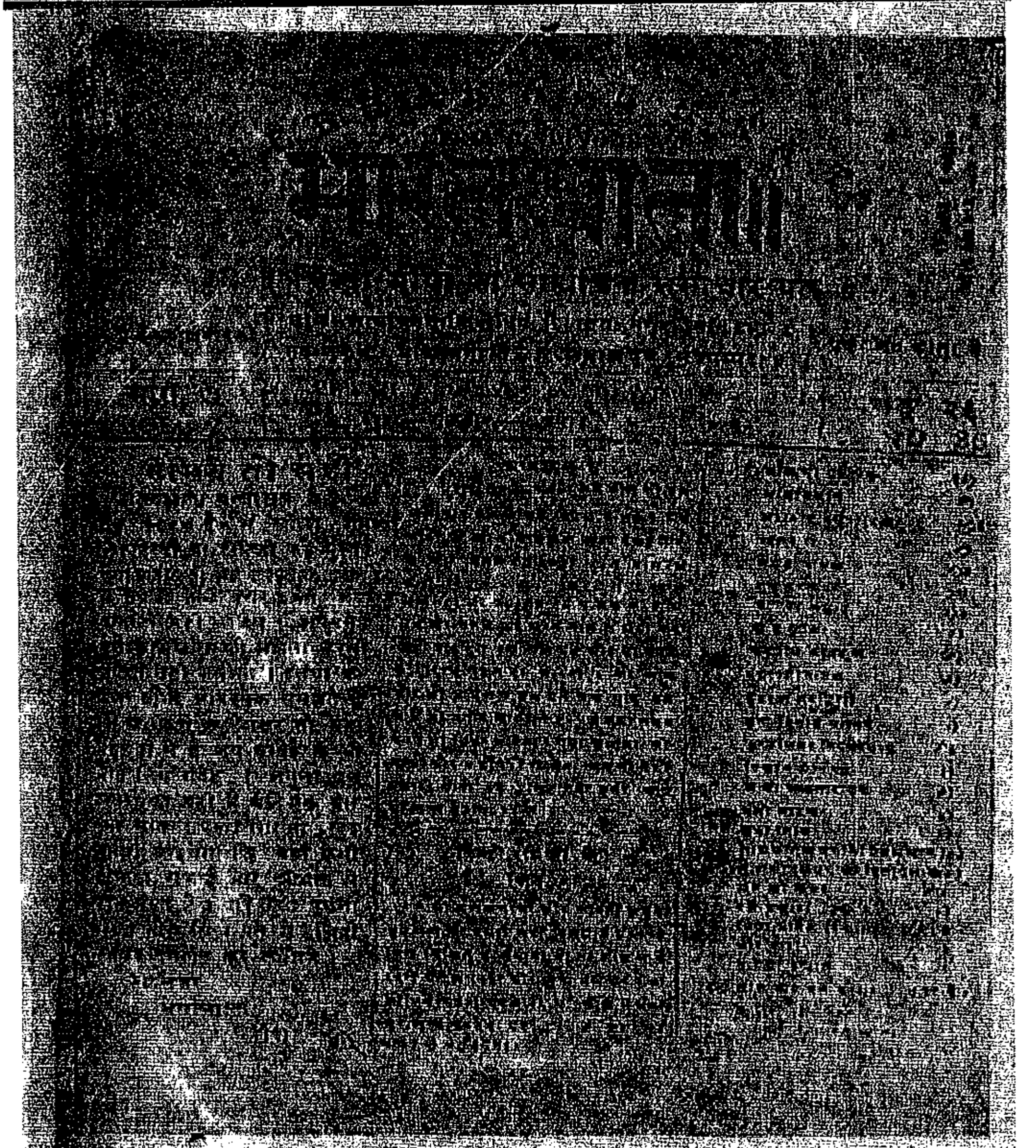

चित्र 6— प्रथम राजनीतिक पत्र—भारत भ्राता 1867

"यह प्रथम बार है कि जब पार्लियामेंट में एक हिन्दुस्तानी ने आसन पाया है। कौन जानता था कि कोई हिन्दुस्तानी, जिसे अपनी ओर से यहाँ की लेजिस्लेटिव कौंसिल में भी मेम्बर भेजने का अधिकार नहीं है, यह सभा पार्लियामेंट का मेम्बर हो जाएगा, जिसमें श्रीमती महारानी विक्टोरिया के इतने बड़े राज्य के लिए, जिसमें सूरज कभी अस्त नहीं होता, शासन विधि बनाने और लेफ्टिनेंट गवर्नर और गवर्नर साहब तक नियत करने का अधिकार है, परन्तु इसी पार्लियामेंट की मेम्बरी के लिए मिस्टर दादा भाई नौरोजी चुन ही लिए गए। ईश्वर निःसंदेह उनकी सहायता करता है, जो अपनी सहायता में स्वतः तत्पर होते हैं।

"हम लोगों को यह असीम आनंद होता, यदि मिस्टर दादा भाई नौरोजी हमारी ओर से मेम्बर चुन कर भेजे जाते, परन्तु हमारी सरकार ने हम लोगों को आज तक यह अधिकार नहीं दिया है कि हम लोग एक भी मेम्बर भारत प्रजा की ओर चुन कर ब्रिटिश पार्लियामेंट में भेज सकें। धन्य है सेन्ट्रल फिन्सबरी वाले, जिन्होंने मिस्टर दादा भाई नौरोजी की योग्यता का यहाँ तक सम्मान किया है कि निज देशीय अंग्रेजों को छोड़ कर उन्होंने हमारे आदरणीय दादा भाई नौरोजी को ही अपनी ओर से मेम्बर चुन कर पार्लियामेंट महासभा में भेजा है। सेन्ट्रल फिन्सबरी वालों को हम अनेकशः धन्यवाद देते हैं और हमारे भारत निवासी भाइयों को भी उचित है कि वे अपने—अपने नगरों में इस आनंद का उत्सव मनाएँ और सेंट्रल फिन्सबरी वालों को धन्यवाद दें परन्तु दादा भाई नौरोजी क्या मेम्बर पार्लियामेंट होकर भारत निवासियों को भी कुछ लाभ पहुँचा सकेंगे ? क्यों नहीं ? वह निज

अधिकार से हमारे लिए कुछ भी नहीं कर सकते, क्योंकि मेम्बर वह फिन्सबरी निवासियों के हैं, परन्तु मिस्टर ब्राडला भी हमारे मेम्बर नहीं थे, तो भी उन्होंने हमारे हितार्थ पार्लियामेंट में कितने काम किए, यह हम भारतनिवासियों को स्पष्टतः विदित है। जब उन्होंने भारतीय प्रश्नों को लेना चाहा, तब पहले अपने नियोजकों से आज्ञा ली। मिस्टर दादा भाई भी इसी तरह अपने फिन्सबरी के नियाजकों से आज्ञा ले सकते हैं और फिन्सबरी वाले इतने उदारचित्त हैं कि दादा भाई को उन्होंने अपना मेम्बर बनाया है तो स्वप्न में भी हम क्यों कर आशा कर सकते हैं कि वे लोग निर्देशित प्रश्नों के लेने का अधिकार नहीं देंगे।

मिस्टर दादा भाई नौरोजी को हमारी सलाह की आवश्यकता नहीं है तो भी अपना धर्म समझ कर हम इतना कहना आवश्यक समझते हैं कि उनका प्रथम ध्यान फिंसबरी निवासियों के कार्य की ओर होना चाहिए जिनके कि वे वास्तविक मेम्बर हैं। तत्पश्चात् उनकी आज्ञा लेकर वे यथासंभव उन्हें अपने देश की दशा पर भी अवश्य ही ध्यान देना उचित है। "यह भी अत्यंत आनन्ददायक समाचार है कि मिस्टर केन और मिस्टर खान महाशय भी, जिनसे बढ़ कर मित्र, भारतवासियों के आज दिन भी अंग्रेज जातियों में दूसरा कोई नहीं है, इसी नवीन पार्लियामेंट के मेम्बर चुन लिए गए हैं।

"लार्ड साल्सबरी के काले आदमी और मिस्टर केन और मिस्टर खान आदि भारत हितैषी महाशयों को पार्लियामेंट में देखकर हम लोग क्यों न फड़क उठें। निःसंदेह ये सब भारत के भले दिन आने के चिन्ह हैं। ईश्वर हमारे हितैषियों को चिरंजीवी करे और हमारे सुख के दिन शीघ्र ही आएँगे।"

"भारत भ्राता" भूमि पुत्रों की उन्नति, कल्याण और अधिकार के प्रति कितना सजग था, इसका उदाहरण 24 मई, 1895 की इस टिप्पणी में मिलता है। "भारत भ्राता" कहता है– जिसको पाँच रूपये मासिक भी नहीं देना चाहिए, क्यों राजस्थानों से राजे–महाराजे अथवा राज्य के संरक्षक पचास रूपये दिला देते हैं ? क्या देशी राजस्थान गवर्नमेंट का मुँह देखकर 5 रूपये की जगह 50 रूपये फेंकते हैं ? क्या वे गवर्नमेंट के वाक्य को वेदों का वाक्य मानते हैं ? गवर्नमेंट यदि किसी पुरूष को योग्य लिखकर भेज देती है, तो उसे सच्चा मानकर स्वीकार कर लेते हैं। गवर्नमेंट से प्रार्थना करने के अतिरिक्त स्वयं ही वे परदेशियों को बुलाते हैं और उन्हें राज्य सेवा देते हैं। देशी राजे महाराजाओं को अपने अधीनस्थ प्रजा की दीन दशा पर अवश्य ध्यान देना चाहिए और इनका स्वत्व देखना चाहिए और यदि वे राज्य सेवा के किसी पद के योग्य, योग्यता रखते हों तो योग्यतानुसार उन्हें कार्य सौंपना, उचित वेतन देना और भली भाँति राज्य कार्य लेना निःसंदेह आवश्यक है। राज्य की प्रजा की शिक्षा अनिवार्य कर दी जाए और राजनैतिक दशा, सैनिक आदि प्रत्येक विषय की शिक्षा दी जाए।"

प्रजा के दुःख दर्द में "भारत भ्राता" की भागीदारी बहुत करीब से होती थी। उसे आम जनता की परेशानियों का गहरा एहसास था। तभी तो "भारत भ्राता" ने 23 अगस्त, 1895 को अपनी संपादकीय टिप्पणी में लिखा– स्टाम्प टिकट लगा कर अर्जी देने की जो आज्ञा हुई है, इससे निश्चय ही प्रजा को बड़ी भारी हानि पहुँच रही है। बहुधा ऐसे लोग हैं, जिनको अक्सर एक पैसा मिलना भी बहुत कठिन है। इसके अतिरिक्त यहाँ की सरकार ने यह आज्ञा दी है कि

अर्जीनिवीसों से अपनी अर्जी लिखवाकर न्यायालय में नहीं देंगे, उनकी अर्जी नहीं ली जायेगी। विचारणीय बात है कि एक दीन मनुष्य, अर्जी की लिखाई और फिर उस पर स्टाम्प का व्यय क्यों कर दे सकता है ? इसका तात्पर्य उसका मुँह बंद करना है जो वास्तव में उनके ऊपर अत्याचार है। शीघ्र ही सरकार को यह आज्ञा उठा लेनी चाहिये।"

उन्नीसवीं शताब्दी के आखिरी सालों में समाचार पत्रों पर सरकार की भृकुटियों का तना रहना और हिन्दी भाषियों द्वारा हिन्दी के समाचार पत्रों और पुस्तकों में रूचि न लेना– इन दोनों ही विसंगतियों का परिचय अप्रैल, 1895 के "भारत भ्राता" की इस टिप्पणी से मिलता है–"हिन्दी की दीन हीन दशा सर्व साधारण पर भली–भाँति विदित है। इसके पाठकगणों की रूचि जैसी हिन्दी भाषा विषयक ग्रंथों तथा समाचार पत्रों के पठन–पाठन की ओर है, उसे अवलोकन कर कदापि कोई भले की आशा नहीं कर सकता है। अतिरिक्त इसके सरकारी कर्मचारियों की कटु–दृष्टि समाचार पत्रों पर कितनी अधिक है कि जिससे उन्हें एक दिन व्यतीत करना, एक–एक कल्प के समान होता है। सरकारी नीति की बेड़ी पत्रों के पाँवों में इस प्रकार भरी गई है कि पाँव का हिलना तक कठिन है। इन टिप्पणियों से यह बहुत स्पष्ट है कि 'भारत भ्राता' स्वतंत्र और राजनीतिक चेतना का प्रवक्ता बन कर सामने आया था और सच ही उसे हिन्दी के प्रथम राजनैतिक समाचार पत्र का सम्मान प्राप्त है।

'भारत भ्राता' प्रत्येक सोमवार को प्रकाशित होता था। उसका वार्षिक मूल्य छः रूपये था। इसकी प्रसार संख्या लगभग तीन हजार हो गई थी। 1902 में इस तेजस्वी समाचार पत्र का अवसान हो गया।

समसामयिक विषयों पर सटीक टिप्पणी और पाठकों को नवीन चेतना प्रदान करने वाली सामग्री के प्रकाशन से यह समूचे देश में चर्चित हो उठा था। आवागमन के अत्यल्प साधनों के बावजूद उन्नीसवीं शताब्दी में किसी समाचार पत्र की इतनी प्रतियाँ बिक जाना उसकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है। सांस्कृतिक पत्रों पर इसके विशेषांक संग्रहणीय हुआ करते थे।

1890 में भोपाल से मौलवी अजमद अली ने उर्दू साप्ताहिक 'दबी–रूल मुल्क' निकाला।

जबलपुर से 1819 में हिन्दी पाक्षिक 'विक्टोरिया सेवक' और हिन्दी मासिक 'प्रजा हितैषी' का प्रकाशन आरंभ हुआ। 'विक्टोरिया सेवक' यूनियन प्रेस से छपता था। 1892 में भोपाल से अर्जुमंद मोहम्मद खान ने 'हिलाल' निकाला। इसी वर्ष इंदौर से 'मालवा समाचार' प्रकाशित हुआ। उर्दू साप्ताहिक 'तबलीक' 1893 में जबलपुर से निकला। 1893 में सागर से नारायण बालकृष्ण ने 'विचार वाहन' आरंभ किया। 1894 में 'दि जबलपुर टाइम्स' का प्रकाशन जबलपुर से आरंभ हुआ। इसकी नीति वाक्य थी– 'राजनीतिक मुक्ति' के लिए स्वतंत्र प्रेस उतना ही जरूरी है, जितनी हमारे प्राकृतिक जीवन हेतु हवा। 1897 में यह अंग्रेजी साप्ताहिक, सप्ताह में तीन बार छपने लगा था। 1896 में छिंदवाड़ा से द्विभाषी समाचार पत्र 'न्याय रतन' शुरू हुआ। यह साप्ताहिक अखबार हिन्दी और अंग्रेजी में प्रकाशित होता था। 1896 में सागर से 'विचार वेदांत' तथा भोपाल से 'मुजफ्फरी' और 1897 में मेंहरे मुनीर' आरंभ हुआ। 1897 में जबलपुर से ही 'दि कामर्शियल एडवरटाइजर' नामक एक अर्द्ध साप्ताहिक और 1899 में

साप्ताहिक क्रिश्चियन सेवक एवं 'जबलपुर पोस्ट' का प्रकाशन शुरू हुआ। सेवक पूरी तरह ईसाई संप्रदाय के प्रति समर्पित था। एक वर्ष बाद ही इसका प्रकाशन बंद हो गया। 1899 में भोपाल से 'गुलराना' मासिक निकला। इसी वर्ष सागर से मासिक प्रभात प्रकाशित हुआ, जिसके सम्पादक श्री नरवरे थे।

"छत्तीसगढ़ मित्र"

यद्यपि राजनाँदगाँव से 1889—90 में भगवानदीन सिरोठिया द्वारा राजा बलरामदास के संरक्षण में 'प्रजा हितैषी' नामक समाचार पत्र के प्रकाशन का उल्लेख मिलता था, तथापि छत्तीसगढ़ में पत्रकारिता का जनवरी, 1900 में ही माना जाता है। मध्यप्रदेश की पत्रकारिता को सापेक्ष संस्कार प्रदान करने वाले मूर्धन्य पत्रकार पंडित माधवराव सप्रे ने बिलासपुर जिले के पेंड्रा रोड नामक स्थान से जनवरी, 1900 में "छत्तीसगढ मित्र" (चित्र—7) का प्रकाशन आरंभ किया। इस मासिक पत्रिका के प्रकाशक रायपुर के वामन राव लाखे और संयुक्त संपादक रामराव चिंचोलकर थे। बत्तीस पृष्ठों की डिमाई आकार की वह मासिक पत्रिका आरंभ में रायपुर के कयूमी प्रेस, पश्चात् नागपुर के 'देश सेवक' प्रेस से छपी। इसका वार्षिक मूल्य डेढ़ रूपए था।

"छत्तीसगढ मित्र" के प्रथम अंक में सम्पादक ने लिखा— संप्रति छत्तीसगढ़ विभाग को छोड़ कर ऐसा एक भी प्रान्त नहीं है, जहाँ दैनिक, साप्ताहिक, मासिक या त्रैमासिक पत्र प्रकाशित नहीं होता है। सुसंपादित पत्रों द्वारा हिन्दी भाषा की उन्नति हुई है। अतएव यहाँ भी "छत्तीसगढ मित्र" हिन्दी भाषा की उन्नति करने में विशेष प्रकार से

ध्यान दे। आजकल भाषा में बहुत सा कूड़ा करकट जमा हो रहा है। वह नहीं होने पाए; इसलिए प्रकाशित ग्रंथों पर प्रसिद्ध मासिक विद्वानों के द्वारा समालोचना भी कहें।''

''छत्तीसगढ़ मित्र'' का मूल मंत्र था–

'निज भाषा उन्नति अहै,

सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा ज्ञान के,

मिटत न हिय को शूल।।'

अपने अल्प प्रकाशन काल में ही 'छत्तीसगढ मित्र' ने समकालीन हिन्दी पत्रिकाओं में उच्च प्रतिष्ठा अर्जित कर ली थी। हिन्दी पत्रकारिता में आलोचना की शुरूआत तो 'छत्तीसगढ मित्र' ने ही की। 'छत्तीसगढ मित्र' के नियमित स्तम्भ हुआ करते थे। प्रेरित पत्र, हित बोध, सुभाषित संग्रह, समाचार प्राप्त, नारी धर्म और नारी शिक्षा, लोकोक्ति और कहावत, समलोचना, तथा जीवनी। धारावाहिक लेखों का प्रकाशन भी इस पत्रिका में किया जाता था। 'छत्तीसगढ मित्र' में महावीर प्रसाद द्विवेदी, कामता प्रसाद गुरू, श्रीधर पाठक, श्री गंगा प्रसाद अग्निहोत्री आदि शीर्षस्थ लेखकों की प्रारंभिक रचनाएँ छपीं।

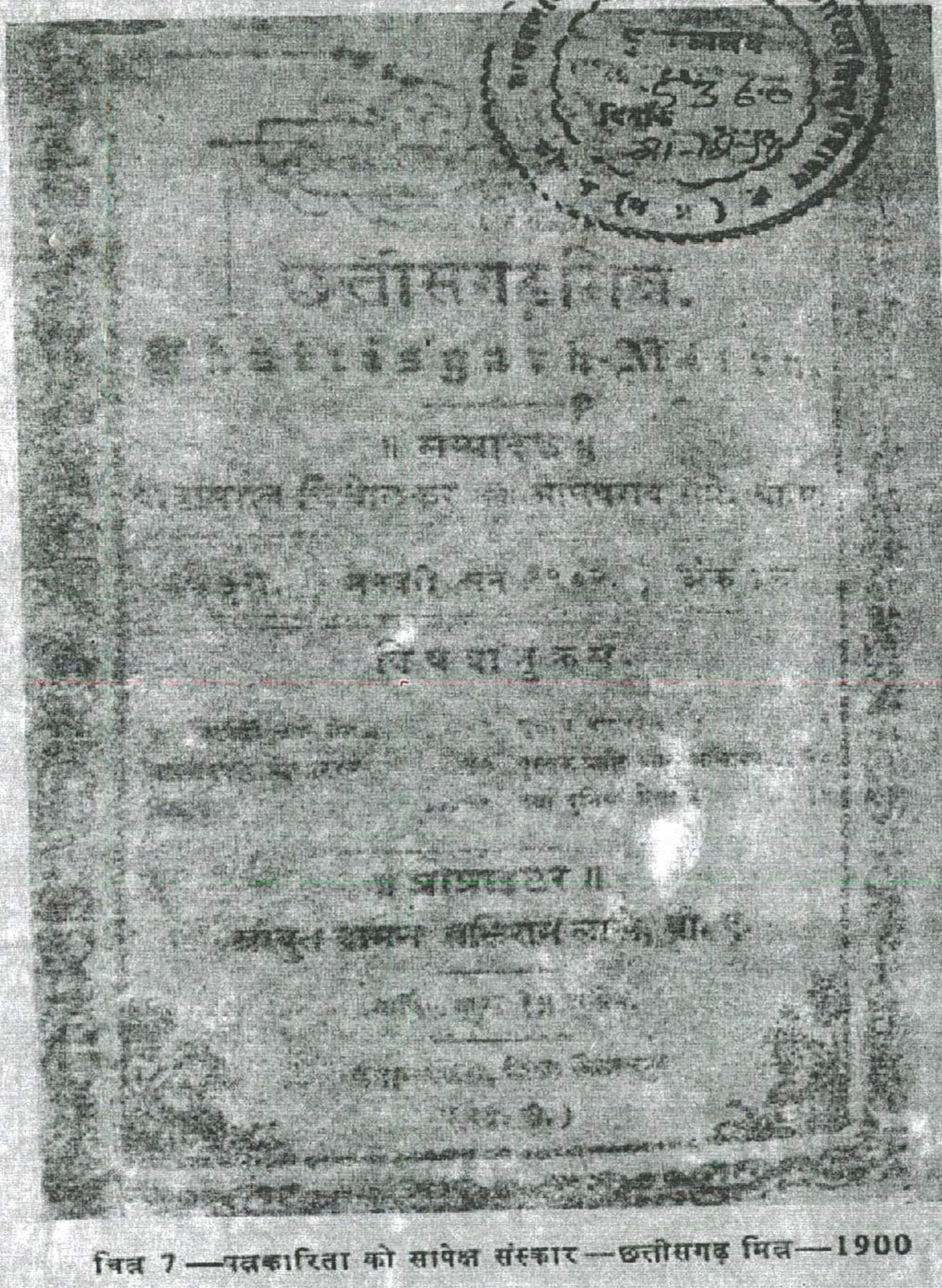
छत्तीसगढ़ मित्र.

चित्र 7 —पत्रकारिता को सापेक्ष संस्कार —छत्तीसगढ़ मित्र—1900

दो वर्ष पूरे हो जाने के बाद भी जब 'छत्तीसगढ मित्र' की वित्तीय स्थिति नहीं सँभल सकी और वह स्वावलम्बी नहीं बन पाया, तब जनवरी, 1902 के अंक में 'छत्तीसगढ मित्र' ने अपने पाठकों और हिन्दी प्रेमियों को आगाह कर दिया– यदि इस वर्ष भी घाटा रहा तो समझ लीजिए कि आपके प्रिय मित्र के सौ वर्ष पूरे हो चुके और फिर यही इसकी आयु का अंतिम वर्ष होगा। अन्ततः दिसम्बर, 1902 में अपनी आयु के तीन वर्ष पूरे होने के साथ ही "छत्तीसगढ मित्र" का प्रकाशन बंद हो गया।

1900 में जबलपुर से नागरी साहित्य रसिक सभा के सूर्यनारायण त्रिपाठी ने मासिक 'समस्या पूर्ति 'का प्रकाशन सम्पादन आरंभ किया। कवि समाज के तत्वावधान में प्रकाशित होने वाले इस मासिक पत्र के सिर्फ दो अंक ही प्रकाशित होने का उल्लेख मिलता है। 1900 में आर्य समाज की मासिक पत्रिका 'आर्य सेवक' जबलपुर से गणेश प्रसाद शर्मा के सम्पादन में निकली। यह पत्रिका् 1909 तक चलती रही। भोपाल से इसी वर्ष हाफिज अब्दुल शकूर इखलास ने उर्दू मासिक 'गुलबन सुखन' का प्रकाशन आरंभ किया। 1901 में नरसिंहपुर से मासिक 'हिन्दी मास्टर' निकला। नन्हेंलाल इसके सम्पादक थे। 9"ग6" आकार की इस पत्रिका का मूल्य बारह आना वार्षिक था।

1902 में इंदौर से 'वैदिक धर्म' का प्रकाशन हुआ। मराठी भाषा में प्रकाशित होने वाला यह एक मासिक पत्र था, जो पहले उज्जैन से निकलता था। 1902 में जबलपुर से 'आर्य वनिता' का प्रकाशन आरंभ हुआ। यह एक साप्ताहिक पत्रिका थी। इसी वर्ष जबलपुर से 'आर्य समाज' का भी प्रकाशन आरंभ हुआ। जबलपुर से उर्दू का 'सांझ और

सबेरा' भी इसी वर्ष लाला जयराज ने निकाला। भोपाल रियासत का 'जरीदा गवर्नमेंट भोपाल' 1902 से शुरू हुआ।

1903 में मध्यप्रांत की सरकार ने मासिक पत्र के रूप में 'किसान और सहकारी समाचार' का प्रकाशन आरंभ किया। एक रूपये वार्षिक मूल्य के इस पत्र का आकार 10''ग6.5'' था। 1904 में जबलपुर से उर्दू का 'आफताब' हाजी मोहम्मद याह्दा वली से शुरू किया।

"जयाजी प्रताप"

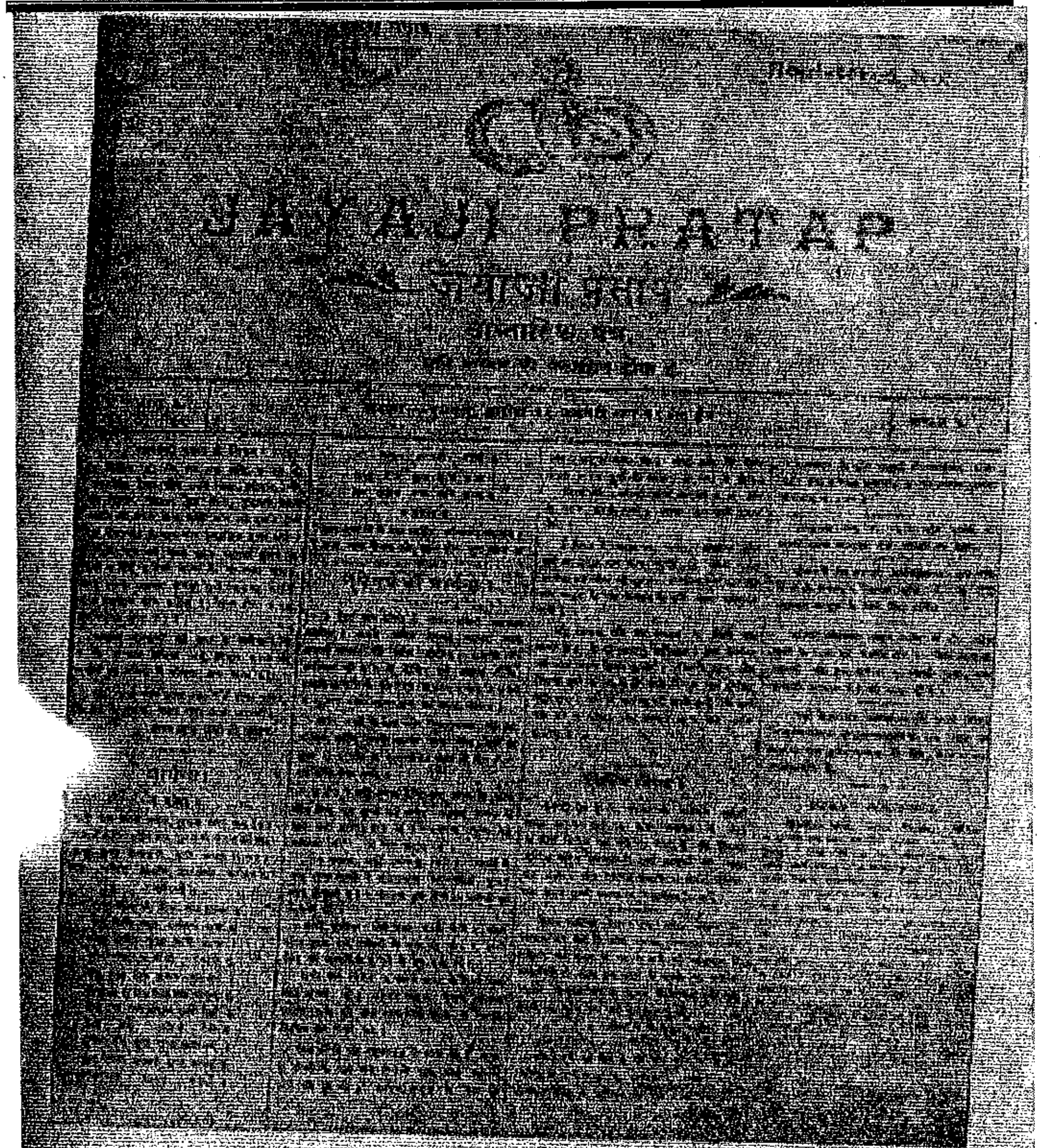

JAYAJI PRATAP

जयाजी प्रताप

चित्र 8—प्रदेश का सबसे पुराना जीवित पत्र—1905
'जयाजी प्रताप' से "मध्यप्रदेश संदेश"

1905 से 1950 तक ग्वालियर राज्य के संरक्षण में "जयाजी प्रताप" के रूप में ग्वालियर से निकला। तदुपरांत 1950 से 1956 तक मध्यभारत संदेश के रूप में प्रकाशित हुआ और 1957 से मध्यप्रदेश संदेश के रूप में प्रकाशित हो रहा है। तथापि "जयाजी प्रताप" की निरंतरता में कभी व्यवधान नहीं आया।

11 जनवरी, 1905 को "जयाजी प्रताप" का प्रकाशन आरंभ हुआ। चार पृष्ठ का यह समाचार पत्र 18"ग12" आकार में प्रति सप्ताह लश्कर से निकलता था। एक प्रति का मूल्य एक आना और डाक खर्च सहित वार्षिक मूल्य दो रूपये था। ग्वालियर के आलीजाह दरबार प्रेस से इसका मुद्रण–प्रकाशन होता था। प्रथम सम्पादक थे बाबू श्रीलाल, बी.ए.। आरंभ में इस अखबार में संपादक का नाम नहीं दिया जाता था। हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू के मजमून इसमें प्रकाशित किए जाते थे। प्रवेशांक में ही यह स्पष्ट कर दिया गया था कि "इस पत्र में मुल्की बहस नहीं छापी जाएगी। भाषा के संबंध में बताया गया– इस पत्र की भाषा ऐसी सरल नागरी होगी कि हिन्दी, उर्दू और देश भाषा के अभ्यासी अच्छी तरह से पढ़कर इसे समझ सकें। संवाददाताओं को कहा गया कि वे हर सप्ताह सोमवार तक संवाद भेजा करें। "जयाजी प्रताप" का पंजीयन क्रमांक ए–286 था। चार कॉलम वाले इस पत्र में शीर्षक एक कॉलम में दिए जाते थे। वर्ष संख्या के स्थान पर भाग और अंक के स्थान पर संख्या शब्द प्रयोग किए जाते थे। 1853 में प्रकाशित ग्वालियर गजट एक राजपत्र के रूप में 1948 तक प्रकाशित होता रहा, जबकि "जयाजी प्रताप" ग्वालियर राज्य के संरक्षण में प्रकाशित होने के बावजूद एक स्वतंत्र समाचार पत्र के रूप में

अस्तित्वमान रहा। "जयाजी प्रताप" में दूसरे अंक से विज्ञापन दिए जाने लगे थे। विज्ञापन के लिए कालम की एक सतर (पंक्ति) की दर दो आना थी और विशेष दिन, विशेष स्थान पर विज्ञापन प्रकाशित कराने के लिए पहले से संपर्क करना होता था। शुरू में दवाइयों के विज्ञापन ज्यादा होते थे। बाद में मशीनरी, सिनेमा, एवं अन्य विज्ञापन भी छपने लगे। दूसरे अंक में ही छपा एक विज्ञापन तब की भाषा और शैली के मान से द्रष्टव्य है :–

"जरूरी इश्तहार" : चूंकि मिस्टर बीचम, मालिक कारखाना हबूब बीचम को मालूम हुआ कि चंद धोखाबाज दूकानदारान ने खरीददारान हबूब बीचम को एक और ग्यारह वाले बक्सों की कीमत जो हाल में जारी हुआ, धोखा देना शुरू किया है। वास्ते खरीददारान ये इल्तमास है कि वह बगौर देख लें कि हर बक्स पर इंग्रेजी में 4 आना, 8 आना, या डेढ पेंस, 12 आना या एक शिलिंग एक पेंस छपा हुआ है। चार आना, आठ आना, और बारा आना के बक्स करीब–करीब यकसा है। गोलियों की मिकदार में फर्क है। धोखाबाज दूकानदार अलामत कीमत मिटा कर चार आना वाले को आठ आना और आठ आना वाले को बारा आना वाला बतला कर फरोख्त करते हैं। अगरचे बीचम साहब की गोलियों के मिलने में दिक्कत हो तो नमूने का एक या दो बक्स कीमत मुकर्रेरा पर अलावा महसूल डाक। 'हिन्दुस्तान, ब्रम्हा और लंका के थोक फरोस एजेंट जे. अथरन की कम्पनी नंबर–3, न्यू चायना बाजार स्ट्रीट, कलकत्ते से दस्तायाब हो सकता है।"

आरंभिक दिनों में "जयाजी प्रताप" के समाचारों की एक विशेषता यह होती थी कि मूल समाचार के साथ टिप्पणी, प्रतिक्रिया

और सुझाव भी दिए जाते थे। भाग एक संख्या चार का एक समाचार देखिए—'बड़े प्रसन्नता की बात है कि ग्वालियर राज्य के सुन्दरसी पीपलखा के पंडित ओंकार नागर ब्राम्हण ने एक यंत्र बनाया, जिसमें एक बार रँग भर देने से बिना अड़चन के दिन भर में दस हजार हाथ कपड़ा रंग जाता है। एक यंत्र से नित्य सौ मनुष्यों का काम निकलता है और सुना गया है कि मूल्य भी केवल चार—पाँच रूपये है। हमको ज्यादा हर्ष होता, यदि पंडितजी राज्य के किसी बड़े नगर में रह कर इस यंत्र से काम लेते। प्रमुख त्यौहारों पर अखबार का प्रकाशन एक दिन आगे बढ़ा दिया जाता था, जिसकी सूचना छापी जाती थी। अग्निकांड, भूकंप, प्लेग, बाढ़ आदि विपदाओं के समाचार प्रकाशित किए जाते थे। वर्नाक्युलर एक्जामिनेशन, बनारस संस्कृत महाविद्यालय की परीक्षाएँ, इलाहाबाद युनिवर्सिटी का परीक्षा—फल भी 'जयाजी प्रताप' में छपते थे। क्षेत्रीय समाचारों को अच्छा स्थान दिया जाता था। "जयाजी प्रताप" में तार से खबरें प्राप्त करने का प्रबंध 1905 से ही था। इतना स्पष्ट है कि "जयाजी प्रताप" ने स्वतंत्रता आंदोलन में वह भूमिका नहीं निभाई जो तत्कालीन ब्रिटिश इंडिया के अन्य अनेक भाषाई अखबार निभा रहे थे। आरंभ में कांग्रेस के आंदोलन के प्रति उसकी उपेक्षा भी झलकती है, तथापि, लोकमान्य तिलक जैसे महान नेताओं के प्रति सम्मान की भावना का प्रमाण भी इस पत्र में तत्कालीन संपादकीय टिप्पणियों से मिलता है:

तिलक से बर्ताव—

बम्बई से बर्मा

"जिन देशभक्त सेनानी को राजद्रोही समझ कर गवर्नमेंट ने अदालत के हवाले किया और अदालत में जिनको जमानत पर छोड़ देना विपत्तिजनक समझा— इतना कठोर दण्ड दिया कि एक सहस्र रूपये जुर्माने के साथ देश के प्रिय सेवक को छः वर्ष के लिए काले पानी में रहने की आज्ञा दी और सबसे बढ़कर इसे ही ज्ञाप समझा कि विलायत की प्रिवी कौंसिल में अपील करने की प्रार्थना नामंजूर कर दी।"

'श्रीयुत तिलक को लेकर हार्डिंज जहाज के रंगून के बन्दरगाह में पहुँचने पर उनका हृदय वंदे मातरम् तथा तिलक महाराज की जय ध्वनि से प्रफुल्लित हुआ। कई सहस्र मनुष्य वहाँ उनके दर्शनार्थ उपस्थित थे। उनको ले जाते समय मार्ग के दोनों ओर के मकान उनके दर्शनार्थियों से ठसाठस भरे हुए थे। रंगून से स्पेशल ट्रेन पर लोकमान्य तिलक माण्डले भेजे गए।' (जयाजी प्रताप—, 7—10—1908) ग्वालियर के महाराजा—महारानी के जन्म दिन, राज्यारोहण, सालगिरह, अन्य रजवाड़ों के ऐसे समारोहों की सूचनाएँ या ब्रिटेन के राजकुमार की यात्रा आदि प्रसंग इस अखबार के सचित्र और बहुपृष्ठीय विशेषांकों के विषय होते थे। "जयाजी प्रताप" में विज्ञापन की मात्रा अच्छी खासी हुआ करती थी। "जयाजी प्रताप" के संपादकगण अपने आंचलिक परिवेश के प्रति बहुत जागरूक थे। ग्वालियर अंचल में उनके निजी संवाददाताओं का जाल बिछा हुआ था। कृषि, उद्योग, शिक्षा, नारी कल्याण, विज्ञान आदि पर लेख दिए जाते थे। अन्य समाचार पत्रों से भी समाचार उद्धृत किए जाते थे। उस समय समाचारों को टिप्पणी के रूप में लिखने की परंपरा थी। संपादक अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त

करते चलते थे। भाग—एक, संख्या—चार की यह खबर देखिए—समाचार मिला है कि बेगम साहिबा, भोपाल का विचार है कि गरीब व उच्च वर्ग की स्त्रियाँ, जो पर्दे में रहने के कारण अपने दुःख दर्द को प्रकट नहीं कर सकते, उनके निर्वाह और प्रबन्ध के वास्ते एक कारीगरी का विद्यालय स्थापित करें। हमारी ईश्वर से प्रार्थना है कि बेगम साहिबा की मनोकामना सुफल हो। सेन्ट्रल इंडिया में सबसे अधिक संख्या में प्रकाशित होने वाला और सत्ता, सचित्र साप्ताहिक पत्र—

''जयाजी प्रताप''

इसमें कृषि, व्यवसाय, वाणिज्य के अतिरिक्त शिक्षा व विज्ञान संबंधी सर्वसाधारण के उपयोगी और मनोरंजक लेख प्रकाशि[illegible] है और इसलिए यह पत्र व्यावसायिक और व्यापारि[illegible] के लिए विज्ञा[illegible] देने का एक उत्तम साधन है।

मैनेजर,

जयाजी प्रताप,

ग्वालियर

दूसरे दशक में ''जयाजी प्रताप'' का आकार घटा कर 13''ग10'' कर दिया गया। वार्षिक मूल्य 3 रूपये हो गया और कॉलम 3 रह गए। नाम शीर्ष के रूपाकार में भी करीब दस बार परिवर्तन आए। तीसरे दशक में कुछ वर्षो तक इसका प्रकाशन प्रति गुरूवार को हुआ। तब इसका पंजीयन क्रमांक एन—123 हो गया था। पृष्ठ संख्या बढ़ गई थी और कविता, कहानी, व्यंग्य, लेख आदि दिए जाने लगे थे।

स्थानीय और प्रांतीय समाचार प्रचुरता से लिए जाने जाते थे। विज्ञापन भी काफी बढ़ गया था जिसमें बैंक, नेशनल इंश्योरेंस, ग्राइप वाटर, द्राक्षासव, अमृतांजन, तेल, मोबिल आइल, बाल सुधा का आधिक्य होता था। "जयाजी प्रताप" में संपादक का नाम पहले पहल 1924 में छापा गया– श्री रामस्वरूप माथुर। उसके बाद युधिष्ठिर भार्गव, डा. रमण बसा, एम.एल. कौल, रामप्रसाद, पंडित नारायण प्रसाद आदि संपादक रहे। सबस लंबा कार्यकाल श्री भार्गव का रहा। 1948 में "जयाजी प्रताप" अर्द्ध साप्ताहिक होकर प्रति बुधवार और शनिवार को प्रकाशित होने लगा। 1950 में जब यह 'मध्यभारत संदेश' के रूप में रूपांतरित हुआ, तब भी अर्द्धसाप्ताहिक ही था। रामकिशोर वर्मा, "जयाजी प्रताप" के अंतिम और 'मध्यभारत संदेश' के प्रथम संपादक हुए। तब इसका वार्षिक मूल्य 8 रूपए और एक प्रति की कीमत 8 आने थी। 14 जनवरी, 1950 (वर्ष 45, अंक 79) में 'जयाजी प्रताप' की विदाई शीर्षक संपादकीय में लिखा गया– "जयाजी प्रताप" ने जनता की सेवा की पवित्र भावना को लेकर 1905 में जन्म ग्रहण किया था, ऐसे युग में जब मध्यभारत में तो क्या समस्त भारत में समाचार पत्रों का बाल्यकाल था और इने गिने पत्र ही जनता की सेवा कर रहे थे। 'जयाजी प्रताप' अपने को 'मध्यभारत संदेश' में विलीन कर रहा है। देश हित की उसी उददात्त भावना से, जिससे ग्वालियर राज्य ने अपने को मध्यभारत में विलीन किया। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि, "जयाजी प्रताप", मध्यभारत संदेश में अपना रूपांतर कर रहा है। 26 जनवरी, 1950 को जनतंत्र विशेषांक के साथ 'मध्यभारत संदेश' का प्रवेशांक निकला। इसके मुख पृष्ठ पर देश के प्रथम राष्ट्रपति डा.राजेन्द्र प्रसाद का चित्र था। आलीजाह दरबार प्रेस में ही इसका मुद्रण हुआ और प्रकाशक

हुआ सूचना विभाग, मध्यभारत शासन। वार्षिक मूल्य छः रूपए और एक प्रति की कीमत आठ आने थी। सोहनलाल द्विवेदी, सुमित्रानन्दन पन्त, बालकृष्ण शर्मा, 'नवीन' पट्टाभि सीतारमैया, मन्मथनाथ गुप्त शीर्षस्थ साहित्यकारों की रचनाएँ इस विशेषांक में प्रकाशित हुईं।

'मध्यभारत संदेश' भी पूरी तरह सरकारी प्रचार के लिए समर्पित नहीं था। जनता की आवाज स्तम्भ में पाठकों के पत्र छापे जाते थे। संवाददाताओं के मूल समाचार, शासकीय विज्ञप्तियाँ,लेख, कविता, कहानी, संपादकीय का नियमित रूप से प्रकाशन होता था। मुख पृष् पर कोई आकर्षक रंगीन चित्र हुआ करता था। 1955 में 'मध्यभारत संदेश' का आकार छोटा कर दिया। मुद्रण सेंट्रल प्रेस, ग्वालियर में होने लगा। बीच में इसके विशेषांक भी निकले, जिनके अतिथि संपादक मूर्धन्य पत्रकार जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद हुआ करते थे। 'मध्यभारत संदेश' का संपादन अनंतमराल शास्त्री, रघुवीरप्रसाद दीक्षित, गुरूप्रसाद दुबे आदि ने किया। राज्यों के पुनर्गठन के बाद 1956 के अंत में 'मध्यभारत संदेश' का नाम 'मध्यप्रदेश संदेश' कर दिया गया। 1957 से 1975 तक मध्यप्रदेश संदेश साप्ताहिक रूप से ग्वालियर में ही प्रकाशित होता रहा। 1975 में 'मध्यप्रदेश संदेश' ग्वालियर से भोपाल आ गया और आवृत्ति साप्ताहिक के स्थान पर पाक्षिक हो गई। अब तक यह पूरी तरह शासकीय पत्र बन चुका था। तभी किसी अज्ञात सनक के कारण इसके भोपाल स्थानांतरण के समय नए घोषणा पत्र के आधार पर 'मध्यप्रदेश संदेश' का नए सिरे से 'वर्ष एक अंक एक' संख्या के साथ प्रकाशन किया गया। 1905 में जबलपुर से साप्ताहिक 'क्रिश्चियन' सहायक प्रकाशित हुआ, जिसके संपादक

रेवरेण्ड बी. अलेक्जेण्डर थे। स्वाभाविक ही यह अखबार ईसाई समाज के हितों के दृष्टिगत और उनसे संबंधित समाचारों और विचारों को प्रकाशित करने के लिए निकाला गया था।

1906 में इंदौर से मराठी भाषा के मासिक पत्र 'आनंद' का प्रकाशन आरंभ हुआ। जबलपुर, जो उस समय भोपाल के बाद उर्दू पत्रकारिता का दूसरा प्रमुख केन्द्र था, से 1906 में उर्दू साप्ताहिक 'कौम' प्रकाशित हुआ, जिसके संपादक लाला जगन्नाथ रसिया थे। 1907 में मराठी की त्रैमासिक पत्रिका 'विद्यार्थी' इंदौर से निकली। शांताराम देसाई इसके प्रकाशक और संपादक थे। 1907 में ही खंडवा से कालूराम गंगराडे ने मराठी मासिक 'सुबोध सिन्धु' का सम्पादन प्रकाशन किया। 1908 में जबलपुर से प्रायमरी सण्डे स्कूल के पाठ और खण्डवा के फरिश्ता का प्रकाशन हुआ। 1909 में होशंगाबाद से दो पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ हुआ-- ज्योति प्रभा और हिन्दी बाल सुधा। ये दोनों पत्रिकाएँ अल्पकाल तक ही प्रकाशमान रहीं। ज्योति प्रभा का प्रकाशन ज्योति प्रकाश ने किया था और हिन्दी बाल सुधा मुकुंदरावं शोले ने निकाली थी। इंदौर राज्य की ओर से डाक तार दर्शिका इसी वर्ष निकाली गई। 1910 में जबलपुर से मासिक शिक्षा प्रकाश का आरंभ हुआ। साहित्य और इतिहास के विद्वान शिक्षक पंडित रघुवर प्रसाद द्विवेदी, शिक्षा प्रकाश के संपादक थे। 'हितकारिणी' छापेखाने में छपने वाली इस पत्रिका का आकार 8''ग6.5'' और वार्षिक शुल्क डेढ़ रूपए था। इसी वर्ष हितकारिणी छापेखाने से ही मासिक पत्र हितकारिणी का प्रकाशन आरंभ हुआ। शिक्षा और ज्ञान विज्ञान की

इस पत्रिका के संपादक भी पंडित रघुवरप्रसाद द्विवेदी ही थे। हितकारिणी के मुखपृष्ठ पर यह पंक्तियाँ प्रकाशित की जाती थी:

विद्या, धर्म, भूप में भक्ति।

पढ़हु, करहु, राखउ भरशक्ति।।

नवम्बर, 1910 के 'हितकारिणी' के प्रवेशांक में संपादक ने लिखा था– पाठकगण, यह मासिक पत्र, साधारण समाचार पत्र नहीं है। किसी प्रकार की राजनीति संबंधी पार्टी से इसका संबंध नहीं रहेगा। इसमें जो लेख छपेंगे, बहुत जाँच के बाद छापे जाएँगे। यह पत्र मामूली खबरों से नहीं भरा जाएगा, किन्तु इसमें ऐसी–ऐसी बातें निकलेंगी, जिसे पढ़कर लोगों का पांडित्य और अनेक उपयोगी विषयों का ज्ञान बढ़े। साइन्स के नए–नए आविष्कार, कारखानों की कारीगरी व खेती आदि धंधों की उन्नति के विषय में सरकारी नए–नए कानून, बड़े–बड़े अधिकारियों व अफसरों और देशी–विदेशी वक्ताओं के उपदेश भरे व्याख्यान, शिक्षा विभाग संबंधी खबरें, उत्तम शिक्षा पद्धति के नए–नए उपाय, स्कूल में पढ़ने की रीतियाँ, पाठों के नोट आदि विषय, जो शिक्षकों और सर्वसाधारण के फायदे के संबंध में उपयोगी रहेंगे। "अंत में हम अपने अनुग्राहकों से यह निवेदन करना चाहते हैं कि इस पत्र की भाषा न तो कठिन ही की जाएगी और न इतनी सरल की वह गँवारी भाषा मालूम पड़ने लगे। 10'X7.5" आकार और 3 रूपए वार्षिक मूल्य वाली मासिक हितकारिणी के संपादन सहयोगियों में नर्मदाप्रसाद मिश्र, मातादीन शुक्ल, मंगलाप्रसाद विश्वकर्मा के नाम प्रमुख हैं। यह बारह वर्ष तक प्रकाशित होती रही। प्रकाशन जब

स्थगित हुआ, तब इसकी प्रसार संख्या दो हजार से ज्यादा थी। इसी वर्ष जबलपुर से हाजी मोहम्मद नूर फहमी ने उर्दू पत्रिका 'इंसान' का प्रकाशन किया, जो 4 वर्ष तक प्रकाशित होती रही। इसके संपादक पंडित रमाशंकर आदिल थे। 1910 में इंदौर से निकली 'इन्दु' 1918 तक प्रकाशित होती रही। 1911 में लश्कर से व्यापार समाचार नामक मासिक पत्र का प्रकाशन ग्वालियर राज्य के संरक्षण में हुआ, जिसके संपादक पार्वती प्रसाद कुलश्रेष्ठ थे। यह मात्र एक वर्ष ही निकल पाया। भोपाल से सैयद मोहम्मद यूसुफ कैशर ने अल हिजाब निकाला। यह उर्दू का अखबार था। 1912 में अंग्रेजी में इंदौर से एक त्रैमासिक पत्रिका इंदौर स्टेट मेडिकल एण्ड सेनिटरी जर्नल का प्रकाशन आरंभ हुआ, जो अल्पजीवी साबित हुआ। पं. पन्नालाल द्विवेदी ने भार्गव ब्राम्हण हितैषी इंदौर से निकाला।

1913 में पंडित माखनलाल चतुर्वेदी के संपादन में खण्डवा से मासिक प्रभा का प्रकाशन आरंभ हुआ। हिन्दी सेवी कालूराम गंगराडे इसके प्रकाशक थे। इसका आकार 10"ग6.5" था और वार्षिक मूल्य 3 रूपए था। प्रभा के मुख पृष्ठ पर प्रकाशित ध्येय वाक्य में देशवासियों का आहव्न किया जाता था कि वे अपनी निद्रा को त्याग कर परिवेश के प्रति अपना दायित्व निभाएँ। शुरू में तो इस तेजस्वी पत्रिका के शीर्ष पर सरस्वती का चित्र प्रकाशित किया जाता था, लेकिन कुछ अंकों बाद से "भारत माता" का चित्र प्रकाशित किया जाने लगा। अप्रैल, 1913 से फरवरी 1918 तक प्रभा खण्डवा से प्रकाशित हुई। इसके पश्चात् 1920 से 1926 तक कानपुर के प्रताप प्रेस से 'प्रभा' का प्रकाशन हुआ। गणेशशंकर विद्यार्थी और बालकृष्ण शर्मा नवीन ने इस

कालखण्ड में इसके संपादन किया। फिरंगी हुकूमत पर तीखे प्रहार और भारतवर्ष में जन चेतना का संचार प्रभा के उद्देश्य थे, जिसमें वे पूरी तरह सफल रहे। 1913 में बालाघाट से मासिक बालाघाट समाचार का प्रकाशन आरंभ हुआ। विद्यावर्द्धिनी सभा की ओर से प्रकाशित इस मासिक का वार्षिक मूल्य तीन रूपये और आकार 26''ग15'' था। भोपाल से कैशर भोपाली और अब्दुलमतीन ने 'मालवा रिव्यू' निकाला। उर्दू मासिक 'जिल्ले सुलतान' भोपाल से प्रकाशित हुआ। 1914 में राय साहब मथुरा प्रसाद ने छिंदवाडा से सी.पी. न्यूज वीकली निकाली। इसी वर्ष दमोह से मासिक पत्रिका 'मोहिनी', का प्रकाशन आरंभ हुआ। नरसिंहपुर से गोपालदास रेजा ने मासिक शिक्षा दूत का प्रकाशन किया। 1914 में जबलपुर से मासिक ज्योति किरण का प्रकाशन हुआ। इसी साल रायपुर से मासिक पत्र कबीर पंथी निकला। लेकिन यह अल्पजीवी ही रहा।

1914 में गणेशदत्त शर्मा 'इंद्र' ने आगर मालवा से मासिक 'बाल मनोरंजन' का प्रकाशन किया, लेकिन तत्कालीन रियासती व्यवधानों के कारण अंततः इसे पांच अंकों बाद ही हिन्दी सर्वस्व के नाम से छापना पड़ा। बाल मनोरंजन के प्रवेशांक में मुख्य पृष्ठ पर कविवर पं. श्रीधर पाठक की ये पंक्तियाँ दी गई थीः

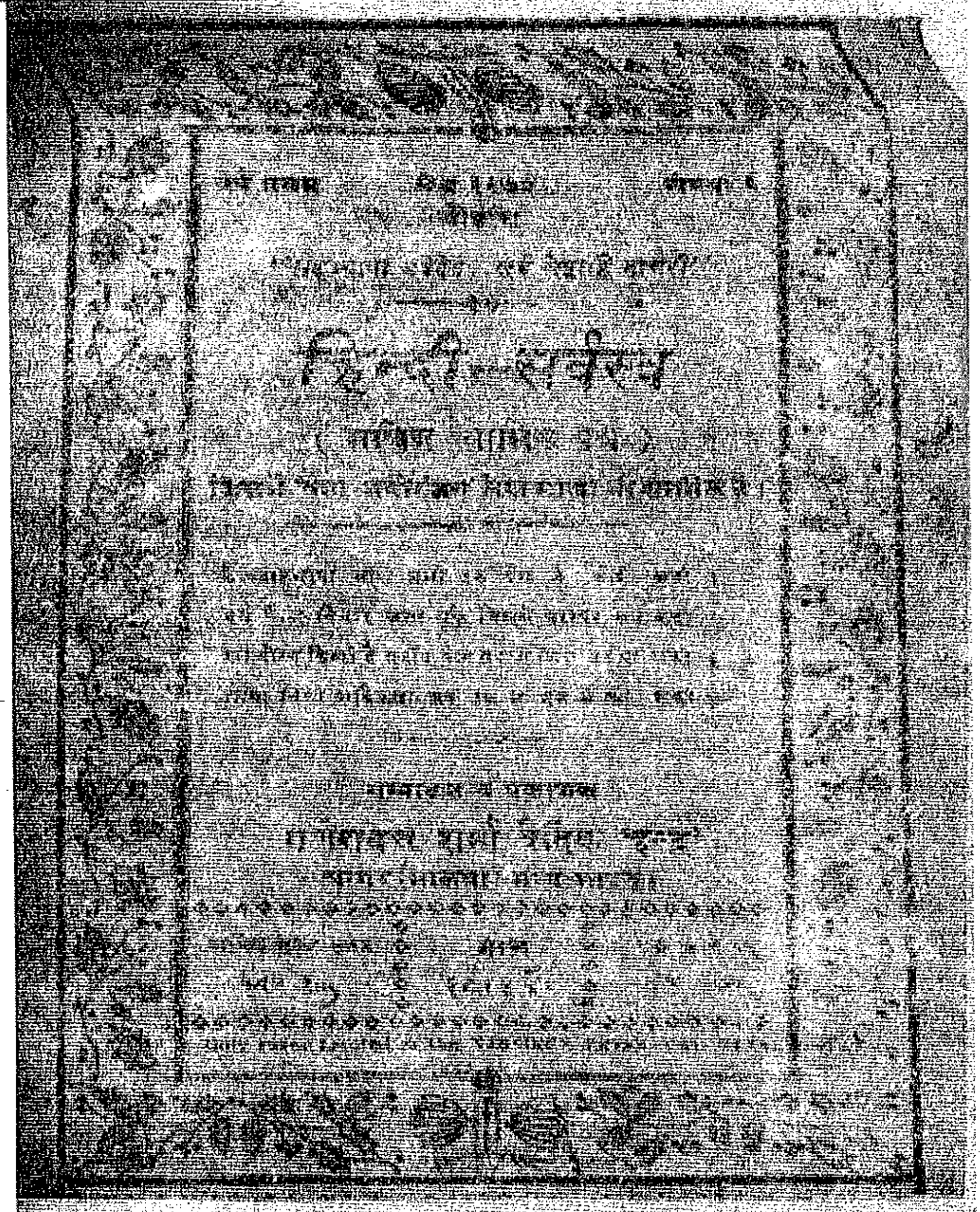

चित्र—9—(हिन्दी सर्वस्व—1914)

'बाल मनोरंजन जड़ता संजनित दोष दुःख भंजन।

जन जीवन हित अहित अंध दृग उन्मीलन शुचि अंजन।।

पावैं परमानंद सृजन वर कर सदा अनुशीलन।

हो सजीव निर्जीव मूलकता का अनुभव नव जीवन।।'

पहले तो ग्वालियर राज्य ने सरकारी छापेखाने– आलीजाह दरबार प्रेस से पत्रिका छपाने की शर्त पर प्रकाशन की अनुमति देना मंजूर किया, लेकिन प्रेस की स्वतंत्रता के पक्षधर संपादक ने इस प्रकार से पत्रिका निकालने की शर्तों के सामने झुकना स्वीकार नहीं किया और अंततः राज्य ने हिन्दी सर्वस्व के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगा दिया। इस तरह बाल मनोरंजन और हिन्दी सर्वस्व के बारह अंक ही प्रकाशित हो सके। इतनी अल्पावधि में ही हिन्दी सर्वस्व ने समकालीन पत्रिकाओं में उल्लेखनीय स्थान बना लिया था। 1915 में इंदौर से होलकर कालेज मैगनीज प्रकाशित हुई। इसी वर्ष हिन्दी मासिक नव जीवन का प्रकाशन इंदौर से आरंभ हुआ, जिसके संपादक द्वारका प्रसाद 'सेवक' थे। इसके पहले केशवदेव शास्त्री 1910 से काशी से यह पत्र निकाल रहे थे, जो आर्थिक संकट के कारण 1914 में बंद हो गया था। इस पत्र के प्रकाशन की व्यथा–कथा सेवक जी के इन शब्दों में झलकती है– पूरे दो वर्षों तक उसका संपादन, संचालन, प्रकाशन आदि सब कुछ भार मुझ पर ही रहा। जैसा कुछ बन सका, उसके द्वारा सेवा की। उम्मीद बड़ी थी, हौसले ऊंचे थे, किन्तु व्यापार–कुशल और अपने नीति–निपुण समझने वाले निष्ठुर और हृदयशून्य हाथों में जाकर नव जीवन की अंत्येष्टि हो गई। अपने

संचालकों की कुशलता और निपुणता ने उसका अंत करा कर ही छोड़ा। आर्य समाज के तत्कालीन एक मात्र उच्च कोटि के मासिक पत्र का निर्दयतापूर्वक गला घोंट कर उसे मार डाला गया, किन्तु जितने दिन तक वह उनके हाथों में रही, उतने दिन तक वे घाटे में नहीं रहे। कुछ न कुछ लाभ ही उन्होंने उससे कमाया, चाहे वह किसी भी रूप में हो और उधर मेरे सिर पर पूरे 3500 रूपये का घाटा पड़ ही गया।

'नव जीवन' के प्रचार हेतु प्रकाशित विज्ञापन द्रष्टव्य है, जो बताता है कि 20वीं सदी से दूसरे दशक में राष्ट्रीयता, स्वदेश और स्वधर्म सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न बन गया था। यहाँ तक कि समाचार पत्रों के प्रचार–प्रसार में भी इन्हीं भावों की अभिव्यक्ति एक आधार बन जाती थी। 'नव जीवन' राष्ट्र–भाषा हिन्दी का प्रसिद्ध मासिक समाचार पत्र–क्या आपको मालूम है कि स्वदेश और स्वधर्म के प्रति आपके क्या कर्तव्य हैं ? क्या आप भारत में एक राष्ट्रीयता के प्रचार के इच्छुक हैं। क्या आप राष्ट्रीय धार्मिक और सामाजिक उन्नति के उपायों पर देश के सिद्ध महानुभावों के विचार जानना चाहते हैं ? यदि हां तो आज की राष्ट्र सेवक 'नवजीवन' के ग्राहक बन जाइए।

'नव जीवन' देश के कठिन किन्तु आवश्यकीय समस्याओं की पूर्ति करने हेतु भाषा और धार्मिक संस्कार में युगांतर स्थापित करेगा।

–व्यवस्थापक

29 नवंबर, 1915 को होल्कर स्टेट प्रिटिंग प्रेस से अर्द्ध सरकारी साप्ताहिक मल्हारि मार्तण्ड विजय का प्रकाशन वासुदेव गोविंद आप्टे

के संपादन में आरंभ हुआ। यह साप्ताहिक पत्र तीन भाषा खण्डों में प्रकाशित होता था, जिसमें अंग्रेजी, मराठी और हिन्दी के मजमून छापे जाते थे। इस पत्रिका के सहायक संपादक सुखसंपतिराम भण्डारी थे। इसका वार्षिक मूल्य साढ़े तीन रूपये था। राजनीति से विरत रहने वाले इस पत्र का प्रकाशन 1923 में बंद हो गया। 1915 में जबलपुर से पारसनाथ त्रिपाठी ने मासिक शारदा विनोद गल्प निकाली। इसी वर्ष नर्मदाप्रसाद मिश्र ने जबलपुर से मासिक पत्रिका शारदा विनोद का प्रकाशन आरंभ किया। शारदा भवन पुस्तकालय इसका प्रकाशक था और श्री नर्मदाप्रसाद मिश्र संपादक थे। यह एक विशुद्ध साहित्यिक पत्रिका थी। इसका आकार 10"X7.5" था और सोलह पृष्ठों में छपती थी। वार्षिक मूल्य डेढ़ रूपये था। मसीही सेवा मण्डल, महू ने 'ज्योति किरण' का प्रकाशन शुरू किया। जबलपुर से एक त्रैमासिक हिन्दी पत्र सर्वोदय का प्रकाशन 1916 में आरंभ हुआ। 1917 में सनावद ने 'चंद्र प्रभा' नामक एक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया गया, जिसके संपादक गणेशदत्त शर्मा इन्द्र थे। सन् 1918 में यह बंद हो गई। 1918 में इंदौर से 'क्रिश्चियन कालेज बुलेटिन' का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके संपादक एण्डरसन थे और इसका प्रकाशन ईसाई मिशन द्वारा किया जाता था। 1918 में मुरार (ग्वालियर) से छः पत्र–पत्रिकाएं निकलीं। गल्पा माला, और गल्प का प्रकाशन मासिक के रूप में होता था। श्यामलाल वैश्य इसके संपादक और प्रकाशक थे। उषा, चरित माला, बन्धु तथा मित्र ग्रंथावली का प्रकाशन भी इसी काल में हुआ।

1919 में रायपुर की कान्यकुब्ज सभा ने मासिक पत्रिका कान्यकुब्ज नायक (चित्र–10) का प्रकाशन किया। पंडित रघुवर

प्रसाद द्विवेदी इसके संपादक और पंडित मातादीन शुक्ल प्रकाशक बनाए गए। एक वर्ष तक यह पत्रिका प्रकाशित हुई। 1919 में लश्कर से 'हैहय वंश समाचार' प्रकाशित हुआ। यह एक विशुद्ध जातीय पत्र था। इसी वर्ष ग्वालियर राज्य में महिलाओं के लिए 'महिला' नाम से एक मासिक पत्र प्रकाशित किया। 1919 में धार अभ्युदय नाम से एक अखबार धार से प्रकाशित हुआ। इंदौर से इस वर्ष मराठी की दो मासिक पत्रिकाएँ विविध और चन्द्र प्रभा नाम से निकलीं। डेली व्यापारिक रिपोर्ट भी इंदौर में शुरू हुई।

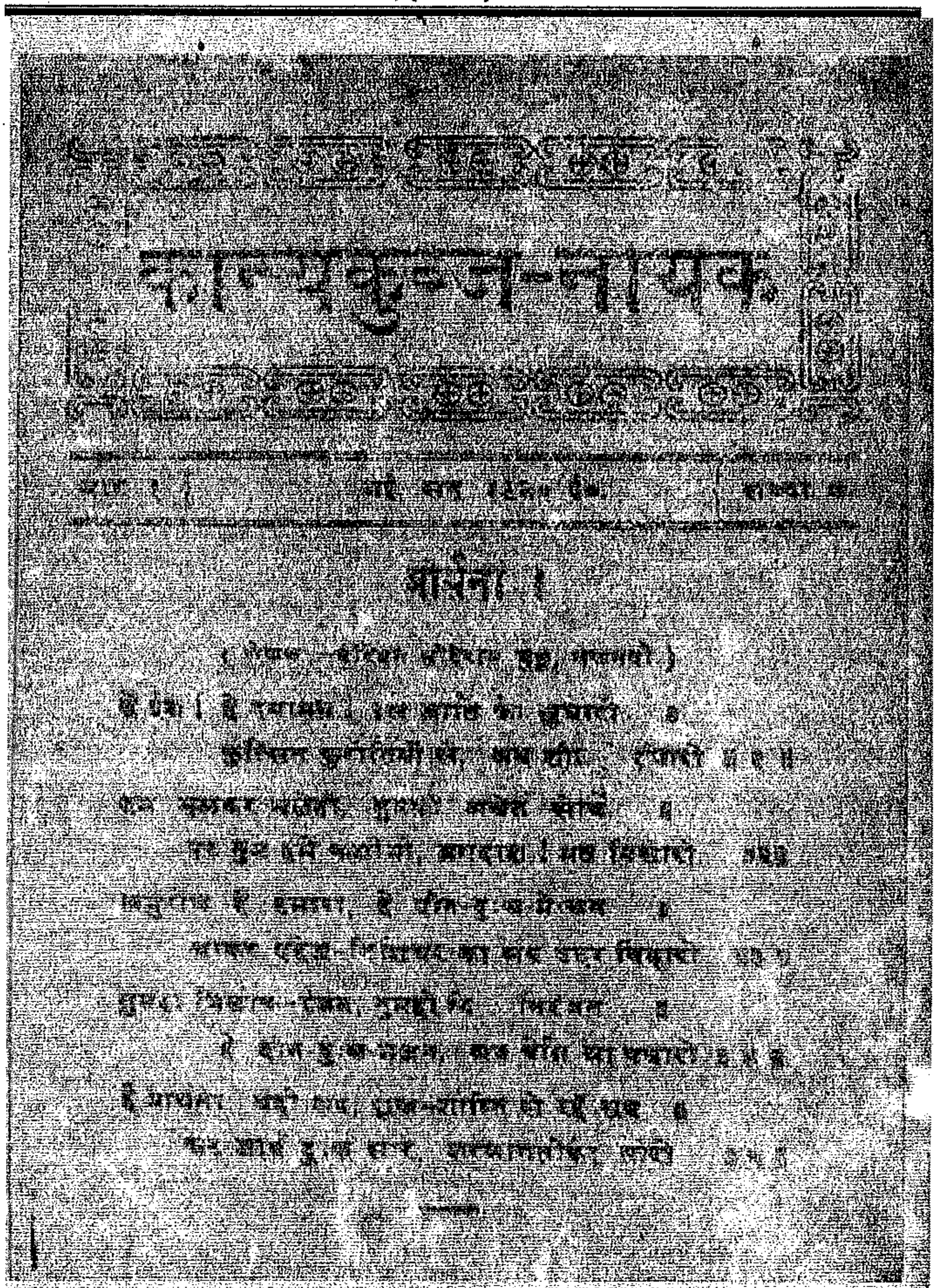

कान्यकुब्ज-नायक

प्रार्थना ।

चित्र 10—कान्यकुब्ज नायक—1919

महाकौशल अंचल की पत्रकारिता और स्वतंत्रता चेतना के इतिहास में 1920 का वर्ष अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस वर्ष प्रांत में राजनैतिक चेतना के तत्कालीन सबसे बड़े केन्द्र जबलपुर में हिन्दी साप्ताहिक 'कर्मवीर' का प्रकाशन आरंभ हुआ। जन जागरण और राष्ट्रीयता के प्रचार हेतु पंडित माधवराव सप्रे की प्रेरणा और पंडित विष्णु दत्त शुक्ल के सहयोग से राष्ट्र सेवा लिमिटेड की स्थापना की गई थी। इसी संस्थान ने कर्मवीर के प्रकाशन का दायित्व सँभाला। इसके संपादक पं. माखनलाल चतुर्वेदी थे एवं इसके पीछे प्रेरणा–पुरूष थे सप्रे जी। 17 जनवरी 1920 को आरंभ होने वाले कर्मवीर का स्वयं का अपना प्रेस था। इसकी पृष्ठ संख्या 20 थी और आकार 13"X20. 5" था। हर शनिवार को प्रकाशित होने वाले 'कर्मवीर' के मुख पृष्ठ ीता के निष्काम कर्म का संदेश कर्मण्येवाधिकारास्ते मा फलेषु चन अंकित रहता था। इसका पंजीयन क्रमांक 229 और वार्षिक ुल्क साढ़े तीन रूपए था। यह एक उत्कृष्ट साहित्यिक पत्र ही नहीं था, बल्कि राष्ट्रीयता की भावना को प्रांत के कोने–कोने में पहुंचाने में इसने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके पहले और अंतिम पृष्ठ पर विज्ञापन दिए जाते थे और भीतर के पृष्ठों में विचारोत्तेजक लेख एवं सामयिक विचार रहते थे। संपादक की जेल यात्रा के कारण के प्रकाशन में बाधाएँ भी आईं। 1923 के बाद यह प्रायः बंद रहा। 2000 से आरंभ होकर 'कर्मवीर' की प्रसार संख्या 5000 तक पहुंच गई थी। इसकी प्रतियाँ ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी भी जाती थीं। पंडित माखनलाल चतुर्वेदी ने 4 अप्रैल, 1925 को खंडवा से इसका संपादन एवं पुनर्प्रकाशन आरंभ किया जो निरंतर जारी रहा। 11 जुलाई, 1959 को माखनलाल चतुर्वेदी के संपादन वाले 'कर्मवीर' का अंतिम अंक

निकला। इसके पश्चात् बृजभूषण चतुर्वेदी उसके संपादक बने। स्वतंत्रता समर में इसकी भूमिका को नेताजी सुभाषचंद्र बोस की यह सम्मति भली भाँति रेखांकित करती है। 17 फरवरी 1938 को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने अपनी सम्मति में कहा– पिछले चौदह वर्षो से कर्मवीर राष्ट्रीय महासभा के झण्डे को ऊँचा रखे है और प्रति सप्ताह हमारे देशवासियों को प्रेरणात्मक संदेशों से अनुप्रेरित करता रहा है।

अपने आसपास के घटनाक्रम अनीति और अत्याचारी फैसलों पर कर्मवीर की कलम में तलवार जैसी तीक्ष्णता आ जाती थी। परतंत्रता के उस भीषण दौर में भी यह फिरंगी हुकूमत के फैसले उलटवाने की सामर्थ्य रखता था। दूसरे शब्दों में यह तत्कालीन साधनहीन, लेकिन सामर्थ्यवान पत्रकारिता की सार्थक, सापेक्ष एवं सफल परिणति की एक मिसाल है। इसके 1920–21 के अंकों में सागर जिले के रतौना गाँव के पास बनने जा रहे आधुनिक कसाईघर के विरोध में छेड़े गए अभियान की परिणति रतौना कसाई घर के प्रस्ताव को वापस लेने के रूप में सामने आई थी। मध्यप्रांत की धरती पर अंग्रेजों की इस पहली नैतिक–प्रशासनिक शिकस्त ने स्वतंत्रता संग्राम की शक्ति कितनी बढ़ाई होगी, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। रतौना के कसाई घर विरोधी आंदोलन के सूत्रधार थे भाई अब्दुल गनी और उसे नेतृत्व, वाणी और दिशा दी दादा माखनलाल चतुर्वेदी और उनके कर्मवीर ने। उस कसाईघर के खिलाफ सिलसिलेवार कोई एक दर्जन अग्रलेख कर्मवीर ने प्रकाशित किए और हुकूमत की ओर से उठाए गए मुद्दे का तर्कसम्मत और दो टूक जबाव ही नहीं दिया, बल्कि जनता

के प्रवक्ता प्रतिनिधि के रूप में जनभावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति का भी माध्यम बना। किसी समाचार पत्र के जनभावनाओं के प्रति समर्पण और उसे स्वर प्रदान करने की निष्ठा का आदर्श उदाहरण कर्मवीर से बढ कर कोई अन्य नहीं मिलता। 17 जून, 1920 के कर्मवीर में प्रकाशित अग्रलेख :

"गो वध की सरकारी तैयारी" : जब मुझे कोई गोपाल कहके पुकारता है, तो मैं सोचता हूँ– वह मुझे जनता है, पहिचानता है– श्रीकृष्ण।

मध्यप्रदेश में एक कम्पनी खुली है। उसका नाम है "सेंट्रल प्राविंसेज ट्रेनिंग एण्ड ट्रेडिंग कम्पनी लिमिटेड" उसकी लागत है 40 लाख रूपया। उसका उद्‌देश्य चमड़े के व्यापार को, जो कि अभी तक जर्मनी के हाथ में था, अपने हाथ में लेना कहा जाता है। यहाँ से जानवरों का चमड़ा सुखा कर जर्मनी भेजा जाता था, वहाँ वह कमाया जाकर सारे–संसार में बिकता था, किन्तु सूखे चमड़े को कमाने से उतना अच्छा चमड़ा तैयार नहीं हो सकता, जितना कि गीले को कमाने से बनता है। हमारे देश में चमड़ा बहुत है। इसे यहं पर कमाया जाए तो अच्छा भी मिले और देश को व्यापार से लाभ भी हो। इसलिए यह कम्पनी खोली गई है। सागर, खुरई, राहतगढ़ और घटेरा में आजकल गोश्त का व्यापार बहुत बढ़ा हुआ है अर्थात वहाँ बहुत से जानवर, गाय–बैल आदि मारे जाते हैं। इसलिए कम्पनी का कार्यक्षेत्र इन स्थानों के पास रतौना में रहेगा। इसके अलावा वहाँ कम्पनी को

अनेक सुविधाएँ हैं, जानवरों के लिए वहाँ की जलवायु अच्छी है, वे वहाँ खूब मोटे ताजे हो जाते हैं और आसपास जंगल होने के करण चमड़ा कमाने का मसाला भी बहुतायत से मिल सकता है। यह कम्पनी अंग्रेजों की है। उसके लिए जमीन आदि लेकर प्रारंभिक प्रबंध कलकत्ते की मेसर्स डेवनपोर्ट एण्ड कम्पनी करेगी। उसके सुपरिन्टेण्डिंग एक्सपर्ट अर्थात देखरेख करने वाले विशेषज्ञ रहेंगे– मिस्टर जे. डाइसन विदिन शॉ, जो कुछ समय पहले भारत सरकार के चमड़ा कमाने के सलाहकार थे और ब्रिटिश युद्ध विभाग में कच्चे माल के संचालक रह चुके हैं। हमारी मध्यप्रदेश की सरकार ने उक्त कम्पनी को रतौना में 843 एकड़ भूमि बराएनाम लगान पर दी है और चमड़ा कमाने का 71,350 मन मसाला जितने जंगल में मिल सके, उतने जंगल का ठेका देने का भी वायदा किया है। कम्पनी को तीस वर्ष तक इस प्रकार अपना व्यापार करने का अधिकार रहेगा, और यदि वह चाहेगी तो यह समय बढ़ाकर साठ वर्ष कर दिया जाएगा। एक और सुभीता हमारी सरकार ने किया है, वह यह कि वह अपने खर्च से 1,75,000 रू. की लागत का सर्वांग पूर्ण कसाईखाना (स्लाटर हाउस) बनवा देगी, उसके अहाते में 77,000 रू. का एक तालाब बनवाएगी, उसके अहाते के भीतर सड़कें बनवा देगी और रेलवे को कह कर वहाँ स्टेशन बनवा देगी। हमारी सरकार हर तरह से सहायता करने को तैयार है। सुना है कि उस कसाईखाने में प्रायः 2,500 गाय–बैल आदि रोज काटे जायेगे। कम्पनी ने साल भर का अन्दाज हिसाब प्रकाशित किया है, उससे मालूम होता है कि लगभग दो लाख जानवर एक वर्ष में काटे जावेगे। सरकार का यह भी कहना है कि यदि हमारे चीफ कमिश्नर साहब की राय में यह कार्य लाभदायक है तो कसाईघर और

भी बढ़ा दिया जाएगा या नया कसाईखाना बनवा दिया जाएगा अर्थात आगे चलकर और भी अधिक जानवर कट सकेंगे और रोज साढ़े बारह सौ से लगा कर पन्द्रह सौ जानवारों के चमड़े कमाए जायेंगे और एक हजार लाशों से अन्य वस्तुएँ बनाई जायेंगी।

इस प्रकार हमारे प्रांत में यदि सेन्ट्रल प्राविंसेज टेनिंग एण्ड ट्रेडिंग कम्पनी का प्रारंभ हुआ है, और इस प्रकार इन अंग्रेज व्यापारियों के वे– हिंदुस्तानी भी होते तो हम यही कहते–लाभ के लिए प्रति वर्ष दो लाख गाय–बैलों का हिन्दुओं की पूज्य गौ माताओं का और हिंदू मुसलमान की प्रीति तथा एकता की सजीव भूमियों का बलिदान होगा, और बलि होगे वे बैल, जो किसानों के एक मात्र जीवनाधार हैं और सारी प्रजा के अन्नदाता हैं। इस प्रकार कंपनी के अंदाज से बीस लाख रूपयों के लाभ के लिए दो लाख जानवर काटे जावेंगे, अर्थात केवल दस रूपये के लिए एक गौ की हत्या होगी और हत्या करावेगी, हमारी माई बाप सरकार, जो जानती है कि सारे देश में और मध्यप्रदेश में भी किसानों के योग्य जानवारों की सोचनीय कमी हो रही है और वह यह भी जानती है कि मध्यप्रदेश में प्रायः नब्बे फीसदी मनुष्य खेती पर अपना निर्वाह करते हैं, उनकी जीविका भी इसी गौ–वंश के बल पर ही चलती है। इन्हीं किसानों से वसूल किए हुए रूपए से सरकार इन्हीं के गाय बैल कटवाने का इंतजाम करने जा रही है। हम कहते हैं–इन्हीं के गाय, बैल कटेंगे, क्योंकि जहाँ पर कारखाना है, वहीं के जानवर अधिकतर मारे जावेंगे, क्योंकि बाहर से जानवर आने में अधिक खर्च पड़ेगा। डाक्टर कहते हैं कि देश में प्लेग, हैजा तथा लाल बुखार आदि इसलिए अपना डेरा जमाए हुए हैं कि हिन्दुस्तानियों के शरीरों

की जीवन शक्ति कम हो गई है, उनमें रोगों को रोकने का समार्थ्य अधिक नहीं रहा है और इसलिए अनेक नए–नए रोग देश में उत्पन्न हो जाते हैं। घी और दूध गरीबों को दवा के लिए भी नहीं मिलता है। पहले हिन्दुस्तान में दूध इतना अधिक होता था कि किसी को मोल नहीं लेना पड़ता था और हिन्दुओं में तो उसका बेचना पाप समझा जाता था। जो दूध अभी कुछ ही समय के पहले रूपए का सोलह सेर बिकता था, वही आज चार आने और छः आने सेर हो रहा है, फिर भी शक रहता है कि यह दूध है या सफेद पानी। इतने पर भी गाय का दूध ढूँढने पर भी कठिनाई से मिलता है। बीमारी, अकाल, मंहँगाई और खेती के जानवरों की कमी के समय देश के खेती के जानवर काटने वाली कंपनी को प्रांतीय सरकार द्वारा सहायता देना एक प्रकार से प्रांतीय प्रजा का गला काटना और उसके धन का दुरूपयोग तथा विश्वासघात करना है। प्रजा का धन उसकी इच्छा के विरूद्ध कभी और कहीं खर्च नहीं होना चाहिए, इसीलिए हम चाहते हैं कि इस विषय पर प्रजा अपना मत साफ–साफ प्रकट करे। यदि वह हिंदू–मुसलमान–ईसाई सभी को धन देकर केवल दूसरों के लिए अपना गोवंश कटवाना चाहती है, तो कह दे कि हम कसाईखानों और चमड़े की कंपनी का स्वागत करते हैं, उसे सहायता देने को तैयार हैं। परन्तु यदि वह अपनी खेती के लिए अच्छे बैलों की आवश्यकता समझती है, अपनी संतानों को हृष्ट–पुष्ट तथा बलवान बनाना चाहती है, और चाहती है कि उसकी संतान के समान प्यारे बछड़े जिन्हें अपने बचपन से प्यार से पाला है, कई बार प्रेम से उन्हें चूमा है, शाम को उनको लौटकर घर आने में देरी होते देख उनका हृदय व्याकुल हुआ है, ऐसे प्यारे बछड़े इन व्यापारी कसाइयों के कारखाने में कटने न पावें

तथा वह सरकार की इस नीति की निंदा करें, कठिन विरोध करें और इस कार्य को असंभव कर दे। यह प्रश्न केवल आर्थिक ही नहीं है, यह धार्मिक भी है। हिंदू गाय को अपनी माता समझते है। हिंदू का परमेश्वर श्रीकृष्ण अपने को गोपाल कहलाने में धन्य मानता है, वह गौमाता की सेवा में अपना बालपन बिता कर और युवावस्था में उसकी याद करके सुखी होता है। उसी पवित्र माँ के समान पवित्र गाय को काटा जाना हिंदू धर्म को नष्ट करना है और खास कर प्रजा की माँ बाप सरकार का इस कार्य में सहायता करना अत्यंत घृणास्पद और असहाय है। हिंदू ही नहीं मुसलमान भी, गाय में पवित्रता का अनुभव करने लगे हैं। वे कुरान शरीफ की आयतों से उसे सिद्ध करते हैं और प्रेम तथा जोश के साथ कहते हैं कि हमारे पैगम्बर साहब फरमा चुके हैं– गाय का गोश्त मर्ज है और दूध शफा है। इसी के अनुसार अन्य कई स्थानों के समान होशंगाबाद का वह दृश्य था, जब बकरीद पर कुर्बान की जाने वाली गाय को स्वयं मुसलमानों ने फूलों की मालाओं से सजा कर गाजे बाजे के साथ, गत डिस्ट्रिक्ट कांफ्रेस के समय हिंदुओं को अर्पण की थी और मौलबी साहब ने बड़े प्रेम से कहा था कि हम हिंदू और मुसलमानों के बीच प्रेम की इस धरोहर को आपके पास सौंपते हैं, इसे बड़ी हिफाजत से रखना, किसी जालिम की छाया भी इसे न छूने पाए, उस समय मौलवी साहब को क्या मालूम था कि ऐसी हजारों प्रेम की धरोहरों को काट डालने के लिए और उनकी खाल निकलाने के लिए बड़ा भारी कारखाना खुलेगा और माई--बाप सरकार उसे हमारे ही रूपये से खोलेगी ? हम जानते हैं कि अंग्रेजी राज्य के कसाईखानों में आज लाखों गाएँ रोज कट रही हैं, परन्तु हम उनके विरूद्ध भी आंदोलन कर रहे हैं और हिंदम मुसलमानों की जागी

हुई प्रीति उसे रोकने के लिए आगे बढ़ रही है। ऐसी अवस्था में सरकार का यह कार्य करना, लोकमत की अवहेलना तथा प्रजा का अपमान करना है। इस समय प्रजा का धर्म है कि वह सरकार के इस कार्य का विरोध करे और प्रकट शब्दों में सरकार को इस नीति के दुष्परिणामों से सचेत कर दे। साथ ही कौंसिल में प्रजा के प्रतिनिधियों का भी कर्तव्य है कि वे कौंसिल में इस प्रश्न को उठायें और सरकार को यह कार्य करने से रोकें।

कंपनी का प्रास्पेक्टस गत 3 जुलाई के सहयोगी 'हितवाद' के पूरे तीन पेजों में छपा है और 'हितवाद' ने अपनी संपादकीय टिप्पणियों में उस कंपनी से होने वाले लाभ दिखा कर अपने पाठकों का ध्यान उस प्रास्पेक्टस की ओर आकर्षित किया है। 'हितवाद' के संपादक है श्रीयुत ए.एन. द्रविड़, एम.ए.। आप सर्वेण्ट्स ऑफ इंडिया सोसायटी के मेम्बर हैं और बहुत भारी विद्वान तथा प्रतिष्ठित हैं। इस कंपनी का प्रास्पेक्टस और प्रशंसा छापने के संबंध में हमें श्रीयुत द्रविड़ का इस प्रकार परिचय देते दुःख होता है, किन्तु एक विद्वान हिन्दु को गौवध का विरोध न करते देख हमारे हिन्दू अंतःकरण को आत्मापमान खेद और लज्जा मालूम होती है। श्रीयुत द्रविड़ से हम पूछते हैं कि क्या आप आर्थिक तथा धार्मिक दृष्टि से सरकार की इस नीति को या उस कंपनी को मध्यप्रदेश की प्रजा के लिए हितकारी समझते हैं ? उक्त कंपनी को जो पट्टा दिया गया है, उसकी तेरहवीं शर्त में लिखा गया है कि यदि यह कंपनी अपना कारोबार किसी दूसरी कंपनी को बेचना चाहे तो बेच सकती है, किन्तु मोल लेने वाली कंपनी को अपने 25 फी सैकड़ा हिस्से मध्यप्रदेश और बरार के निवासियों को देने होंगे और

उसकी सूचना यहाँ के कम से कम तीन समाचार पत्रों में प्रकाशित करनी पड़ेगी। इनमें एक छिंदवाड़े का सी.पी. वीकली न्यूज अर्थात मध्यप्रांतीय साप्ताहिक समाचार पत्र होना ही चाहिए। इस पत्र को सरकार सोलह हजार रूपये की वार्षिक सहायता देती है। और अब सरकार की कृपा से इसे यह बहुमान तथा अधिकार मिला है कि वह गाय काटने वालों के हिस्से का विज्ञापन मध्यप्रदेश में प्रकाशित करे। हमारे प्रांत में हिन्दुओं के द्वारा चलाए जाने वाले पत्रों में से एक को भी गौ–वध के विरूद्ध आवाज न उठाते देख, दूसरे का उसमें कुछ मतलब पाकर हमें आश्चर्य और अफसोस होता है। पर आशा है कि यह पत्र भी इस प्रश्न पर विचार करके इसका विरोध करेंगे।

प्रास्पेक्टस में बार–बार 'गाय के चमड़े का उल्लेख हुआ है और एक स्थान पर प्रास्पेक्टस में साफ लिखा गया है कि सुअर के चमड़े का कारोबार किसी तरह भी नहीं होगा। न जाने क्यों ? परन्तु इसका यह कारण नहीं हो सकता कि सुअर का चमड़ा उपयोगी नहीं होता। सुअर काटने के कारखानों से अमेरिका का शिकागो नगर प्रसिद्ध हो रहा है और अमेरिकन लोग दावा के साथ कहते हैं कि हमारे यहाँ सुअर के पाखानों को छोड़ उसका एक अंश भी व्यर्थ नहीं जाने पाता। फिर भला यहाँ सुअर क्यों नहीं काटे जायेंगे ? क्या कंपनी सुअर काटने और उसका चमड़ा कमाने का यंत्र प्राप्त नहीं कर सकती? या सरकार की खिलाफत से खौले हुए मुसलमानों के धार्मिक भावों का ख्याल है ? तब हम पूछेंगे कि क्या सरकार हिन्दुओं के धार्मिक भावों की परवाह नहीं करती ? या इस प्रकार पक्षपात करके अपनी नीति की तलवार चलाना चाहती है, जिससे हिन्दू–मुसलमान पुनः अलग–अलग

हो जाएँ और सरकार की थपकी पीठ पर खाकर आपस में लड़ने को तैयार हो जाएं। यदि यह बात सच है तो हम सरकार को सिर्फ याद दिलाना चाहते हैं कि वे दिन गए। वह मुसलमानों को अकेला नहीं बना सकती। प्रश्न है गोवध का, परन्तु हमें यह कहते हुए हर्ष होता है कि हमसे भी पहले जबलपुर के उर्दू सहयोगी ताज ने गतांक में उसके विरूद्ध आवाज उठाई है और सरकार की नीति को बहुत बुरी कहा है। हिन्दू मुसलमानों के वर्तमान संबंध के सामने सरकार की यह नीति चल नहीं सकती। इस समय हमारा यही कर्तव्य है कि इस संबंध को, हिन्दु मुसलमानों की एकता का बल लगाकर हिन्दुस्तान में गाय को सदा के लिए सुरक्षित करके देश को आर्थिक तथा धार्मिक हानि से बचायें। और हिन्दु मुसलमानों के मेल को चिरस्थाई बनायें।

(कर्मवीर, 17 जून, 1920)

'कर्मवीर' ने लगभग पूरे साल तक यह अभियान तथ्यों और तर्कों की तीक्ष्णता के साथ चलाया और अंततः फिरंगी हुकूमत को अपनी गोवध संबंधी उक्त योजना को वापस लेने के लिए मजबूर होना पड़ा। यह अंग्रेजशाही की मध्यप्रदेश की धरती पर पहली हार और भारतीयता की पहली जीत थी। इसका श्रेय कर्मवीर को ही जाता है।

1920 में भारतवर्षीय दिगंबर जन महासभा ने अपने मुखपत्र के रूप में खंडेलवाल जैन हितेच्छु का प्रकाशन आरंभ किया। इसका मुद्रण जंवरी बाग प्रिंटिंग प्रेस, इंदौर से होता था और रतनलाल जोशी, प्रकाशक तथा साहित्यरत्न पं. नाथूराम जैन संपादक का दायित्व वहन करते थे। जैन धर्म पर उपयोगी सामग्री का प्रकाशन इस मासिक

पत्रिका में होता था। 1920 में ही जबलपुर से उर्दू का तेजस्वी साप्ताहिक 'ताज' प्रकाशित हुआ। सागर से जातीय पत्रिका 'गोलापुरा जैन' निकली। 21 मार्च, 1920 को राष्ट्रीय हिन्दी मंदिर जबलपुर ने 'श्री शारदा' का प्रकाशन आरंभ किया। यह एक सचित्र मासिक पत्रिका थी, जिसके संपादक नर्मदाप्रसाद मिश्र थे। 'श्री शारदा' के प्रथम अंक का संपादकीय उसकी विचारधारा का दर्पण है। इस संपादकीय का शीर्षक था– क्या हिन्दी राष्ट्रभाषा हो सकती है ? 1922 में पंडित द्वारका प्रसाद मिश्र 'श्री शारदा' के संपादक बने। श्री माधवराव सप्रे का मार्गदर्शन एवं प्रेरणा उनको सुलभ थी। मार्च, 1920 से जबलपुर से नरसिंह दास अग्रवाल ने मासिक पत्रिका 'छात्र सहोदर' निकाली। पंडित मातादीन शुक्ल और श्री कुमार चटर्जी इसके संपादक रहे। स्वयं नरसिंहदासजी एक स्वंत्रता संग्राम सेनानी थे, जेल उनका दूसरा घर था। अतः स्वाभाविक ही स्वतंत्रता चेतना के प्रसार में इसने सक्रिय भूमिका निभाई। 1920 में एक और साप्ताहिक 'सहायक पत्रिका' जबलपुर से निकली। 1920 में ही मुंगेली से मासिक 'भानुदय' प्रकाशित हुआ। छत्तीसगढ़ का ईसाई समाज इसकी पृष्ठभूमि में था, लेकिन इसकी प्रकाशन यात्रा चार अंक से आगे नही चल सकी। बालाघाट से साप्ताहिक 'बैन गंगा' और भोपाल से 'हुस्ने ख्याल' इसी साल निकले । पन्ना रियासत का 'गजट' प्रकाशित होने लगा।

1921 में मुरार (ग्वालियर) से श्यामलाल पांडवीय ने 'समय' का प्रकाशन आरंभ किया। (श्री पाण्डवीय बाद में मध्य भारत के सूचना मंत्री बने) यह एक मासिक पत्र था जिसका आकार 13''ग10'' और वार्षिक मूल्य 4 रूपये था। 'समय' का पाक्षिक संस्करण पृथक से

निकलता था जिसका मूल्य ढाई रूपये था। 1921 में रामेश्वर प्रसाद अग्निहोत्री के संपादन में जबलपुर से एक साप्ताहिक 'तिलक' प्रकाशित हुआ। क्रांतिकारी रामचरण लाल शर्मा इसके प्रकाशक थे। इसी वर्ष जबलपुर से डालचंद हंगवासिया ने सनाढ्य और पं. गंगाविष्णु पाण्डेय ने मासिक स्वास्थ्य दर्पण का प्रकाशन आरंभ किया। स्वास्थ्य दर्पण का प्रकाशन मध्यप्रदेश औषधालय और मुद्रण, रेजिमेंट प्रेस, जबलपुर से होता था। 1922 में उज्जैन से दुर्गाशंकर नागर के संपादन में मासिक 'कल्पवृक्ष' का प्रकाशन आरंभ हुआ। जो अविराम 20 वर्षो तक जारी रहा। इसमें अध्यात्म संबंधी सामग्री ही प्रकाशित होती थी। इसी वर्ष शिवनारायण उपाध्याय ने उज्जैन से मासिक 'श्री गौड' निकाला, जो एक जातीय पत्र था। सागर से केसरवानी मार्गदर्शक निकला। 1922 में भिण्ड से रामसहाय ब्रह्मभट्ट ने श्रीकृष्ण ग्रन्थमाला का प्रकाशन आरंभ किया, जो एक मासिक पत्र था। उर्दू के मशहूर अदबी जनबा नियाज फतेहपुरी ने 1922 में भोपाल से मासिक निगार का प्रकाशन शुरू किया। यह लोकप्रिय उर्दू मासिक लगभग एक साल तक भोपाल से प्रकाशित होता रहा, इसके पश्चात् इसका प्रकाशन स्थल लखनऊ हो गया और अब यह पत्रिका पाकिस्तान में प्रकाशित हो रही है। सईद उल्ला खाँ रजमी ने मासिक नदीम आरंभ किया था।

1923 में चन्द्रपुर, जिला रायगढ़ से छत्तीसगढ़ पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके सम्पादक मनोहरप्रसाद मिश्र थे। इसी वर्ष

जबलपुर से मासिक परमार बन्धु निकला, जो एक जातीय मासिक पत्र था। इसके सम्पादक दरबारीलाल 'काव्यतीर्थ' थे।

1923 में खण्डवा से सिद्धनाथ माधव आगरकर ने साप्ताहिक 'मध्यभारत' का प्रकाशन आरंभ किया। यह तेजस्वी पत्र अपनी प्रखरता के कारण रियासतों की आँखों की किरकिरी बन गया था। भोपाल सहित अनेक रियासतों में इसके प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया गया था और अंततः 'मध्यभारत' को बंद कर देना पड़ा। इसी वर्ष सागर से उदय का प्रकाशन हुआ। देवेन्द्रनाथ मुकर्जी उसके संपादक थे। जबलपुर से 1923 में एक त्रैमासिक पत्र आर्डिनेंस निकला, जो हिन्दी और अंग्रेजी में छपता था। 1923 में द्वारका प्रसाद सेवक के संपादन में छावनी, इंदौर से साप्ताहिक 'भारतीय आदर्श' का प्रकाशन आरंभ हुआ। उत्कृष्ट पत्र के मात्र नौ अंक ही निकल सके और अंततः प्रतिकूल आर्थिक परिस्थितियों ने उसे निगल लिया। पत्र के अंतिम अंक में संपादक सेवकजी ने अपनी व्यथा व्यक्त करते हुए लिखा–'मैं आदर्श को अपने ढंग का अद्वितीय पत्र बना देना चाहता हूँ, किन्तु सहयोग और सहायता के काम, सहयोग और सहायता से ही हो सकते हैं। पैसे के काम पैसे से ही होंगे, बातों से नहीं। अभी मुझे जो कुछ सहायता प्राप्त हुई है, उसे 'आदर्श' के लिए किए हुए व्यय का आधा

भाग भी प्राप्त नहीं हुआ। नौ अंकों की सोलह सौ प्रतियां मुफ्त बाँटी गई हैं, आगे ऐसा नहीं हो सकेगा। आखिर यह कब तक ? अब तक सर्वथा मुफ्त ही पढ़ते रहने वाले महापुरूषों को अपना कुछ तो कर्तव्यपालन करना चाहिए ? नवाब सिद्दीक हसन, जो भोपाल की नवाब बेगम शाहजहाँ के पति और उच्च कोटि के विद्वान थे, ने दो रिसाले 'सिकंदरी' और सिद्धीकी निकाले लेकिन इनकी प्रकाशन तिथि का उल्लेख नहीं मिलता।उज्जैन से 1923 में पं. सूर्यनारायण व्यास ने हिन्दी मासिक 'विद्या रत्न' का संपादन–प्रकाशन किया। 1923 में भोपाल से उर्दू साप्ताहिक 'जर निगार' अब्दुल कदीर आजाद के संपादन में निकला। इसी वर्ष जबलपुर से अंग्रेजी, हिन्दी और मराठी में मासिक 'मध्यप्रदेश' व बरार के स्काउट निकला। इसमें स्काउट की गतिविधियों का ब्यौरा दिया जाता था।

मध्यप्रदेश का प्रथम दैनिक समाचार पत्र "प्रकाश" :

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस जब आजादी की लड़ाई को एक नया रूपाकार प्रदान कर रही थी, मानो तभी दुनिया के इतिहास की इस सर्वथा अनूठी संघर्षगाथा को स्वर देने के लिए सागर से 11 जून, 1923 को "प्रकाश" का प्रकाशन आरंभ हुआ। 1857 के

प्रथम मान्य स्वतंत्रता संग्राम से भी पन्द्रह साल पूर्व फिरंगी हुकूमत के विरूद्ध विद्रोह का झण्डा उठाने वाली सागर की वीर बुन्देला धरती पर प्रकाश के रूप में इस नए अभियान का सूत्रपात किया मास्टर बलदेव प्रसाद ने और इस प्रकार वे मध्यप्रदेश के प्रथम दैनिक समाचार पत्र के जन्मदाता भी बने।

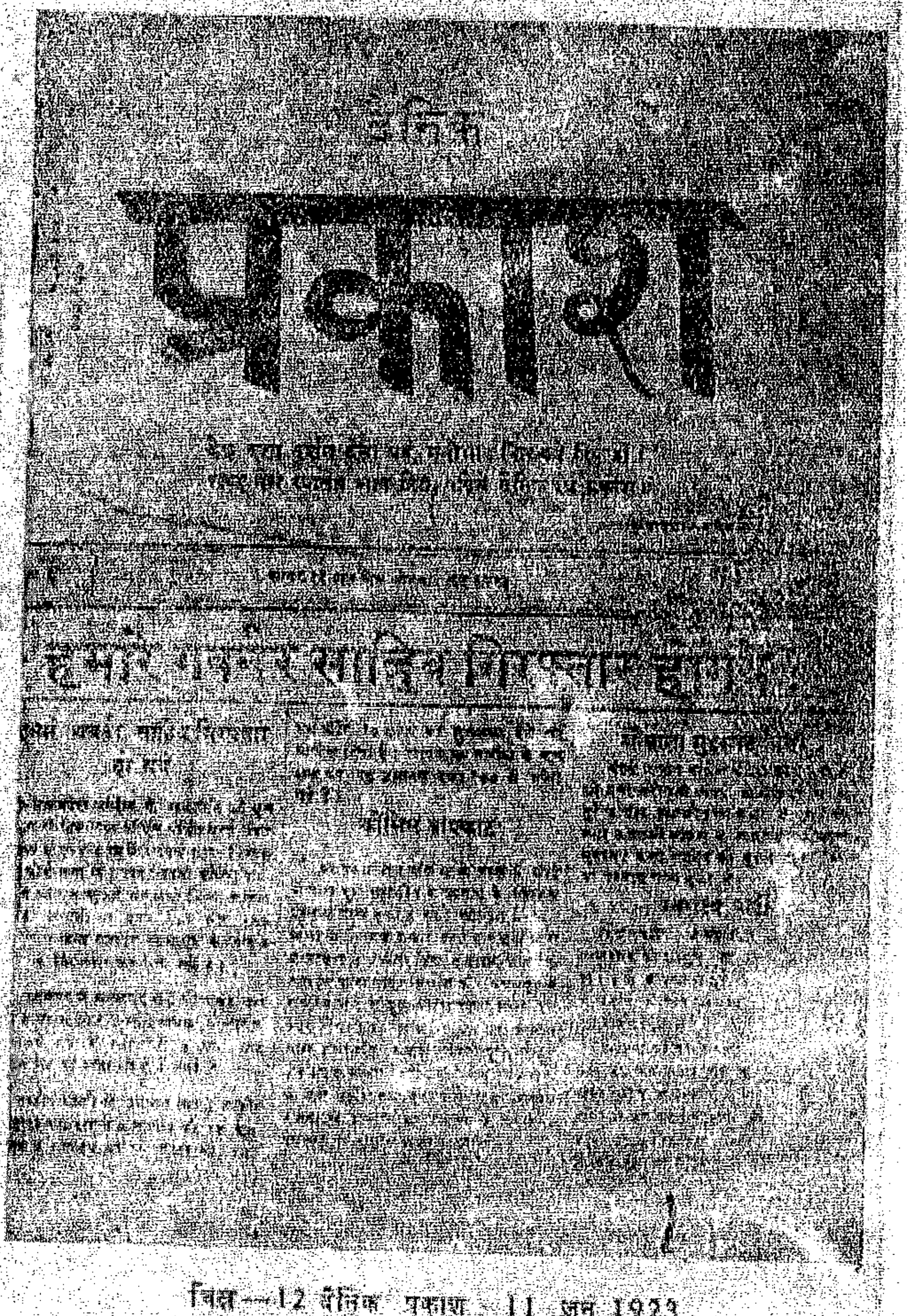

प्रकाश

चित्र—12 दैनिक प्रकाश 11 जून 1923
मध्यप्रदेश का प्रथम दैनिक समाचार पत्र

"प्रकाश" पूरी तरह राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रवाह में सम्मिलित था। यह बात उसके प्रत्येक अंग से स्पष्ट झलकती है। इसके प्रथम अंक के मुख पृष्ठ पर क्रांतिकारियों तथा सत्याग्रहियों का अभिनन्दन और वंदे मातरम् प्रकाशित हुआ है। प्रत्येक अंक के मुख पृष्ठ पर एक दोहा छपता था :

"देश दशा दर्शन देता यह, मनोभाव नित करे विकास।

राष्ट्र प्रेम स्वतंत्र्ता भाव हित, पढ़िए दैनिक पत्र 'प्रकाश'।

"प्रकाश" के प्रत्येक अंक में स्वतंत्रता आंदोलन की खबरें तो हैं ही, अन्तर्राष्ट्रीय समाचारों को भी प्रमुखता दी गई और इस प्रकार समाचार पत्र को व्यापक बनाने का प्रयत्न किया गया है। सत्याग्रह, धरा, मद्य निषेध, सांप्रदायिक सौहार्द्र आदि समाचार तथा कांग्रेस के कार्यक्रमों को प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया जाता था। 26 सितम्बर, 1923 के अंक में नाभा में पं. जवाहरलाल नेहरू को गिरफ्तार करने और उन्हें हथकड़ी पहनाने का समाचार मुख पृष्ठ पर छापा गया। इसी अंक में यह भी प्रकाशित हुआ कि पं. मोतीलाल नेहरू नाभा गए, लेकिन न तो उन्हें पुत्र से मिलने दिया गया, वरन् तुरन्त ही नाभा छोड़ कर वापस जाने के आदेश दिए गए। दैनिक "प्रकाश" ने अपने आपको स्वतंत्रता के उद्देश्य से जोड़कर, मानो स्वयं सरकार को एक चुनौती दे रखी थी। इसकी खबरों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के आंदोलन की ललकार गूँजती थी। 17 जुलाई, 1923 के अंक में प्रथम पृष्ठ पर ही खबर है—

"18 तारीख को झण्डा दिवस मनाओ।

जुलूस निकालने की तैयारी करो।"

"नागपुर में 'ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी' ने प्रस्ताव पास कर दिया कि कल 18 तारीख को महात्मा गांधी के जेल जाने के दिन, झण्डों का जुलूस निकाल कर मनाया जाये। प्रांतीय और जिला कांग्रेस कमेटियाँ जुलूस की तैयारी करे। अगर सरकार अट्ठारह तारीख के जुलूस की मनाही करें तो वहाँ सत्याग्रह किया जाये। यह याद रखा जाये कि अहिसा का ख्याल रहे। मध्यप्रांतवासियों ! तैयार हो जाओ। राष्ट्रीय महासभा का जुलूस निकल चुका है। विश्वव्यापी सत्याग्रह का मौका मिला है। कुल झडांमय प्रान्त बना दो।"

31 जुलाई, 1923 के दैनिक "प्रकाश" में नरसिंहपुर की चिट्ठी छपी है– श्रीयुत रूपनारायण जी असहयोगी वकील लिखते हैं– श्री शंकर लालजी आदि के मुकदमे की पेशी, मुकदमा अदालत में शुरू होने के पहले ही 2 अगस्त तक बढ़ा दिया गया है। आप जिस समय अदालत से जेल ले जाए गए, उस समय आपके साथ राष्ट्रीय झण्डा लिए बहुंत बड़ी भीड पीछे हो ली। पुलिस ने भीड को रोका और करीब आधी दूर से उसे जबरदस्ती लौटा दिया। हाल ही में फिर तीन झंडा ले जाने वालों को दफा 109 में फँसा दिया और दो साल को धाँध दिया है। श्रीयुत गयादत्त जी शर्मा, बाबू रोशनलाल श्रीवास्तव, जो सागर जेल और बुलढाना जेल में एक–एक साल की सजा भोग रहे हैं, यहाँ लाए जाने वाले हैं। इन पर भी शंकरलालजी जैसा मुकदमा चलाया जाने वाला है। पेशी सब की दो अगस्त की रखी गई है। अट्ठारह सज्जनों के खिलाफ दफा 500 में पहली अगस्त से मुकदमा शुरू होने वाला है।

दैनिक "प्रकाश" का मुद्रण प्रिटिंग प्रेस, चकराघाट, सागर से होता था। प्रकाशन की जवाबदारी प्रेमनारायण शर्मा पर थी।

समाचार पत्रों और पत्रकारों से संबंधित घटनाओं की खबरें प्रायः तब के सभी अखबारों में प्रमुखता से दी जाती थी। छोटे आकार के बावजूद "प्रकाश" दुनिया भर की खबरें अपने में समेटे रहता था। 13 जून को नवयुवक के सम्पादक कल्याण जी मेहता को दफा 124 में हुई दो साल की कठोर कैद और उर्दू पत्र लाहौर के संपादक प्रोफेसर गुलाम हुसैन को हिरासत में लिए जाने की सूचनाएँ "प्रकाश" के 18 जून के अंक में छपी। इसी अंक में खबर दी गई कि नेशन के सम्पादक अब मुस्लिम युनिवर्सिटी, अलीगढ़ के लड़कों को सम्पादकीय सिखाएँगे। चाहे बेल्जियम में फौजों द्वारा तखत पलट की घटना हो या मध्यप्रांत के जिलों में पुस्तकालयों की स्थिति, नमक के टैक्स पर पार्लियामेंट में बहस हो या टर्की में शराबबंदी "प्रकाश" की नजर तमाम घटनाक्रम पर रहती थी। 8 जुलाई, 1923 को "प्रकाश" लिखता है– खबर देने वाली कम्पनियों की मदद–रूटर कम्पनी को 55,200 रूपए और एसोसिएटेड प्रेस आफ इंडिया को 22,740 रूपए खबरें देने के लिए सरकार से सालाना दिया जाता है। जो तार रूटर कम्पनी, लंदन से हिन्दुस्तान भेजती है, उसकी एक–एक नकल गवर्नमेंट आफ इंडिया के मेम्बरों को, प्रांतीय गवर्नरों को और दूसरे चुने हुए अफसरों को रोजाना भेजी जाती है। 9 जुलाई के अंक में 'अकाली ते परदेशी' के सम्पादक सरदार दीवान सिंह की गिरफ्तारी की खबर है। उनका कसूर सिर्फ इतना था कि अकाली कैदियों पर जेल में सख्ती के विषय

में उन्होंने एक लेख लिखा था। उस दौर में अखबार निकालना कितना कठिन काम था, इसकी झलक भी "प्रकाश" के अंकों में मिलती है।

जब पटियाला रियासत में अमृत बाजार पत्रिका और निजाम शाही में 'हिन्दू' पत्र का जाना उस दरबारों के हुक्म से मना कर दिया गया, तब "प्रकाश" ने देश में समाचार पत्रों का हित सुरक्षित रखने की आवाज उठाई। "प्रकाश" ने लिखा– वर्तमान दशा तो यह है कि हिन्दुस्तानी समाचार पत्रों में एक ऊँचे दर्जे की परम्परा पैदा करने और कायम रखने के लिए अब अखिल भारतीय समाचार पत्रों की एक सुसंगठित और वजनदार सभा स्थापित करना बिलकुल जरूरी और अनिवार्य हो गया है। इसी अंक में आगे यह खबर दी गई है कि अलीगढ़ के उर्दू पत्रकार हमीदुल्ला को अमेरिका की ओरिएन्टल एकेडमी ने सम्पादकीय पेशे का भविष्य विषय पर निबंध लिखने पर प्रथम पुरस्कार दिया।

उधर 23 जून, 1923 के अंक में श्रीमती सावित्रीबाई हार्डीकर का एक पत्र प्रकाशित किया गया, जिसमें उन्होंने नागपुर सत्याग्रह में शामिल होने की अनुमति माँगी और अनुमति न देने पर कांग्रेस अध्यक्ष के खिलाफ ही धरना देने की घोषणा की थी। यह पत्र सत्याग्रह आंदोलन में स्त्रियों के भाग लेने की आतुरता का एक प्रमाण है। 27 जुलाई, 1923 के अंक में सावरकर बन्धु को दी गई काले पानी की सजा के विरूद्ध अग्रलेख प्रकाशित किया गया। मानहानि का मुकदमा, सरकारी दमन और अन्य कठिनाइयों के कारण 20 अक्टूबर, 1923 को "प्रकाश" का प्रकाशन स्थगित करने की घोषणा सम्पादक ने की, लेकिन फिर यह पत्र कभी प्रकाशित नहीं हुआ। दैनिक "प्रकाश" का

वार्षिक मूल्य सागर के निवासियों के लिए सवा पाँच रूपए और बाहर वालों के लिए साढ़े दस रूपए था। 1924 में सागर के स्वतंत्रता सेनानी भाई अब्दुल गनी ने 'समालोचक' का प्रकाशन आरंभ किया। इसी वर्ष नरसिंहपुर से आनंदीप्रसाद श्रीवास्तव ने मासिक शिक्षामृत निकाला। इंदौर से खेती–बाड़ी प्रकाशित हुआ। सागर से स्वदेश का प्रकाशन शुरू हुआ। भोपाल से उर्दू के मोहसिन उल मुल्क और आफताब ए निस्बा निकले। सारंगपुर से हितैषी आरंभ हुए। 1925 में नरसिंहपुर से साप्ताहिक नृसिंह का प्रकाशन शुरू हुआ। इसके सम्पादक ठाकुर रामाशीष सिंह थे। यह एक निर्भीक पत्र था, जिसमें राष्ट्रीय आंदोलन के समाचार ही मुख्यतः प्रकाशित होते थे। 17 अक्टूबर, 1925 के अंक में मुख पृष्ठ पर ही काकोरी काण्ड तथा खिलाफत आंदोलन के समाचार प्रमुखता से छापे गए। दक्षिण अफीका की रंग भेद नीति का जहाँ डट कर विरोध किया गया, वहीं इस अंक में हॉकी टूर्नामेंट का भी विस्तृत समाचार प्रकाशित किया गया। 24 दिसंबर, 1925 के अंक में कानपुर में चालीसवें अधिवेशन के संबंध में एक विस्तृत लेख प्रकाशित किया गया। इन सबसे 'नृसिंह' की राष्ट्रीयता से ओत–प्रोत नीति का पता चलता है। सारस्वती विलास प्रेस, नरसिंहपुर से मुद्रित और नरसिंहपुर जैसे छोटे स्थान से प्रकाशित इस तेजस्वी पत्र का वार्षिक शुल्क साढ़े तीन रूपए और एक प्रति का मूल्य एक आना था। विज्ञापन की दर प्रति पंक्ति एक बार के लिए तीन आने, तीन माह तक प्रति बार के लिए दो आने छः माह तक हर बार के लिए डेढ आने और साल भर तक हर बार के लिए एक आने हुआ करती थी। सागर से भार्गव ब्राम्हण महासभा ने मासिक भृगु निकाला।

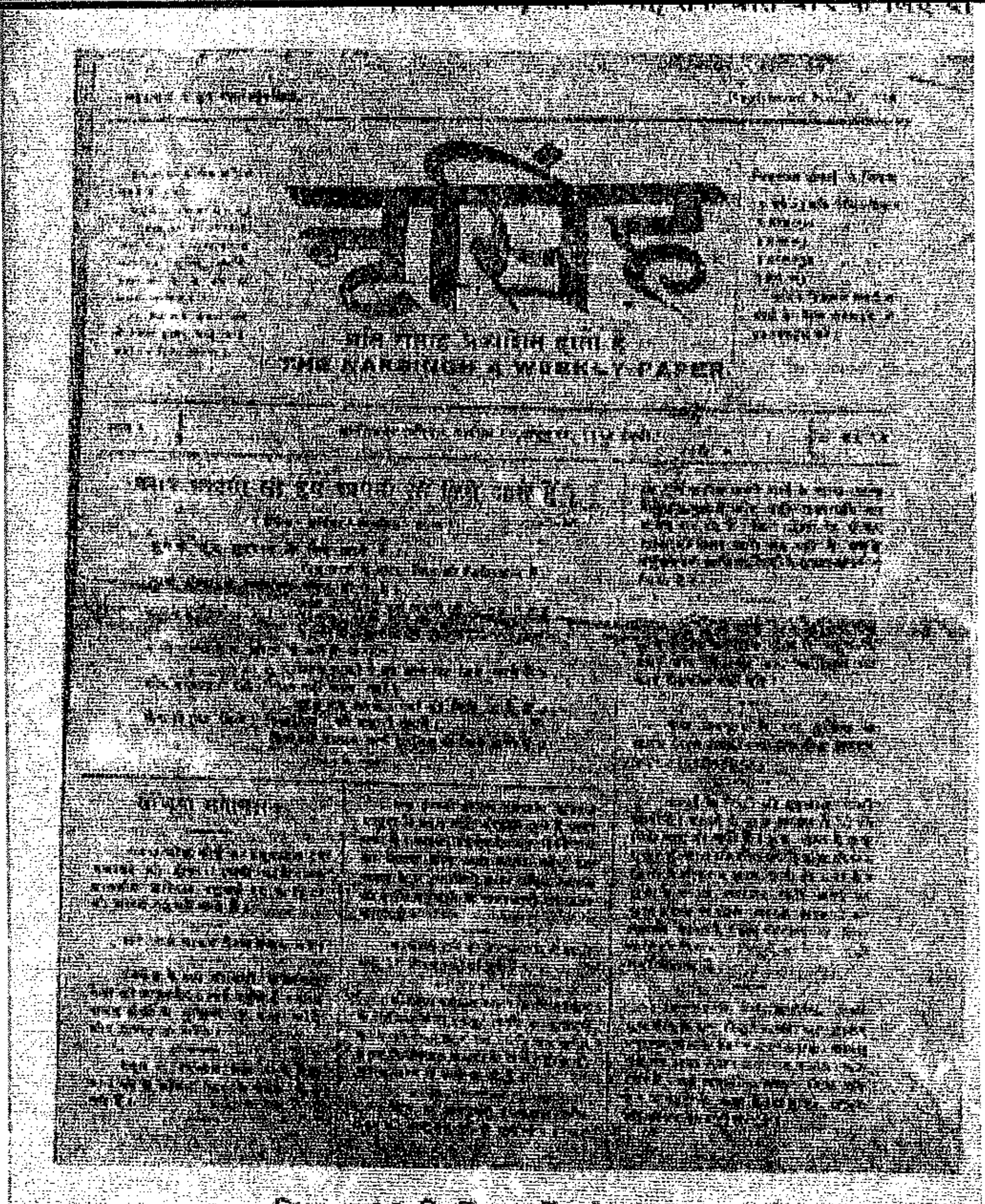
नृसिंह

THE NARSINGH A WEEKLY PAPER

चित्र —13 विभीक 'नृसिंह'—1923

6

एक अगस्त 1925 को बिलासपुर डिस्ट्रिक्ट कौंसिल ने कुलदीप सहाय के सम्पादन में बिलासपुर से मासिक 'विकास' का प्रकाशन किया।

1926 में देवास से साप्ताहिक 'मार्तण्ड' का प्रकाशन हुआ। यह देवास रियासत की सरपरस्ती में प्रकाशित हुआ था, जिसमें मुख्यतः मध्य भारत और राजस्थान की देशी रियासतों के समाचार और देवास के राजा की कहानियाँ राज्य के फैसले आदि भरे रहते थे। 7 अक्टूबर 1946 तक मार्तण्ड चार पृष्ठों का निकला और उसके बाद बारह पृष्ठों का। तब इसके सम्पादक रामचंद दुबे थे और वार्षिक शुल्क छः रूपए था। एक प्रति का मूल्य शुरू में एक आना था जो बाद में बढ़ कर दो आने हो गया था।

वीणा : श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इंदौर के तत्वावधान में मासिक पत्र 'वीणा' का प्रकाशन 1926 की एक महत्वपूर्ण घटना है। यह मालवा अंचल में साहित्य और पत्रिकारिता का प्रकाश स्तम्भ बन कर प्रकाशमान हुई और समूचे देश की हिन्दी पत्रिकाओं में प्रथम पंक्ति में समादृत हुई। श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति के संस्थापक डा. सरयू प्रसाद तिवारी 'वीणा' के जन्मदाता बने और इसके सर्वप्रथम संपादक रहे अम्बिका प्रसाद तिवारी। 1929 से 1946 तक सत्रह वर्ष की दीर्घावधि तक संपादन कालिका प्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर' ने किया। उनके संपादन काल में वीणा ने उच्च कोटि की साहित्यिक पत्रिका का गौरव प्राप्त किया। 'वीणा' के अन्य संपादकों में सर्वश्री शांतिप्रिय द्विवेदी, प्रयाग नारायण चंद्रारानी सिंह, राधावल्लभ उपाध्याय, कमला शंकर मिश्र, भालचंद जौहरी, प्रो. रामचंद्र श्रीवास्तव, डॉ. नेमीचंद जैन, मोहनलाल उपाध्याय और डॉ. श्यामसुन्दर व्यास आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री द्विवेदी के बाद सभी सम्पादकगण 'वीणा' का अवैतनिक संपादन कर सहयोग प्रदान करते रहे। वीणा के

अनेक विशेषांक संदर्भ सामग्री के रूप में संग्रहणीय एवं महत्वपूर्ण बन गए हैं। जैसे—अहिल्यांक—1928, ग्राम सुधार अंक 1940 कालिदास अंक—1959, श्रद्धांजलि अंक—1969, लोकमंगल—1970 और रजत जयंती 1922 आदि।

"सत्य" : अक्टूबर, 1922 में जबलपुर के सत्य प्रेस से, जो जोन्सगंज में स्थित था, 'सत्य' का प्रकाशन आरंभ हुआ। जबलपुर से प्रकाशित इस सर्वप्रथम दैनिक समाचार पत्र 'सत्य' के संपादक थे श्री कृष्णा स्वामी। मुख पृष्ठ पर शीर्षक के नीचे 'सत्य ही केवलं बलम् सत्यमेव जयते नानृतम' अंकित रहता था। अंदर के पृष्ठ में संपादकीय अग्रलेख के ऊपर यह दोहा प्रकाशित किया जाता था :—

"सत्य बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।

जा के हृदय सत्य है, वा के हृदय आप।।"

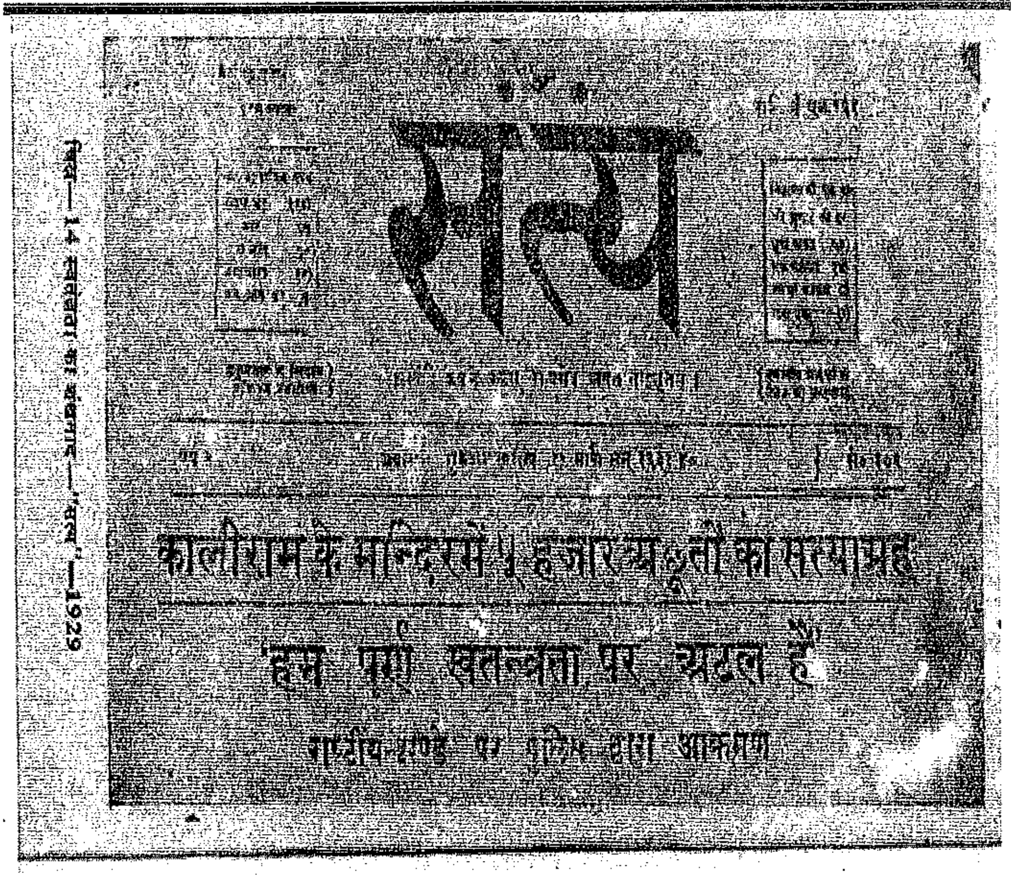

सत्य

कालीराम के मन्दिर से ? हजार अछूतों का सत्याग्रह

'हम पूर्ण स्वतन्त्रता पर अटल हैं'

राष्ट्रीय झण्डे पर पुलिस द्वारा आक्रमण

चित्र—14 स्वतंत्रता का अखबार—'सत्य'—1929

चार पृष्ठों का यह अखबार 11"X17" आकार में प्रकाशित होता था जो मंगलवार के अलावा सप्ताह के सभी छः दिन निकलता था। इस पत्र की एक प्रति का मूल्य दो पैसे और वार्षिक मूल्य साढ़े ग्यारह रूपए था। 14 सितंबर, 1929 के 'दि स्टेट क्रानिकल' का इंदौर से प्रकाशन हुआ। यह अंग्रेजी साप्ताहिक प्रति बुधवार को प्रकाशित होता था। इसके प्रधान संपादक नारायण दास टंडन थे। एक प्रति का मूल्य चार आना था। यह मालवा अंचल का प्रथम अंग्रेजी समाचार पत्र रहा।

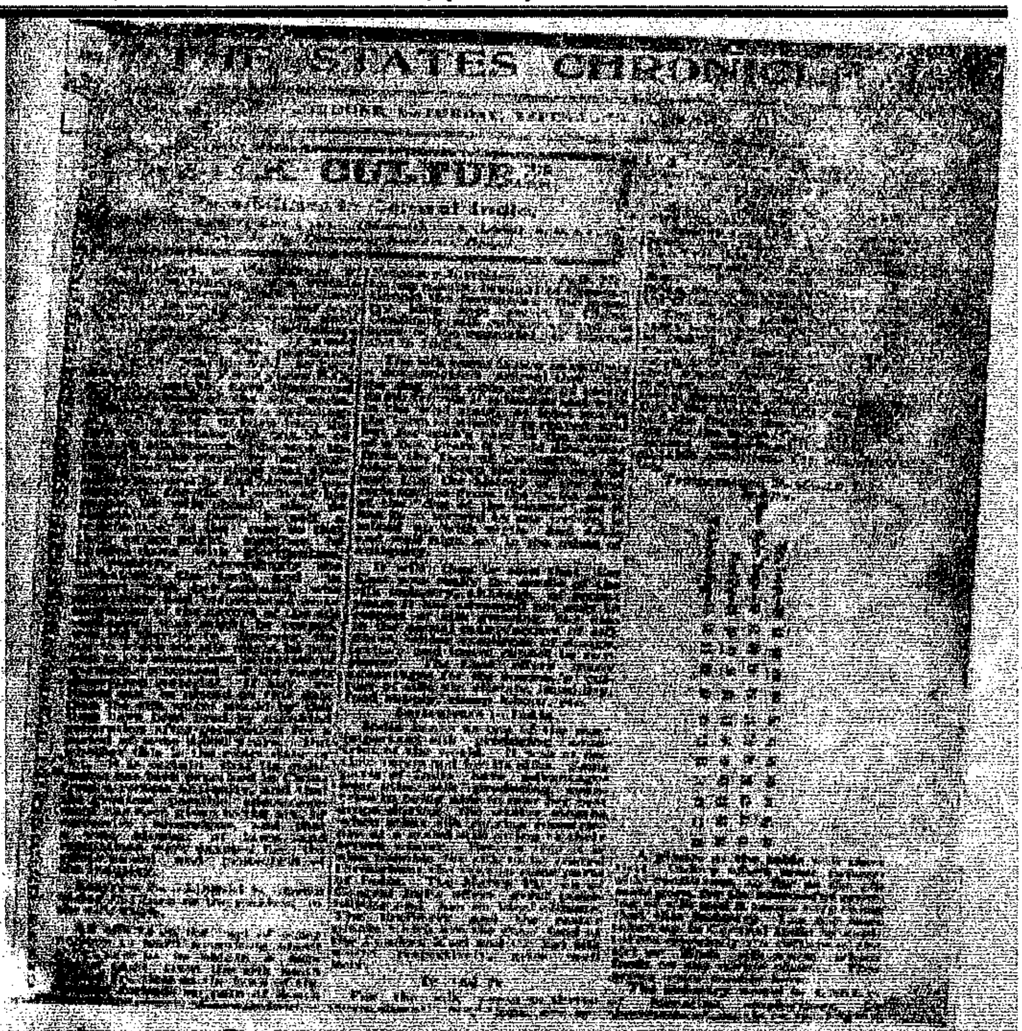
STATES CHRONICLE

CULTURE

चित्र—15 द स्टेट्स क्रानिकल—1929

वर्ष 1930 को मध्यप्रदेश की पत्रकारिता के इतिहास में बहुत महत्व के साथ याद किया जाएगा, क्योंकि इसी वर्ष रामानुजलाल श्रीवास्तव, विश्वनाथ सखाराम खोड़े तथा पंडित द्वारकाप्रसाद मिश्र प्रभूति विद्वानों ने सर्वकालीन महत्व के पत्र–पत्रिकाओं का संपादन तथा प्रकाशन आरंभ किया। इन पत्र–पत्रिकाओं ने न केवल पत्रकारिता के इतिहास में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान बनाया, बल्कि समकालीन

घटना परिदृश्य को भी प्रभावित किया और उसे एक विशिष्ट दिशा प्रदान की।

"वाणी" : 1930 में खरगौन से विश्वनाथ सखाराम खोड़े ने मासिक पत्रिका "वाणी" का प्रकाशन किया। बनारस के सरस्वती प्रेस से मुद्रित होने वाली इस पत्रिका की गणना हिन्दी की तत्कालीन श्रेष्ठ पत्रिकाओं के रूप में की जाती थी। इसका वार्षिक मूल्य साढ़े तीन रूपए था।

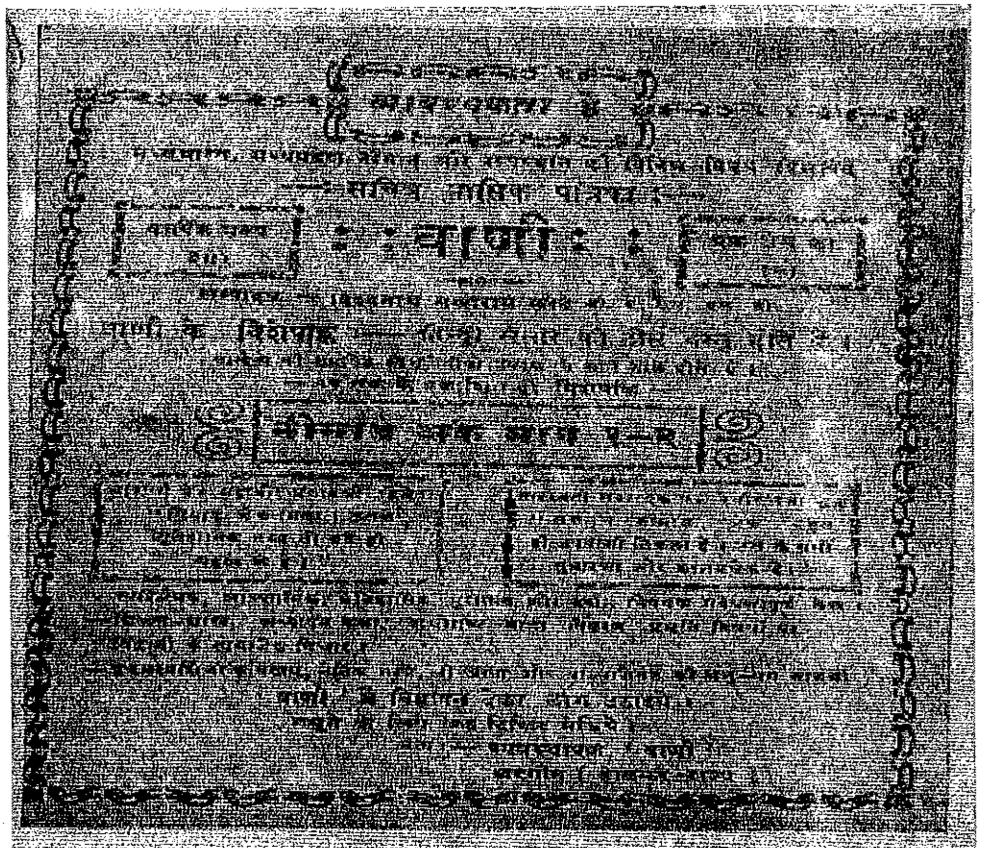

चित्र — 16 समाज सुधार की स्वरूप — "वाणी" — 1930

यह पत्रिका अंधविश्वासों और सामाजिक कुरीतियों पर तीखे प्रहार करती थी। इसके सातवें वर्ष के जनवरी अंक में विचार प्रवाह के

अंतर्गत संपादक लिखते हैं–'यदि सरकार उसकी आमदनी का ख्याल रख कर उसे बंद न करना चाहे तो उसे यह भी याद रखना चाहिए। कि यदि लोग शराबी हो जाएँ, भिखारी और दरिद्र बन जाएँ तो सरकार उनसे क्या लेगी ? जनता, सरकार की माता है। रोगी, आलसी, अशक्त और दुर्व्यसनी माता से बालक का पोषण कैसे हो सकता है ? पाखण्ड और सामाजिक बुराइयाँ "वाणी" के प्रहार का निश्चित रूप से निशाना बनती थी। जुए के दुर्व्यसन पर इसने टिप्पणी करते हुए ललकारा जो चीज वस्तुतः बुरी है, उसका पक्ष सीधे–सीधे लेने की हिम्मत किसी की नहीं हो सकती। इसलिए जहाँ किसी ने उसके खिलाफ युद्ध करने के लिए कसर कसी नहीं कि उस बुराई के और उसके पृष्ठ पोषकों के पैर कटने नहीं। सिर्फ निर्भयतापूर्वक ताल ठोक कर खड़े हो जाने की जरूरत भर है। इसमें हिन्दी और अंग्रेजी के सचित्र विज्ञापन सुरूचिपूर्ण एवं आकर्षक रूप से प्रकाशित किए जाते थे।

1930 में जबलपुर से साप्ताहिक देशबन्धु और इंदौर से प्रिंसली इंडिया का प्रकाशन हुआ।

"प्रेमा" : 1930 में जबलपुर से मासिक "प्रेमा" निकली। इस उच्चकोटि की साहित्यिक पत्रिका के संपादक रामानुजलाल श्रीवास्तव और सहयोगी थे परिपूर्णानंद वर्मा। केशव पाठक, नर्मदाप्रसाद खरे, शांतिप्रिय द्विवेदी प्रभूति साहित्यसेवी "प्रेमा" के साथ समरस थे। अनेक युवा रचनाकारों, जिसमें झाँसी की रानी की अमर गायिका सुभद्रा कुमारी चौहान भी सम्मिलित हैं, को प्रथम कोटि के रचनाकारों की कोटि में स्थापित करने में इसका बड़ा योगदान रहा। हिंदी साहित्य के

विभिन्न रसों पर केन्द्रित "प्रेमा" के विशेषांक हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि हैं और आज भी संदर्भ ग्रंथों के रूप में समादृत हैं।

"लोकमत" : 1930 की मध्यप्रदेश की पत्रकारिता की सबसे बड़ी घटना दैनिक "लोकमत" का प्रकाशन है। दैनिक प्रकाश (1923) और दैनिक 'सत्य (1929) इसके पूर्व प्रकाश में आ चुके थे, लेकिन प्रथम सर्वांगपूर्ण दैनिक समाचार पत्र "लोकमत" ही रहा। पूरे आठ कालम आकार में प्रतिदिन सोलह पृष्ठों में किनलने वाले इस पत्र के प्रकाशन का दायित्व उठाया सेठ गोविंददास ने और संपादक थे पंडित द्वाराका प्रसाद मिश्र। मिश्रा जी जब स्वतंत्रता समर के कारावासी होते थे, तब स्थानांतरण संपादक के रूप में श्री कुलदीप सहाय अथवा काशी प्रसाद सिंह का नाम जाता था। "लोकमत" 18 फरवरी, 1930 को आरंभ हुआ और 1932 में फिरंगी हुकूमत के दमन का शिकार होकर बंद हो गया। इसकी एक प्रति का मूल्य एक आना, तिमाही छः रूपए, छः माही ग्यारह रूपए और वार्षिक मूल्य 20 रूपया था। इसका मुद्रण गोकुलदास प्रिटिंग प्रेस से होता था। इसके चार संस्करण निकलते थे। इलाहाबाद, इंदौर और बिलासपुर जाने वाली ट्रेनों के समय के मुताबिक ये तीन संस्करण छप जाने के बाद सुबह जबलपुर और आसपास के लिए नगर संस्करण प्रकाशित किया जाता था। इसमें एसोसिएट प्रेस ऑफ इंडिया और फ्री प्रेस एजेंसी के समाचार लिए जाते थे। उन दिनों एजेंसियों के समाचार तार द्वारा मिला करते थे। समाचार संकलन की यह व्यवस्था मध्यप्रांत में पहले पहले "लोकमत" ने ही की थी। कुछ ही अरसे में प्रसार संख्या पन्द्रह हजार हो गई थी। पत्रकारिता के उस काल में यह अपने आप में एक अद्भुत घटना

थी और इसक परिचायक भी कि 'लोकमत' वास्तव में लोकप्रिय मत का प्रतिनिधित्व करता था। यह राष्ट्रीय आंदोलन का प्रखर प्रवक्ता था, इसलिए उसे कदम—कदम पर अंग्रेजी सरकार के हाथों प्रताड़ना झेलनी पड़ी।

"लोकमत" के 19 फरवरी, 1931 के अंक में सरदार भगत सिंह के फाँसी के मुकदम की सुनवाई का विस्तार से विवरण दिया है, जो यह दर्शाता है कि "लोकमत" के संपादक देशभक्ति के अपने कर्तव्य के निर्वाह में फिरंगी हुकूमत के बड़े प्रतिबन्धों की भी परवाह नहीं करते थे।

चित्र—18 मध्यप्रदेश का प्रथम सर्वांगपूर्ण दैनिक—''लोकमत'' – 1930

22 फरवरी, 1931 के अंक में मुखपृष्ठ पर ही दिल्ली में जनता और पुलिस की मुठभेड़ का समाचार प्रमुखता से दिया गया है। बिहार आंदोलन में 13 हजार 600 व्यक्तियों की गिरफ्तारी की खबर भी इसी अंक में है। इसी अंक में संपादकीय अग्रलेख के स्थान पर चकबस्त की दो पंक्तियाँ प्रकाशित की गईं, जो उस समय की सेंसरशिप के ऊपर व्यंग्य करती है :—

"जवां है मन, कलम को, पिनाई है जंजीर।

बयान—ए—दर्द की बाकी, नहीं कोई तकवीर।।

"लोकमत" के 19 फरवरी, 1931 के अंक में पृष्ठ दो पर अमेरिका के "हार्ड टाइम्स" अखबार के संवाददाता से राष्ट्रपति पंडित जवाहरलाल नेहरू (भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष को तब राष्ट्रपति संबोधित किया जाता था) की भेंटवार्ता प्रकाशित हुई, जिसमें पंडित नेहरू ने कहा— भारत को चाहे आज विजय प्राप्त हो अथवा कल, पर वह विजयी अवश्य होगा। भारत ने स्वतंत्र होने का दृढ़ संकल्प ले लिया है। अब इंग्लैंड का विचार भारत में नहीं चल सकता।"

"स्वराज्य" : 1931 में मध्यप्रदेश की पत्रकारिता में सिद्धनाथ माधव आगरकर अपनी पत्रिका 'स्वराज्य' के कारण सदैव याद किए जाएँगे। श्री आगरकर ने खंडवा में विक्रम प्रिटिंग प्रेस की स्थापना की और 'स्वराज्य' का प्रकाशन आरंभ किया। इससे पहले उनका 'मध्यभारत' असमय अवसान पर विवश हो चुका था। यह अत्यंत उच्च कोटि का तेजस्वी साप्ताहिक अखबार था, जिसकी गणना प्रदेश के गिने चुने

सर्वश्रेष्ठ समाचार पत्रों में की जाती थी। प्रखर विषयवस्तु और मुखर विचारों के कारण इसकी लोकप्रियता काफी अच्छी थी और तदनुरूप प्रसार भी अच्छा खासा था। वित्तीय संकट और विदेशी सरकार की प्रताड़नाएँ झेलते रह कर भी का प्रकाशन जारी रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी वह कुछ समय तक निकला।

"प्रकाश" : 1932 में रीवा में साप्ताहिक "प्रकाश" का प्रकाशन आरंभ हुआ। तत्कालीन रीवा नरेश महाराजा गुलाब सिंह ने प्रयाग की 'सजनी' पत्रिका के सम्पादक नृसिंहराम शुक्ल पर यह जवाबदारी डाली। "प्रकाश" के प्रकाशन के लिए उन्होंने राज्य के खजाने से चार हजार रूपये वार्षिक की धन राशि भी स्वीकृत की। इसके बावजूद यह रीवा रियासत का सरकारी गजट बन कर कभी नहीं रहा। इसमें प्रचुर साहित्यिक सामग्री के अलावा अन्य समाचारों का भी यथेष्ठ प्रकाशन होता था, जिनमें रीवा राज्य के जनपदीय समाचारों को प्रमुखता दी जाती थी। शुक्ल तीन वर्ष तक ही सम्पादन कर पाए थे कि स्वतंत्रता आंदोलन में अपने सक्रिय योगदान के कारण उन्हें जेल जाना पड़ा और तब उनके सहयोगी केशव प्रसाद चतुर्वेदी "प्रकाश" के सम्पादक बने। 1945 तक उन्होंने इसका दायित्व कुशलता से निर्वहन किया। इसके पश्चात ठाकुर अर्जुनसिंह "प्रकाश" के सम्पादक बने। इस दौर में "प्रकाश" ने रीवा राज्य अथवा स्वयं महाराजा के विरूद्ध भी कलम चलाई। सन् 1948 में राज्यों के विलय के बाद इसे रीवा राज्य से मिलने वाली आर्थिक सहायता बंद हो गई फिर भी ठाकुर अर्जुन सिंह ने लगभग एक वर्ष तक उसे प्रकाशमान बनाए रखा। 1949 में उसका प्रकाशन बंद हो गया।

आवाज : अंजुमन रियाया ए वतन नामक राजनीतिक संस्था, जिसके प्रमुख नेता सईदुल्ला खान रजमी थे, ने अपने राजनैतिक विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए 1933 में उर्द साप्ताहिक 'आवाज' का प्रकाशन भोपाल से आरंभ किया। कबीर कुरेशी और शरीफ आजमी थे। कुछ समय तक इसमें हिन्दी खंड भी रहता था, जिसका सम्पादन विट्ठलदास बजाज करते थे। आवाज के निकलने के साथ ही भोपाल में उर्दू अखबारों की जैसे बाढ़ आ गई।

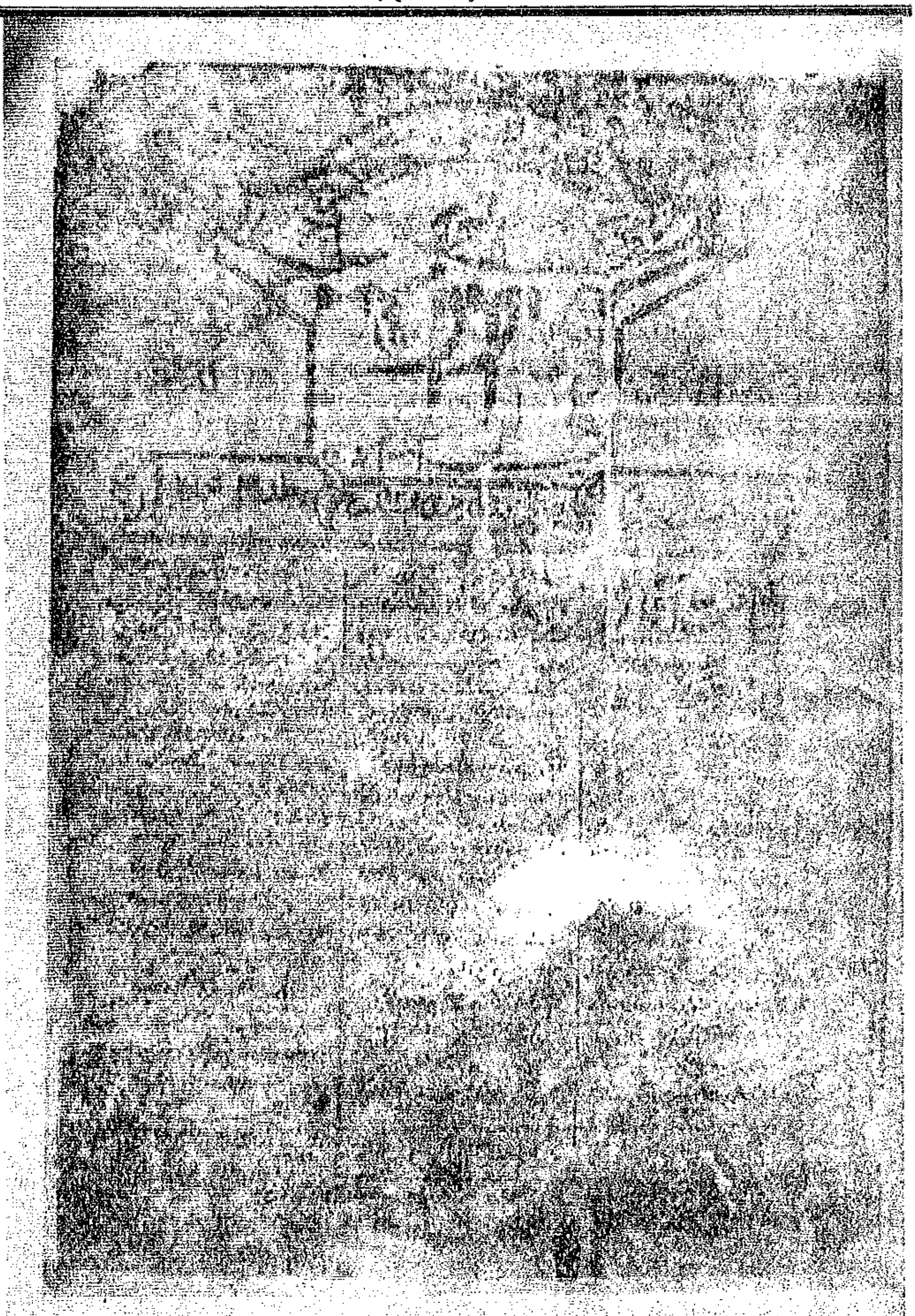

चित्र—20 "आवाज"—भोपाल में पत्रकारिता की नई लहर—1933

इकाई—3

- रेडियो का विकास

- स्वतंत्रता पूर्व

- स्वतंत्रता के पश्चात्

- सामुदायिक और, एफ.एम. रेडियो

परिचय – लोगों के हाथों में ट्रांजिस्टर आ जाने के बाद यह माध्यम स्थान, परिवेश, समय और विचार सभी दृष्टियों से सर्वव्यापी हो गया। आरंभ में रेडियो भी हर अन्य नए उपकरण की तरह देश के उभरते शहरों में संभ्रांत परिवारों के घरों की शोभा बना, जिसे ड्राइंग रूम में सजावट के साथ रखा जाता था। परिवार की समृद्धि और बौद्धिक श्रेष्ठता का वह एक प्रतीक माना जाता था। पर शीघ्र ही एक लोकप्रिय और सस्ते जनसंचार साधन के रूप में, जिसमें सूचना, शिक्षा और मनोरंजन सभी कुछ मिल सकता था, रेडियो की पैठ आम नागरिकों तक हो गई। चुने हुए ग्रामीण इलाकों में रेडियो सुनने की सामूहिक व्यवस्था शुरू की गई और जैसे–जैसे गांवों में बिजली फैलती गई और बाद में ट्रांजिस्टर आया, रेडियो की सेवा लगभग पूरे देश में फैल गई। जनसंचार के अन्य साधनों की तुलना में इसकी यह विशेषता थी की उसकी पहुंच का क्षेत्र विस्तृत था, उसमें तुरन्त–फुरंत देने की क्षमता थी और विविध कलाओं जैसे संगीत, नाट्य और साहित्य को समेटकर एक अनोखे भाव जगत में श्रोताओं को ले जाने की उसमें क्षमता थी। नाटक के लिए रंगमंच चाहिए। सिनेमा में उसकी छवि पर्दे पर उभरती, पर रेडियो के लिए किसी बाहरी मंच की जरूरत नहीं। सारी कहानी, सारे दृश्य रेडियो अपने श्रोता के दिल–दिमाग में ही रचता है।

स्वतंत्रता पूर्व :

पुराण साहित्य में 'आकाशवाणी' का कालचक्र के रूप में वर्णन किया गया है, जो सच्चाई को उजागर करता था, खतरे की सूचना देता था। समाजशास्त्रियों ने रेडियो को नए युग की शुरूआत का वैसा

ही प्रतीक बताया, जैसा कि घूमते पहिए, छपाई के प्रेस और भापचालित इंजन के आविष्कार के बारे में कहा जाता रहा है। यह भी एक संयोग था कि जिन चीजों का आरंभ यूरोप में हो रहा था, अंग्रेजी साम्राज्य का कंठहार समझे जाने वाले भारत में उन सारी चीजों की प्रतिध्वनियां बहुत शीघ्र सुनाई पड़ती थीं। रेडियो के बारे में भी कुछ ऐसा ही हुआ। इंग्लैड में मारकोनी कंपनी ने चेम्सफोर्ड में अपने केन्द्र से पहला रेडियो प्रोग्राम 23 फरवरी, 1920 को प्रसारित किया था। शीघ्र ही देश में रेडियो प्रसारण प्रायोगिक तौर पर आयोजित किया गया। देश का पहला प्रसारण मुंबई में टाइम्स ऑफ इंडिया ने पोस्ट और टेलिग्राफ डिपार्टमेंट के साथ मिलकर 20 अगस्त, 1921 को किया। यह एक संगीत सभा थी, जिसे रेडियो पर लाइव प्रसारित किया गया। बंबई के तत्कालीन गवर्नर सर जॉर्ज लायड ने उसे पुणे में बैठ कर सुना।

बंबई के अलावा कुछ और महानगरों में भद्रजनों के क्लबों ने रेडियो में रूचि दिखाई। कलकत्ता और मद्रास के क्लबों ने कुछ प्रसारण भी आयोजित किए। मद्रास प्रेसीडेन्सी क्लब के नाम से 16 मई, 1924 को रेडियो प्रसारण शुरू हो गया था। भारत सरकार ने उद्योग व्यापार जगत के प्रतिनिधियों से बात चलाई कि क्या वे रेडियो को व्यावसायिक रूप से चला सकेंगे ? इसके लिए लाइसेंस देने को सरकार राजी थी। 1926 में इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी ने भारत सरकार से अनुबंध किया और 23 जुलाई, 1927 को उस कंपनी ने बंबई केन्द्र से अपनी रेडियो प्रसारण सेवा शुरू की जिसका उद्‌घाटन तत्कालीन वायसराय लार्ड इरविन ने किया। इस अवसर पर लार्ड

इरविन ने कहा, भारत के दूर—दारज गाँवों में ऐसे बहुत से लोग होते हैं जिनके लिए दिन का काम खत्म हो जाने के बाद समय काटना पहाड़ बन जाता है। बहुत से कर्मचारी और अन्य लोग होते हैं जिन्हें अपने काम के सिलसिले में ऐसे एकान्त स्थानों में जाना पड़ता है जहाँ न तो अपने लोग होते हैं और न कोई साथी । इन सबके लिए और इनके अलावा बहुत के लिए प्रसारण एक वरदान सिद्ध होगा। मनोरंजन और शिक्षा दोनों दृष्टियों से इसकी संभावनाएँ अधिक हैं।

अगले दो—तीन वर्षो में कलकत्ता, मद्रास और लाहौर से भी उसके प्रसारण शुरू हुए पर व्यावसायिक तौर पर कंपनी का सफल होना तब मुश्किल ही था क्योंकि उनके प्रसारण यूरोपीय समुदाय और अंग्रेजी—दां भारतीयों की रूचि के होते थे। आम आदमी से उसका कोई नाता नहीं जुड़ पाता था। फलतः मार्च, 1930 में इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी दिवालिया हो गई और उसके रेडियो प्रसारण बंद हो गए। अब तक भारत सरकार की नीति यह थी कि देश में रेडियो प्रसारण सेवा का विस्तार निजी उद्योग के तौर पर ही किया जाए। सरकार सिर्फ लाइसेंस दे और सेवा के नियमन के लिए कुछ मार्गदर्शक सिद्धांत जारी करे। किन्तु जब प्रसारण बंद होने की स्थिति बनने लगी तो सभी ओर से सरकार पर दबाव पड़ा कि रेडियो सेवा बंद न हो। इस दौरान भारत सरकार, प्रांतीय सरकारों और समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के बीच जो पत्र व्यवहार हुआ, संवाद चला, समाचार पत्रों में बहसें चलीं उनके बारे में आधिकारिक दस्तावेजों के आधार पर आकाशवाणी के एक पूर्व उपमहानिदेशक हंसराज लूथरा ने बडी शोधपूर्ण छानबीन अपनी पुस्तक 'इंडियन ब्रॉडकास्टिंग' में की है।

अध्ययन से स्पष्ट है कि प्रसारण माध्यमों के बारे में जो मुद्दे उस समय उठाए गए थे, जो आशंकाएं प्रकट की गई थीं, जिन बातों के बारे में एहतियात बरतने की जरूरत महसूस की गई थी, उनमें से कई बातें ऐसी हैं जो आज भी प्रासंगिक हैं। विचार मंथन के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार थे–

- जून, 1922 में भारत के पोस्ट एंड टेलीग्राफ विभाग के डायरेक्टर जनरल ने सरकार को एक प्रस्ताव भेजा, जिसमें सुझाव दिया गया था कि भारत जैसे देश के लिए अमेरिका की तरह विज्ञापन–पोषित रेडियो सेवा के बजाय सार्वजनिक रूप से चलाई जाने वाली शिक्षा, सूचना, मनोरंजन की मिली–जुली सेवा ही ठीक रहेगी।
- इस विषय पर भारत सरकार ने एक कॉन्फ्रेंस मार्च, 1923 में आयोजित की, जिसमें समाचार जगत और रेडियो निर्माताओं के अलावा कई और गण्यमान्य व्यक्ति बुलाए गए थे। इस सम्मेलन ने सरकार द्वारा रेडियो के लाइसेस जारी करने की अनुशंसा की और लाइसेंस नीति एवं उसका मसौदा बनाया, जिसे बाद में सारे प्रांतों की सरकारों विचारार्थ और टिप्पणी के लिए भेजा गया। मसौदे की खास यह थी– (1) रेडियो पर कार्यक्रमों की प्री–सेंसरशिप को कुछ अपवादों को छोड़ पूरी तरह अव्यावहारिक बताया गया। (2) प्रांतों की सरकारों से कहा गया कि वे अपने क्षेत्र के विचारशील लोगों से सलाह–मशवरा कर रेडियो के लिए प्रस्तावित योजना पर अपनी राय शीघ्र भेजें।

भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों को भेजे गए पत्र के उत्तर में राज्यों से जो टिप्पणियां आईं उनमें कुछ तो बड़ी दूरदर्शी लगती हैं, जैसे–

- बंगाल प्रांत के मुख्य सचिव ने लिखा कि उन्हें डर है कि शहरों में 'मार्केट रेट' के प्रसारण से सट्टे के बाजार को बल मिलेगा।
- पंजाब सरकार ने कहा कि लाइसेंसिंग या इस बारे में सरकारी आदेशों के पालन पर निगरानी रखने के लिए पुलिस को उत्तरदायी बनाना ठीक नहीं होगा। ये काम कानून व्यवस्था से संबद्ध नहीं है।
- प्रसारण के क्षेत्र में भारत सरकार का उत्तरदायित्व केवल तकनीकी मामलों तक सीमित हो, बाकी सारी बातें राज्यों के ऊपर छोड़ दी जाएं।
- पूरे भारत में प्रसारण सेवा चलाने के लिए एक संस्था या कंपनी के बजाय अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग सेवा प्रदाता हों।
- रेडियो– चूंकि तुरत–फुरत सूचना देने वाला माध्यम है, इसलिए अफवाहों पर आधारित गलत खबरों, वक्तव्यों को प्रसारण में शामिल करने से अचानक जन–आक्रोश उभर सकता है, जिसे शांत करना पूरी तरह संभव नहीं होता। इस दृष्टि से उचित एहतियात रखना जरूरी होगा।
- जनप्रतिनिधियों और नेताओं के राजनीतिक भाषणों पर समाचारों में प्रतिबंध लगाना बेकार होगा, क्योंकि ये चीजें दूसरे दिन समाचार–पत्रों में जरूर छपेंगी।

- सरकारी नीतियों, आदेशों, सुविधाओं का प्रचार रेडियो सेवाएं निःशुल्क करें, क्योंकि वो जनहित में होती हैं।

राज्यों और अन्य संस्थाओं से प्राप्त इन सारी टिप्पणियों और सुझावों पर विचार कर भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने कंपनी और कुछ अन्य इंडियन ब्रॉडकास्टिंग संस्थाओं द्वारा चलाए जा रहे रेडियो कार्यक्रम के बारे में एक सर्वेक्षण कराया और जून, 1927 में राज्यों को ये नीति–निर्देश जारी किए–

- सामाजिक नीति–नियमों, मूल्यों और मर्यादाओं के विरूद्ध किसी बात के प्रसारण को अनुमति न दी जाए। जाति या धर्म को लेकर जनता के बीच वैमनस्य फैलाने वाली बातों को प्रसारण की अनुमति न दी जाए।
- सामान्य किस्म के राजनीतिक विचारों के प्रसारण पर कोई प्रतिबंध न लगाया जाए, किन्तु यह सुनिश्चित किया जाए कि किसी एक पक्ष के विचार को ही प्रश्रय न मिले। सभी तरह के विचारों को संतुलित रूप में लोगों तक पहुंचाया जाए।

जनवरी, 1930 तक इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी दिवालिया हो चुकी थी और उनके दोनों रेडियो स्टेशन, जो बंबई और कलकत्ता में थे, बंद होने के कगार पर आ गए थे। किन्तु असेम्बली के सभी राजनीतिक दलों, रेडियो सेटों के निर्माताओं और समाज की प्रभावशाली संस्थाओं, व्यक्तियों सभी ने सरकार से जोरदार मांग की कि रेडियो प्रसारण किसी सूरत में बंद नहीं हो और सरकार इनको चलाने की जिम्मेदारी खुद ले। फलतः कंपनी के साथ भारत सरकार

का मार्च, 1930 में एक करार हुआ और सरकार ने रेडियो सेवा को अपने अधिकार में ले लिया। इस रेडियो सेवा का नया नाम रखा गया इंडियन स्टेट ब्रॉडकास्टिंग सर्विस। भारत सरकार के इंडस्ट्रीज और लेबर डिपार्टमेंट को यह जिम्मेदारी सौंपी गई। बंबई और कलकत्ता के रेडियो स्टेशन चलाने का जिम्मा वहां के स्थानीय पोस्ट मास्टर जनरलों को सौंपा गया। भारत सरकार के इस निर्णय की खूब सराहना हुई, जैसा कि सरकार को मिले पत्रों और उस समय के समाचार–पत्रों में छपे विवरणों से पता चलता है।

अगले दो–तीन वर्षों में नई व्यवस्था ने धीरे–धीरे अपने पांव जमाए। 1934 से भारत में रेडियो प्रसारण के विकास का एक नया अध्याय शुरू हुआ। इस दौर में प्रसारण सेवा के विस्तार के लिए एक सुनिश्चित कार्ययोजना बनाई गई और बजट का विशेष प्रावधान भी किया गया। राजधानी दिल्ली में प्रसारण का मुख्य कार्यालय और रेडियो स्टेशन चालू करने का प्रस्ताव भी इसमें शामिल था। 'कंट्रोलर ऑफ ब्रॉडकास्टिंग' के नए पद का सृजन कर बी.बी.सी., लंदन से लियोनेल फील्डन को प्रतिनियुक्ति पर भारत लाया गया और बी.बी.सी. के सी.डब्ल्यू. गोयडर को चीफ इंजीनियर पद पर नियुक्त किया गया। रेडियो प्रसारण में जनता की रूचि लगातार बढ़ती जा रही थी। रेडियो की सेवा में विविधता और गुणवत्ता लाने के लिए अनेक प्रयास बराबर चलते रहे। बंबई रेडियो से 1933 में मराठी, गुजराती और कन्नड़ भाषाओं में ग्रामीण कार्यक्रम शुरू हुए। भिवंडी में 'कम्यूनिटी ब्रॉडकास्टिंग' के लिए एक खास रेडियो सेवा शुरू हुई। स्कूलों के लिए शैक्षणिक प्रसारणों की शुरूआत हुई, जिसका जवाहलाल नेहरू ने

उद्घटन किया। सरोजिनी नायडू ने इस अवसर पर जनसंचार माध्यम के रूप में रेडियो की खूब सराहना की।

बंबई और कलकत्ता में क्लबों ने और बाद में इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी द्वारा चलाई गई व्यावसायिक रेडियो सेवा के अतिरिक्त कई अन्य संस्थाओं ने भी रेडियो केन्द्र चलाने की कोशिश की थी। उनमें उल्लेखनीय प्रयास थे–1. वाई.एम.सी.ए., लाहौर, 2. पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत की सरकार की ओर से कम्यूनिटी रेडियो जिसके लिए मारकोनी कंपनी ने गांवों में रेडियो सेट लगाने में मदद की। 3. कृषि विद्यालय, इलाहाबाद की ग्राम रेडियो सेवा। 4. देहरादून में स्थानीय शासन और कुछ संस्थाओं का संयुक्त प्रयास। 5. मैसूर, हैदराबाद निजाम, ट्रावणकोर और बड़ौदा के राजाओं ने भी अपने राज्य की परिधि में ऐसे रेडियो स्टेशन शुरू किए। आजाद भारत में सारे राजे–रजवाड़ों के विलीन होने के बाद ये स्टेशन आकाशवाणी के नेटवर्क में जोड़ लिए गए। गोवा उन दिनों पुर्तगाली शासन के अधीन था। गोवा की पुर्तगाली शासन से मुक्ति के बाद रेडियो पणजी को भी ऑल इंडिया रेडियो के नेटवर्क में शामिल कर दिया गया। 1935 में बी.बी.सी. से जो विशेषज्ञों की टीम भारत में रेडियो के विस्तार को अंजाम देने के लिए भारत लाई गई थी, उसमें बी.बी.सी. के रिसर्च विभाग के इंजीनियर एच.एल. किर्क भी भारत आए थे। रेडियो सेवा के विस्तार के बारे में उन्होंने 1936 में अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को पेश की। इस रिपोर्ट में रेडियो स्टेशनों के तकनीकी पहलुओं के बारे में बड़े उपयोगी और दूरगामी सुझाव थे। रेडियो सेवा किन क्षेत्रों में अपने खर्च के लिए जरूरी धन–राशि जुटा सकती है और कहां, किस

प्रकार की सेवा जनहित में अधिक उपयोगी होगी, इन दोनों बातों पर इस रिपोर्ट में समुचित रूप से विचार किया गया था। 1937–38 के बीच लाहौर, दिल्ली, बंबई, लखनऊ, मद्रास और कलकत्ता में मीडियम वेव और शॉर्टवेव के नए और अधिक उन्नत ट्रांसमीटर लगाए गए।

1936 में "इंडियन स्टेट ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन' का नाम ऑल इंडिया रेडियो, रखा गया और उसका नियंत्रण भारत सरकार के संचार विभाग को सौंपा गया। अब कंट्रोलर ब्रॉडकास्टिंग के दिल्ली स्थित मुख्य कार्यालय से रेडियो कार्यक्रमों के बारे में राज्यों में स्थित रेडियो केन्द्रों को दिशा–निर्देश दिए जाने लगे और उनके केन्द्रों के बीच समन्वय के लिए नियमित रूप से बैठकें होने लगीं। 1935–39 के तीन–चार वर्षों के बीच जनहित में रेडियो सेवा के विस्तार पर भारत सरकार ने खासी दिलचस्पी दिखाई। 'लार्ड लिनलिथगो' ने इसे ऑल इंडिया रेडियो के नाम से सम्बोधित किया– 'दिस इस ऑल इण्डिया रेडियो। द न्यूज आर रेड बाई शाहिद अख्तर आजाद।"

किन्तु 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू होने के बाद तेजी से बदलते अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में सरकार का रूख बदल गया। अंग्रेजी सरकार को अब देश के सामाजिक सरोकारों के प्रति उतनी रूचि नहीं रह गई, जो ऑल इंडिया रेडियो की स्थापना के समय थी। रेडियो जैसे शक्तिशाली माध्यम का ज्यादा उपयोग अब सरकार दक्षिण एशिया में अपने सामरिक हितों को ध्यान में रख कर करना चाहती थी। युद्ध में उलझने के कारण एक अनिश्चय की स्थिति तो थी ही। रेडियो के लिए बजट पर भी उसका खासा असर पड़ा। इस उदासीनता का एक और कारण था। महात्मा गांधी के नेतृत्व में स्वतंत्रता के लिए

जन–आंदोलन तेजी से फैलता जा रहा था और सत्ता को भय लग रहा था कि समाचारों के जरिए इस आंदोलन में और तेजी न आ जाए। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान मित्र राष्ट्रों के हित में 'युद्ध प्रोपेगैंडा' को भारतीय उपमहाद्वीप और दक्षिण एशिया में दूर–दूर तक पहुंचाने के लिए बी.बी.सी., लंदन और आकाशवाणी के बीच सहयोग की नीति बनी। 1937 में ऑल इंडिया रेडियो में केन्द्रीय समाचार विभाग का गठन हुआ और 1939 में विदेश प्रसारण सेवा शुरू की गई।

उल्लेखनीय है कि 1938 में ही स्वतंत्रता आंदोलन के बीच इंडियन नेशनल कांग्रेस ने अलग–अलग क्षेत्रों के विकास की रूपरेखा बनाने के लिए एक राष्ट्रीय योजना कमीशन का गठन किया था, जिसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू थे। कमीशन की रेडियो और अन्य संचार साधनों संबंधी उपसमिति के अध्यक्ष थे सर रहिमतुल्ला शिनाय। रेडियो जैसे जनसंचार माध्यम के लोकसेवा दायित्व पर कमेटी ने खासा जोर दिया था और उसके संचालन के लिए एक अलग स्वायत्त संस्था के गठन का सुझाव भी दिया था। कमेटी की रिपोर्ट आने तक भारत स्वतंत्र हो चुका था।

स्वतंत्रता के पश्चात् :

अगस्त, 1947 में भारत के आजाद होने के बाद ऑल इंडिया रेडियो को भारत सरकार ने सूचना प्रसारण मंत्रालय की एक इकाई बना दिया। स्वतंत्र भारत के पहले सूचना प्रसारण मंत्री थी सरदार वल्लभ भाई पटेल। रजवाड़ों के भारत में विलय जैसे अनेक महत्वपूर्ण कार्यों में अपनी व्यस्तता के बावजूद सरदार पटेल ने इस मंत्रालय को

कई मसलों पर महत्व के नीतिगत मार्गदर्शन दिए। देश में रेडियो के शीघ्र विस्तार के लिए एक सुनियोजित योजना बनाने की प्रेरणा उन्हीं से मिली। अगले ही साल ऑल इंडिया रेडियो के पंजाब, असम और जम्मू कश्मीर में रेडियो स्टेशन खुले। महात्मा गांधी की दैनिक प्रार्थना सभा, जो बिड़ला हाउस रोज होती थी, को रिकॉर्ड कर उसका प्रसारण आरंभ किया गया। सरदार पटेल ने गांधीजी को भी ऑल इंडिया रेडियो पर प्रसारण के लिए मनाया। गांधीजी 12 नवंबर, 1947 को संसद मार्ग पर ब्रॉडकास्टिंग हाउस में पधारे और उन्होंने पाकिस्तान से आए शरणार्थियों को रेडियो के माध्यम से संबोधित किया। दुर्भाग्य से यह गांधीजी का पहला और अंतिम रेडियो भाषण साबित हुआ। किन्तु उन्होंने रेडियो पर प्रसारण के अपने अनुभव को शब्दों में अंकित किया–"मुझे रेडियो में संचार की शक्ति दिखाई ाी है।"1947 में कुल मिलाकर भारत के केवल ढाई प्रतिशत क्षेत्रफल में रेडियो सुना जा सकता था। देश की जनसंख्या के अनुपात में केवल 11 प्रतिशत लोग रेडियो के प्रसारण क्षेत्र में आते थे। बंटवारे से पूर्व भारत में रेडियो सेवा के विस्तार के लिए जो योजना बनी थी, अब बदले हुए हालात में उसकी प्राथमिकताएं बदल गई थीं।

आकाशवाणी की प्रसारण सेवाएं

वर्तमान में आकाशवाणी से प्रसारित हो रही रेडियो सेवाओं के कई वर्ग हैं–

1. समन्वित सेवा : – यह देश के अलग–अलग हिस्सों में वहां की भाषा में प्रमुख रूप से प्रसारित की जाती है, जैसे– दिल्ली,

लखनऊ, पटना, भोपाल, जयपुर आदि से हिन्दी भाषा। में मुंबई–पुणे, नागपुर आदि केन्द्रों से मराठी में, अहमदाबाद बड़ौदा से गुजराती में। इस सर्वन्वत सेवा में मुख्यतः उस क्षेत्र/प्रदेश की संस्कृति और विशिष्ट जीवन–पद्धति एवं समस्याओं पर कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। प्रत्येक प्रदेश में एक मुख्य केन्द्र उसकी राजधानी में है, जहां से प्रादेशिक स्तर के कार्यक्रमों और समाचारों का प्रसारण होता है। कई प्रदेशों में अलग–अलग संभागों में भी आकाशवाणी केन्द्र हैं, जैसे–मध्य प्रदेश में भोपाल केन्द्र के अलावा इंदौर, जबलपुर, रीवा आदि में। अपने–अपने क्षेत्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप कुछ कार्यक्रम वे खुद बनाते हैं और शेष राजधानी के मुख्य केन्द्र से या दिल्ली से रिले करते हैं।

2. **वैकल्पिक सेवा** :– कुछ बड़े मेट्रो शहरों में जहां प्रदेश की मुख्य भाषा के अलावा अन्य प्रदेशों से आए लोग भी बहुसंख्या में रहते हैं या जहां लोकरूचि, बौद्धिक स्तर और उद्योग–व्यापार की दृष्टि से कार्यक्रमों में विविधता होना जरूरी होता है, आकाशवाणी की एक या दो वैकल्पिक सेवाएं भी चलाई जाती हैं, जैसे–दिल्ली (ए) दिल्ली (बी) और युववाणी सेवा।

3. **स्थानीय केन्द्र** :– आकाशवाणी के कुछ केन्द्र ऐसे हैं, जो स्थानीय स्तर पर अपने क्षेत्र की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर छोटे–छोटे संकुलों के लिए अपनी अलग रेडियो सेवा प्रसारित करते हैं।

4. विविध भारती :– आकाशवाणी की अखिल भारतीय मनोरंजन सेवा, जो दिन में 15 घंटे संगीत और हलके–फुलके मनोरंजन के कार्यक्रम प्रसारित करती है। देशभर में इसके लगभग 40 केन्द्र हैं, जहां से इसके कार्यक्रमों को प्रसारित किया जाता है। यह सेवा 1957 में शुरू हुई थी।

5. **राष्ट्रीय सेवा** :– मई, 1988 में यह सेवा शुरू की गई थी, जिसे पूरे देश में सुना जा सकता है। इसके लिए नागपुर, दिल्ली और कलकत्ता में तीन अति–शक्तिशाली रेडियो ट्रांसमीटर लगाए गए हैं, ताकि के अधिकांश भू–भाग में इसको मीडियम वेव पर अच्छी तरह सुना जा सके। ये सेवा देर रात्रि के सुनने वालों का विशिष्ट रूप से यान रखती है।

ाशवाणी– ऑल इंडिया रेडियो के नाम से पुकारे जाने का सिलसिला 1956 तक चलता रहा। 21 वर्ष के लम्बे अर्से के इस शीर्षक के प्रसारण के बाद दिसम्बर, 1957 में सूचना प्रसारण मंत्रालय ने एक ज्ञापन की मदद से भी केन्द्रों से किए जाने वाले प्रसारणों की उद्घोषणाओं में आकाशवाणी शब्द के उपयोग करने का आदेश निर्गत किया जो आज भी चल रहा है।

"ये आकाशवाणी दिल्ली है अब आप

मुबशिरा सुल्ताना से समाचार सुनिए।"

आकाशवाणी शब्द का विरोध– इस 'आकाशवाणी' नामक शब्द के प्रयोग पर दक्षिण भारत में बहुत विरोध हुआ। इस विरोध को कुछ

लोगों ने उत्तर भारतीय सांस्कृति आक्रमण का नाम दिया। परन्तु वे इस बात से बिल्कुल अनभिज्ञ थे कि 'आकाशवाणी' शब्द की उद्‌भावना एक दक्षिणी राज्य मैसूर में हुई थी। मैसूर राज्य में वहाँ के महाराजा ने 1935 में 'आकाशवाणी' नामक रेडियो स्टेशन स्थापित किया था।

पहला मंत्रालय— जब सरदार वल्लभ भाई पटेल सूचना तथा प्रसारण मंत्री बने तो उस समय 'आकाशवाणी' के विस्तार की एक वृहद योजना प्रस्तुत की थी। इस योजना के परिणामस्वरूप 1950 तक रेडियो से प्रसारित कार्यक्रमों की अवधि छह लाख घंटे प्रतिवर्ष हो गई। करीब—करीब समस्त क्षेत्रीय भाषाओं में कार्यक्रम प्रसारित हुए। पंचवर्षीय योजनाओं के वृहत ट्रांसमीटर तथा रेडियो केन्द्रों का बड़ी तेज गति से विस्तार हुआ। 1954 से 1961 के मध्य इन सात वर्षों मे अखिल भारतीय संगीत, एक सामयिक साहित्य, फीचर, नाटक, वार्ता तथा अन्य गौरवपूर्ण राष्ट्रीय कार्यक्रमों का प्रसारण हुआ। जब कुछ फिल्मी संगीत निर्माताओं से अनबन होने के कारण जब भारत सरकार ने 'आकाशवाणी' से फिल्मी गीतों के कार्यक्रम का प्रसारण कम कर दिया तो श्रोतावर्ग सीलोन रेडियो की तरफ आकर्षित हुआ। श्रोताओं को अपनी तरफ झुकाने के लिए रेडियो ने 3 अक्टूबर 1957 को अखिल भारतीय कार्यक्रम शुरू किया जिसका नाम विविध भारती रखा गया। मीडिया तथा शॉर्ट दोनों वेबो पर हल्के—फुल्के मनोरंजन कार्यक्रमों तथा लोकप्रिय संगीत द्वारा श्रोताओं को रिझाना ही विविध भारती का लक्ष्य था। सांस्कृतिक बहुरंगी कार्यक्रम, नाटक तथा लोकगीत द्वारा राष्ट्रीय चेतना को उद्‌बुद्ध करने की दिशा में इस विशाल योजना की अहम भूमिका थी।

विस्तृत प्रसारण तथा त्वरित सम्प्रेषण की चमत्कारिक सुविधाओं से पूर्ण रेडियो को लार्ड लिनलिथगो के निर्देशन करने पर ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन लन्दन के गोयडर तथा लियोनेल फील्डेन ने इस प्रचार माध्यम को अंग्रेजों का भोंपू बना दिया। 1940 में ए.एस. बुखारी डायरेक्टर जनरल हुए। अपनी प्रवृत्ति के अनुरूप उन्होंने ऑल इंडिया रेडियो को खुशामन्दी संस्कार से परिपूर्ण बना दिया। 1952 में डॉ. बालकृष्ण विश्वनाथ केसकर सूचना प्रसारण मंत्री बनाए गए । डॉ. विश्वनाथ केसकर ने इस जनमाध्यम को राष्ट्रीय धारा से सम्पृक्त किया। डॉ. जगदीश चन्द्र माथुर जैसे साहित्यसेवी ने राष्ट्रभाषा के द्वारा 'आकाशवाणी' को गौरवान्वित किया।

1957 में, 3 अक्टूबर को 'विविध भारती' तथा मई, 1966 को उर्दू सर्विस के शुरू हो जाने पर 'आकाशवाणी' को लोकप्रियता के उच्च्व शिखर पर प्रतिष्ठित किया गया। साहित्य, संस्कृति एवं कला को कदम–कदम पर जन–जन तक पहुँचाने में रेडियो ने अभूतपूर्व भूमिका अदा की। पं. नरेन्द्र शर्मा, मजाज, अश्क, अज्ञेय, भगवतीचरण शर्मा, इलाचन्द्र जोशी, फिराक गोरखपुरी, सुमित्रा नन्दन पंत, जैसे साहित्यकारों एवं मिश्र बन्धु, गिरिजादेवी, पं. रविशंकर, बिसमिल्ला खाँ, बड़े गुलाम अली खाँ जैसे संगीतज्ञ ने 'आकाशवाणी' को गौरवान्वित किया। 1950 से 1960 के मध्य इस 10 साल के अंतराल में भारतय फिल्म संगीत पाश्चात्य संगीत से प्रभावित हुआ। 'आकाशवाणी' की कुछ ऐसी नीतियाँ थीं जिन नीतियों के अनुरूप संगीतकारों ने संगीत का मोह छोड़ दिया। भारतीय संगीत आधारित स्वर–रचना शुरू कर दी। 1982 में उपग्रह के माध्यम से दूरदर्शन प्रसारण के राष्ट्रीय

विस्तार के कारण 'आकाशवाणी' को एक झटका सा लगा। अधिकारियों की परस्पर खींचतान, व्यावसायिक प्रोत्साहन की कमी, कला के ऊपर अफसरशाही के बोलबाला के कारण 'आकाशवाणी' का अपेक्षित उत्कर्ष नहीं हो पा रहा है। फरमाइशी कार्यक्रम, चित्रपट संगीत जैसे जनता के वर्तमान सामाजिक परिवेश, घिसे पिटे प्रसारण से परे एवं मानसिक जागरूकता के अनुरूप, 'आकाशवाणी' के कार्यक्रम को किसी भी प्रकार से कुछ भी कर के यदि उपयोगी बना दिया जाए तो सुनिश्चित ही अन्य जनसंचार माध्यमों में इसकी विशिष्ट भूमिका सिद्ध हो जाएगी।

6. एफ.एम. सेवाएं— 'आकाशवाणी' ने एम.एफ. बैंड पर भी देश में कई रेडियो सेवाएं शुरू कीं जो निम्नांकित हैं—

एफ.एम. रेनबो : इस सेवा में 13 स्टीरियो चैनल हैं, जो दिल्ली, बंबई (मुंबई), कलकत्ता, चेन्नई, बंगलौर, हैदराबाद, पणजी, लखनऊ, कटक, जालंधर, तिरूचिरापल्ली, कोडाईकनाल और कोयम्बटूर स्थित ट्रांसमीटरों से अपने कार्यक्रम कर रहे हैं।

एफ.एम. गोल्ड : यह सेवा दिन में 15 घंटे कार्यक्रम प्रसारित करती है। इसमें मनोरंजन के अलावा समाचार भी प्रसारित किए जाते हैं। इसके ट्रांसमीटर दिल्ली, मुंबई, कलकत्ता और चेनई में स्थित हैं।

7. युवावाणी दिल्ली—डी— इस सेवा का उद्देश्य था युवकों की खास रूचि के कार्यक्रम प्रसारित करना और उन्हें कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए अधिक अवसर देना।

8. **अमृत वर्षिणी–** यह सेवा खासतौर पर शास्त्रीय संगीत के श्रोताओं के लिए है। इसे बैंगलोर स्थित अति–शक्तिशाली ट्रांसमीटर से प्रसारित किया जाता है।

9. **समाचार सेवा**–आकाशवाणी से हर दिन 82 भाषाओं और कुछ खास बोलियों में 509 समाचार बुलेटिन प्रसारित किये जाते हैं जिनकी कुल दैनिक अवधि है–52 घंटे। इनमें सुबह, शाम, दोपहर और रात के प्रमुख राष्ट्रीय समाचार बुलेटिन के अलावा प्रादेशिक भाषाओं के बुलेटिन भी हैं। विदेशी प्रसारण सेवा के लिए विदेशी भाषाओं में भी 15 समाचार बुलेटिन प्रसारित किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, हर घंटे का लघु समाचार बुलेटिन आकाशवाणी के एफ.एम. गोल्ड चैनल पर प्रसारित किया जाता है। आकाशवाणी का समाचार विभाग, जिसका मुख्यालय दिल्ली में है और प्रादेशिक स्तर पर देश भर में उसकी 44 क्षेत्रीय इकाइयां है। समाचार बुलेटिनों के अतिरिक्त आकाशवाणी से सामयिक विषयों पर जानकारी के अन्य कार्यक्रम भी प्रसारित किए जाते हैं। कुछ चुने हुए शहरों में आकाशवाणी के स्पाट समाचार मोबाईल फोन पर और इंटरनेट पर भी उपलब्ध है।

10. **विदेश प्रसारण सेवा–**

चूंकि भारत किसी समय ब्रिटिश राज का मुकुट–मणि था इसलिए पूरे दक्षिण पूर्व एशिया में ब्रिटिश शासन के और खासकर

दूसरे महायुद्ध में मित्र राष्ट्रों के सामरिक हितों के प्रचार के लिए ऑल इंडिया रेडियो का उपयोग महत्व का माना जाता था। ऑल इंडिया रेडियो से प्रसारित समाचार बुलेटिन खाड़ी देश, अफ्रीका और पूर्वी देशों में सुने जाते थे। आकाशवाणी ने इसके लिए शक्तिशाली शॉर्टवेव ट्रांसमीटर लगाए थे। भारत के पड़ोसी पश्चिमी क्षेत्र के लिए 'पश्तो भाषा' में पहला विदेशी सेवा कार्यक्रम 1939 में शुरू किया गया। भारत के आजाद होने के बाद आकाशवाणी की विदेश सेवा का काफी विस्तार किया गया। वर्तमान में आकाशवाणी की विदेशी प्रसारण सेवा 27 विदेशी भाषाओं में उच्च शक्ति के शॉर्टवेव और कुछ मीडियम वेव ट्रांसमीटरों से प्रसारित की जाती है। 2006 में इस सेवा के लिए डिजिटल प्रणाली का भी प्रयोग शुरू किया गया। इंटरनेट के माध्यम से अमरीकी महाद्वीप में इसे उपलब्ध कराने की योजना पर कार्य चल रहा है।

11. **दूरदर्शन की डी.टी.एच. चैनल**– 'डी.डी. डिरेक्ट प्लस' पर आकाशवाणी के 12 चैनल सुने जा सकते हैं। ये हैं– विविध भारती, दोनों एफ.एफ. चैनल और कई अन्य भाषाओं की सेवाएं। इस प्रकार अब पूरे देश में कहीं भी विभिन्न भाषायी रेडियो सेवाएं सुनी जा सकती हैं, जो पहले उनके अपने क्षेत्रों तक ही सीमित थीं।

12. रेडियो प्रसारण : भविष्य की संभावनाएं–

रेडियो के क्षेत्र में विकास की दृष्टि से आज तीन नई तकनीकी सामने आ रही हैं। 1. एच.डी. रेडियो, 2. डी.आर.एम. और 3. डी.ए.बी. एच.डी. रेडियो वर्तमान में प्रचलित एनालॉग प्रणाली की एफ.एम.

सेवाओं का डिजिटल रूप है। डी.आर.एम. (डिजिटल रेडियो माडिएल) वर्तमान मीडियम वेव और शॉर्टवेव का डिजिटाइज्ड रूप है, जिसमें उत्तम किस्म की गुणवत्ता के अतिरिक्त वातावरण के प्रभावों से भी कोई कमी या हानि नहीं होगी। डी.आर.एम. रेडियो सेट आज जरूर महंगे हैं पर जैसे–जैसे इनकी मांग बढ़ेगी, उत्पादन बढ़ेगा, कीमत काफी घट जाएगी। आकाशवाणी ने इस क्षेत्र में 16 सितम्बर 2009 को पहला कदम रखा, जब 9,950 किलोहर्ट्ज पर चल रही उसकी विदेशी प्रसारण सेवा को डी.आर.एम. में परिवर्तित किया गया। ये सेवा इंग्लैड और पश्चिम यूरोप में सुनी जा सकती है, जहां डी.आर.एम. के रेडियो सेट कई घरों में उपलब्ध हैं। डिजिटल ब्रॉड गास्टिंग (डी.ए.वी.) एनालॉग प्रणाली से अलग है, जिसकी गुणवत्ता एनालॉग से कई गुणा बेहतर है।

अन्य कार्य – 'प्रसारण सेवाओं' के अतिरिक्त एक राष्ट्रीय संस्था के नाते आकाशवाणी की कई और महत्त्व की जिम्मेदारियां रही हैं। इनमें प्रमुख हैं– राष्ट्रीय धरोहर के रूप में महत्वपूर्ण व्यक्तियों के भाषण, साक्षात्कार, गायन–वादन एवं ऐतिहासिक अवसरों का ध्वनि संकलन आदि की रिकॉर्डिंग को सुरक्षित रखना। आकाशवाणी के संग्रहालय में लगभग 15 हजार घंटों से अधिक की सामग्री सुरक्षित रूप से संजोकर रखी हुई है। इन्हें अब पुरानी एनालॉग प्रणाली से डिजिटल प्रणाली में ट्रांसफर कर भविष्य के लिए सुरक्षित रखने का काम चल रहा है। जब भारत सरकार ने शैक्षणिक/सामाजिक संस्थाओं और निजी क्षेत्र को भी प्रसारण केन्द्र लगाने की अनुमति देना शुरू किया तो आकाशवाणी से उन सभी की यह अपेक्षा थी कि वे राष्ट्रीय संस्था के रूप में उन्हें

तकनीकी मार्गदर्शन और मदद उपलब्ध कराए। आकाशवाणी ने इस उद्देश्य से बी.ई.एस.आई.एल. नाम से एक सुविधा केन्द शुरू किया, जो 2001 से ऐसी सेवाएं दे रहा है। इंदिरा गांधी मुक्त शिक्षा विश्वविद्यालय ने जिन 'ज्ञानवाणी' केन्द्रों को शैक्षणिक प्रसारण के लिए देश में शुरू किया है, उनके ट्रांसमीटरों और स्टूडियो आदि के इन्स्टालेशन आदि में बी.ई.एस.आई.एल. का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसी प्रकार अन्य सामाजिक संस्थाओं ने भी 'बेसिल' से मदद ली है।

आकाशवाणी की ऐतिहासिक उपलब्धियां : भारत जैसे देश में जहां हजारों वर्षों के इतिहास और संस्कृति में भारी बहुलता हो, अनेक भाषाएं हों और रीति–रिवाज तथा जीवन शैली में क्षेत्रीय विविधताएं हों, उन सबको ध्यान में रखते हुए रेडियो के लिए सार्थक सेवा का नियोजन करना एक चुनौती भरा काम था। इसके लिए न सिर्फ अलग–अलग क्षेत्रों में रेडियो कार्यक्रमों को बनाने के लिए सुविधाओं का निर्माण करना जरूरी था, बल्कि उन्हें बनाने के लिए लेखकों, कलाकारों और निर्देशकों का चयन कर उन्हें एक नए माध्यम के लिए तैयार करने की बड़ी जिम्मेदारी थी।

मुख्य रूप से किसी लोकसेवी रेडियो सेवा के तीन उद्देश्य होते हैं– जरूरी सूचनाएं देना, लोकशिक्षण और मनोरंजन। आकाशवाणी का ध्येय वाक्य है–'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय'। स्वतंत्र भारत की राष्ट्रीय आकांक्षाओं के अनुरूप आकाशवाणी ने अपनी जो कार्यक्रम नीति बनाई, उसके केन्द्र बिन्दु थे–

- समाज में शिक्षा, जागृति और संकल्प की भावना को जगाना।

- विकास कार्यों के लिए लोगों को उत्साहित कर उन्हें उसमें सहभागी बनाने के लिए प्रेरित करना।
- देश की सांस्कृतिक विविधता को एक सूत्र में पिरोकर राष्ट्रीय एकता का ताना–बाना बुनना।
- अपनी उदात्त और विविधता भरी सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण के साथ विविध कलाओं में नवीनता को बढ़ावा देना।
- उभरते कलाकारों को प्रकाश में लाना।
- लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करना ।
- एक अखिल भारतीय सेवा के रूप में राष्ट्रीय चिंतन में सामंजस्य, समन्वय और समरसता पैदा करना।

आकाशवाणी ने इस दिशा में जो निरंतर प्रयास किए, उनमें से निम्नांकित विशेष उल्लेखनीय हैं।

1. भारत की गौरवशाली शास्त्रीय संगीत की परंपरा राज्याश्रय और लोकाश्रय दोनों के अभाव में उन्नीसवीं सदी में ही बिखरती जा रही थी आकाशवाणी ने इसे पुनर्जीवन दिया। नए–पुराने कलाकारों को आकाशवाणी ने अखिल भारतीय पहचान दी और रेडियो पर नियमित कार्यक्रमों के जरिए आर्थिक सहायता भी दी। उच्च कलात्मक मानदंड को स्थापित करने के लिए आकाशवाणी ने 'अभिश्रवण परीक्षा' (ऑडीशन सिस्टम) का आयोजन कर देश में संगीत की सभी शैलियों में कलाकारों की संबंधित क्षेत्रों के गुणीजनों द्वारा परख करावाई और उनकी प्रतिभा को निखारा। उत्तर–दक्षिण की संगीत पद्धतियों, लोक–संगीत और आधुनिक संगीत की सभी विधाओं

को आकाशवाणी पर प्रचार–प्रसार के लिए भरपूर मौका मिला। वाद्य–वृंद जैसी नई शैली को भारतीय संगीत में प्रतिष्ठित करने का काम आकाशवाणी ने ही किया। टी.के. जयराम अय्यर, पंडित रविशंकर, पन्नालाल घोष जैसे संगीतकार इस योजना के साथ वर्षों तक जुड़े रहे। इससे कई वर्ष पूर्व जॉन फोल्डस, जो आकाशवाणी में पश्चिमी संगीत विभाग के निदेशक थे, और वाल्टर काउफमैन, जो बंबई में इसी पद पर काम कर रहे थे, इन लोगों ने मिलकर भारतीय संगीत में हारमनी के प्रयोग शुरू किए। सालों–साल आकाशवाणी पर बज रही वायलिन पर बजाई गई प्रभावी 'सिगनेचर ट्यून' काउफमैन ने ही बनाई थी।

2. संगीत का अखिल भारतीय कार्यक्रम 1952 में हर शनिवार सभी केन्द्रों से प्रसारित किया जाने लगा और 1953 से वार्षिक संगीत सम्मेलन का आयोजन शुरू हुआ। इन दोनों आयोजनों से प्रतिभाशाली संगीतकारों को प्रसिद्धि और सम्मान अखिल भारतीय स्तर पर मिलने लगा।

3.. अखि़ल भारतीय स्तर पर 'विचार मंच' के रूप में वार्ता, संवाद और परिचर्चा के राष्ट्रीय कार्यक्रम 1952 में आकाशवाणी से नियमित रूप से प्रसारित होने लगे। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, सरदार वल्लभ भाई पटेल और कुछ अन्य राष्ट्रीय महापुरूषों की स्मृति में आयोजित वार्षिक व्याख्यानमालाएं जनचेतना का मंच बनीं।

4. लोकप्रिय संगीत और हलके–फुलके मनोरंजन के लिए 1957 में आकाशवाणी से विविध भारती चैनल का प्रसारण शुरू हुआ।

5. नाट्य के क्षेत्र में रंगमंच और फिल्मों का बोलबाला रहने के बावजूद भारतीय भाषाओं में रेडियो नाट्य की अनोखी विधा को आकाशवाणी ने ही विकसित किया। रेडियो नाटकों के अखिल भारतीय कार्यक्रम ने कई दशकों तक अपने श्रोताओं को घर बैठे नाटक का आनंद दिलवाया और लोकप्रियता भी अर्जित की।

6. लोक–शिक्षण के क्षेत्र में आकाशवाणी का योगदान ऐतिहासिक माना जा सकता है। पचास, साठ और सत्तर के दशकों में आकाशवाणी केन्द्रों ने प्रौढ़ शिक्षा और कामकाजी शिक्षा के प्रसार के लिए अनेक सफल आयोजन किए, जिनमें खेती बाड़ी, पशुपालन, सहकारिता, ग्राम–शिल्प एवं हस्तकालाओं में नई तकनीक के प्रयोग, उद्योगिकता और आर्थिक प्रबंधन जैसी बातों पर बड़े रोचक ढ़ंग से बताया जाता था। चौपाल, ग्राम–संसार जैसे रेडियो कार्यक्रमों में उत्तर भारत में रमई काका, लोहा सिंह, नंदाजी–मैराजी जैसी 'रेडियो शख्सियतों' को सुनने के लिए न केवल ग्रामवासी लालायित रहते थे, बल्कि शहरों में आकर बसे ग्रामीण परिवारों में भी ग्राम संसार कार्यक्रम उतनी ही तन्मयता से सुना जाता था।

7. नैसर्गिक आपदाओं, युद्ध और सामाजिक संकटों के समय आकाशवाणी ने सराहनीय सेवाएं प्रदान की हैं। जरूरी सूचनाएं देने के अलावा राष्ट्र को दृढ़–निश्चय बनाने और धैर्य से संकट का सामना जैसी भावनाओं को आकाशवाणी ने हमेशा ही अपने कार्यक्रमों के द्वारा फैलाया है।

8. आकाशवाणी के पास कार्यक्रमों का एक विशाल और दुर्लभ रिकॉर्डिंग संग्रहालय है। इसमें स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी नेताओं, विविध क्षेत्रों के प्रसिद्ध व्यक्तियों के भाषणों, भेंट–वार्ताओं, परिचर्चा एवं संगीत की रिकॉर्डिंग सुरक्षित रखी हुई है।

9. राष्ट्रीय प्रसारण संस्थान होने के नाते आकाशवाणी ने लंबे समय तक विज्ञापनों के प्रसारणों से अपने को बचाए रखा। 1967 के बाद विविध भारती के मनोरंजन चैनल पर आकाशवाणी ने विज्ञापनों को स्थान देना शुरू किया। उसके कई वर्षों बाद आकाशवाणी के सभी केन्द्रों से विज्ञापन प्रसारित किए जाने लगे।

10. आकाशवाणी ने मुक्त शिक्षा के क्षेत्र में भी आरंभ से ही भरसक योगदान दिया। स्कूली छात्रों एवं विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए रेडियो से शैक्षणिक पाठों का प्रसारण साठ के दशक से ही प्रारंभ हो गए थे। प्राइमरी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए जो रेडियो पाठ प्रसारित किए जाते थे, उनमें किशोरों की साधारण जिज्ञासा को बढ़ाने और रोचक ढंग से उनका समाधान करने का प्रयास किया जाता था।

11. भारत की कृषि क्रांति में आकाशवाणी का सहयोग ऐतिहासिक महत्व का माना जाता है। आरंभ के वर्षों से ही आकाशवाणी ने खेती–किसानी के विकास के लिए काफी सहयोग दिया है। खेती के नए तरीकों, उन्नत किस्म के बीज, फसल–चक्र, मिट्टी परीक्षण, खाद के प्रयोग, कीटनाशकों के प्रयोग और खेती के यंत्रों के रख–रखाव आदि पर आकाशवाणी के केन्द्रों ने अपने राज्य

की आवश्यकताओं के अनुरूप जानकारी के कार्यक्रमों का नियमित रूप से प्रसारण किया है। रेडियो रूरल फोरम, देहाती रेडियो गोष्ठी जैसे नियमित कार्यक्रमों में किसानों को कृषि आदि से संबंधित समस्याओं और अचानक आने वाले संकटों के बारे में तत्काल महत्व की जानकारी दी जाती रही है।

12. प्रसारण टेक्नोलॉजी और इंजीनियरिंग क्षेत्रों में विकासशील और खासकर दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों के रेडियो–टेलीविजन संस्थानों को आकाशवाणी के इंजीनियरिंग विभाग का मार्गदर्शन काफी सराहा जाता रहा है।

आकाशवाणी से गिले–शिकवे

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम मात्र एक राजनीतिक संग्राम नहीं था, जिसका उद्देश्य केवल अंग्रेजी शासन से देश को मुक्त करवाना था। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान देश में एक वैचारिक क्रांति भी हुई, जिससे एक समग्र आधुनिक भारतीय दृष्टिकोण और उसके अंतर्गत राष्ट्रीय एवं सामाजिक लक्ष्य उभरकर सामने आए। स्वाभाविक था कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आकाशवाणी जैसे राष्ट्रीय संस्थान से ये अपेक्षा की जाती कि उन मूल्यों को प्रसारण सेवा के जरिए जनमानस में प्रचारित किया जाए। किन्तु बीतते समय के साथ आकाशवाणी जैसे जनसंचार माध्यम पर यह दबाव भी बनाया गया कि वह लोकरंजन की बढ़ती मांग को पूरा करे। प्रसारण माध्यम केवल लोक–शिक्षण के लिए नहीं होते। उन्हें दिन–रात और सुख–दुख सभी अवस्थाओं का साथी बनना पड़ता है। यह कार्य तब और भी कठिन होता जाता है, जब

भारत जैसे बहुलतावादी समाज में धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक कई स्तर हों। राष्ट्रीय प्रसारण सेवा के रूप में आकाशवाणी समाज के सभी वर्गों के प्रति समान रूप से जिम्मेदार थी। इसी कारण आकाशवाणी की प्रसारण नीति और उसके कार्यक्रमों के स्वरूप पर अलग–अलग समुदायों और हित–संबंधों की ओर से दबाव बनते रहे और उनके समाधान के लिए कई बार फौरी तौर पर आकाशवाणी को समझौते भी करने पड़े। कुछ उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो सकती है–

- ग्राम संचार जैसे खेती–बाड़ी और ग्राम रूचि के कार्यक्रमों के बारे में शहरी लोगों की शिकायत हमेशा बनी रहती थी। ट्रांजिस्टर के आने तक गांवों में बिजली नहीं थी और रेडियो सुनने वाले गांवों में गिने–चुने होते थे और उनकी कोई लॉबी नहीं थी।
- हिन्दी–हिन्दुस्तानी–उर्दू जैसे भाषाई सवालों पर समाज में राजनीतिक किस्म का वर्ग–भेद उभारा जाता रहा और आकाशवाणी की भाषा नीति पर बराबर आक्षेप किए जाते रहे। प्रसारणों में राष्ट्रभाषा हिन्दी के सवाल पर दक्षिण में राजनीतिक आंदोलन चलाया गया।
- संगीत की शास्त्रीय परंपरा को सुरक्षित रखने, उसे संवारने के लिए स्वतंत्रता के बाद नव–जागरण काल में आकाशवाणी से बेहतर कोई संस्था नहीं हो सकती थी। आकाशवाणी ने इस कार्य में ऐतिहासिक भूमिका निभाई। किन्तु शास्त्रीय संगीत कार्यक्रमों के विरूद्ध लोकप्रिय संगीत की लॉबी बराबर यही

कहती रही कि शास्त्रीय संगीत तो बीते काल का है, इसे आकाशवाणी से इतना प्रश्रय क्यों दिया जा रहा है ?

- कमोबेश यही स्थिति लोक–संगीत की लुप्त होती परंपरा के बारे में थी, जिसे आधुनिक चकाचौंध भरे संगीत के सामने 'गंवारों का संगीत' कह कर उसके प्रसारण का अक्सर उपहास किया जाता था। फिल्मों के संगीतकारों ने लोक–संगीत से बहुत कुछ लिया है।
- लोक–शिक्षण के मामले में आकाशवाणी पर तरह–तरह के दबाव आते रहे हैं। आम जनता को विविध विषयों में शिक्षित करना, सामाजिक, नैतिक शिक्षा के पाठ पढ़ाना, राष्ट्रीय भावना की सीख देना, जनहित की सरकारी योजनाओं की जानकारी देना और सरकार की उपलब्धियों के बारे में लोगों को सूचना देना जैसी बातों पर कई बार आकाशवाणी को अलग–अलग तबकों से नसीहतें दी जाती रही हैं और कहा जाता था कि ये कार्यक्रम बोरियत से अधिक कुछ नहीं।
- राजनीतिक दल भी कई बार अपने दलगत हितों के प्रचार के लिए आकाशवाणी से अपेक्षा रखते रहे। अक्सर यही होता है कि विरोधी पक्ष राष्ट्रीय प्रसारण संस्था को निशाना बनाकर शासन

पर गोला दागता। राष्ट्रीय प्रसारक की स्वायत्तता के सवाल पर कभी गंभीरता से विचार नहीं किया गया। उसे हमेशा सुविधापूर्वक झुनझुने की तरह बजाया जाता रहा है। इसलिए जब स्वायत्तता आई तो बिना समुचित और पूरी तैयारी के।

समाचार बुलेटिन के प्रकार— समाचार बुलेटिन को समझाने के लिए निम्न चार्ट को प्रस्तुत करना आवश्यक है।

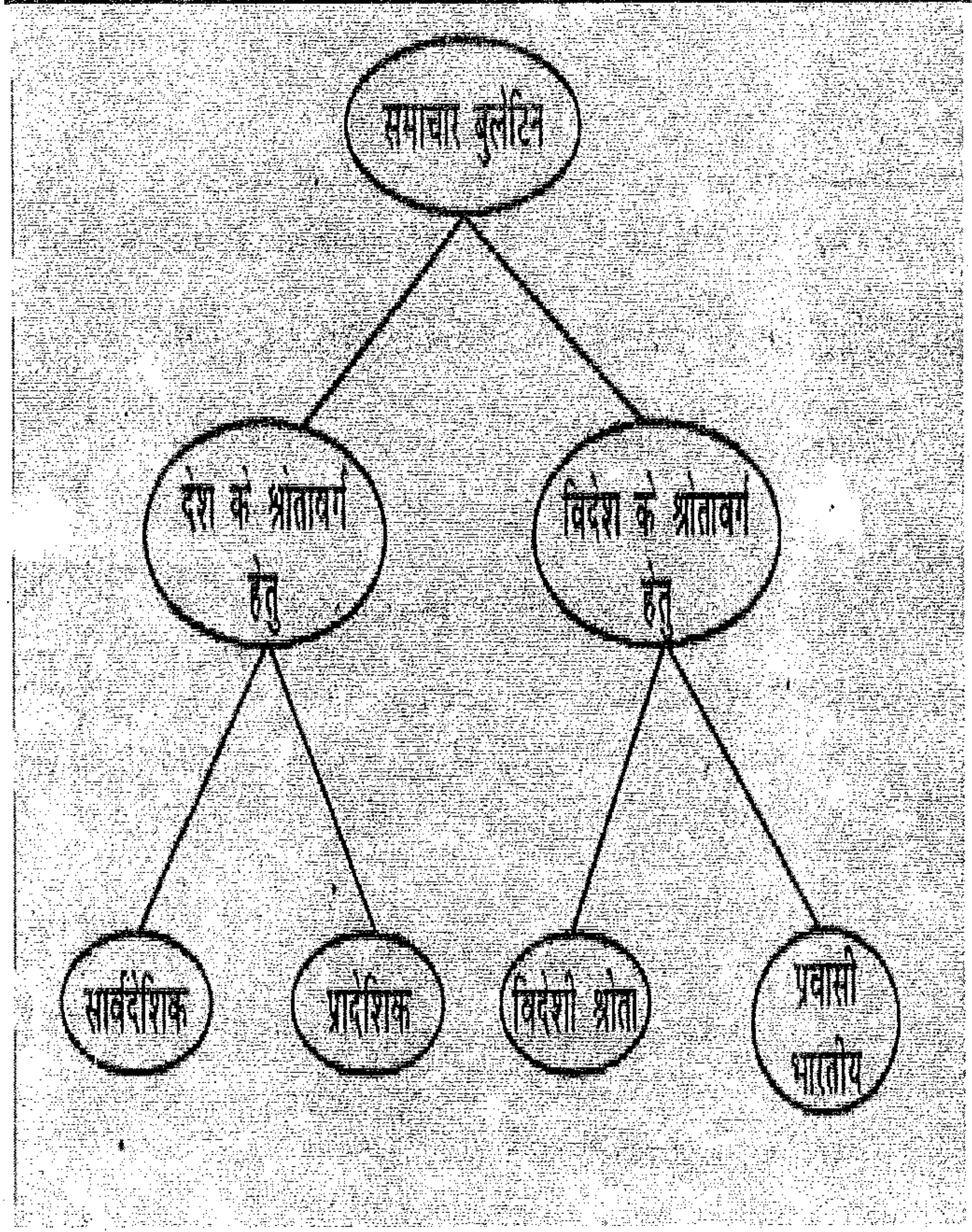

जैसा कि चार्ट ये स्पष्ट है कि समाचार बुलेटिन दो प्रकार का होता है– (1) देश के श्रोता वर्ग के लिए, (2) विदेश के श्रोतावर्ग के लिए।

देश के श्रोता वर्ग के लिए– देश के श्रोता वर्ग में विविध प्रकार के मस्तिष्क पाए जाते हैं– (1) सार्वदेशिक (2) प्रादेशिक।

सार्वदेशिक बुलेटिन में संपूर्ण देश की भाषा का ध्यान रखते हुए समाचार बुलेटिन तैयार किया जाता है तथा क्षेत्र के अनुसार समाचार बुलेटिन को प्रादेशिक स्तर पर भी बनाया जाता है अर्थात क्षेत्रीय भाषा में बनाया जाता है।

विदेश के श्रोता वर्ग के लिए– समाचार बुलेटिन विदेशी श्रोता वर्ग के लिए भी तैयार किया जाता है। इसलिए कि कुछ भारतीय विदेशों में भी रहते हैं, वहाँ वे काम करने के लिए गए हैं। क्या कुछ श्रोता विदेशी भी होते हैं। अतः विदेशी भाषा में भी समाचार बुलेटिन तैयार होते हैं। भारत में कुछ आकाशवाणी केन्द्र भी है।

सामयिक समीक्षाएँ : जन–संचार के इलेक्ट्रॉनिक माध्यम में रेडियो माध्यम में विशेष कर आकाशवाणी का महत्वपूर्ण स्थान है। सम्प्रति लगभग 128 मीडियम वेव, 36 शार्ट वेव तथा तीन एम.एफ. ट्रांसमीटर कार्यरत हैं जिनमें लगभग 97 प्रतिशत भारतीय नागरिक लाभान्वित हो रहे हैं। आकाशवाणी संपूर्ण विकास की प्रक्रिया को निम्नवत् प्रसारण द्वारा बढ़ाने तथा राष्ट्रीय एकता को स्थापित करने एवं जन–जन में आशा, उत्साह को संचालित करने में सबसे आगे है–

1.	ग्रामीण कार्यक्रम	8.	न्यूजरील
2.	विविध भारती	9.	खेल

3.	व्यापारिक सेवा	10.	राज्यों की चिट्ठियाँ
4.	युवा–जगत संगीत	11.	जनपदों की चिट्ठियाँ
5.	वार्ता	12.	बालकों की चिट्ठियाँ
6.	नाटक	13.	फौजियों की चिट्ठियाँ
7.	रूपक	14.	प्रेमियों की चिट्ठियाँ
9.	न्यूजरील		

अधिकारी नौसूत्रीय कार्यक्रम पर ध्यान देते हैं जो निम्न हैं–

1. ऐसा कुछ भी जो संविधान के प्रति अमर्यादा व्यक्त करता हो।
2. किसी राज्य या केन्द्र की आक्रामक आलोचना करना।
3. किसी राजनैतिक दल का नाम लेकर आक्षेप।
4. ऐसा कार्य जो राष्ट्रपति, सरकार, न्यायालय की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल हो।
5. ऐसा कुछ जो हिंसा को प्रोत्साहन वाले कानून व्यवस्था के विरूद्ध हो।

6. अश्लील तथा मानहानि।

7. मित्र देश की आलोचना।

8. धर्म तथा सम्प्रदाय पर आक्षेप

9. ऐसा कुछ जिसका परिणाम न्यायालय की प्रतिष्ठा हो।

आकाशवाणी के कार्यक्रमों से लाभ–

1. आकाशवाणी अर्थात् रेडियो माध्यम से प्रसारित कार्यक्रमों को दूर–दूर तक बैठे लोग सुन सकते हैं।

2. आकाशवाणी से प्रचार कार्य में सुविधा होती है।

3. कम लागत में अधिक से अधिक लोग नवीन जानकारियाँ प्राप्त कर लेते है।

4. अनुभवी विशेषज्ञ तथा ख्यातिलब्ध मनीषियों की बातें सबके बीच हो जाती है।

5. पारस्परिक आदान–प्रदान बढ़ता है।

6. नागरिकों के मानस को उन्नत भी इसके माध्यम से बनाया जा सकता है।

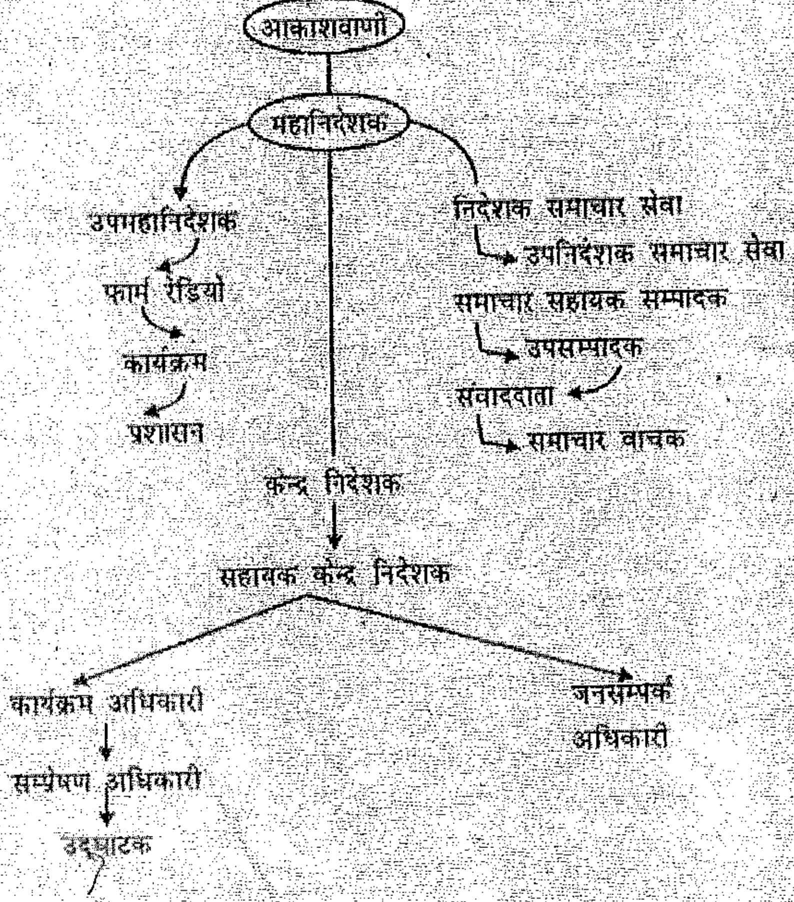
आकाशवाणी
महानिदेशक
उपमहानिदेशक
फार्म रेडियो
कार्यक्रम
प्रशासन
निदेशक समाचार सेवा
उपनिदेशक समाचार सेवा
समाचार सहायक सम्पादक
उपसम्पादक
संवाददाता
समाचार वाचक
केन्द्र निदेशक
सहायक केन्द्र निदेशक
कार्यक्रम अधिकारी
सम्प्रेषण अधिकारी
उद्घाटक
जनसम्पर्क
अधिकारी

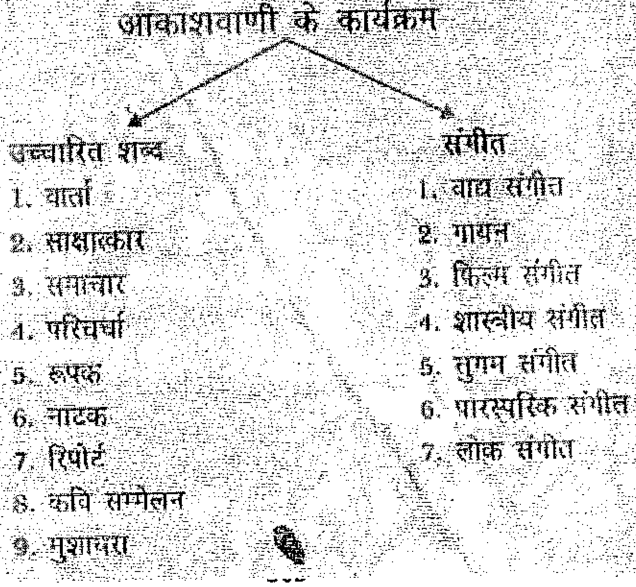
आकाशवाणी के कार्यक्रम
उच्चारित शब्द
1. वार्ता
2. साक्षात्कार
3. समाचार
4. परिचर्चा
5. रूपक
6. नाटक
7. रिपोर्ट
8. कवि सम्मेलन
9. मुशायरा
संगीत
1. वाद्य संगीत
2. गायन
3. फिल्म संगीत
4. शास्त्रीय संगीत
5. सुगम संगीत
6. पारस्परिक संगीत
7. लोक संगीत

सामुदायिक रेडियो :

साठ के दशक के आरंभ में यूनेस्को ने सुझाव दिया कि तथाकथित तीसरी दुनिया के देशों में विकास की प्रक्रिया को तेज करने के लिए "सामुदायिक रेडियो" का जनसंचार साधन के रूप में प्रयोग किया जाए। उस वक्त दो प्रकार की रेडियो सेवाएं चल रही थीं। एक जनसेवा के रूप में शासन द्वारा संचालित और दूसरी व्यापारिक तौर पर चलने वाली रेडिये सेवाएं। "सामुदायिक रेडियो" उन दिनों से बिल्कुल अलग शैली की सेवा थी। जनसंचार माध्यम के रूप में रेडियो को उसके प्रभाव और संचालन की दृष्टि से तीन वर्गों में बांटा जाता है। पहले वर्ग में सूचनाएं/संदेश, शीर्ष यानी ऊपर से नीचे की ओर भेजे जाते हैं। अधिकांश जनसेवी रेडिये इसी शैली के प्रसारण करते हैं। उनकी दृष्टि में जनता की भलाई के लिए जो सूचनाएं जानकारी आदि जरूरी है, उन्हें ही प्रसारित किया जाता है। इसमें कभी–कभी श्रोताओं के प्रश्नों का समाधान भी शामिल होता है। दूसरे वर्ग में वे रेडियो सेवाएं आती है जो अपने प्रसारणों में वही कुछ परोसती हैं, जो उनके अनुसार, जनता की मांग है– जिसमें श्रोताओं की रूचि है। लोकप्रिय मनोरंजन की भरमार वाली ये रेडियो सेवाएं व्यापारिक होती हैं।

तीसरे वर्ग की सेवा विकास के लिए जनसंचार को विशेषज्ञों द्वारा "सामुदायिक रेडियो" कहा गया। शैली की दृष्टि से इसे समतल सेवा कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें संदेश/सूचनाएं न ऊपर से नीचे आती हैं, न श्रोताओं की रूचि के अनुसार कार्यक्रमों क मांग पूरी करती हैं। इस सेवा में समानांतर रूप से यानी श्रोताओं के बीच

परस्पर संवाद चलता है। ऐसे रेडियो प्रसारणों में श्रोता ही वक्ता भी बन जाते हैं और अधिकतर कार्यक्रम संवाद शैली के होते हैं। कार्यक्रमों की विषय–वस्तु सीमित क्षेत्र की अपनी विशिष्ट समस्याओं, गतिविधियों, सांस्कृतिक समागमों आदि से चुनी जाती है। इसलिए इन प्रसारणों को 'ब्रॉडकास्टिंग के बजाय नैरोकास्टिंग का नाम दिया गया है। "सामुदायिक रेडियो" के ट्रांसमीटर कम शक्ति के होते हैं, जिनकी सेवा परिधि 10–12 किलोमीटर से ज्यादा नहीं होती। ऐसी प्रसारण सेवाओं में, चूंकि विषयों के विशेषज्ञों का बोलबाला नहीं होता, इसलिए सामान्य जन और खासकर उस वर्ग के लोग, जो समाज में आर्थिक –सामाजिक दृष्टि से तलहटी में होते हैं, उन्हें भी अपनी बात कहने का "सामुदायिक रेडियो" में अवसर मिल जाता है।

आरंभ के कुछ वर्षों में प्रायोगिक तौर पर यूनेस्को ने कुछ विकाशसील देशों में "सामुदायिक रेडियो" चलाने में पूरी आर्थिक और अन्य सहायता दी थी। ये थे– श्रीलंका में महावेली रेडियो सेवा, फिलीपींस में तांबुली 'सामुदायिक रेडियो' नेपाल में सागरमाथा सेवा और कंबोडिया में सी.एम.सी. महिला रेडियो। यूनेस्को से सहायता बंद होने पर वहां की सरकारों ने इन प्रयासों पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया।

एफ.एम. चैनल :

आकाशवाणी के एफ.एम. चैनलों पर नए किस्म के लोकप्रिय और मनोरंजन के कार्यक्रमों को जब बड़ी संख्या में विज्ञापन मिलने लगे तो निजी व्यापारी कंपनियों का भी ध्यान प्रसारण क्षेत्र की ओर आकर्षित हुआ।

भारत सरकार ने 1 जुलाई, 1999 को निजी प्रसारण कंपनियों को एफ.एम. बैंड में देश के विभिन्न शहरों में 108 चैनल एलॉट करने की पेशकश की। दिसंबर, 2002 में इसके साथ ही 40 एफ.एम. फ्रीक्वेंसी शैक्षणिक प्रसारणों के लिए उपलब्ध कराई गई। एफ.एम. बैंड पर शैक्षणिक रेडियो चैनल खोलने के लिए जानी–मानी शैक्षणिक संस्थाओं को सामुदायिक रेडियो लाइसेंस देने की पेशकश की गई। इस योजना के अनुसार शिक्षण संस्थाएं अपने कैंपस में कम शक्ति के एफ.एम. ट्रांसमीटर लगा सकती है और ऐसी सेवा में शैक्षणिक कार्यक्रमों के अलावा खेल कूद, नाटक, संगीत, चर्चाएं आदि का भी प्रसारण किया जा सकता है, जिनमें क्षेत्र–विशेष के लोगों को भाग लेने का पूरा अवसर मिले। किन्तु राजनीतिक विषयों के प्रसारण पर पूरी तरह पाबंदी लगाई गई। सरकार ने जो आकलन किया था, उसके अनुसार ऐसे सामुदायिक रेडियो स्टेशन को चलाने के लिए 6.5 से 20 लाख रू. की लागत की तकनीकी सुविधाएं जुटानी होंगी। इसके एंटिना की ऊंचाई अधिक से अधिक 30 मीटर हो सकती है। इस योजना के अंतर्गत प्रथम शैक्षणिक सामुदायिक रेडियो 1 फरवरी, 2004 को अन्ना विश्वविद्यालय, चेन्नई द्वारा शुरू किया गया। सामुदायिक रेडियो के क्षेत्र में पिछले पांच वर्षों में हुई धीमी प्रगति का लेखा–जोखा लेने के लिए भारत सरकार ने एक विशेष मंत्री समूह बनाया, जिसके अध्यक्ष थे शरद पवार।

कुछ प्रमुख सामुदायिक रेडियो केन्द्र :

- डेक्कन डेवलपमेंट सोसाइटी, पास्तापुर (आंध्र प्रदेश)

- बुद्धिकोटई, जिला कोलार (कर्नाटक) में मिरांडा सोसाइटी।
- डेपलपमेंट ऑल्टरनेटिव, दिल्ली स्थित सामाजिक संस्था, ओरछा (मध्य प्रदेश)
- टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट, टिहरी गढ़वाल
- ऑल्टरनेट, इंडिया डेवलपमेंट सोसाइटी, रॉची (झारखंड)
- मदुरै में पीपुल्स एसोसिएशन फॉर रूरल डेवलपमेंट
- तमिलनाडु के नागपट्टनम क्षेत्र में 'धन फाउंडेशन'
- वायनाडु एजुकेशन सोसाइटी, केरल
- इंडिया सोसाइटी फॉर एग्रीकल्चर प्रोफेशनल्स, भोपाल (मध्यप्रदेश) में।
- हरियाणा में टी.आर.एफ. फाउंडेशन
- उड़ीसा में 'कोणार्क सोसाइटी'

सामुदायिक रेडियो एक ऐसा उपक्रम है, जिसमें संस्था के स्वरूप, तकनीकी साधन–सुविधा और पूंजी के अतिरिक्त जो सबसे महत्व की चीज है, वह है श्रोताओं यानी जनता की भागीदारी। समाज में कई ऐसी संस्थाएँ होती हैं, जो किसी न किसी क्षेत्र में समाज सेवा का कार्य करती हैं। उन्हें कई रास्तों से वित्तीय या दूसरे साधनों की मदद मिलती है, जैसे–सरकारी अनुदान, अंतर्राष्ट्रीय सहायता या समाज के दानी व्यक्तियों से चंदा। सामुदायिक रेडियो चलाने के लिए बाहर से कोई सहायता लेने की मनाही है। यह सैद्धांतिक तौर पर समाजसेवी संस्थान होते हुए भी अन्य सबसे भिन्न है। एक तो यह औरों की तरह कोई वस्तु या सेवा नहीं बांटता, इसका कार्य केवल

सार्थक संवाद तक सीमित रहता है। दूसरे, इसमें सहयोग देने वाले लोग कभी खुद ही वक्ता हैं तो कभी श्रोता और वे सभी होते हैं 'आमजन'। अन्य रेडियो केन्द्रों की भांति इसकी प्रसारण सामग्री कहीं और से नहीं आएगी बल्कि समुदाय को स्वतः अपनी आवश्यकताओं, सुविधाओं, सूझ और कल्पनाशीलता से उपजानी होगी।

सामुदायिक रेडियो के लाभ :

- मुख्यधारा की मीडिया का एक व्यवहार्य और भरोसेमंद विकल्प—समाचारों, सूचना और मनोरंजन के संदर्भ में।
- समुदायों (हित संबंधी और भौगोलिक सीमाओं द्वारा परिभाषित) की भागीदारी सक्षम बनाने वाला एक मंच। भागीदारी के स्तर अलग—अलग हो सकते हैं— किसी कार्यक्रम के लिए आवाज़ उठाने से लेकर प्रबंधन के सभी पहलुओं के बारे में निर्णय करने वाले बनने तक।
- एक ऐसा चैनल जो दैनिक आधार पर भाषाओं और संस्कृतियों को प्रलेखित कर सकता है और सजीव बनाए रख सकता है।
- एक ऐसा साधन जो शिक्षा, आर्थिक और सामाजिक न्याय तक पहुंच कायम करने, लिंग, जाति और वर्ग आधारित हिंसा के खिलाफ एक माध्यम बनने और शासन में पारदर्शिता लाने में सहायक हो सकता है।
- अल्पसंख्यक समुदायों को वरीयता लैंगिक, जातीय, धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों सहित।

इनमें से ज्यादातर का संबंध सामुदायिक रेडियो की विषयवस्तु के साथ है। इसके अतिरिक्त, सामुदायिक रेडियो की प्रक्रिया में भागीदारी के अपने फायदे भी है। ये दोनों चीजें जनहित को प्रोत्साहित करने में योगदान कर सकती हैं। जैसा कि 1995 में उच्चतम न्यायालय ने कहा था। मानव मात्र के नाते यह अभिव्यक्त करना कि हम कौन हैं, एक अनिवार्यता है। प्रौद्योगिकियों के अत्याधुनिक होने के साथ स्वयं को अभिव्यक्त करने की क्षमता—संप्रेषण या बोलने और ग्रहण करने या सुनने में कभी—कभी रूकावट आती है। समृद्ध शहरी आबादी की पहुंच हाईस्पीड ब्रॉड बैंड इंटरनेट कनेक्शन तक है जिससे वह ध्वनि, आलेख, चित्र, वीडियो का इस्तेमाल सूचना सम्प्रेषण और प्राप्ति के लिए कर सकती है। ये विकल्प तंग बस्तियों या ग्रामीण बस्तियों में रहने वालों के पास कम मात्रा में उपलब्ध रहने की संभावना रहती है। बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच, टेक्नोलॉली की लागत वहन करने की क्षमता, सीखने की कठिनाइयां, साक्षरता की बाधाएं आदि कुछ ऐसे घटक हैं जो अभिव्यक्ति और एक—दूसरे के साथ विचार—विमर्श की हमारी क्षमता में रूकावट डालते हैं।

पहल : कुंजल पंजे कचजी (कच्छ क्षेत्र के सारस और बगुले)

कुंजल पंजे कचजी, सामुदायिक रेडियो ने गुजरात के भुज स्थित आकाशवाणी से वर्ष 2001 में प्रसारण शुरू किया। यह रेडियो प्रसारण उन महिलाओं की महत्वाकांक्षाओं, रचनात्मकता और एक महिला संगठन—कच्छ महिला विकास संगठन से संबंधित है, जो विकास के लिए काम कर रही हैं। कुंजल पंजे कचजी रेडियो प्रसारण कच्छ क्षेत्र के गांवों में अधिकांश लोगों द्वारा सुना जाता है । यह

प्रसारण कच्छी भाषा में होता है जो गुजरात की एक बोली है। प्रसारण में लोक अभिव्यक्तियों का इस्तेमाल किया जाता है जो कच्छ क्षेत्र में लोकप्रिय है। इसके लिए रिपोर्टर और रेडियो कलाकार स्थानीय समुदाय से चुने जाते हैं। स्थानीय समस्याओं को उठाया जाता है और उनके समाधान प्रस्तुत किये जाते हैं। स्थानीय समुदाय कार्यक्रम के उत्पादन का एक अभिन्न अंग है। इस कार्यक्रम के लिए महिलाएं भी उपयुक्त जानकारी देती हैं जो विचारों और अनुभवों के आदान प्रदान के रूप में होता है। कुंजल पंजे कचजी मूल रूप से एक प्रायोजित कार्यक्रम है, जिसका अनेक बाहरी सरकारी एजेंसियां भी समर्थन करती हैं। इसमें महिला नेतृत्व और सुशासन, बालिकाओं को शिक्षा का अधिकार, कन्या भूण हत्या, नव विवाहिताओं को दहेज के लिए परेशान करने, महिलाओं द्वारा आत्महत्या और अप्राकृतिक मृत्यु, महिलाओं पर सिर्फ पुत्र पैदा करने के लिए दबाव डालने, महिला मृत्युदर और मातृ स्वास्थ्य जैसे विषय शामिल हैं।

नम्मा ध्वनि (हमारी आवाज) :

नम्मा ध्वनि सामुदायिक रेडियो कर्नाटक के कोलार जिले के बउगरपेट तालुका के बुधिकोटे समुदाय का भागीदारी प्रयास है। नम्मा ध्वनि के कार्यक्रम बुधिकोटे में बनाए जाते हैं। बुधिकोटे में एक संसाधन केन्द्र भी है, जिसमें कम्प्यूटर सुविधा सामुदायिक रेडियो से जोड़ दी गई है। (एंथनी, 2004:4) पहले अनुमान लगाया गया था कि लगभग 236 अतिरिक्त केवल टेलीविजन वाले परिवार नम्मा ध्वनि के कार्यक्रम सुन सकते हैं। तब से कोशिश यह की गई है कि अन्य क्षेत्रों में भी यह कार्यक्रम उपलब्ध कराया जा सके। इसके 35 स्व. सहायता

समूह बुधिकोटे में और इसके आसपास काम कर रहे हैं। श्रोता अधिकांश गरीब और निरक्षर महिलाएं हैं, जिनके पास सूचना पहुंचने के अन्य साधन नहीं हैं। अधिकांश महिलाएं इस समूह में सुनती है।

मंदाकिनी की आवाज़ : मंदाकिनी की आवाज़ एक सामुदायिक रेडियो है, जिसकी शुरूआत डेवलपमेंट सेटेलाइट रेडियो सर्विस द्वारा उत्तराखंड के गढ़वाल क्षेत्र के कुछ चुनिंदा गांवों में की गई। इस रेडियो प्रसारण के बाद श्रोताओं में सामूहिक चर्चा होती है, जिसका संचालन विशेष रूप से प्रशिक्षित ग्रामीण नेता करते हैं। कार्यक्रम में महत्वपूर्ण मुद्दे उठाए जाते हैं। वाइस ऑफ मंदाकिनी को सामुदायिक रेडियो लाइसेंस प्राप्त है। यह नदी घाटी के श्रोताओं तक पहुंचता है जो गढ़वाल क्षेत्र के अलग–थलग गांवों में रहते हैं। इस समय मंदाकिनी की आवाज़ के 13 हजार श्रोता हैं और इनकी संख्या बढ़ रही है। सामुदायिक रेडियो उत्पादन केन्द्र धनाज नवंबर, 2006 से यहां कार्यक्रम तैयार करने के सभी उपकरण और सुविधाएं जुटा ली गई हैं और यह पूरी तरह से काम कर रहा है। इसे आईपीडीसी/यूनेस्को की सहायता से चलाया जा रहा है। नम्मा ध्वनि की तरह मंदाकिनी की आवाज को दूर–दूर तक पहुंचाने के लिए अनेक स्थानीय केबल टेलीविजन तंत्रों ने इसके प्रसारण को कम्युनिटी रेडियो कार्यक्रमों के तौर पर देना शुरू कर दिया है। इस तरह से बड़ी संख्या में केबल टेजीविजन कनेक्शन रखने वाले परिवार मंदाकिनी की आवाज सुनने लगे हैं। इसके अलावा सामुदायिक सदस्यों ने कई क्षेत्रों में रेडियो भी वितरित किए हैं, एक से ज्यादा तरीके से 'मंदाकिनी की आवाज' ने बाहरी रूप से ग्रामवासियों में एक

नया विचार प्रस्तुत किया है। गैर सरकारी संगठनों ने इस कार्यक्रम द्वारा प्रसारित सूचनाओं के महत्व की सराहना की है। इसकी अवधारणा का गांवों ने स्वागत किया है और इसके प्रति ठोस उत्साह दिखाया है। (सिंह 2007:39)। शुरूआती रिपोर्ट में कहा गया कि ग्रामवासी इस सामुदायिक रेडियो के कार्यक्रमों में उस क्षेत्र विशेष के विषयों से ज्यादा जुडे थे। उन्होंने उन बातों की ज्यादा परवाह नहीं की जो आकाशवाणी द्वारा स्थानीय गांवों की जरूरतें पूरी करने के लिए प्रसारित की जाती हैं। लोगों ने इस बात की बहुत सराहना की कि एक सामुदायिक रेडियो मंच उनकी जरूरतें पूरी कर रहा है.... उनके विचारों और अभिमत को वाणी दे रहा है और सीधे–सीधे सूचना के अधिकार जैसे अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में चेतना पैदा कर रहा है (सिंह 2007:39)। ग्रामवासी चाहते थे कि यह सामुदायिक रेडियो सुशासन में पारदर्शिता लाने का एक महत्वपूर्ण साधन बने (सिंह 2007: 39)।

केलू सखी (सुनो सखी) : केलू सखी (सुनो सखी) इस सामुदायिक रेडियो की शुरूआत नवंबर, 2006 में की गई। यह ऐसा सामुदायिक रेडियो प्रसारण परियोजना थी, जिसका प्रारंभ बंगलुरू के आईटी फार चेंज, महिला समाख्या कनार्टक (भारत सरकार द्वारा महिला सशक्तीकरण के लिए चलाया जा रहा जमीन से जुड़ा एक संगठन) और कॉमनवेल्थ एजुकेशनल मीडिया सेंटर फार एशिया, नयी दिल्ली द्वारा संयुक्त रूप से संचालित किया जाता है। केलू सखी रेडियो ब्रॉडकास्ट का उद्देश्य है उन निरक्षर ग्रामवासी महिलाओं तक सूचना और ज्ञान पहुंचाना और उन्हें शिक्षित करना। इसकी अधिकांश श्रोता

कर्नाटक की महिला समाख्या की सदस्य होती हैं। कर्नाटक महिला समाख्या हर गांव में स्थापित एक सूक्ष्म ऋण संबंधी ग्रामीण समूह है। इसके कार्यक्रमों में महिला शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीतिक संस्थान और क्षमता निर्माण/आत्मनिर्भरता प्रदान करने वाले कार्यक्रम होते हैं, जिन्हें महिला समाख्या ने अपना विकास लक्ष्य बनाया हुआ है।

इकाई—4

- टेजीविजन का विकास
- भारत में दूरदर्शन का शुभारंभ, दूरदर्शन

  के उद्देश्य निजी चैनल

- दूरदर्शन का विकास

  इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की स्वायत्तता और

  प्रसार भारती

- निजी चैनलों का विकास

भारत में दूरदर्शनिक शुभारंभ, दुरदर्शन के उद्देश्य निजी जैचन—

दूरदर्शन ने 15 सितंबर, 1959 को एक छोटे ट्रांसमीटर और अस्थायी स्टूडियो से दिल्ली में प्रयोग के तौर पर प्रसारण शुरू किया। नियमित और दैनिक आधार पर ट्रांसमिशन 1965 में ऑल इंडिया रेडियो के हिस्से के रूप में प्रारंभ हुआ। टेजीविजन सेवा का विस्तार 1972 में मुंबई और अमृतसर में किया गया। 1975 तक देश के केवल 7 शहरों में टेलीविजन सेवा उपलब्ध थी और दूरदर्शन देश में एकमात्र टेजीविजन सेवा प्रदाता था।

1 अप्रैल, 1976 को टेलीविजन सेवाएं रेडियों से अलग की गई। अंततः 1982 में एक राष्ट्रीय टेलीविजन प्रसारणकर्ता के रूप में दूरदर्शन की स्थापना हुई। दूरदर्शन पर सबसे पहले कृषि दर्शन कार्यक्रम दिखाया गया। इसकी शुरूआत 26 जनवरी, 1967 को हुई थी और यह भारतीय टेलीविजन पर दिखाया जाने वाला अब तक का सबसे लंबा कार्यक्रम है। 1982 में ही रंगीन टेलीविजन का भारतीय बाजार में की पदार्पण हुआ। इसकी शुरूआत 15 अगस्त, 1982 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर राष्ट्र के नाम।

डीडी नेशनल :

राष्ट्रीय अखंडता को बढ़ावा देने, एकता एवं भाईचारे की भावना पैदा करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय कार्यक्रम इस चैनल पर प्रसारित

किए जाते हैं। दर्शकों की संख्या की दृष्टि से यह देश का नंबर एक चैनल है। डीडी नेशनल पर मनोरंजन, सूचना और शिक्षा के मिले–जुले स्वस्थ कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। इस सेवा के कार्यक्रम टेरिस्ट्रियल मोड में प्रातः साढ़े पांच बजे से देर रात तक उपलब्ध होते हैं। सेटेलाइट मोड में डीडी नेशनल के कार्यक्रम चौबीसों घंटे उपलब्ध रहते हैं। इस मिश्रित लोकसेवा चैनल का प्रसारण समय इतना विविध है कि यह अलग–अलग समय पर अलग–अलग दर्शकों की जरूरतें पूरी करता है।

सभी प्रमुख राष्ट्रीय कार्यक्रम इस चैनल पर प्रसारित किए जाते हैं, इनमें गणतंत्र दिवस परेड, स्वतंत्रता दिवस समारोह, राष्ट्रीय पुरस्कार वितरण समारोह, राष्ट्रपति और प्रधानमंत्रियों के राष्ट्र के नाम संबोधन, संसद के संयुक्त अधिवेशन में राष्ट्रपति का अभिभाषण, महत्वपूर्ण मुद्दों पर संसदीय बहस, रेलवे और आम बजट का सीधा प्रसारण शामिल है। लोकसभा और राज्यसभा में प्रश्नकाल, चुनाव परिणाम और विश्लेषण, शपथग्रहण समारोह, राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री की विदेश यात्राओं और महत्वपूर्ण विदेशी अतिथियों की भारत यात्राओं को डीडी नेशनल पर कवर किया जाता है। ओलंपिक, एशियाई खेल, भारत की भागीदारी से संबंधित क्रिकेट टेस्ट और एक दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय मैच और अन्य महत्वपूर्ण खेल मुकाबले भी इस चैनल पर दिखाए जाते हैं। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) केन्द्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान (सीआईईटी) और राज्य शिक्षा प्रौद्योगिकी संस्थान (एसआईईटी) जैसे विविध स्त्रोतों के योगदान से शैक्षिक कार्यक्रम

प्रसारित किए जाते हैं। इसके अलावा बहुत से प्रायोजित कार्यक्रम भी प्रसारित हो रहें हैं। जैसे, टर्निंग प्वाइंट, प्रौढ., शिक्षा कार्यक्रम, टेरा क्विज और भूमि (पर्यावरण कार्यक्रम), महिला, जनजातीय मामलों और अन्य लोक सेवा कार्यक्रमों का प्रसारण भी नियमित रूप से होता है।

डीडी न्यूज का शुभारंभ नवंबर, 2003 में हुआ। यह देश का एक मात्र टेरिस्ट्रियल समाचार चैनल है जिसके कार्यक्रम देश की करीब आधी आबादी तक पहुंचते हैं।

डीडी न्यूज से आधा घंटे का एक द्विभाषी (अंग्रेजी और हिंदी) गतिशील कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है। इसके अलावा दिन–रात समाचार बुलेटिन, व्यापार, खेल, स्वास्थ्य, कला और संस्कृति को कवर करते हुए अनेक कार्यक्रम नियमित रूप से दिखाए जाते हैं जो 26 क्षेत्रीय समाचार इकाइयों (आरएनयूज)के नेटवर्क के जरिये देशभर में प्रसारित होते हैं। सम–सामयिक विषयों पर परिचर्चाएं दिखाई जाती हैं। एक प्रतिबद्ध डिजिटल सेटेलाइट न्यूज गैदरिंग सिस्टम के अंतर्गत सेटेलाइट फोन और वीडियो फोन जैसे हाइटेक उपकरण डीडी न्यूज के लिए उपलब्ध हैं। डीडी न्यूज की अपनी एक वेबसाइट ूण्ककपदमूण्हवअण्पद है, जो हर रोज दो घंटे के लिए बुलेटिन प्रसारित करने के अलावा दिनभर की घटनाओं के आधार पर विभिन्न समाचार आइटमों का ब्यौरा प्रस्तुत करती है। पूर्वोत्तर क्षेत्र के समाचारों की फीड देने के लिए प्रतिबद्ध एसएनजी केन्द्रों में शिलांग, इंफाल, कोहिमा, ईटानगर, अगरतला और आइजोल शामिल हैं।

दूरदर्शन समाचार निर्माण की प्रक्रिया –

दूरदर्शन समाचारों का प्रोडक्शन प्रारूप :

समाचार प्रोडक्शन के दो मुख्य पक्ष है।

(1) निर्माण पक्ष, (2) वाचन।

निर्माण पक्ष में यह ध्यान दिए जाने की बात है कि समाचार की मूल अनुरूप कब, कहाँ, कैसे की भूमिका का निर्वहन किया जाए। साथ ही दूरदर्शन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए समाचार घटनापरक, बिंब प्रस्तुति वाले एवं कम के सापेक्षिक हों। उनका दृश्यात्मक स्वरूप पूरी तरह सामने आता हो। दूरदर्शन प्रोडक्शन मं महत्वपूर्ण पक्ष है :–

(1) तारतम्यता : विषयवस्तु, दृश्यों एवं संबंधित क्रमों में तारतम्यता पूर्व अनिवार्यतः सम्मिलित किया जाना चाहिए। लंबी प्रक्रिया में से छोटे–छोटे अंशों को छाँटकर उन्हें दृश्य एवं श्रव्य दोनों के तारतम्य स्वरूप में प्रस्तुति दी जाये।

(2) चित्रात्मकता : दृश्य माध्यमों में चित्रात्मकता होती है। जा व्यक्ति दूरदर्शन देखता है उसकी यही अपेक्षा होती है ।

(3) संक्षिप्ता : दूरदर्शन समाचार में प्रोडक्शन यूनिट की घटना का संपूर्ण विवरण संक्षिप्त दायरे में समायोजित होना चाहिये। दृश्य अपनी पूरी कहानी बयां कर देते है।

(4) **प्रमाणक ग्राह्मयता** : दूरदर्शन समाचारों में समाचार के साथ–साथ उसमें दृश्यों, घटनास्थल, भाषण स्थल, व्यक्ति, सजीव प्रसारण आदि के द्वारा समाचारों में तत्व पनपता है।

दूरदर्शन समाचार : लेखन एवं प्रस्तुतीकरण

न्यूज–रिपोर्टिंग एवं आलेख –

दूरदर्शन हेतु न्यूज रिपोर्टिंग भी अभिन्न कला है। एक घटना का स्वरूप एक ही प्रकार का होता है पर वह आँख–कान–मस्तिष्क हैं जो अपने समवेत स्वरूप में घटनाओं के विविध पक्ष प्रस्तुत करते हैं। दूरदर्शन न्यूज रिपोटिंग भी ऐसी ही विषय–वस्तु है। इसमें न्यूज रिपोर्टर अपनी प्रतिभा के बल पर ही तथ्यों की गुणात्मक प्रस्तुति करता है। अनुभव, व्यक्तिगत योग्यता एवं परिपेक्ष्य के अतिरिक्त न्यूज रिपोर्टिंग में निम्नलिखित तत्वों का प्राथमिकता आवश्यक है :

(1) प्रस्तुति में तारतम्य हो।

(2) दृश्यात्मकता के पक्ष व्यापक हों।

(3) समाचार परिपूर्ण किन्तु संक्षिप्त हो।

(4) प्रस्तुत घटना के प्रामाणिक पक्षों को संयोजित किया जाए।

(5) दृश्य एवं श्रव्य पक्षों का तालमेल।

टेलीविजन रिपोर्टिंग–

टेलीविजन न्यूज रिपोर्टिंग के विभिन्न पक्षों के अध्ययन हेतु निम्नांकित बिन्दु विशेष रूप से उल्लेखनीय है :–

(1) समाचार परिकल्पना–

कैमरा आपकी आँखों से देखता है और आपके मस्तिष्क की सोची हुई बात को अंकित करता जाता है। न्यूज को विजुअलाइज करते समय एक प्रखर मस्तिष्क के साथ तकनीकी व वैचारिक तीन तरह से प्रभाव डालते हैं :

(1) आंख पर,

(2) कान पर,

(3) मन पर।

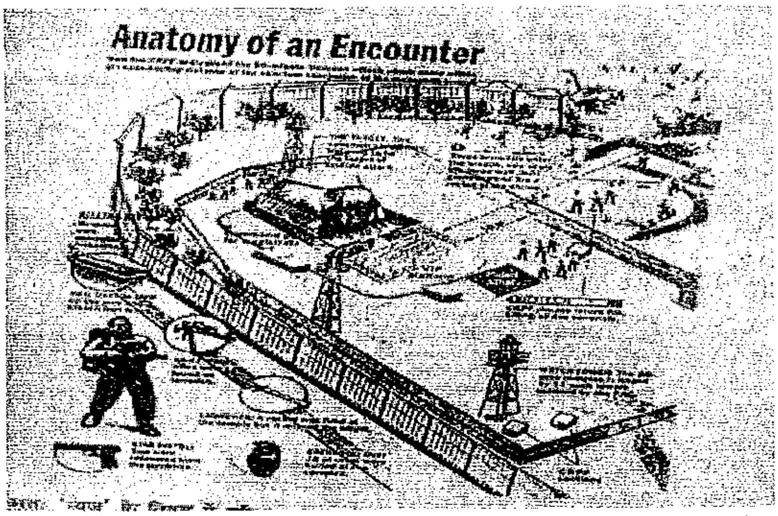

अतः 'न्यूज' के विषय में परिकल्पना करते समय तीनों पक्षों पर दृष्टि डालना जरूरी है। तकनीकी दृष्टि से यह कार्य भले ही जटिल हो पर विभिन्न कोणों से तालमेल बैठने पर इसके बेहतर परिणाम सामने आते हैं। समाचार संकलन से प्रस्तुति तक बहुआ ऐसा होता है कि समाचार नई करवट ले लेता है। ऐसे में न्यूज की परिकल्पना का सटीक होना आवश्यक है। बाढ़, भूकम्प, रेल–विमान दुर्घटना, आतंकवादी वारदातों आदि में इस प्रक्रिया की जरूरत बहुत होती है। यदि समाचार दिया गया है कि भीषण दुर्घटना में 10 मरे और प्रसारण तक यह संख्या 100 तक पहुंचती है तो संयोजन व प्रस्तुति की यह एक भूल होगी। वैसे भी यह सर्वमान्य नियम है कि देखी हुई स्थिति दर्शकों को लम्बे समय तक प्रभावित करती है। अतः न्यूज–विजुअलाइज करते समय इस तथ्य को दृष्टिगत रखना चाहिये।

गुजरात से आए विनाशकारी भूकम्प में मलबे में दबे एक मासूम के शव के समाचार की प्रस्तुति ने दर्शकों के मध्य न्यूज परिकल्पना के तथ्य को स्पष्ट किया और लोगों ने तन–मन धन से भूकम्प प्रभावित लोगों को सहयोग दिया। आपदा के समय समाचार परिकल्पना और प्रस्तुति ही वह माध्यम होता है जिससे लोग एकजुट हो संघर्ष के लिए उठ खड़े होते हैं। न्यूज विजुअलाइजेशन हेतु प्रमुख बिन्दु है :

- तार्किकता और दृश्यता का संबंध सटीक हो।
- दृश्य को इस प्रखरता से कैमरे में कैद किया जाए कि वह जनमानस को सकारात्मक रूप में उद्वेलित करे।
- परिकल्पना और प्रस्तुति में आए–बदलाव पर ध्यान रखा जाए।

- समाचार साधारण से लेकर अति–विशिष्ट तक के लिए होता है और उसके प्रभाव व्यापक होते हैं। अतः यह दृष्टिकोण हमेशा ध्यान में रखना चाहिए।
- प्रेरक, सकारात्मक, सांस्कृतिक, ऊर्जावान मूल्यवर्द्धक समाचारों में न्यूज विजुअलाइजेशन को प्राथमिकता मिले।

(2) **खोजी पत्रकारिता एवं साक्षात्कार तकनीक :** इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों में खोजी पत्रकारिता का एक सफल पक्ष यह है कि वह दूरदर्शन हेतु समस्त कार्यवाहियों के लिए कैमरे का इस्तेमाल करता है। कैमरा वह पहलू है जो हर क्षण दर्शकों के सामने आंखों–देखी प्रस्तुत करता है। यह तय बात है कि आंखों देखे सच को झुठलाया नहीं जा सकता है। खोजी पत्रकारिता हेतु सक्षम संवाददाता और कैमरा मिलकर क्रांति कर सकते हैं। हाल ही में रक्षा–मंत्रालय में की गई सौदेबाजी व पाकिस्तान टी.वी. पर भारत विरोधी दुष्प्रचार के सच का खुलासा खोजी पत्रकारिता के सबल पक्षों का उदाहरण है। खोजी पत्रकारिता में निम्नलिखित तथ्य प्रभावी भूमिका निभाते हैं।

- किसी भी स्रोत की अनदेखी न करें। बहुधा नाउम्मीद वाले स्रोतो से महत्वपूर्ण लीड मिलती है।
- कानून की परिधि की पालना आवश्यक है वरना यह परेशानी में डाल सकती है।
- योजना, विवरणों, तथ्यों को साथ लेकर चलें।
- कठिन परिस्थितियों हेतु जोश व तकनीकी की समृद्धता रखें।

- स्रोत, अध्ययन, कार्य पद्धति, दृष्टिकोण, निरीक्षण, आदि तत्व बेहद उपयोगी होते हैं।
- अच्छे विश्वसनीय सूत्र जुटाएं। जन–सम्पर्क अधिकारी जैसे लोग इसमें सहायक हो सकते हैं।
- संस्था व विभाग की रीति–नीति के अनुरूप छोटे तथा बड़े अधिकारियों से मिलकर तथ्यों की पुष्टि करें।
- स्रोत एवं सम्पर्कों को निरंतर बनाए रखें। व्यक्तियों से निजी सम्पर्क व सामाजिक मेल मिलाप से खोजी पत्रकार विश्वसनीय सिद्ध होता है और मौके–बे मौके उसे काम की सूचनाएं मिलती हैं।

दूरदर्शन कार्यक्रमों हेतु स्क्रिप्ट लेखन के आधार : दूरदर्शन कार्यक्रमों की प्रस्तुति अपने संपूर्ण कलेवर में श्रमसाध्य कार्य है। देखने में कार्यक्रमों की प्रस्तुति भले ही सतही लगती हो पर अपनी संपूर्णता में यह जटिल प्रक्रिया है। दूरदर्शन कार्यक्रमों की मूल अवधारणा पहला सोपान होता है। इसके बाद अवधि के अनुरूप कार्यक्रम के निर्माण की सारी योजना तैयार की जाती है। इसमें निम्नलिखित तत्व अनिवार्य रूप से होते हैं :

(1) कार्यक्रम का केन्द्रीय विषय।

(2) कार्यक्रम का स्वरूप ।

(3) कार्यक्रम के पात्र।

(4) कार्यक्रम के पात्रों की भाषा एवं संवाद।

(5) कार्यक्रम प्रस्तुतिकरण हेतु स्थान, पात्र, भूमिकाएं एवं तदनुरूप प्रस्तुति।

(6) कार्यक्रम—संयोजन हेतु मूल स्क्रिप्ट।

(7) कार्यक्रम की सिलसिलेवार जानकारी देती वृहद् स्क्रिप्ट।

स्क्रिप्ट वह हथियार है जिसके द्वारा कार्यक्रम रूपी युद्ध को जीता जाता है। स्क्रिप्ट में पात्र संवाद स्थिति संयोजन आदि के पहलू सम्मिलित होते हैं। टेलीविजन चूंकि मूलतः दृश्य माध्यम है अतः इसके लेखन हेतु यह आवश्यक है कि वह दूरदर्शन की भाषा की प्रकृति को समझ सके। सुलझे स्वरूप में दूरदर्शन की लेखन शैली यह है जो अपने बिंबों से वह तथ्य प्रस्तुत कर दे जिसकी लेखक अपने मस्तिष्क में संरचना करता है। इस प्रयोजन हेतु यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि दृश्य संयोजन में कहीं शिथिलता न हो, अचेतन और गतिहीन स्थितियाँ न पनपने पाएं, पात्र जो बोल बोले वह दूरदर्शन में भाषायी स्वरूप में रूपांतरित हो सके। साथ ही दृश्यों की स्वाभाविक तारतम्यता भी जुड़ा रहे। वह आलेख (स्क्रिप्ट) ही है जिसके आधार पर कार्यक्रम निर्माता एवं निर्देशक तरह—तरह से दृश्यांकन हेतु योजना बनाते हैं एवं उन संभावनाओं व स्थितियों को संयोजित करते हुए कार्यक्रम की रूपरेखा को आयाम देते हैं।

वृत्तचित्र—

फीचर लेखन की तरह वृत्तचित्र के लिए लेखन के पहलू लागू होते हैं। वृत्तचित्र हेतु गहन अनुसंधान व विमर्श के बाद वृत्तचित्र की

सामग्री का चयन किया जाता है। इस स्रोत सामग्री से तकनीकी व दृश्यात्मक पहलुओं के अनुसार प्रारंभिक स्क्रिप्ट लिखी जाती है जिसमें संपूर्ण विवरण व तकनीकी पहलू होते हैं। शूटिंग के पश्चात् उपलब्ध दृश्यों का प्राथमिक आकलन लेखक करता है। दृश्यों व विवरणों की प्रकृति के अनुसार वह उनके बीच की योजक कड़ी को संयोजित करके दूसरी विस्तृत स्क्रिप्ट लिखता है। उस स्क्रिप्ट को ध्वनि व संगीत के प्रभावों के साथ वृत्तचित्र के दृश्यों में गूंथा जाता है। ऐसे स्थल जहां इनके बावजूद जानकारी व समझाइश की आवश्यकता होती है वहां नेपथ्य से विवरणकर्ता की आवाज वृत्तचित्र के विवरण लेख को पढ़ती है। श्रोता–दर्शक दृश्य व ध्वनि के योग से पूरी स्थिति से अवगत होते हैं। भाषा की सहजता, शब्द चयन, वाक्य विन्यास, उद्धरण, विवरण, सटीकता वृत्तचित्र लेखन के वह पहलू हैं जो इसे नवीनता व रोचकता देते हैं।

वृत्तचित्रों के प्रकार– वृत्तचित्र मूलरूप में यूँ तो प्रस्तुति एवं विषयों को लेकर विविध कोटियों के हो सकते हैं पर सामान्य रूप से उन्हें निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटा जा सकता है:

1. शैक्षिक
2. विकासपरक
3. ग्राम्य विषयक
4. अन्वेषणात्मक
5. अपराधपरक
6. राजनीतिक
7. आर्थिक
8. साहित्यिक

9. सांस्कृतिक
10. धार्मिक
11. वैज्ञानिक
12. फिल्मपरक
13. विधिक
14. संसदीय
15. स्वास्थ्य विषयक
16. खेल विषयक
17. बाल संदर्भ
18. महिला विषयक
19. संदर्भ विषयक

दूरदर्शन का विकास :

जनसंचार माध्यमों के परिवार में टेलीविजन रेडियो का सबसे निकट का सहोदर है, क्योंकि दोनों की परवरिश ध्वनि तरंगों पर शोध और संचार कार्य में उनके उपयोग के बारे में प्रयत्न करने वाले इलेक्ट्रॉनिक परिवार में ही हुई। 'कानों सुनी, आंखों देखी' ये प्राचीन मुहावरा टेलीविजन जैसे माध्यम पर पूरी तरह लागू होता है और शायद यही कारण है कि भारत में टेलीविजन के पदार्पण के बाद पूरे देश में इसके फैलाव के लिए जबर्दस्त मांग उठने लगी। रेडियो की तुलना में टेलीविजन एक खर्चीला माध्यम है, भारत जैसे देश में जहां विकास की प्राथमिकताओं की लंबी फेहरिस्त थी, सरकार ने रेडियो की सेवाओं का देश भर में विस्तार करने की अपनी योजनाओं को वर्षों तक वरीयता दी और इस कारण देश में टेलीविजन की शुरूआत में देर होती रही। आजादी मिलने के कई वर्षों बाद तक यही सिलसिला चलता रहा। किन्तु एक बार जब टेलीविजन ने देश में प्रवेश कर

लिया तो प्रसारण सुविधाओं के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में जो आवंटन किया जाता था, उसका बड़ा हिस्सा देश में टेलीविजन सेवा के विस्तार में ही खप जाने लगा। सत्तर के दशक के अंत तक दूरदर्शन के रूप में टेलीविजन के माध्यम ने देश में अच्छी–खासी पैठ बना ली थी। इसका एक कारण यह भी रहा कि इस दौरान टेलीविजन की टेक्नोलॉजी में तेज गति से विकास हो रहा था और उपग्रहों की मदद से नब्बे के दशक में (1990–2000) टेजीविजन का माध्यम सरकारी अनुदान पर आश्रित न रह कर एक फलते–फूलते अंतर्राष्ट्रीय उद्योग की तरह पूरे देश में तेजी से फैलने लगा।

एक खर्चीले माध्यम से रूप में जहां टेलीविजन को देश की विकास योजना में स्थान पाने के लिए काफी नीची प्राथमिकता मिलती रही, वहीं, इस माध्यम के प्रभाव के बारे में आशंकाओं का एक पूर्वाग्रह भी उस दौरान प्रचलित था। यूरोप और अमेरिका में टेलीविजन की सेवाएं तेजी से लोकप्रिय होती जा रही थीं, किन्तु वहां भी अब कहा जाने लगा था कि टेलीविजन अपसंस्कृति का माध्यम बन रहा है, जो आचार–विचार में तड़क–भड़क की संस्कृति को फैला कर समाज में प्रभु–वर्ग की सेवा में ही अधिक लगा रहता है। भारत जैसे विकासशील देश में आम जनता इससे लाभान्वित होगी, इसकी संभावना काफी कम आंकी जा रही थी। यह वैचारिक ऊहापोह वर्षों तक चलता रहा और टेलीविजन के माध्यम की देश में शुरूआत का मामला शासन की ओर से ठंडे बस्ते में पड़ा रहा।

1956 में यूनेस्को ने देश में विकास के प्राथमिक आयामों में जैसे– शिक्षा, ग्राम विकास, सामुदायिक विकास आदि में टेलीविजन

जैसी प्रभावकारी जनसंचार माध्यम के उपयोग की संभावनाओं का अध्ययन करने के लिए बीस हजार अमेरिकी डॉलर का अनुदान देने की घोषणा की। इससे पूर्व फिलिप्स कंपनी ने दिल्ली में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय उद्योग मेले में 'क्लोज सर्किट टेलीविजन' का प्रदर्शन किया था। कंपनी ने टेलीविजन ट्रांसमिशन और कार्यक्रम निर्माण के कुछ उपकरण अमेरिका के सहयोग से आकाशवाणी को प्रायोगिक तौर पर टेलीविजन चलाने के लिए रियायती दर पर उपलब्ध कराये।

15 सितंबर, 1959 को 'दूरदर्शन' के नाम से देश में टेलीविजन सेवा की प्रायोगिक तौर पर शुरूआत हुई, जिसमें कृषि, ग्राम विकास एवं सामान्य शिक्षा के कार्यक्रम दिल्ली में आकाशवाणी भवन में स्थापित टेलीविजन ट्रांसमीटर के जरिए प्रसारित किए जाने लगे। ये ण सप्ताह में दो बार 60 मिनट की अवधि के होते थे, जिन्हें खने के लिए दिल्ली के आसपास के 20 चुने हुये गांवों में सरकार की ओर से सामुदायिक टेलीविजन सेट रखे गए थे। इस योजना का मूल्यांकन करने पर यह पाया कि टेलीविजन कार्यक्रमों का विकास कार्यों में सकारात्मक प्रभाव होता है। इसी क्रम में आगे एक और प्रायोगिक प्रसारण कार्यक्रम दिसंबर, 1960 से मई, 1961 तक चलाए गए जिसमें सामाजिक शिक्षा के अनेक पहलुओं पर टेलीविजन कार्यक्रम दिखाए गए। इससे अलग प्रयोग था दिल्ली में स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए हर मंगलवार एक घंटे का शिक्षाप्रद कार्यक्रम प्रसारण, जो अक्टूबर, 1961 से 10 सप्ताह तक चला।

प्रख्यात अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्री पॉल न्यूरेथ ने इन सभी प्रसारणों का अध्ययन कर रिपोर्ट में जिक्र किया कि एक प्रभावी

जनसंचार माध्यम के रूप मं टेलीविजन विकास योजनाओं में महत्वपूर्ण का भूमिका अदा कर सकता है। इसके बाद भारत सरकार ने देश में 'विकास के साधन' के रूप में दूरदर्शन के विस्तार की योजनाओं को बनाना शुरू किया। आकाशवाणी के पास रेडियो रूरल फोरम, देहाती रेडियो, गोष्ठी जैसे विकास–मूलक प्रसारण कार्यक्रमों का खासा अनुभव था। आकाशवाणी के पी.वी. कृष्णमूर्ति उनमें अग्रणी थे। इसलिए दूरदर्शन पर ऐसे प्रायोगिक कार्यक्रमों को चलाने की जिम्मेदारी उन्हें सौंपी गई। 1975 में दूरदर्शन की स्वतंत्र इकाई बनने के बाद वे ही उसके पहले महानिदेशक बने। सन् 1965 में स्वतंत्रता दिवस पर आकाशवाणी द्वारा दूरदर्शन की एक घंटे की नियमित दैनिक सेवा शुरू की गई। तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने इसका उद्घाटन किया। चूंकि यह सेवा सामान्य जन के लिए थी और दिल्ली में देखी जा सकती थी, इसलिए घरों में निजी तौर पर लोग टेलीविजन सेट लगाकर इसे देख सकते थे। जाहिर है, खाते–पीते प्रभु–वर्ग के लिए ही यह संभव था, जो टेलीविजन सेट खरीदकर घर में रख सकते थे। इसलिए विकास संबंधी या सामाजिक शिक्षा संबंधी टेलीविजन कार्यक्रमों के अलावा, जो गांवों में रखे सामूहिक टेलीविजन सेटों पर देखे जाते थे, इस नियमित टेलीविजन सेवा में जानकारी देने वाली डाक्यूमेंटरी फिल्मों के अंश, बच्चों और महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रम संगीत एवं अन्य मनोरंजन के कार्यक्रमों को दिखाया जाने लगा।

1 अप्रैल, 1975 को दूरदर्शन को सूचना–प्रसारण मंत्रालय की एक स्वतंत्र इकाई घोषित किया गया। पर जहां तक तकनीकी

सुविधाओं, कार्यक्रम निर्माण और इंजीनियरिंग कर्मचारियों आदि का सवाल था, कई वर्षों तक दूरदर्शन को आकाशवाणी की सुविधाओं और साधनों पर ही निर्भर रहना पड़ा। अगले कुछ वर्षों में दूरदर्शन की सेवा का लगातार विस्तार होता गया और टेलीविजन कार्यक्रम बनाने के लिए देश में कई स्थानों पर टी.वी. स्टूडियो आदि सुविधाएं लगाई गईं। यद्यपि यह सारा प्रायोगिक दौर का ही विस्तार रहा और टेलीविजन कार्यक्रमों के निर्माण के लिए सामान्यतः जितने साधन और सुविधाओं की जरूरत होती है, उससे काफी कम साधन उपलब्ध थे, फिर भी आकाशवाणी ने अपने नवजात सहोदर दूरदर्शन की परवरिश में अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ी। नए माध्यम की तकनीक और उसके कार्यक्रमों के निर्माण में आकाशवाणी के प्रोग्राम और जीनियरिंग विभाग ने पूरे उत्साह से भाग लिया। 1971 में भारत–पाक युद्ध के दौरान दूरदर्शन के दिल्ली केन्द्र ने बंगलादेश मुक्तिवाहिनी और उसकी सहायक भारतीय सेना की शौर्यगाथा का फिल्मांकन कर उसके कवरेज अपने समाचारों में लगातार दिखाया। 1972 से 1975 के बीच दूरदर्शन के विस्तार क्रम में कई नए केन्द्र खुले– बंबई (1972), कलकत्ता (1975), चेन्नई (1975), श्रीनगर–अमृतसर (1973), और लखनऊ (1975)। दूरदर्शन अमृतसर के कार्यक्रम पाकिस्तान के लाहौर क्षेत्र में भी देखे जा रहे थे। इसी तरह दूरदर्शन का टेलीविजन सिग्नल कभी–कभार कराची में देखा जा सकता था।

'साइट' उपग्रह दूरदर्शन प्रोजेक्ट (1975–76)

साठ के दशक में दूरदर्शन दिल्ली से जो विकासमूलक टेलीविजन प्रसारण किए गए उसके निष्कर्षों के आधार पर साइट प्रोजेक्ट की योजना बनाई गई । यह वह समय था जब अंतरिक्ष विज्ञान में भारत पैर जमाने की कोशिश कर रहा था। यह सारा कार्य अंतरिक्ष विज्ञान के शीर्ष वैज्ञानिक विक्रम साराभाई के नेतृत्व में 'इसरो' द्वारा किया जा रहा था। साराभाई ने संचार उपग्रह के जरिए टेलीविजन प्रसारण को देश में फैलाने की पुरजोर सिफारिश की। 1969 में उन्होंने कहा था कि अगर अगले दस वर्षों में हम टेलीविजन को अस्सी प्रतिशत जनता तक पहुंचा दें तो राष्ट्रीय एकसूत्रता बढ़ाने में बड़ी मदद मिलेगी। जहां तक उपग्रह से सीधे टेजीविजन देखने की व्यवस्था करने का सवाल है, ये काम पिछड़े इलाकों में सबसे पहले किया जाना चाहिए। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी, जो उस समय अंतरिक्ष अनुसंधान विकास विभाग भी देख रही थीं, ने उनके इस सुझाव पर तुरन्त मुहर लगाई। योजना आयोग ने इसके लिए ग्राउंड सेगमेंट लगाने और विशेष कार्यक्रम बनाने के लिए अलग से बजट प्रावधान किया। साइट प्रोजेक्ट में उपग्रह के जरिए पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में दूरदर्शन कार्यक्रम दिखाने की व्यवस्था की गई। चूंकि उपग्रह से हो रहा प्रसारण बिना किसी टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटर के, गांवों में रखे सामुदायिक टेलीविजन सेटों पर देखा जाना था, इसलिए वहां टेलीविजन सेट के साथ उपग्रह के सिग्नल को पकड़ कर उसे सामान्य टेजीविजन पर देखने लायक बनाने की विशेष व्यवस्था करनी पड़ी। इसके लिए चुने हुए गांवों में चिकनमेश एंटिना और फ्रंट एंड

कन्वर्टर लगाने पड़े। इसके लिए 'नासा' ने 'ए.टी.एस.एफ. संचार उपग्रह' भारत को सीमित समयावधि के लिए उपलब्ध कराया और उपग्रह को कार्यक्रम भेजने तथा गांवों में रखे सामूहिक टेलीविजन सेटों पर उन्हें दिखाने की जिम्मेदारी इसरो ने उठाई। साइट योजना में क्षेत्र–विशेष के लिए उपयुक्त टेलीविजन कार्यक्रमों का निर्माण दूरदर्शन द्वारा किया गया।

6 राज्यों–राजस्थान, छत्तीसगढ़, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा और बिहार के चुने हुए 2400 पिछड़े गांवों में इस उपग्रह सेवा को देखने की व्यवस्था की गई। हर राज्य के लिए अलग से रोज एक घंटे की अवधि का प्रसारण शाम को होता था। चूंकि इन छह प्रदेशों की भाषा, संस्कृति और जमीनी हालात अलग थे, कृषि की पद्धति और फसलचक्र भी भिन्न थे, अतः उनके लिए बनाए गए कार्यक्रम भी अलग होते थे। इन कार्यक्रमों को वहां की सरकार के कृषि एवं सामुदायिक विकास के लिए जिम्मेदार संस्थानों, विभागों और उस क्षेत्र के जाने–माने सामाजिक कार्यकर्ताओं की मदद से बनाया जाता था। चूंकि साइट प्रोजेक्ट विकास के लिए टेलीविजन के उपयोग संबंधी अपने किस्म का इतने बड़े पैमाने पर पहला प्रोजेक्ट था, इसलिए इसके संचालन और निष्कर्षों के प्रति अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कुतूहल बना हुआ था। साइट प्रोजेक्ट से चुने हुए गांवों के जो लोग लाभान्वित होने वाले थे, उनकी माली हालत, मनःस्थिति, उनके पूर्व अनुभव, टेजीविजन पर्दे पर जो दृश्य दिखाई दे रहे हैं, उनकी विश्वसनीयता के बारे में उनकी प्रतिक्रिया आदि बातों का, साइट प्रोजेक्ट के प्रसारण शुरू होने से पूर्व, पूरी गंभीरता से समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया। उसी

तरह टेलीविजन कार्यक्रम देखने के तुरंत बाद उनकी प्रतिक्रिया, नई तकनीकों के बारे में स्वीकार्यता और सामाजिक आचार–विचार के कार्यक्रमों को देखकर उन ग्रामीण समुदायों में हो रहे परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए भी विशेष व्यवस्था की गई थी।

साइट प्रोजेक्ट के मुख्य उद्देश्य थे–

- खेती बाड़ी, पशुपालन, वानिकी आदि की उन्नत तकनीकों के बारे में किसानों को जानकारी देना।
- स्वास्थ्य, सफाई, परिवार कल्याण और पोषण आहार के बारे में विशेष जानकारी देना।
- पिछड़े और पारंपरिक समाज में देश की अखंडता–एकता आदि का अहसास कराना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में प्राइमरी शिक्षा में सुधार लाना, अध्यापकों का प्रशिक्षण आदि। 'साइट' योजना के प्रभाव के बारे में जो समेकित शोध अध्ययन किया गया, उसके मूल उद्देश्य थे–

(1) ग्रामों में सदियों से चली आ रही पारंपरिक संचार प्रणाली के वर्तमान और प्रभाव का अध्ययन।

(2) टेलीविजन जैसे दृश्य–श्रव्य तकनीकी माध्यम की सामाजिक शिक्षा के लिए उपयोगिता का अध्ययन।

(3) टेलीविजन कार्यक्रमों में दिए जा रहे संदेशों के संदर्भ मे गांवों में होने वाले बदलाव की प्रक्रिया का अध्ययन।

'साइट' प्रोजेक्ट ने जहां विकास और सामाजिक शिक्षा के लिए टेलीविजन माध्यम के प्रभाव और उपयोगिता के बारे में काफी नई और उपयोगी जानकारी दी, वहीं उसका एक और महत्वपूर्ण फलित यह था कि भविष्य में यदि उपग्रहों के जरिए दूरदर्शन का विस्तार किया जाए तो उसके लिए जमीनी व्यवस्था किस प्रकार की जाए इसका अध्ययन। उपग्रह प्रसारण को वर्तमान टेरेस्ट्रियल प्रणाली से कैसे जोड़ा जाए इसका आकलन भी महत्व का था, ताकि लोग अपने सामान्य टेलीविजन सेटों पर भी उन कार्यक्रमों को देख सकें। 'साइट' योजना के साथ इसरो ने संचार उपग्रह के निर्माण की योजना पर भी काम शुरू किया था। देश का पहला संचार उपग्रह इनसेट (ए) नासा के रॉकेट की सहायता से 1982 में अंतरिक्ष में स्थापित किया गया। इसे भारतीय इंजीनियरों ने डिजाइन किया था और भारत में ही इसका निर्माण किया गया था। तकनीकी कारणों से चूंकि इसका उपयोग सीमित ही रहा, इसलिए दूसरा भारतीय डिजाइन का उपग्रह इनसेट–1 (बी), जिसका निर्माण अमेरिका में फोर्ड एयर स्पेस द्वारा किया गया था, अक्टूबर, 1983 में अमेरिकी रॉकेट चैलेंजर से अंतरिक्ष में भेजा गया। इसकी पूर्ण सफलता के बाद इनसेट उपग्रहों की पूरी श्रृंखला नियमित रूप से अंतरिक्ष में स्थापित की जाने लगी। इनका उपयोग कर दूरदर्शन ने पूरे देश में कार्यक्रम सेवा पहुंचाने की क्षमता हासिल की। देश में दूरदर्शन के केन्द्रों द्वारा उपग्रह से राष्ट्रीय कार्यक्रम (डाउनलोड) प्राप्त किया जाता था और उसे उनके टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटर के जरिए पुनः प्रसारित कर घरों तक पहुंचाया जाता था। 80 के दशक में किए गए इन प्रयासों ने ही टेलीविजन क्रांति का सूत्रपात किया। आज भी टेरेस्ट्रियल टेजीविजन नेटवर्क से दूरदर्शन के

राष्ट्रीय चैनल का ट्रांसमिशन किया जाता है। दूरदर्शन चैनलों के अतिरिक्त तीन सौ से ऊपर में निजी क्षेत्र के टेलीविजन चैनल सेट बॉक्स केबल और डी.टी.एच. सेवाओं के माध्यम से कार्यक्रमों को दिखा रहे हैं।

दूरदर्शन की ऐतिहासिक उपलब्धियां :

दूरदर्शन के आरंभिक दिनों की कहानी अधूरी रहेगी यदि इस बात का स्मरण न किया जाए कि अनेक बाधाओं, साधनों के अभाव और थोड़े समय में विस्तार की महत्वाकांक्षी योजनाओं के दबावों के बावजूद और सरकारी तंत्र की सीमाओं में रहकर भी जनसंचार के क्षेत्र में दूरदर्शन ने अपनी खास पहचान बनाई और टेलीविजन जैसे माध्यम को देश की संस्कृति, कला, साहित्य और सामाजिक मूल्यों से जोड़ा। आज अनेक भाषाओं में टेलीविजन कार्यक्रम बनाए जा रहे हैं। विदेशी प्रोड्यूसर यहां अंतर्राष्ट्रीय स्तर का कार्यक्रम बना रहे हैं।

टेलीविजन एक ऐसा माध्यम है, जिसमें रेडियो के अतिरिक्त, कई और विधाओं का संगम होता है। जैसे– फिल्म, रंगमंच, पत्रकारिता आदि। समग्रता के साथ समाज की सभी गतिविधियों, कला और संस्कृति के सभी पहलुओं को समेटने वाला यह दृश्य–श्रव्य माध्यम केवल कलात्मक दृष्टि या बड़ी पूंजी और कुशल प्रबंधन से नहीं चलाया जा सकता, उसके लिए एक संस्थागत ध्येय और अपने उद्देश्यों के प्रति समर्पण की भावना जरूरी है। दूरदर्शन को उसका ध्येय वाक्य–'सत्यं शिवं सुंदरम' आकाशवाणी ने दिया था। आज दुनिया की तर्ज पर भले ही मुक्त आकाश से टेलीविजन के चैनल

सैकड़ों की संख्या में देखे जा रहे हों– पर जनसंचार माध्यम के रूप में टेलीविजन का सामाजिक महत्व बना रहेगा अगर वह अपने कार्यक्रमों में सत्य, कल्याणकारी और सुंदर का समन्वय पेश करेगा। अस्सी का दशक दूरदर्शन के विकास की दृष्टि से उसका स्वर्णकाल कहा जा सकता है। इसी दशक में इनसेट उपग्रह के जरिए दूरदर्शन ने रात 8 से 10 बजे तक अपना राष्ट्रीय कार्यक्रम शुरू किया, जिसे उसके सभी केन्द्र रिले करते थे। कार्यक्रम का मूल उद्देश्य था राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास, विविध सांस्कृतिक छटाओं का समन्वय और कार्यक्रमों में गुणवत्ता का प्रतिमान बनाना। कार्यक्रम में दूरदर्शन के सभी केन्द्र अपना योगदान दिया करते थे। अस्सी के दशक के मध्य सरकार ने टेलीविजन टेक्नोलॉजी से संबंधित अपनी आयात नीति को उदार बनाया। फलस्वरूप निजी स्वामित्व की टेलीविजन सॉफ्टवेयर कंपनियों ने टी.वी. कार्यक्रम निर्माण के लिए सुविधाएं जुटाईं फिल्म,थिएटर के निर्देशकों और कलाकारों की मदद से टी.वी. कार्यक्रमों का निर्माण शुरू किया। दूरदर्शन में प्रायोजित कार्यक्रमों की शुरूआत 15 जुलाई, 1984 से हुई। इस नई योजना के तहत निजी प्रोड्यूसर अपने कार्यक्रम के लिए स्पॉन्सर (प्रायोजक) ढंढता और उसके आर्थिक सहयोग से कार्यक्रम बनाकर और दूरदर्शन को स्पॉन्सर फीस देकर वह अपना कार्यक्रम दूरदर्शन पर दिखाता। बदले में प्रायोजक को एक निश्चित अनुपात में बिना किसी शुक्ल के अपने विज्ञापन दिखाने की छूट होती। इसके साथ ही दूरदर्शन अपनी ओर से जाने–माने प्रोड्यूसरों को टेलीफिल्में, डाक्यूमेंटरी और अन्य कई तरह के कार्यक्रम बनाने के लिए अनुबंधित करने लगा। इस दौरान दूरदर्शन ने खासी लोकप्रियता और विज्ञापनों से अच्छी–खासी आमदनी

भी अर्जित की। इसी काल खंड में 1982 के एशियाई खेल के कवरेज के साथ दूरदर्शन द्वारा रंगीन प्रसारण का आरंभ हुआ। टेलीविजन तकनीक में तेजी से विकास हो रहा था और दूरदर्शन जैसे विशाल क्षेत्र में फैले संस्थान को इन सारे बदलावों को एक साथ अपने में समाहित करने की खासी मशक्कत करनी पड़ी। 1984 में दूरदर्शन के संजाल के विस्तार का 'क्रैश प्लान' कार्यान्वित हुआ। लगभग तीन माह के दौरान हर रोज एक नया टी.वी. ट्रांसमीटर देश के किसी न किसी भाग में शुरू होता था। इस योजना मे 113 लो पॉवर और 26 हाई पॉवर टेरेस्ट्रियल टी.वी. ट्रांसमीटर लगाए गए। इसके बाद दूरदर्शन संजाल में कुल 47 हाई पॉवर और 132 लो पॉवर ट्रांसमीटर टेलीविजन प्रसारण करने लगे। इसी दरम्यान दिल्ली, मुंबई, मद्रास और कलकत्ता केन्द्रों से दूसरा चैनल शुरू किया गया, जो कुछ हद तक स्थानीय समस्याओं और मेट्रो के बहुभाषीवासियों के लिए अंग्रेजी/हिन्दी में उनकी खास रूचि के कार्यक्रम प्रसारित करता था।

राष्ट्रीय प्रसारक के रूप में दूरदर्शन की नई जिम्मेदारियों, श्रोता–दर्शकों की बदलती रूचि और बढ़ती अपेक्षाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन करने के लिए 1984 में सूचना प्रसारण मंत्रालय ने एक कार्यदल का गठन किया। इसके अध्यक्ष थे प्रसिद्ध समाजविज्ञानी पी.सी. जोशी। कार्यदल ने जो रिपोर्ट पेश की उसका शीर्षक था दूरदर्शन का भारतीय व्यक्तित्व। कार्यदल ने दूरदर्शन के सात मुख्य केन्द्रों के कार्यक्रमों की छानबीन की। दूरदर्शन की सामाजिक भूमिका पर कार्यदल ने बड़ी तीखी टिप्पणी। में कहा कि सत्तर के दशक में दूरदर्शन को मुख्यतः राष्ट्रीय विकास के संवाहक

के रूप में देखा जाता था, किन्तु उत्तरोत्तर यह संस्था अपने लोक सेवा के उद्देश्य से भटकती जा रही है और विदेशी चकाचौंध भरी जीवन पद्धति और भोगवादी संस्कृति को बढ़ावा दे रही है। इसी दौर में 6 'ना मीडिया फाउंडेशन' कई प्रमुख शहरों में परिचर्चाएं आयोजित कीं, जिनमें विविध क्षेत्रों–बौद्धिक, सामाजिक और औद्योगिक जगत से जुड़े प्रमुख लोगों तथा कला–संस्कृतिकर्मियों ने हिस्सा लिया और दूरदर्शन जैसे नए माध्यम के विषय में अपनी अपेक्षाएं और राय प्रकट की।

अस्सी के दशक में दूरदर्शन की कई और भी महत्वपूर्ण उपलब्धियां रहीं–

- एशियाई खेल का रंगीन टेलीविजन पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर का कवरेज किया गया।
- 1987 में क्रिकेट का विश्वकप भारतीय उपमहाद्वीप में खेला गया था। दूरदर्शन ने इसके सभी मैच, जो भारत में खेले गये, उनका लाइव कवरेज किया।
- पहली बार राष्ट्रीय प्रसारक के रूप में दूरदर्शन पर 1989 के चुनाव नतीजों का दिन–रात चलने वाला प्रसारण किया गया। इसके प्रस्तुतकर्ता (एंकर) प्रणव राय थे, जिनके साथ दूरदर्शन ने इस कार्यक्रम के प्रसारण के लिए अनुबंध किया था। सारी तकनकी सुविधाएं दूरदर्शन ने दी थीं ।
- बड़े आकार के स्टूडियो और नए उन्नत तकनीक के उपकरण दूरदर्शन के संजाल में जुड़ गए।

दूरदर्शन नेटवर्क का विस्तार–

दूरदर्शन के इतिहास में नब्बे के दशक में एक ऐसा कालखंड शुरू हुआ, जिसमें एक ओर दूरदर्शन के चैनलों का तेजी से विस्तार तो हुआ, पर सालों से चल रहे टेलीविजन प्रसारण पर उसका एकाधिकार समाप्त हो गया। दर्शकों पर उसका प्रभाव भी घटता गया । इसके प्रमुख कारण थे–(1) निजी स्वामित्व के कई उपग्रह टी.वी. चैनल हिन्दी–अंग्रेजी के साथ–साथ भारतीय भाषाओं में भी कार्यक्रम पेश करने लगे। अस्सी के दशक में तेजी से फैली केबल सर्विस के जरिए उन्हें अब घरों तक सुगमता से पहुंचाया जाता था। इसके अलावा बहुराष्ट्रीय टी.वी. के भी कई चैनल अंतर्राष्ट्रीय फिल्मों, खेल कूद, कार्टून, जंगल, जीव–जन्तु विज्ञान और आर्थिक विषयों के टी.वी. कार्यक्रमों को दिखाने लगे (2) दूरदर्शन के चैनलों की संख्या में तेजी से विस्तार हो रहा था, किन्तु कार्यक्रमों का निर्माण पिछड़ता गया। (3) ठेके पर कार्यक्रम बनवाने का प्रचलन दूरदर्शन में बड़े पैमाने पर शुरू हुआ। इसका मिला–जुला असर रहा। बाहर के स्वतंत्र टी.वी. कार्यक्रम निर्माताओं, तकनीशियनों, कलाकारों के लिए इस नीति के कारण जहां निश्चित रूप से अवसर बढ़े और कार्यक्रमों में भी नवीनता और नई बयार देखने को मिली, किन्तु इसके साथ टी.वी. कार्यक्रम बनाने में व्यापारी हितों का दखल भी बढ़ता गया और कार्यक्रमों के निर्माण में गुणवत्ता से अधिक उनकी लाभ कमाने की प्रवृत्ति बढ़ती चली गई। बाहर से बनकर आने वाले ऐसे अधिकांश कार्यक्रम धीरे–धीरे बाजार की चाहत के अधीन होते चले गए। दूरदर्शन के अपने चैलनों पर भी

ऐसे कार्यक्रमों का चलन बढ़ गया, जो स्थापित उद्देश्य और मूल्यों से भटके हुए लगते थे।

1989 में आम चुनावों से पूर्व आकाशवाणी– दूरदर्शन के लिए स्वायत्तता का मुद्दा एक बार फिर बड़े जोर–शोर से उछला। अब तक वह एक राजनीतिक मुद्दा बन चुका था। नई सरकार आने के बाद उसने आकाशवाणी– दूरदर्शन को स्वायत्तता देने के लिए प्रसार भारती बिल संसद में पेश किया और वादा–निभाई की रस्म पूरी की।

समय के साथ दूरदर्शन के विस्तार में भी नए–नए आयाम जुड़ते रहे, भले ही उनमें से कुछ ऐसे हों, जो किसी सुविचारित योजना के बजाय कालचक्र की उपज ही थे। उनके लिए न पहले से कोई सोच बनी थी, न कोई योजना थी या कोई व्यवस्था की गई थी। फिर भी जैसा कई बार देखा जाता है, हर बदलाव अपने साथ एक नई स्थिति पैदा करता है और फिर कोई नया रास्ता ढूंढ़ा जाता है। दूरदर्शन की कहानी में शायद ऐसी सूरतें कुछ ज्यादा ही बनती रहीं। दूरदर्शन के विस्तार के इस कालखंड में कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं हुईं जिनका उल्लेख जरूरी है–

- 3 दिसम्बर, 1991 से संसद के दोनों सदनों में प्रश्नकाल की कार्यवाही का सीधा प्रसारण दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल पर शुरू हुआ।
- 1993 में इनसेट–बी उपग्रह के अंतरिक्ष में स्थिर होने के बाद जो अतिरिक्त ट्रांसपांडर दूरदर्शन को मिले उन पर दूरदर्शन ने 5 नए चैनल शुरू करने की घोषणा की। ये थे–1. खेल–कूद, 2.

समाचार, 3. मनोरंजन, 4. ज्ञान–विज्ञान और 5. संगीत। इन्हीं चैनलों पर पहले की योजना के अनुसार निजी कंपनियों को टाइम स्लॉट पहले आओ पहले पाओ के आधार पर बेचे जाने थे। पर ऐसा कपितय कारणों से न हो सका और दूरदर्शन की जगहंसाई हुई।

- इसी दौरान क्षेत्रीय भाषाओं में कार्यक्रमों के प्रांतीय स्तर पर अलग–अलग सेटेलाइट चैनल भी शुरू किए गए। इससे यह सुविधा हुई कि प्रदेशों में दूरदर्शन के टेरेस्ट्रियल रिले केन्द्र, जो अब तक दिल्ली केन्द्र के कार्यक्रम ही दिखा पाते थे, उन्हें प्रादेशिक टेलीविजन से जोड़ा जा सका, जिससे लोगों को राष्ट्रीय सेवा के अलावा उनकी अपनी क्षेत्रीय भाषा में कार्यक्रम मिलना शुरू हुआ।
- दूरदर्शन की राष्ट्रीय चैनल डीडी–1 के अतिरिक्त कुछ प्रमुख शहरों में डीडी–2 की सेवा कुछ वर्ष पूर्व टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटरों पर शुरू की गई थी। कुछ और शहरों में टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटर लगाकर और सेटेलाइट द्वारा उन्हें कार्यक्रम पहुंचाने की व्यवस्था कर दूरदर्शन ने एक नया नेटवर्क कायम किया, जिसमें मनोरंजन की भरमार थी। इसे 'मेट्रो नेटवर्क' का नाम दिया गया। इसके बारे में कहा गया था कि दूरदर्शन की यह पहल उसे विज्ञापन बाजार में निजी टेलीविजन चैनलों को कड़ी टक्कर देने के लिए होगी।
- 1995 में दूरदर्शन ने तीसरा चैनल शुरू किया जिसके बारे में कहा गया कि यह खास किस्म के बुद्धिजीवियों और

कला–प्रेमियों के लिए है। एक खास दर्शक वर्ग मनोरंजन चैनल 'मेट्रो' और डीडी–1 के मिले–जुले राष्ट्रीय चैनल से संतुष्ट नहीं था, यह तीसरी सेवा उनके लिए थी।

- 14 मार्च, 1995 को दूरदर्शन ने डीडी इंडिया नाम से अपना अंतर्राष्ट्रीय चैनल शुरू किया, जो यूरोप सहित 146 देशों में अंतर्राष्ट्रीय उपग्रहों के द्वारा कार्यक्रम प्रसारित करता है।

90 के दशक के आरंभ के इन कुछ वर्षों में दूरदर्शन के विकास की कहानी काफी हद तक गुब्बारे को फुलाने जैसी ही रही, क्योंकि उसके पीछे न कोई सुविचारित योजना दीखती है और न कोई सार्थक तैयारी, जो टेलीविजन जैसे जटिल माध्यम के लिए जरूरी होती है। इस दौरान मंत्रालय की ओर से बराबर यही डुग्गी पीटी जा रही थी कि दूरदर्शन में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। निजी टेलीविजन चैनलों को वह जल्दी ही मात देगा और बहुराष्ट्रीय चैनलों को भारत से बाहर भगा देगा। नतीजा वही हुआ जो ऐसे 'क्विकझाटिक' अभियानों का होता है। दूरदर्शन ने जो पांच उपग्रह चैनल चलाए थे– खेल, समाचार, मनोरंजन, ज्ञान–विज्ञान और संगीत, उन्हें दूरदर्शन का आम दर्शक देख ही नहीं पाया। केबल सर्विस वालों ने उन्हें छुआ तक नहीं और आम टेलीविजन सेटों पर उपग्रह से सीधा देख पाना संभव नहीं होता। आम चुनाव के बाद जब सरकार बदली तो उसने स्थिति का नए सिरे से आकलन किया और डी.डी. मेट्रो चैनल, जो तब तक फूहड़ मनोरंजन के लिए बदनाम भी हो चुका था, उसे बंद कर उसकी जगह डी.डी. न्यूज समाचार चैनल की शुरूआत की गई। डीडी–3 को नया नाम दिया गया 'डी.डी. भारती'। सरकार ने अध्यादेश निकालकर

केबल नेटवर्क के लिए यह आवश्यक कर दिया कि दूरदर्शन के कोई दो चैनल उन्हें अवश्य दिखाने होंगे। नतीजा यह हुआ कि जहां तक शहरों की बात थी दूरदर्शन एक प्रतिस्पर्द्धी चैनल के रूप में केबल पर भी अपनी सही पहचान बना सका। जहां केबल नेटवर्क नहीं है, जैसे– लगभग पूरा ग्रामीण क्षेत्र, वहां दूरदर्शन का एकाधिकार बना रहा, क्योंकि वहां एकमात्र टेरेस्ट्रियल टेलीविजन चैनल दिखाई देता है।

दूरदर्शन के कार्यक्रमों का स्वरूप और विस्तार

चूंकि टेलीविजन ने लोक–शिक्षा के प्रभावी माध्यम के रूप में प्रवेश किया था, इसलिए उसके पहले चरण के सभी कार्यक्रम स्कूली शिक्षा और सामाजिक शिक्षा तक ही सीमित रहे। 60 के दशक के मध्य जब दिल्ली दूरदर्शन से सायंकालीन नियमित सेवा शुरू की गई तो दूरदर्शन को शहर के लोग भी देखने लगे। उन दिनों खाते–पीते भद्रजनों के घरों पर टी.वी. का एंटिना होना एक स्टेटस सिंबल सा बन गया था। धीरे–धीरे इन लोगों की मांग और दबाव बढ़ता गया और इस तरह दूरदर्शन ने एक समन्वित सेवा का रूप ले लिया, जिसमें लोक–शिक्षण के अतिरिक्त सूचना, समाचार और मनोरंजन के कार्यक्रम शामिल होते गए। दिल्ली के बाद अन्य महानगरों में टी.वी. सेंटर खोलने के लिए योजनाएं बनीं। हालांकि, अब भी नीति संबंधी घोषणाओं में जोर इसी पर दिया जाता रहा कि टेलीविजन सेवा का मुख्य उद्देश्य विकास और सामाजिक प्रगति को तेज करना और सांस्कृतिक उन्नयन में योगदान देना है, किन्तु व्यावहारिक स्तर पर दूरदर्शन अब एक लोकप्रिय जनसंचार माध्यम बनता जा रहा था। शहरी लोगों की अपेक्षाओं को नजरअंदाज करना उसके लिए कठिन

था। टेलीविजन सेट बनाने वाली इलेक्ट्रॉनिक इंडस्ट्री की मांग थी कि लोकप्रिय कार्यक्रमों से ही टेलीविजन सेटों की मांग बाजार में बढ़ेगी। तभी टी.वी. सेट की कीमतें भी घटेंगी और आम लोग टेलीविजन खरीद सकेंगे। भारत जैसे बहुआयामी देश में सांस्कृतिक और कलाओं की बड़ी समृद्ध परंपराएं रही हैं। समाचार–पत्र और फिल्म उद्योग आजादी के बाद जिस तरह बढ़े, उसी तरह रेडियो, टी.वी. जैसे आधुनिक जनसंचार माध्यमों पर संस्कृति एवं कलाकर्मियों की आकांक्षाओं का दबाव भी स्वाभाविक था। फलतः दूरदर्शन भद्र समाज की ओर उत्तरोत्तर झुकता गया। लोकतांत्रिक सरकारें हमेशा ही दबाव के आगे नरम पड़ती हैं और वही बात टेलीविजन नीति के बारे में भी हुई। भूमंडलीकरण का खुला दौर आते ही मनोरंजन के व्यवसाय–व्यापार का 'जिन्न' पिटारे से पूरी तरह बाहर आ गया और जनसंचार के सभी माध्यम समाचार–पत्र, रेडियो या टी.वी. आज उसके प्रभाव में हैं। फिर भी दूरदर्शन के इतिहास को यदि देखा जाए तो स्पष्ट होगा कि अनेक अन्य दबावों के बावजूद लोक–शिक्षा के अपने मूल्य उद्देश्य को दूरदर्शन ने दृढ़तापूर्वक निभाया है।

- दूरदर्शन आम जनता के लिए शिक्षा, सूचना और मनोरंजन के जो कार्यक्रम करता था, उनके साथ समाज के विशिष्ट तबकों, जैसे– ग्रामीण जनता, युवा वर्ग, बालक, वृद्धजन सभी के लिए विशेष कार्यक्रम दूरदर्शन के सभी केन्द्रों से प्रसारित किए जाते हैं, जिनमें क्षेत्र विशेष की समस्याओं, आकांक्षाओं और सांस्कृतिक रूचियों का ध्यान रखा जाता है।

- आकाशवाणी के संगीत के राष्ट्रीय कार्यक्रम की तरह दूरदर्शन ने भी कई वर्षों तक संगीत और नृत्य का अखिल भारतीय कार्यक्रम चलाया। जहां फिल्म संगीत पर आधारित 'चित्रहार' लोकप्रियता के ग्राफ पर सबसे ऊंचा था, वहीं दूरदर्शन ने संगीत (शास्त्रीय और सुगम–गीत, भजन, गजल) की महफिलें पेश कर उभरते कलाकारों, गीतकारों और नर्तकों को प्रकाश में लाया।
- 1980 में जब दूरदर्शन का दो घंटे का राष्ट्रीय कार्यक्रम प्रसारित किया जाने लगा तो उसके जरिए सांस्कृतिक समग्रता और वैचारिक बहुलता के दर्शन बखूबी होने लगे।
- 1971 के युद्ध के समय हालांकि दूरदर्शन की सेवा प्राथमिक चरण में थी, फिर भी इस पर युद्ध के संदर्भ में जो कार्यक्रम और वीडियो कवरेज समाचारों में दिखाया गया उसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर का माना गया।
- दूरदर्शन पर प्राकृतिक आपदाओं, जैसे–बाढ़, समुद्री तूफान, भूकंप आदि पर जानकारी भरे लोकसेवा के कार्यक्रम काफी प्रभावी रहे हैं।
- उच्च्य शैक्षणिक प्रसारणों की शुरूआत दूरदर्शन के नेशनल चैनल पर 1984 से प्रारंभ हुई, जब यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन की पहल पर देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में स्थापित ईएमआरसी द्वारा बनाए गए शैक्षणिक कार्यक्रम 'सुबह की सभा में' दूरदर्शन पर प्रसारित किए जाने लगे।
- 'स्वतंत्रता दिवस' और 'गणतंत्र दिवस' समारोह जैसे राष्ट्रीय गौरव के सभी आयोजनों, विशिष्ट अंतर्राष्ट्रीय अतिथियों के भारत

प्रवास से संबंधित सभी कार्यक्रमों को टी.वी. पर दिखाना आज भी दूरदर्शन की ही जिम्मेदारी है।

- चुनाव आयोग द्वारा स्वीकृत व्यवस्था के अंतर्गत 1977 से दूरदर्शन पर सभी मान्य राजनीतिक दलों को एक अनुपात में चुनाव प्रचार की निःशुल्क सुविधा दी जाती है।
- सभी खेलों को दूरदर्शन की ओर से हमेश प्रोत्साहन दिया जाता रहा है। जहां क्रिकेट जैसे विज्ञापन बहुल कार्यक्रमों में ही अन्य चैनलों की रूचि रही है, दूरदर्शन पर सभी खेलों—शहरी और ग्रामीण की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताएं लाइव या रिपोर्ट के माध्यम से कवर की जाती रही हैं।
- भारत सरकार जिन राष्ट्रीय अभियानों/कार्यक्रमों को लोकहित में चलाती है, उन सभी को दूरदर्शन पर प्रचार—प्रसार के लिए विशेष सुविधाएं दी जाती हैं।
- दूरदर्शन की प्रायोजित कार्यक्रमों की योजना, जो अस्सी के दशक में शुरू हुई, उसने भारत के रंगमंच और फिल्मकारों के लिए टेलीविजन मीडिया पर काम करने का भरपूर अवसर दिया। इसी तरह अनेक विषयों पर डाक्यूमेंटरी और टेलीफिल्में बनाने के लिए निर्माताओं को दूरदर्शन की कमीशनिंग स्कीम से पूरी सहायता दी गई। इनमें से कई को राष्ट्रीय पुरस्कार भी मिल चुके हैं।

दूरदर्शन सेवा का तकनकी विस्तार

1959 में जब देश में टेलीविजन की शुरूआत हुई थी, उस समय यूरोप और अमेरिका में भी टेलीविजन की एक ही प्रणाली प्रचलित थी– टेरेस्ट्रियल यानी क्षैतिज ट्रांसमिशन। इसके लिए जो ट्रांसमीटर लगाया जाता है, उसकी शक्ति (उदाहरण के लिए 1 के.वी. या 10 के. वी या 20 के.वी.) और उसके ट्रांसमिशन टॉवर की ऊंचाई इन दो पैमानों से उस टेलीवीजन केन्द्र का प्रसारण क्षेत्र आंका जाता है। अगर उसकी परिधि 100 किलोमीटर है तो उससे आगे उसके सिग्नल को ले जाने के लिए एक बूस्टर ट्रांसमीटर पहले वाले की परिधि के भीतर लगाना पड़ता है, ताकि वह (एयर टू एयर) मूल ट्रांसमीटर के सिग्नल को पकड़े और उसे आगे बढ़ाए। इस प्रणाली में भारत जैसे विशाल देश में टेलीविजन की एक राष्ट्रीय सेवा का संजाल पूरे देश में फैलाने के लिए कई हजार ट्रांसमीटर लगाने पड़ते। पर सौभाग्य से सत्तर के दशक के आरंभ में जब देश में टेलीविजन के विस्तार का निर्माण हुआ, उस समय अंतरिक्ष में स्थापित कुछ उपग्रहों के जरिए टेलीविजन सिग्नल को पूरे विश्व में कहीं भी पहुंचाने की क्षमता हासिल हो चुकी थी। एक कम्यूनिकेशन सेटेलाइट पर टेलीविजन के कई ट्रांसपांडरों के साथ अन्य सेवाएं जैसे डाटा ट्रांसमीशन आदि को भी जगह मिल जाती थी।

किन्तु जहां सेवा क्षेत्र के विस्तार की समस्या उपग्रह के द्वारा हल हो चुकी थी, वहीं उसकी कमजोरी भी थी। भारत जैसे बहुभाषी और संस्कृति–बहुल देश में उपग्रह द्वारा पूरे देश में केवल एक टेलीविजन सेवा कोई मायन नहीं रखती। टेलीविजन आने से पूर्व देश

में रेडियो का जो विस्तार हो चुका था, उसकी तीन सतहें थीं– 1. राष्ट्रीय, 2. प्रांतीय और 3. स्थानिक। टेलीविजन भले ही दृश्य माध्यम हो, जिसमें भाषा का महत्व दूसरे नंबर पर आता है, फिर भी देश के अलग–अलग भू–भागों में जलवायु, जमीनी रचना और सांस्कृतिक रीति–रिवाज में इतनी विविधता है कि टेलीविजन की कोई एक राष्ट्रीय प्रसारण सेवा पूरे देश के लिए परिपूर्ण या स्वीकार्य नहीं हो सकती थी। इसलिए यह जरूरी था कि दूरदर्शन के विस्तार की योजना के पहले चरण में देश के मुख्य नगरों में प्रांतीय स्तर पर दूरदर्शन केन्द्र स्थापित किए जाएं, जो वहां की भाषा और सांस्कृतिक विशिष्टताओं को ध्यान में रखकर अपनी प्रसारण सेवा चलाएं। ऐसे केन्द्रों को राष्ट्रीय कार्यक्रमों से जोड़ने के लिए उपग्रह का प्रयोग अवश्य किया जा सकता था।

उस दौर में केबल टेलीविजन का पूरे देश में प्रचलन नहीं हुआ था और न ही आज की तरह डी.टी.एच. प्रणाली द्वारा टेलीविजन सेटों पर सेटेलाइट सर्विस के कार्यक्रम सीधे देखे जा सकते थे। इसलिए दूरदर्शन के क्षेत्र विस्तार के लिए टेरेस्ट्रियल प्रणाली पर चलने वाले ट्रांसमीटरों को देश के हर भाग में स्थापित करना पड़ा। 1959 में दिल्ली में केवल एक टेलीविजन ट्रांसमीटर था। 1973 में यह बढ़कर पांच हुई। 1985 में रिले केन्द्रों को मिलाकर यह 185, 1988 में 220 जबकि 2015 में इसकी संख्या तीन हजार तक पहुच चुकी है। अर्थात अब बिना किसी शुल्क के दर्शक दूरदर्शन देश सकते है।

दूरदर्शन के लगातार हो रहे क्षेत्र–विस्तार और 1982 में उसके रंगीन होने के बाद टेलीविजन सेट बनाने वाली कंपनियों को भी देश

में एक बड़ा बाजार उपलब्ध हुआ। इस क्षेत्र में विदेशी कंपनियों के सहयोग से कई भारतीय कंपनियों ने बड़े पैमाने पर पहले एक या दो चैनल की क्षमता वाले और बाद में कई चैनल वाले टेलीविजन सेटों का उत्पादन शुरू किया। 1970 में जहां हर साल लगभग 15 हजार टेलीविजन सेट बनाने की क्षमता थी, वहीं 1982 तक उत्पादन की क्षमता लगभग 7 लाख सेट तक पहुंच गई। 'ब्लैक एंड व्हाइट' के साथ रंगीन टेलीविजन भी बनने लगे थे। टेलीविजन सेटों के उत्पादन की क्षमता कई वर्षो तक सीमित ही रही, जबकि मांग तेजी के साथ बढ़ती जा रही थी, खासकर रंगीन सेटों की। इसलिए लोगोंको विदेशों से अपने साथ या अपने मित्रों द्वारा भेजे गए टेलीविजन सेट 'कस्टम ड्यूटी' देकर लाने की इजाजत दी गई। 1987 के अंत तक देश में टेलीविजन सेटों क कुल संख्या लगभग एक करोड़ हो चुकी थी और देश की लगभग 62 प्रतिशत जनता दूरदर्शन सेवा देख सकती थी। भारत सरकार ने रेडियो और टेलीविजन सेटों पर जो वार्षिक शुल्क लिया जाता था, उसे समाप्त कर दिया गया। अब उनके निर्माण पर एकमुश्त एक्साइज ड्यूटी ली जाने लगी। इससे भी उपभोक्ताओं को खासी सहूलियत मिली।

डिजिटल टेलीविजन ; रेडियो और टेलीविजन पूरी दुनिया में अपने आरंभिक चरण से अब तक एनालॉग प्रणाली के जरिए कार्यक्रम निर्माण और प्रसारण करते आ रहे हैं। डिजिटल टेक्नोलॉजी बाद में आई, जो न केवल एक उन्नत तकनीक है, अपितु उसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि प्रसारण के अलावा इलेक्ट्रॉनिक्स के अन्य टेलीकम्यूनिकेशन उपकरणों, जैसे–मोबाइल फोन, इंटरनेट आदि में

डिजिटल प्रणाली से निर्मित टेलीविजन कार्यक्रम समान रूप से ट्रांसफर किए जा सकते हैं। 2007 में पूरी हुई पंचवर्षीय योजना में दूरदर्शन ने अपने छह स्टूडियो केन्द्रों और 35 छोटे प्रसारण केन्द्रों को डिजिटल प्रणाली में परिवर्तित किया।

'डी.टी.एच.' टेलीविजन प्रणाली : उपग्रह से प्रसारित टेलीविजन सेवा के लिए आरंभ से सी बैंड का उपयोग किया जाता था। घरों में लगे सामान्य टेलीविजन सेटों पर सी–बैंड के सिग्नल को केबल नेटवर्क खास डिश एंटिना लगाकर प्राप्त करते थे और उसे केबल के जरिए घरों में पहुंचाते थे। डी.टी.एच. प्रणाली 'के यू–बैंड' का उपयोग करती है। इस प्रणाली में एक छोटी पैराबोलिक डिश घर में लगाकर डी.टी.एच. सिग्नल को सेटटॉप बॉक्स के जरिए सीधे टेलीविजन सेट से जोड़ा जाता है। डी.टी.एच. प्रणाली में कई और सुविधाएं हैं, जैसे– उससे वीडियो गेम खेले जा सकते हैं, परिवार में अगर पालक चाहें तो कुछ चैनल बंद कर उनसे बच्चों को बचाया जा सकता है, इंटरनेट से टेलीविजन जुड़ सकता है, ई–मेल, वीडियो कॉन्फ्रेसिंग आदि की सुविधा का लाभ भी उठाया जा सकता है।

1996 में स्टार टेलीविजन ने डी.टी.एच. सेवा भारत में शुरू करने की पहल की थी। किन्तु केन्द्र सरकार ने तकनीकी कारणों से उसके लिए स्वीकृति नहीं दी। एक अध्यादेश (1997) द्वारा किसी भी बहुराष्ट्रीय डी.टी.एच. सेवा को केबल नेटवर्क के जरिए भारत में वितरण करने पर रोक लगाई गई थी। आगे चलकर 2000 में केन्द्र सरकार ने डी.टी.एच. प्रसारण के बारे में अपनी नई नीति घोषित की। 2004 में 'ट्राई' को रेगुलेटर घोषित किया गया। डी.टी.एच. चैनलों के

स्वामित्व और प्रबंध के बारे में भी मंत्रालय ने कुछ नियम बनाए, जैसे– चैनल का स्वामित्व जिस निजी कंपनी के पास होगा, उसमें विदेशी पूंजी 49 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी और चैनल का मुख्य अधिकारी (सी.ई.ओ.) भारतीय नागरिक ही होगा आदि। 16 दिसंबर, 2004 को दूरदर्शन ने अपनी डी.टी.एच. सेवा शुरू की– डीडी डिरेक्ट प्लस! यह सेवा बिना किसी शुल्क के देश में देखी जा सकती है। इसे लेने वालों को सिर्फ इसकी डिश और सेटटॉप बॉक्स खरीदना होगा, जिसे सामान्य टेलीविजन सेट से जोड़ा जाता है। डी.डी. डिरेक्ट प्लस पर इस समय 59 टेलीविजन चैनल देखे जा सकते हैं और 20 रेडियो चैनल भी सुने जा सकते हैं। देश के सुदूर और दुर्गम क्षेत्रों में सामुदायिक विकास से जुड़ी संस्थाओं को दूरदर्शन ने डी.डी. डिरेक्ट प्लस के डिश और सेटटॉप बॉक्स बिना किसी शुल्क के मुहैया कराए हैं। दूरदर्शन के अलावा निजी स्वामित्व की कंपनियों द्वारा भी डी.टी. एच. चैनल चलाए जा रहे हैं। टाटा स्काई, डिश टी.वी., डिजिटल टी. वी., बिग टी.वी. और सन टी.वी.। डी.टी.एच. पोर्टल पर 300 से अधिक देशी–विदेशी टेलीविजन देखे जा सकते हैं।

मोबाइल टेलीविजन : मोबाइल टेलीविजन की प्रायोगिक सेवा दूरदर्शन ने मई, 2007 में शुरू की। इसकी सेवा दिल्ली में संसद मार्ग से 10 किलोमीटर की परिधि में देखी जा सकती है।

एच.डी.टी.वी. : 'एच.डी.टी.वी.' परंपरागत टेलीविजन की ही उन्नत व्यवस्था है। टेलीविजन अब तक छोटे पर्दे का माध्यम रहा है। 'एच.डी.

टी.वी.' को बड़े पर्दे पर स्पष्ट और साफ देखा जा सकता है। इसकी गुणवत्ता पाँच गुणा अधिक है।

एच.डी.टी.वी. के बड़े पर्दे पर कार्यक्रम देखने का लुफ्फ वैसा ही होगा, जैसा अभी थिएटर में सिनेमा के बड़े पर्दे पर देख कर मिलता है। दोनों के पर्दे (स्क्रीन) का आस्पेक्ट रेशियो 16:9 है। एच.डी.टी.वी. को प्लाज्मा या एल.एस.डी. डिस्प्ले या बड़े पर्दे इनमें से किसी पर भी देखा जा सकता है। एच.डी.टी.वी. को किसी भी प्रणाली के जरिए घरों तक पहुंचाया जा सकता है, जैसे– टेरेस्ट्रियल, केबल, सेटेलाइट, डी. टी.एच. या इंटरनेट।

आई.पी.टी.वी.: इस प्रणाली में इंटरनेट प्रोटोकाल (आई.पी.) का उपयोग कर टी.वी. के प्रसारणों को और उसके साथ वीडियो ऑन डिमांड जैसी सुविधाओं को घरों तक पहुंचाया जाता है। ब्राडबैंड का कोई भी माध्यम आई.पी.टी.वी. के लिए उपयुक्त महानगर टेलीफोन निगम (एम. टी.एन.एल.) और भारत संचार निगम (बी.एस.एन.एल.) ने मुंबई और दिल्ली में शुरूआत की है। टेलीकॉम ऑपरेटर इंटरनेट सर्विस देने वाली एजेंसियों और केबल के जरिए आई.पी.टी.वी. मिल सकेगा।

दूरदर्शन की विभिन्न सेवाएं :

दूरदर्शन देश का सार्वजनिक प्रसारक (पब्लिक सर्विस ब्रॉडकास्टर) है। स्थापना के (1959) 57 वर्ष बाद आज दूरदर्शन विस्तार की दृष्टि से दुनिया का सबसे बड़ा टेलीविजन नेटवर्क बन चुका है। वर्तमान में दूरदर्शन के 40 से ज्यादा टेलीविजन चैनल चल रहे हैं, जिसमें 6 अखिल भारतीय हैं, एक चैनल संसद की कार्यवाही

का है। प्रादेशिक भाषाओं में उपग्रह चैनल है। 15 चैनल राज्यस्तरीय संजाल के रूप में चलते हैं। दूरदर्शन का अंतर्राष्ट्रीय चैनल है– डी.डी. इंडिया।

1. डी.डी.–1 राष्ट्रीय चैनल– इसमें तीन स्तरों की समन्वित सेवा पेश की जाती है– राष्ट्रीय कार्यक्रम, क्षेत्रीय कार्यक्रम और स्थानीय कार्यक्रम, जिन्हें बंटे हुए समय के अनुसार देखा जा सकता है। इस सेवा को 1,131 टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटरों से प्रसारित किया जाता है, ताकि पूरे देश में सामान्य टेलीविजन सेटों पर लोग देख सकें। राष्ट्रीय महत्व के सभी कार्यक्रम, जैसे– स्वतंत्रता दिवस समारोह, गणतंत्र दिवस परेड, संसद के महत्वपूर्ण कवरेज, चुनाव, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय खेल कूद आदि का डी.डी.वन पर लाइव प्रसारण किया जाता है।

2. डी.डी.न्यूज– दिन–रात समाचार प्रसारण करने वाला यह चैनल तीन नवंबर, 2003 को शुरू किया गया था। उपग्रह के अलावा इसे देश में स्थापित कुछ गिने–चुने टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटर भी प्रसारित करते हैं। इस चैनल पर 42 समाचार बुलेटिन प्रसारित किए जाते हैं, जिनमें 22 हिन्दी में, अंग्रेजी के 13 और सात बुलेटिन दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल से रिले किए जाते हैं।

3. डी.डी. स्पोर्ट्स– मार्च, 1999 में इसका प्रसारण शुरू हुआ। इसकी विशेषता है कि इस पर न केवल अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय अपितु प्रादेशिक और क्षेत्रीय स्तर पर आयोजित खेल कूद के सभी टूर्नामेंट दिखाए जाते हैं। दूरदर्शन इन्हें लोकहित में कवर करता है न कि

स्पॉन्सरशिप या विज्ञापनों के कारण। उपग्रह से प्रसारित जितने स्पोर्ट्स चैनल हैं, उनमें केवल यही एक चैनल है, जो बिना किसी शुल्क के (फ्री टू एयर) केबल चैनलों पर भी दिखाया जाता है।

4. डी.डी. भारती– 26 जनवरी, 2002 से प्रारंभ इस चैनल की विशेषता है कि यह कलाओं और सांस्कृतिक विषयों पर ऊंची गुणवत्ता के कार्यक्रम पेश करता है। प्रातःकालीन सभा में इस पर स्वास्थ्य, योग और दोपहर की सभा में बच्चों और युवाओं के लिए विशेष कार्यक्रम और शाम को संगीत और कलात्मक कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं।

5. डी.डी. इंडिया–14 मार्च, 1995 को यह शुरू हुआ और इनसेट उपग्रह के अतिरिक्त पैस और पैन उपग्रहों के जरिए इसकी सेवा 172 देशों में देखी जाती है। इसमें समेकित रूप से भारत संबंधी समाचारों के अलावा यहां के जीवन, कला और संस्कृति की झलक देखने को मिलती हैं। कई देशों में प्रवासी भारतीय इस चैनल के जरिए अपने को भारत से जुड़ा महसूस करते हैं। कनाड़ा, अमेरिका, जापान, ब्रिटेन आदि देशों में वहां की केबल टेजीविजन कंपनियां इस चैनल को दर्शकों के लिए पे–चैनल के रूप में उपलब्ध कराती हैं। दूरदर्शन को इससे रॉयल्टी प्राप्त होती है।

6. क्षेत्रीय भाषाओं के उपग्रह चैनल– दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल हिन्दी और अंगेजी में प्रसारण करते हैं। इसके अतिरिक्त, कई क्षेत्रीय भाषाओं में दूरदर्शन के उपग्रह चैनलों से प्रसारण किया जाता है। ये चैनल हैं डी.डी. बंगाल (1992), डी.डी. चंदना (कन्नड़ 1994), डी.डी. गुजराती (1994), कशीर (2000), डी.डी.पूर्वोत्तर प्रदेश (असमी और

पूर्वोत्तर की अन्य भाषाओं में), डी.डी. पंजाबी (1998), डी.डी. सह्यद्री (मराठी, 1993), डी.डी. मलयालम (1994), डी.डी. उड़िया (1994), डी. डी. पोधिगई (तमिल, में–1993)।

7. **दूरदर्शन के क्षेत्रीय नेटवर्क**–यह विशिष्ट सेवा 12 प्रदेशों की राजधानियों से दोपहर से रात 8 बजे के बीच प्रसारित की जाती है, जिसे उस प्रदेश के सारे केन्द्र रिले करते हैं।

8. **दूरदर्शन पर खेती–किसानी**– दूरदर्शन ने खेती–किसानी और अन्य ग्रामीण विषयों पर क्षेत्र विशेष की खास जरूरतों और सामयिक सूचनाओं को शीघ्रता से प्रसारित करने के लिए 'नैरोकास्टिंग' की योजना 2004 से चलाई है। जिसमें 36 केन्द्रों से सामयिक प्रसारण होते हैं और 180 ट्रांसमीटरों से इन्हें संबंधित लोगों तक पहुंचाया जाता है।

9. **डी.डी. डिरेक्ट प्लस**– 16 दिसम्बर, 2004 से के.यू. बैंड पर दूरदर्शन की यह डी.टी.एच. सेवा प्रारंभ हुई जिसे देश में कहीं भी देखा जा सकता है। इसके लिए नियत सेटटॉप बॉक्स और 60 सेंटीमीटर व्यास की पैराबोलिक छोटी डिश लगाकर उपग्रह से सीधे इस सेवा को देखा जा सकता है। फिलहाल डी.डी. डिरेक्ट प्लस के डिलिवरी प्लेटफॉर्म द्वारा 69 टी.वी. चैनल और 26 रेडियो प्रसारित किए जा रहे हैं, जिनमें दूरदर्शन के अपने टी.वी. चैनलों के अलावा निजी प्रसारकों के फ्री टू एयर चैनल भी हैं।

10. **डिजिटल टी.वी. सर्विस**– यह 2003 में चार मेट्रो शहरों में शुरू की गई है। यह टेरेस्ट्रियल ट्रांसमीटरों से प्रसारित की जाती है।

जिनके पास डिजिटल टी.वी. सेट है, वे लोग इसे वैसे ही देख सकते हैं, जैसे बिना किसी डिश के दूरदर्शन की मुख्य/राष्ट्रीय सेवा साधारण एंटिना लगाकर देखी जा सकती है।

11. मोबाइल फोन– दूरदर्शन की एक प्रायोगिक सेवा दिल्ली में 2007 में शुरू की गई है, जो अभी केवल सीमित क्षेत्र में उपलब्ध है।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की स्वायत्तता एवं प्रसार भारती :

भारतीय इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों की स्वायत्तता के लिए चल रहे प्रयासों को बहुत बड़ी सफलता उस क्षण प्राप्त हुई, जब सर्वोच्च न्यायालय ने 9 फरवरी, 1995 को इस पर अपनी मुहर लगाते हुए अपने ऐतिहासिक फैसले में भारत सरकार को दिये गये आदेश में कहा कि देश में टी.वी. या रेडियो का नियंत्रण स्वतंत्र, स्वायत्तशासी व सार्वजनिक हाथों में हो, न कि सरकार अथवा निजी एजेंसियों के पास। 193 पृष्ठों के फैसले में जस्टिस पी.बी. सावंत, एस. मोहन और बी.पी. जीवन की तीन सदस्यीय पीठ ने कहा, हवा की तरंगें या आवृत्ति सार्वजनिक सम्पत्ति है और उनके प्रयोग का अधिकार और उनका निर्धारण एक सार्वजनिक संस्था द्वारा हो, ताकि जनता के हितों की रक्षा होने के साथ ही उसके अधिकारों पर हमले को रोका जा सके।

सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला सूचना और प्रसारण मंत्रालय द्वारा दायर एक विशेष अनुमति याचिका पर दिया जिसमें छह देशीय क्रिकेट श्रृंखला के मैचों के सीधे प्रसारण का आदेश विदेशी टेलीविजन एजेंसी ट्रांसवर्ल्ड इंटरनेशनल (टी.डब्ल्यू.आई.) को कलकत्ता उच्च

न्यायालय द्वारा दिये जाने को चुनौती दी गयी थी। विवाद ने उस समय नया मोड़ लिया जब सूचना व प्रसारण सचिव ने एक आदेश द्वारा टी.डब्ल्यू.आई. पर यह बंदिश लगा दी कि उसे अपलिंकिंग के लिए सिग्लन दूरदर्शन से ही लेने होंगे। वह अपनी प्रणाली से विकसित किये सिग्नलों का प्रयोग नहीं कर सकता। न्यायालय ने उस समय इस आदेश पर स्थगनादेश देते हुए टी.डब्ल्यू.आई. को अपने सिग्नल प्रयोग करने की अनुमति दे दी थी। शर्त यह लगायी थी कि टी.डब्ल्यू. आई. के कैमरे जहां मैच हो रहे हैं, वहां सिर्फ मैदान के ही दृश्य दिखायेंगे। यही विवाद पुनः 1994 में वेस्टइण्डीज टीम के दौरे और त्रिकोणीय श्रृंखला के समय भी उठा था। सुप्रीम कोर्ट ने संविधान की धारा 19 (1) (ए) में उल्लखित विचारों की अभिव्यक्ति व भाषण की स्वतंत्रता का हवाला देते हुए कहा कि किसी को भी सूचना भेजने और प्राप्त करने से नहीं रोका जा सकता। नागरिकों को सूचनाओं के आदान प्रदान का मौलिक अधिकार प्राप्त है और टेलीविजन प्रसारण को भी इसी संदर्भ में लिया जा सकता है। लेकिन इन अधिकारों के दुरूपयोग को रोकने के लिए जन प्रतिनिधियों की एक निगरानी समिति गठित की जा सकती है।

न्यायाधीशों का मानना है कि यह समिति सार्वजनिक सम्पत्ति की कीमत पर थोपी गयी है, जिसमें इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का प्रयोग भी शामिल था। साथ ही संविधान के तहत भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार पर भी रोक लगायी गयी है। न्यायालय के इस ऐतिहासिक निर्णय के बाद केन्द्र सरकार से तत्काल सभी वर्गों के एक स्वतंत्र स्वायत्तशासी निगम के गठन की अपेक्षा की गयी।

न्यायाधीशों ने स्पष्ट किया कि भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल अधिकार में सूचनाओं का प्रभावशाली ढंग से आदान–प्रदान शामिल है और देश की बड़ी जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए यह आदान–प्रदान देश ही नही, विदेश से भी होना चाहिए। सूचनाओं के आदान–प्रदान की कोई भौगोलिक सीमा नहीं है। अतः प्रत्येक नागरिक को संचार माध्यमों के उद्देश्यपूर्ण प्रयोग का पूरा अधिकार है। न्यायालय ने कहा कि सम्प्रति इलेक्ट्रॉनिक मीडिया (टी.वी.और रेडियो) सूचनाओं के आदान–प्रदान का सर्वाधिक सशक्त माध्यम हैं। जिन हवाई तरंगों पर पाबन्दियों से इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और अखबारों को क्षति उठानी पड़ी है वे सार्वजनिक सम्पत्ति हैं और सोसाइटी के लाभार्थ इनका प्रयोग किया जाना चाहिए।

उच्चतम न्यायालय के इस ऐतिहासिक फैसले में इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से सरकारी एकाधिकार समाप्त करने एवं स्वतंत्र तथा स्वायत्तशासी प्रसारण प्राधिकरण की स्थापना हेतु निर्देशित किया गया है। स्वाधीनता के पश्चात् प्रथमतः सर्वोच्च न्यायिक संस्था ने आकाशवाणी एवं दूरदर्शन को कठोर सरकारी नियंत्रणों से मुक्त करने के लिए अपना निर्णय दिया। इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के लिए न्यायालय द्वारा निर्धारित नई सूचना व्यवस्था के अंतर्गत किसी भी व्यक्ति का निजी तौर पर किसी संस्था या संगठन अथवा किसी सरकार या सरकारी संगठन का इन माध्यमों या किसी माध्यम पर विशिष्ट (एक्सक्यूसिव) अधिकार नहीं होगा। इनका सारा कार्य संसद द्वारा बनाये गये कानूनों के आधार पर संचालित होगा।

न्यायालय के उक्त निर्णय को यदि परिस्थितियों के संदर्भ में देखा जाये तो स्पष्ट है कि चूंकि संसद एवं सरकार प्रसार भारती एक्ट पारित कर लागू कर चुकी है। अतः केन्द्र सरकार को इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों को स्वायत्तता प्रदान करने में कोई असुविधा नहीं होगा। न्यायालय ने अपने फैसले में केन्द्र सरकार को निर्देशित किया है कि वह वायु तरंगों (एयर वेव्स) को नियंत्रित एवं संचालित करने के लिए तत्काल एक स्वतंत्र एवं स्वायत्त प्राधिकरण का गठन करे। इस संदर्भ में सरकारी प्रयासों और कामकाज की धीमी गति और धीमी प्रगति को देखते हुए कहा जा सकता है कि इस प्रस्तावित प्राधिकरण की सफलता एवं इसके प्रभावी कामकाज का सारा दारोमदार इस बात पर निर्भर है कि इसमें किस प्रकार के लोग (कर्मचारी) लिये जाते हैं। जिनके हाथों में इसका नियंत्रण होगा उनकी गुणवत्ता एवं अन्य बातों की परख जरूर है।

न्यायालय ने अपने अलग–अलग किन्तु एक दूसरे से सहमत निर्णयों में स्पष्ट रूप से कहा कि नागरिकों के स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अधिकारों की संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप यह कदापि संभव नहीं है कि प्रसारण पर सरकार अथवा किसी अन्य व्यक्ति का एकाधिकार हो। प्रसारणकर्ता चाहे शासन हो, सार्वजनिक निगम (पब्लिक कारपोरेशन) हो अथवा कोई व्यक्ति निजी रूप से प्रसारण पर एकाधिकार असंवैधानिक है। न्यायमूर्ति पी.बी. सावंत, न्यायमूर्ति मोहन तथा न्यायमूर्ति बी.पी. जीवन रेड्डी ने इसी आशय के फैसले दिये। न्यायमूर्तियों ने संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ए) के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रावधानों को सुनिश्चित करने के लिए निर्णय में कहा

कि यह आवश्यक नहीं है कि इसके लिए निजी प्रसारण स्टेशन खोले जायें। ऐसा करने से अर्थात् प्राइवेट प्रसारण प्रारंभ होने पर शक्तिशाली, आर्थिक, व्यावसायिक एवं राजनीतिक प्रवृत्तियों के लिए दरवाजे खुल जायेंगे जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की दृष्टि से कदापि उपयोगी नहीं है। निश्चित रूप से इन प्रभावों से प्रसारण को बचाने के लिए कार्यक्रमों पर कठोर, प्रभावशाली नियंत्रण जरूरी है। न्यायालय के निर्णय ने कहाकि वायु तरंगे, प्रसारण तरंगें जनता की सम्पत्ति है और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के संवैधानिक प्रावधान धारा, 19 (1) (ए) में यह व्यवस्था कदापि नहीं है, यह मौलिक अधिकार कदापि नहीं दिये गये हैं कि इस जन–सम्पत्ति का उपयोग कर या इसके सहयोग–संलग्नता के द्वारा सूचनाओं का आदान–प्रदान किया जाये। जनसम्पत्ति (प्रसारण वायु तरंगों) का उपयोग विधि द्वारा निर्धारित परिस्थितियों में, निर्धारित नियंत्रणों एवं शर्तों के अधीन ही किया जा सकता है। सामान्य शब्दों में संविधान में वर्णित अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्राविधान प्रसारण वायुतरंगों के उपयोग द्वारा अपने निजी विचारों एवं सूचनाओं के प्रसारण की छूट नहीं देता। यदि कोई चाहे तो वह प्रसारण वायु तरंगों का उपयोग किये बिना ऐसा कर सकता है। इसलिए स्वतंत्र एवं स्वायत्त प्रसारण संगठन की स्थापना एवं गठन ऐसे किया जाना चाहिए कि सरकार के नियंत्रण से यह मुक्त हो और जनहित के विषयों पर निष्पक्ष रूप से कार्य कर सके। जनहित के विषयों की प्रस्तुति और चर्चा के समय इस बात की पुष्टि कर ली जानी चाहिए कि संबद्ध विषय के सभी पहलू संतुलित ढंग से प्रस्तुत किये जा रहे हैं। ऐसा नहीं प्रतीत होना चाहिए कि किसी एक विचारधारा को और आगे बढ़ाया जा रहा है। इससे जनमाध्यम की

साख बढ़ेगी, जो नियंत्रित जनमाध्यम के लिए संभव नहीं है। निर्णय में कहा गया है कि संविधान में मुद्रित और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में एकाधिकार की मनाही है। संविधान की धारा 19 (6) में केवल व्यवसाय ट्रेड और उद्योग के क्षेत्र में एकल अधिकारी की छूट प्रदान की गयी है। देश में निजी प्रसारण स्टेशनों को न्यायालय ने कहा कि यह निर्णय संसद को करना है कि निजी प्रसारण स्टेशनों की स्थापना की अनुमति दी जाये अथवा नहीं। यह मुद्दा न्यायालय के निर्णय का नहीं हो सकता। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के संवैधानिक प्रावधान में जन प्रसारण (पब्लिक ब्राड कास्टिंग) निहित है, निजी (प्राइवेट) प्रसारण नहीं। न्यायाधीशों ने कहा कि प्रेस की स्वतंत्रता संविधान की धारा, 19 (1) (ए) में निहित है और इसके दूसरे आधार हैं। अतः प्रसारण के मामले की तुलना प्रेस की स्वतंत्रता से करना उचित नहीं होगा। प्रसारण वायु तरंगें जन सम्पत्ति है और अच्छा होगा कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की दृष्टि से इन पर जनता का ही पूर्ण अधिकार हो।

अपने 118 पृष्ठों के निर्णय में न्यायमूर्ति रेड्डी ने कहा कि यद्यपि भारत में निजी प्रसारण की अनुमति नहीं दी गयी है, किन्तु भारतीय सीमा के निकट या थोड़ी दूरी पर भी ऐसे प्रसारण केन्द्रों की स्थापना की आशंका से इंकार नहीं किया जा सकता जो खासकर भारतीयों के लिए प्रसारण करते हों। वस्तुतः ऐसे कुछ केन्द्र स्थापित भी हुए हैं। कहा जाता है कि वायुमण्डल संचार उपग्रहों से भर चुका है और इनसे मनचाही संख्या में चैनल एवं फ्रीक्वेंसी की सुविधा प्राप्त की जा सकती है।

भारतीय टेलीग्राफ कानून 1885 (इण्डियन टेलीग्राम एक्ट, 1885) में संशोधन का सुझाव देते हुए न्यायमूर्ति ने कहा कि इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर वर्तमान में लागू यह कानून वस्तुतः उस समय पूर्ण रूप से अन्य उद्देश्यों के लिए बना था। यह कानून इस बात का परिणाम है कि सूचना एवं संचार के क्षेत्र में हुई बहुविध प्रगति एवं विकास के साथ कानून में बदलाव नहीं किये गये। अतः संसद को चाहिए कि वह जनमाध्यमों को जनता के हाथों में सौपने के लिए समुचित कानून बनाये।

सर्वोच्च न्यायालय के अन्य अनेक निर्णयों का उल्लेख करते हुए न्यायमूर्ति रेड्डी ने कहा कि विचारों, अभिमत, वैचारिकी एवं दृष्टिकाणों की बहुलता को सुनिश्चित करने की दृष्टि से प्रसारण माध्यम को किसी एक के नियंत्रण में रखने की इजाजत नहीं दी जा सकती, चाहे वह कोई सरकार हो, कोई व्यक्ति हो, कोई एक संगठन हो या कोई संस्था। निर्णय में कहा गया कि सरकारी नियंत्रण का अर्थ है सत्तरूढ़ किसी एकदल या दलों का समय–समय पर नियंत्रण। ऐसे नियंत्रण का अर्थ है प्रसारण माध्यम से प्रसारित होने वाले विचारों, समाचारों एवं अभिमत को तोड़ा मरोड़ा जाना या उसे, दूसरे रूप (रंग) में प्रस्तुत किया जाना। यह स्वस्थ लोकतंत्र के विकास के लिए कदापि उपयोगी नहीं है, क्योंकि इसमें स्वतंत्र विचारों एवं मत की अभिव्यक्ति संभव नहीं है। प्रसार भारती एक्ट 1990 के संदर्भ में निर्णय में कहा गया है कि केन्द्र सरकार ने एक्ट की धारा 1 (3) के अंतर्गत इस कानून के अस्तित्व में आने के संबंध में निश्चित तिथि की अधिसूचना नहीं जारी की। इससे यह अस्तित्व में नही आ सका।

इस संबंध में मुकदमा प्रस्तुत करने वाले पक्षों, क्रिकेट एसोसियेशन ऑफ बंगाल, एवं बोर्ड आफ क्रिकेट कण्ट्रोल इन इण्डिया द्वारा प्रस्तुत पक्षों का संदर्भ लेते हुए न्यायालय ने कहा कि सरकार हीरो कप टूर्नामण्ट के टेलीकास्ट की अनुमति देने को बाध्य है। किसी को भी (आयोजकों सहित) इन मैचों की वीडियोग्राफी करने का पूरा अधिकार है। इसके बाद वीडियो को देश से बाहर भी ले जाया जा सकता है तथा बाहर के स्टेशनों से इनका प्रसारण भी किया जा सकता है। निर्णय में कहा गया कि संसद को यह निर्णय करना है कि निजी (प्राइवेट) ब्राडकास्टिंग की अनुमति दी जाये अथवा नहीं। यदि किसी भी स्थिति में निजी प्रसारण की अनुमति दी जाती है तो इसे पूर्णतः बाजार की शक्तियों (मार्केट फोर्सेस) पर नहीं छोड़ा जा सकता, ताकि हर वर्ग के लोगों की बहुविध वाणी और विचारों की इन माध्यमों तक पहुंच हो।

अन्य प्रभाव : स्वायत्तता के प्रयासों के प्रभाव इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के अनेक क्षेत्रों पर पड़ रहे हैं। औद्योगिक युग में जीवन का हर पहलू मशीनों से जुड़ा है, यही इस युग का यथार्थ है। शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र में श्रव्य–दृश्य माध्यमों को लोक शिक्षक के रूप में प्रतिष्ठित करने का उपक्रम तेजी से चल रहा है और इसमें अपेक्षित सफलता भी मिल रही है। अतीत में बच्चे अपने अभिभावकों, शिक्षकों, धर्मगुरूओं और पड़ोसियों से मिलने वाले संदेशों तक प्रतिबिम्बों से अपनी धारणाओं को विकसित करते थे परन्तु आज स्थिति पूरी तरह से बदल गयी है। आज टेलीविजन के परदे पर पूरी दुनिया का दर्शन हो रहा है। समुद्र की गहराइयों से लेकर अंतरिक्ष की पूरी झलक पाने से बच्चे का

मानस पटल काफी व्यापक हुआ है। अवधारणा की प्रक्रिया बहुत तेजी से परिवर्तित हो रही है और परिवर्तन का यह सिलसिला अनवरत जारी है। यथार्थ की अवधारणा बनाने के लिए उसे दृश्य और श्रवण इन्द्रियों पर अधिक आश्रित होना पड़ेगा। एलवि टाफलर का कहना है कि हमारे बीच सूचना बम का विस्फोट हो रहा है, जिसके चलते प्रतिबिम्बों की होने वाली बौछार से उसे ग्रहण करने और निजी जीवन में तदनुरूप व्यवहार करने की प्रक्रिया तथा तौर–तरीके काफी तेजी से बदल रहे हैं। हम सूचना मण्डल से दूसरे तरंग से अब तीसरे तरंग की ओर अपने को परिवर्तित कर रहे हैं। सूचना प्रौद्योगिकी में हुई प्रगति ने सम्प्रेषण के माध्यम को नया आयाम प्रदान किया है। शिक्षा के प्रसार में प्रौद्योगिकी सक्रिय भूमिका निभा रही है।

सूचना के सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत इलेक्ट्रॉनिक हैं– इंफारमेशन नेटवर्क और सीडी रोम्स। कोई भी व्यक्ति स्थानीय नेटवर्क के माध्यम से स्थानीय माहौल के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है, वहीं दूसरी ओर कम्प्यूटर के माध्यम से एक स्थान पर बैठकर बहुत आसानी से पूरी दुनिया के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसे कम्प्यूटर फ्रिक्वेंसी मोड्यूलेटर और दूर संचार संपर्कों का आपस में जोड़कर प्राप्त किया जा सकता हैं। एक बार जब क्षेत्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय डेटाबेस से सम्पर्क स्थापित हो जाता है तब वांछित सूचनाओं के लिए अन्तरक्रियाएं की जा सकती हैं। अब इस प्रकार की सेवाएं कामर्शियल आधार पर भी उपलब्ध हैं।

एक मल्टीमीडिया डिस्क में 75 हजार से अधिक फोटोग्राफिक प्रतिबिम्बों को रखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त 16 घंटे से अधिक

की श्रव्य और तीस हजार पृष्ठों से अधिक की सामग्री इसमें रखी जा सकती है। मल्टीमीडिया प्लेयर को उसके आवश्यक उपकरणों के साथ ब्रीफकेस में भी रखा जा सकता है। सोनी एण्ड फिलिप्स कारपोरेशन ने इस पोर्टेबुल मल्टीमीडिया का विपणन प्रारंभ कर दिया है। मल्टीमीडिया डिस्क पर अब 200 से अधिक टाइटिलें उपलब्ध हैं। इनमें तमाम तरह की सूचनाएं रहती हैं। एवी ऑन लाइन शीर्षक से उपलब्ध डिस्क शैक्षणिक फिल्म निर्माताओं के लिए काफी उपयोगी है। एवी आन लाइन नेशनल इंफारमेशन सेंटर फॉर एजूकेशनल मीडिया का उत्पादन है। यह शैक्षिक श्रव्य–दृश्य सामग्री का व्यापक भण्डार है जिसमें वीडियो टेप्स, फिल्म, आडियो कैसेट, फिल्म स्ट्रिप्स आदि रहते हैं। एवीऑनलाइन में निर्देशनात्मक, सूचनात्मक और मनोरंजनात्मक सामग्री 60 से अधिक भाषाओं में उपलब्ध है।

प्रसार भारती :

1963 में प्रसारण और सूचना माध्यम समिति का गठन किया गया। ए.के. चन्द्रा की अध्यक्षता वाली समिति ने 1966 में दी रिपोर्ट में आकाशवाणी और दूरदर्शन को दो स्वतंत्र संगठनों के रूप में चलाने की सिफारिश की। इसे अमली जामा 1976 में पहनाया गया। 1977 में सत्ता संभाने वाली जनता पार्टी सरकार ने आकाशवाणी और दूरदर्शन की विश्वसनीयता बहाल करने का इरादा जताया । इसी के तहत बी. जी. वर्गीज की अध्यक्षता में एक कार्य दल का गठन किया गया। इनके 1978 में दी रिपोर्ट में सुझाव दिया कि राष्ट्रीय ट्रस्ट (आकाश भारती) के रूप में एक स्वतंत्र निकाय का गठन कर, आकाशवाणी और दूरदर्शन को उसके तहत रख जाए। 1979 में आकाश भारती विधेयक

का प्रारूप तैयार किया गया, लेकिन उसी वर्ष सरकार के गिरने के कारण विधेयक अधर में लटक रहा। 1980 में इंदिरा गाधी की सत्ता में वापसी हुई और उसी के साथ आकाशवाणी और दूरदर्शन की स्वायत्तता का प्रश्न विलुप्त हो गया। 1980 से 1989 तक कांग्रेसी शासन के दौरान कोई चर्चा नहीं हुई।

1989 में विश्वनाथ प्रताप सिंह के प्रधानमन्त्रित्वकाल में राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार आई। तत्कालीन सूचना मंत्री पी. उपेन्द्र की पहल पर आकाशवाणी और दूरदर्शन को स्वायत्तता देने के प्रयास नए सिरे से शुरू हुए। प्रसार भारती विधेयक का मसौदा तैयार किया गया तथा संसद और राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद 1990 में यह अधिनियम बन गया। लेकिन इससे पहले कि अधिसूचना जारी हो पाती, वी.पी. सिंह सरकार गिर गई। 1991 से 1996 तक कांग्रेसी सरकार ने इस अधिनियम को ठण्डे बस्ते में डाले रखा। इन्द्र कुमार गुजराल के नेतृत्व वाली संयुक्त मोर्चा सरकार में प्रसार भारती अधिनियम को लेकर फिर से सुगबुगाहट शुरू हुई। तत्कालीन सूचना व प्रसारण मंत्री जयपाल रेड्डी की पहल पर 22 जुलाई,1997 को अधिसूचना जारी की गई। अधिसूचना के तहत प्रसार भारती अधिनियम 15 सितम्बर, 1997 से लागू हो गया। 23 नवंबर को प्रसार भारती निगम (ब्रॉडकास्टिंग कारपोरेशन ऑफ इंडिया) का गठन किया गया।

प्रसार भारती बोर्ड की संरचना : प्रसार भारती निगम का कामकाज चलाने के लिए प्रसार भारती बोर्ड के गठन का प्रावधान है। इसके गठन को लेकर भी प्रारंभ से विवाद रहा। संयुक्त मोर्चा सरकार और राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) की सरकार, दोनों ने अध्यादेशों

में बोर्ड की संरचना में रद्दोबदल की कोशिश की। उदाहरण के लिए मूल अधिनियम में सदस्य (वित्त) और सदस्य (कार्मिक) के पूर्णकालिक पदों का प्रावधान है, जबकि संयुक्त मोर्चा सरकार द्वारा जारी अध्यादेश में इसे पदेन सदस्य बनाने की कोशिश की गई। इसी तरह कार्यकारी सदस्य की नियुक्ति के समय उसकी अधिकतम आयु 62 वर्ष होने का प्रावधान मूल अधिनियम में रखा गया था। संयुक्त मोर्चा सरकार के अध्यादेश में अधिकतम आयु सीमा की धारा ही समाप्त कर दी गई। मूल अधिनियम के अनुसार, प्रसार भारती बोर्ड की संरचना इस प्रकार है—

1. अध्यक्ष—एक पद
2. कार्यकारी सदस्य
3. सदस्य (वित्त)
4. सदस्य (कार्मिक)
5. छह अंशकालिक सदस्य
6. महानिदेशक (आकाशवाणी)—पदेन
7. महानिदेशक (दूरदर्शन)— पदेन
8. सूचना व प्रसारण मंत्रालय का एक प्रतिनिधि
9. प्रसार भारती निगम कर्मचारियों के दो प्रतिनिधि—एकः अभियंताओं द्वारा निर्वाचित, दूसरा अन्य कर्मचारियों द्वारा।

नियुक्त करती रही हैं। नियुक्ति का पैमाना व्यक्ति की राजनीतिक प्रतिबद्धता और सरकारी दल से उसकी नजदीकी है। नवंबर, 1997 को पहली बार बोर्ड के गठन के समय वामपंथी रूझान

के प्रख्यात पत्रकार निखिल चक्रवर्ती को इसका अध्यक्ष बनाया गया था। उनके निधन के बाद पहले तो पद खाली रहा और बाद में बोर्ड सदस्य प्रो. यू.आर. राव (अन्तरिक्ष वैज्ञानिक) को अध्यक्ष बनाया गया।

प्रसार भारती : संसदीय नियंत्रण और स्वायत्तता–

प्रसार भारती अधिनियम की धारा 13 के अनुसार, प्रसार भारती निगम का कामकाज देखने के लिए 22 सदस्यीय समिति का गठन किया गयाा। इनमें 15 लोकसभा के और 7 सदस्य राज्यसभा से होंगे।

प्रसार भारती बोर्ड

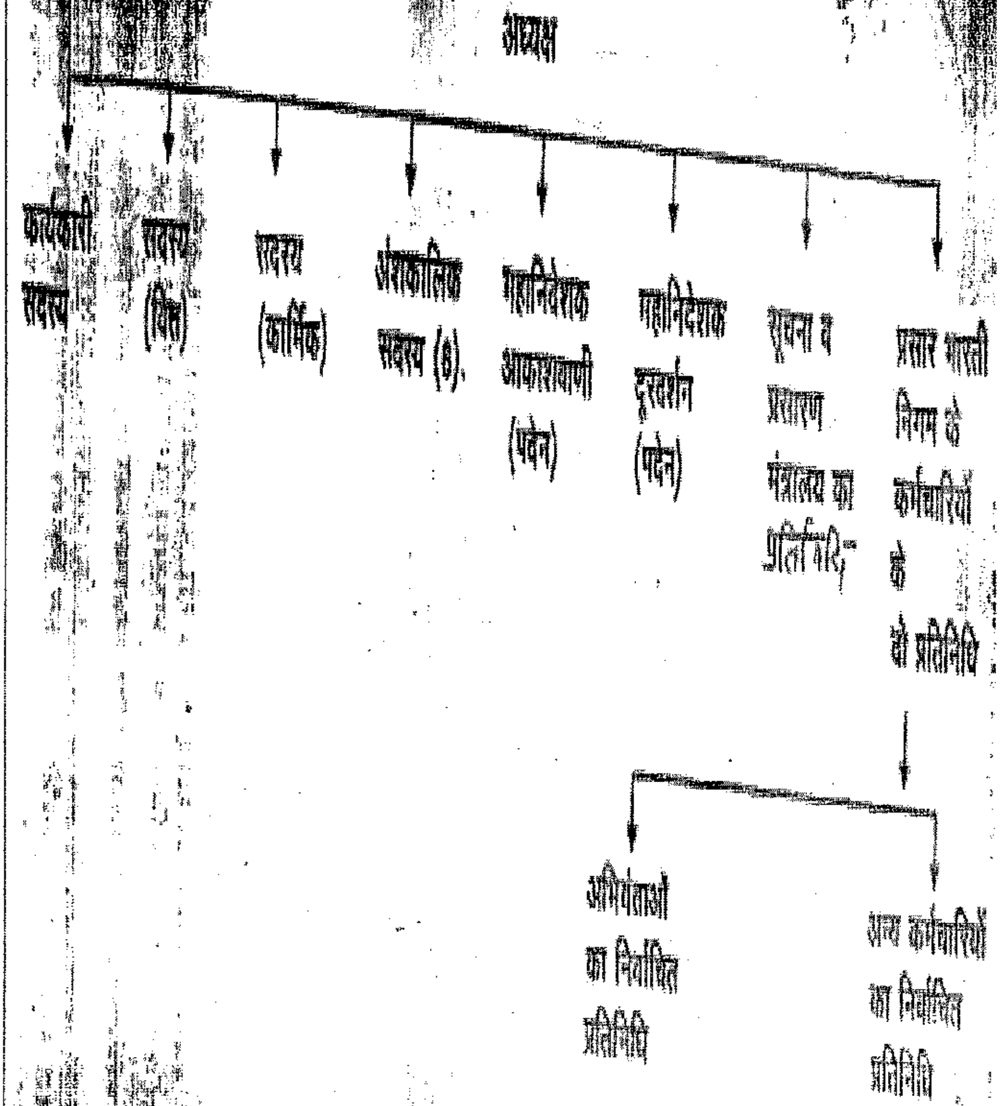
अध्यक्ष
कार्यकारी सदस्य
सदस्य (वित्त)
सदस्य (कार्मिक)
अंशकालिक सदस्य (6)
महानिदेशक आकाशवाणी (पदेन)
महानिदेशक दूरदर्शन (पदेन)
सूचना व प्रसारण मंत्रालय का प्रतिनिधि
प्रसार भारती निगम के कर्मचारियों के दो प्रतिनिधि
अभियंताओं का निर्वाचित प्रतिनिधि
अन्य कर्मचारियों का निर्वाचित प्रतिनिधि

उपर्युक्त प्रावधान के पीछे उद्देश्य यह है कि प्रसार भारती निगम सरकारी नियंत्रण से मुक्त रहे और उसकी स्वायत्तता बरकरार रहे। लेकिन प्रसार भारती अधिनियम लागू होने के समय प्रेस परिषद के तत्कालीन अध्यक्ष पी.वी. सावंत और अन्य विद्वानों ने मत व्यक्त किया कि संसदीय समिति का नियंत्रण भी परोक्ष रूप से सरकारी नियंत्रण है, क्योंकि समिति में उसी दल के सदस्य अधिक होंगे, जो सत्ता में होगी। प्रसार भारती की स्वायत्तता की पक्षधर संयुक्त मोर्चा सरकार ने उपरोक्त तर्क को मानते हुए संसदीय समिति की व्यवस्था अध्यादेश के जरिए समाप्त कर दी थी, लेकिन एन.डी.ए. की सरकार ने अपने अध्यादेश में इसे बहाल कर लिया। मौजूदा समय में भी यह व्यवस्था लागू है।

प्रसारण परिषद की व्यवस्था : प्रसार भारती अधिनियम की धारा 14 और 15 में प्रसारण परिषद के गठन का प्रावधान है। इसका मुख्य कार्य कार्यक्रमों और तकनीकी गुणवत्ता, निजी जीवन में अतिक्रमण, तथ्यों को गलत तरीके से या तोड़–मरोड़ कर दिखाने तथा वस्तुनिष्ठता की कमी से संबंधित शिकायतों को स्वीकार करना और उनका निपटारा करना है। 1997 में जब प्रसार भारती अधिनियम लागू हुआ, उस समय प्रसारण विधेयक का मसौदा भी लगभग तैयार था। प्रसारण विधेयक से प्रसारण प्राधिकरण के गठन का प्रावधान था। प्रसारण प्राधिकरण को भी वे सारे काम सौंपना प्रस्तावित था, जो प्रसारण परिषद को सौंपे गए थे। तत्कालीन संयुक्त मोर्चा सरकार ने सोचा कि जब प्रसारण प्राधिकरण का गठन किया ही जाना है, तो फिर प्रसारण परिषद की क्या जरूरत? इसीलिए अध्यादेश में प्रसारण

परिषद की व्यवस्था समाप्त कर दी थी। एन.डी.ए. सरकार के अध्यादेश में प्रसारण परिषद की व्यवस्था को बहाल कर दिया गया। मौजूदा समय में प्रसारण माध्यमों के कार्यक्रमों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने वाली कोई एजेंसी सरकार के पास नहीं है, इसलिए अनेक कार्यक्रम अनैतिकता की हदें लांघ जाते हैं तथा दर्शक असहाय प्रसारण माध्यमों के मुद्दों जैसे–डी.टी.एच. या प्राइवेट एफ.एम. रेडियो प्रसारण को सुलझाने वाली कोई संस्था नहीं है। ऐसे में सरकार को बार–बार दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण (ट्राई) की शरण में जाना पड़ता है।

प्रसार भारती के अंग– आकाशवाणी और दूरदर्शन :

वर्तमान समय में जारी व्यवस्था के तहत प्रसार भारती निगम के दो मुख्य आवश्यक अंग आकाशवाणी और दूरदर्शन हैं। ये दोनों ही प्रसारण माध्यम थोड़े बहुत सुधार के साथ पहले जैसी स्थिति में ही हैं।

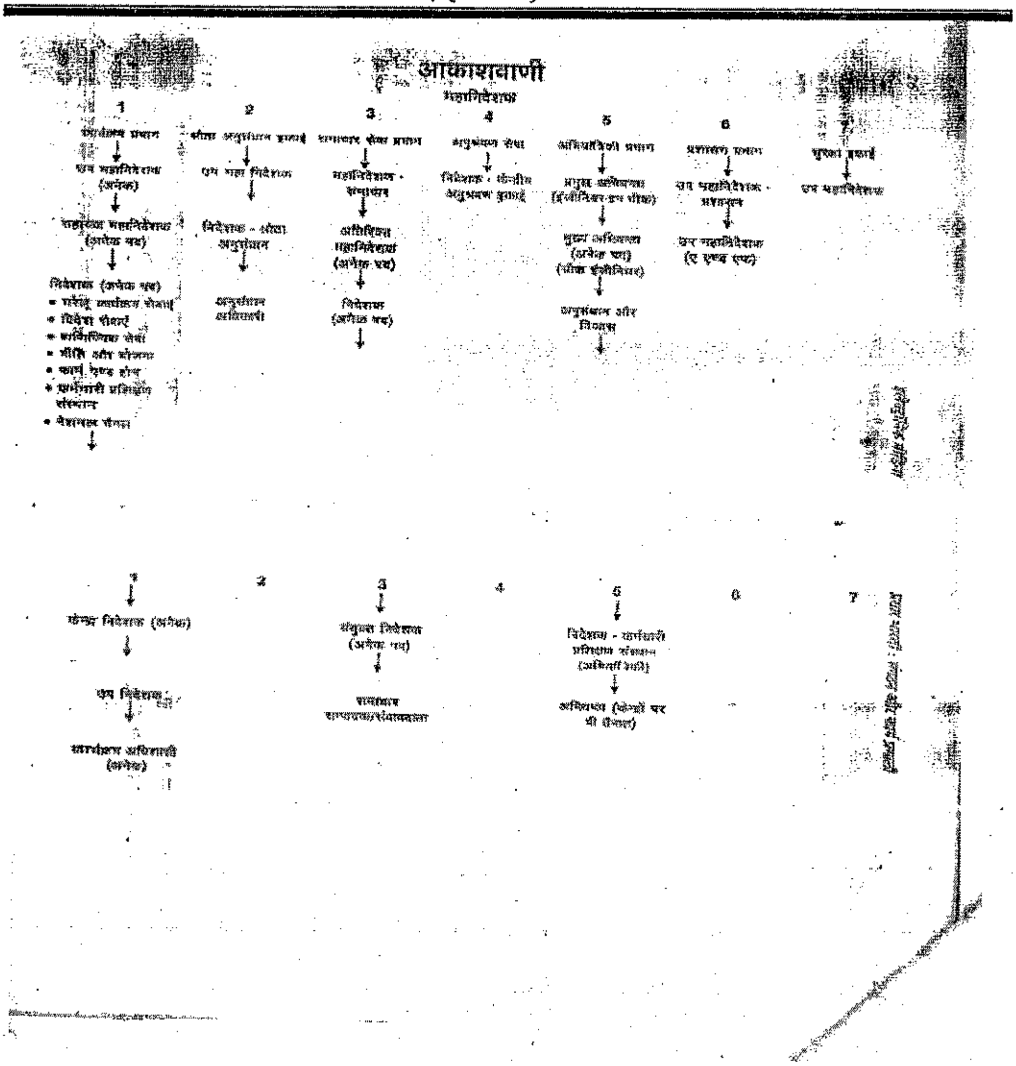

आकाशवाणी और दूरदर्शन के कामकाज में व्यावसायिकता की कमी दिखाई देती है। प्रसार भारती के गठन के बाद से ये प्रसारण माध्यम गंभीर आर्थिक संकट झेल रहे हैं। प्रसार भारती निगम के गठन के भी प्रसारण सेवा की स्थापना नहीं हो पाई है। निगम एक स्वतंत्र संगठन है, लेकिन इसमें काम करने वाले लोग सरकारी कर्मचारी/प्रशासनिक कार्य करने वाले लोग सूचना व प्रसारण मंत्रालय

के अधीन हैं तथा उन्हें मंत्रालय में किसी भी विभाग में स्थानांतरित किया जा सकता है।

आकाशवाणी का संगठन और ढाँचा : प्रसार भारती निगम के गठन के बाद आकाशवाणी का सांगठनिक ढाँचा नहीं बदला है। संगठन के दो सर्वाधिक प्रमुख अंग हैं– कार्यक्रम प्रभाग और सूचना सेवा प्रभाग। सूचना सेवा को इतना अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है कि इस प्रभाग के सर्वोच्च अधिकारी को महानिदेशक का दर्जा दिया गया है, जबकि आकाशवाणी संगठन में उच्चतम पद भी महानिदेशक का है। तीसरा प्रमुख अंग है अभियांत्रिकी प्रभाग। आकाशवाणी के संपूर्ण तंत्र के संचालन में इस प्रभाग की महत्वपूर्ण भूमिका है। इस प्रभाग में कार्यरत अभियंता अपनी उत्कृष्टता को लेकर कार्यक्रम प्रभाग के अधिकारियों से भिड़ते रहते हैं। संघर्ष का बिन्दु है– कार्यक्रम निर्माण करने वाला अधिक महत्वपूर्ण है या उसका ट्रान्समिशन करने वाला। समाचारसेवा प्रभाग का सर्वोच्च अधिकारी महानिदेशक (समाचार) है। उसके नीचे तीन या चार अतिरिक्त महानिदेशक (समाचार) हैं। उनके नीचे अनेक निदेशक हैं और उसके बाद संयुक्त निदेशक। तत्पश्चात् सम्पादकीय विभाग में समाचार सम्पादक और सहायक समाचार सम्पादक तथा विशेष संवाददाता और संवाददाता हैं।

कार्यक्रम विभाग में उपमहानिदेशक और सहायक महानिदेशक के कुछ पद है। इनके नीचे अनेक निदेशक हैं। ये सभी अधिकारी आकाशवाणी मुख्यालय में बैठते हैं। क्षेत्रीय स्तर पर भी सहायक महानिदेशकों के कुछ पदों की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक केन्द्र का

एक निदेशक होता है। उसके तहत अनेक कार्यक्रम अधिशासी होते हैं, जो कार्यक्रम निर्माण का काम करते हैं।

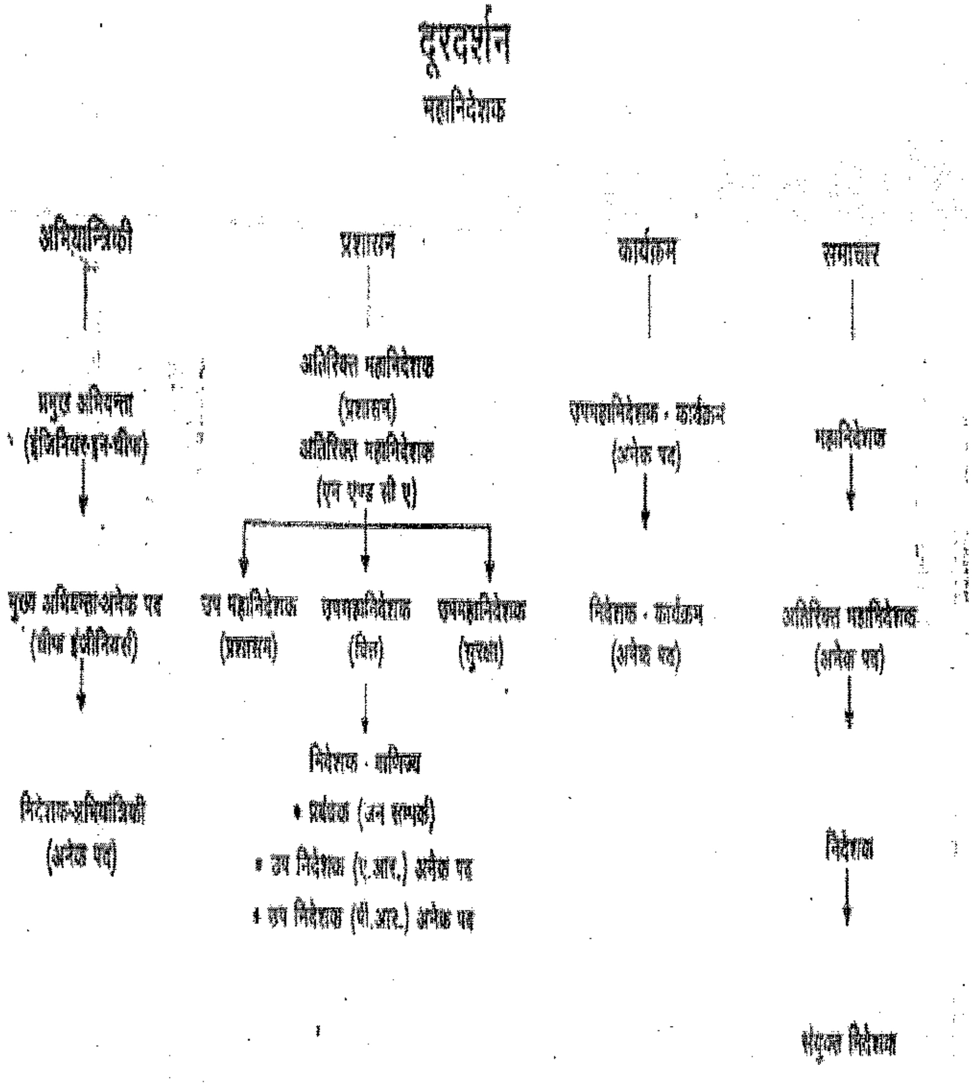

दूरदर्शन का साँगठनिक ढाँचा : आकाशवाणी की तरह ही दूरदर्शन के तीन प्रमुख भाग हैं– कार्यक्रम, अभियांत्रिकी और समाचार। दूरदर्शन में

कार्यक्रम और समाचार के मध्य की रेखा काफी मोटी है, क्योंकि दूरदर्शन समाचार (डी.डी. न्यूज) का अपना अलग चैनल है। समाचार सेवा प्रभाग अपना काम स्वतंत्र ढंग से करता है। कार्यक्रम निर्माण का ढाँचा भी बडा है। इस कार्य के लिए भी एक स्वतंत्र इकाई केन्द्रीय कार्यक्रम निर्माण केन्द्र (सी.पी.सी.) की स्थापना की गई है।

दूरदर्शन संगठन का सर्वोच्च अधिकारी महानिदेशक है। उसके अधीनस्थ दो अतिरिक्त महानिदेशक हैं। उसके बाद उप महानिदेशकों के कुछ पदों की व्यवस्था है। वाणिज्यिक गतिविधियाँ और कार्यक्रम निर्माण की देखरेख के लिए अनेक निदेशक हैं।

स्वायत्तता और चुनौतियाँ :

प्रसार भारती के मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सी.ई.ओ.) जवाहर सरकार के मत में— प्रसार भारती की स्थापना 28 नवंबर, 1997 को उस समय हुई जब सरकार ने प्रसार भारती अधिनियम, 1990 को अंततः लागू करने का निर्णय किया। आकाशवाणी और दूरदर्शन को सूचना और प्रसारण मंत्रालय से अलग करते हुए एक 'स्वायत्त निकाय' के अंतर्गत रखा गया। यह एक ऐतिहासिक निर्णय था जो संसद द्वारा लोक सेवा प्रसारक की स्थापना के लिए अधिनियम बनाए जाने के सात वर्ष बाद किया गया, जिसके स्वरूप को उसके लक्ष्यों और कारणों के कथन में व्यापक स्पष्ट किया गया है। "आकाशवाणी और दूरदर्शन को स्वायत्तता प्रदान करने के लिए एक स्वायत्तता निगम की स्थापना करने और उसे "आकाशवाणी तथा दूरदर्शन" द्वारा

निष्पादित किए जाने वाले कार्य सौंपने का प्रस्ताव किया गया, ताकि वे निष्पक्ष, विषयपरक और रचनात्मक ढंग से काम कर सकें। यह नवीनता, गतिशीलता और उच्चस्तरीय विश्वसनीयता एवं लचीलेपन के साथ समुचित स्वायत्त निकाय के रूप में काम करेगा। यह ऐसे लोकतांत्रिक ढंग से काम करेगा जिससे हमारी लोकतांत्रिक परंपराएं और संस्थान समृद्ध होंगे, निगम लोगों और संसद के प्रति जवाबदेह होगा, और देश की बहुरंगी परंपराओं, भाषाओं और संस्कृतियों को ध्यान में रखकर काम करेगा। तदनुरूप प्रसार भारती (ब्रॉडकॉस्टिंग कॉरपोरेशन आफ इंडिया) विधेयक संसद में पेश किया गया।"

संसदीय अधिनियम के कार्यान्वयन के 16 वर्ष बाद कोई भी भारतीय नागरिक निम्नांकित प्रश्न पूछ सकता है :

- क्या प्रसार भारती वास्तव में स्वायत्ता है ?
- क्या यह समुचित स्वायत्त निकाय के रूप में नवीनता, गतिशीता और विश्वसनीयता के साथ कार्य कर रहा है ?

इस प्रश्न का सीधे–सीधे 'हां' या 'नहीं' में उत्तर देना कठिन होगा, हालांकि, अनेक लोग इसका उत्तर नहीं के रूप में देने के लिए तत्पर होंगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि अधिक आकर्षक, अधिक गतिशील, अधिक रंग–बिरंगे, और अधिक मनोरंजन प्रदान करने वाले तथा सशक्त चैनलों और रेडियो स्टेशनों ने "आकाशवाणी और दूरदर्शन" को एक कोने में धकेल दिया है। घोषणाओं और विरोध प्रदर्शनों द्वारा इतिहास का मार्ग नहीं बदला जा सकता।

1997 में जब प्रसार भारती अस्तित्व में आया तो दूरदर्शन के केवल दो चैनल थे: डीडी–1 और डीडी–2 जिसमें से डीडी–2 मैट्रो शहरों में शुरू किया गया और बाद में टेरिस्ट्रियल यानी प्रादेशिक मोड में देश के अन्य शहरों तक प्रसारित किया गया। इसका अर्थ यह था कि टॉवरों के साथ लगाए गए टेरिस्ट्रियल ट्रांसमीटरों क माध्यम से एक–दूसरे तक प्रदर्शन रिले किया गया। प्राइवेट चैनलों की जो फसल आज दिखाई दे रही है इनमें से अनेक उन दिनों दूरदर्शन पर कार्यक्रमों के रूप में पनप रहे थे, जैसे एनडीटीवी और आज तक। हालांकि कुछ टीवी चैलनों की शुरूआत भी हो रही थी। अंततः वे अपने खुद के उपग्रह चैनलों के साथ अलग हो गए। आकाश मुक्त होने के बाद उनको ऐसा होना ही था। इसी प्रकार रेडियो के संदर्भ में विचार करें। 1997 में एफएम रेडियो प्रयोगात्मक चरण में था और केवल आकाशवाणी के गिने–चुने चैनल थे और इक्का–दुक्का निजी ऑपरेटर इस क्षेत्र में दिखाई देता था। यह सामान्य बात थी कि वायुतरंगें निजी क्षेत्र के लिए खुलने के बाद यह उम्मीद की गई कि सशक्त लोकतंत्र में यथासंभव प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा मिलेगा। यह सब ऐसे समय में हो रहा था जब देश पूर्ण निजीकरण की ओर बढ़ रहा था और उसका सार्वजनिक क्षेत्र अत्यंत अकर्मण्य हो गया था।

यहां एक मामूली संशोधन जरूरी है प्रसार भारती, वास्तव में उस अर्थ में कोई निगम अथवा सार्वजनिक क्षेत्र का प्रतिष्ठान नहीं है, जैसा कि इन शब्दों का अर्थ होता है। यह एक स्वायत्त प्राधिकरण अधिक है जो लोगों की ओर से दो बड़े सार्वजनिक संस्थानों का प्रबंधन करता है और सूचना और प्रसारण मंत्रालय के माध्यम से संसद

के प्रति जवाबदेह है। फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रसार भारती, दूरदर्शन और आकाशवाणी की सरकार और उसकी शासन प्रणाली के साथ सुसंबद्धता है : इसे अत्यंत सरकारी के रूप में देखा जाता है।

और क्यों न हो ? आखिर इसके अधिकारी और कर्मचारियों की भर्ती सरकार द्वारा या उसके अधिकृत अधिकारियों द्वारा संघ लोग सेवा आयोग या कर्मचारी चयन आयोग के माध्यम से की जाती है, और वे वेतनमानों तथा सुरक्षित कार्यावधि की दृष्टि से सरकारी नियमों और विनियमों के तहत पूरी तरह संरक्षित हैं। दशकों तक विशुद्ध सरकारी वातावरण में काम करने को देखते हुए इन अधिकारियों से सिर्फ यही उम्मीद की जा सकती है कि वे सरकारी मानसिकता के साथ पेश आएंगे, जो खुले बाजार में प्रतिस्पर्धा के अनुकूल नहीं है। ''आकाशवाणी और दूरदर्शन'' के प्रत्येक विभाग में ऐसे कर्मचारी हैं। इसके अलावा अधिनियम में विशेष धाराएं हैं जो सुनिश्चित करती हैं कि निगम की भर्ती नियम और अन्य महत्वपूर्ण विनियम सरकार के नियमों के अनुरूप होंगे या उसे चुनौती न देने की प्रवृत्ति बरकरार रहती है। निश्चय ही, सरकारी [illegible]

इस दोहरे सोच को जारी रखना निष्पक्ष या उचित नहीं है क्योंकि यदि आप वास्तविक शासन का दृष्टिकोण रखते हैं, और हताश नौकरशाही के चिड़चिड़ेपन से दुखी नहीं होते हैं, जिसका सामना प्रत्येक नागरिक को करना पड़ता है, तो आप एक खास तरह की व्यावसायिकता और समर्पण (और पूर्ण ईमानदारी) देखेंगे, जिसे हम शासन का इंजन रूम कह सकते हैं। अन्यथा चीजें बहुत पहले रूक गई होतीं। अतः आपको तथ्यों पर निष्पक्ष रूप से नैदानिक रूप से और जहां आवश्यक हो, बेरूखी से विचार करना होगा। तथ्य यह है कि दूरदर्शन ने 6 अखिल भारतीय चैनलों (डीडी नेशनल, डीडी न्यूज, डीडी भारती, डीडी उर्दू, डीडी स्पोर्ट्स और डीडी इंडिया) ,11 क्षेत्रीय चैनलों के साथ न केवल अपना अस्तित्व बनाए रखा है बल्कि अपनी स्थिति सुदृढ़ की है। यह बहुराष्ट्रीय और बड़े स्वतंत्र व्यापारिक घरानों से कड़ी प्रतिस्पर्धा के खिलाफ है। इसमें भर्ती में कोई लचीलापन या कर्मचारियों को न्यूनतम प्रोत्साहन देने की कोई संभावना नहीं है क्योंकि सरकारी प्रक्रियाएं इस पर रोक लगाती हैं और सभी जगह अपना समय लेती हैं। सीमित संख्या में कनिष्ठ तकनीकी कर्मचारियों जिनकी भर्ती करीब 20 वर्ष की गई थी, को छोड़ कर कोई नयी भर्ती नहीं की गई है, फिर भी संगठन बढ़ रहा है, अपनी सीमाओं में छलांग लगा रहा है। 1997 में 236 रेडियो और टीवी स्टेशन थे जिनकी संख्या आज बढ कर 455 हो गई है। मणिपुर जैसे छोटे राज्य में आकाशवाणी मणिपुर और छह प्रमुख बोलियों तथा 23 छोटी बोलियों सहित 30 भाषाओं में हर रोज कार्यक्रम प्रसारित कर रहा है। ऐसा करना एक लोक सेवा प्रसारक के लिए अनिवार्य है ताकि भारत के विचार को एक समान प्रतिबद्धता के साथ बनाए रखा जा सके। यह

प्रसार भारती की दृढ़ता का परिणाम है और सौंपे गए कार्यों को करने की उसकी क्षमता है, जो बिना किसी शोर–शराबे के राष्ट्रीय दायित्व को पूरा करता है।

देश में कोई पूर्ण रेटिंग सिस्टम या टीआरपी (टेलीविजन रेटिंग प्वाइंट्स) प्रणाली नहीं है और जो एक मात्र प्रणाली है उसे मैसर्स टैम–इंडिया द्वारा संचालित किया जाता है। यह प्रणाली 75 करोड़ से अधिक टीवी दर्शकों पर रिपोर्ट करती है। यह रिपोर्टिंग करीब 8 हजार लोगों के पैमाने के नमूने के आधार पर की जाती है। इसे भली भांति समझा जा सकता है कि दर्शकों के इतने छोटे हिस्से के आधार पर निश्चिंतता के साथ कोई मूल्यांकन नहीं किया जा सकता और उसमें भी शहरी आबादी के पक्ष में झुकाव रहता है। टेरिस्ट्रियल टीवी जो अभी तक भारत की टीवी आबादी का करीब 10 प्रतिशत (कुछ लोगों के अनुसार केवल 8 प्रतिशत, जबकि कुछ अन्य 13 प्रतिशत का दावा करते हैं) कवर करता है, को टैम द्वारा कवर नहीं किया जाता। इतनी उत्तेजनापूर्ण दर्शक मूल्यांकन स्थिति में प्रसार भारती को शिकायतों के निपटारे के लिए टैम को एक अर्द्धन्यायिक निकाय के रूप में लेना होता है। रात 9 और 10 बजे के बीच प्राइम टाइम न्यूज सेग्मेंट के अंतर्गत दूरदर्शन समाचार अन्य अंग्रेजी समाचार चैनलों की तुलना में व्यापक अंतर के साथ पहले नंबर पर है और यहां तक कि टैम ने भी कई महीनों तक इस रूझान को रिपोर्ट किया है। इसी अवधि के दौरान टैम ने संकेत दिया है कि डीडी न्यूज का हिन्दी समाचार सेग्मेंट प्राइम टाइम (यानी रात 8 से 9 बजे के बीच) पर दूसरे और तीसरे स्थान पर है, जो बड़ी संख्या में हिंदी समाचार चैनलों से आगे

है। सामान्य मनोरंजन की दृष्टि से देखें तो दूरदर्शन या प्रसार भारती के पांस इतना धन और लचीलापन नहीं है कि वे टीवी कार्यक्रमों के खर्चीले निर्माण की ऊंची लागत अदा कर सकें। फिर भी, इस दृष्टि से दूरदर्शन तीसरे स्थान पर रहा। इस क्षेत्र में दूरदर्शन ने करीब 300 या अधिक प्रतिस्पर्धियों को पीछे छोड़ा है जिनमें विश्वस्तरीय विदेशी स्वामित्व वाले टीवी चैनल और बड़े भारतीय व्यापारिक घरानों के स्वामित्व वाले अन्य चैनल शामिल हैं। अतः दूरदर्शन ने मनोरंजन के बड़े भारतीय माध्यम अर्थात् एक ऐसे माध्यम जिसे भारतीय समाज के व्यापक वर्गो, शहरी से लेकर दूर–दराज के देहाती इलाकों तक, देखा जा सकता है, के रूप में अपने को प्रस्तुत किया है। दूरदर्शन ने इस कार्य को अंजाम देने में अत्यधिक चकाचौंध, अत्यधिक शोर शराबे या विवादास्सपद रूचियों का सहारा नहीं लिया है, जिनसे अक्सर भारतीय दर्शकों के व्यापक वर्गों की भावनाओं को क्षति पहुंचती है। किन्तु इस तरह की रेटिंग उपलब्धियों का एकमात्र पैमाना नहीं होता हैं और इसमें कोई संदेह नहीं कि दूरदर्शन और आकाशवाणी को अत्यत शक्तिशाली प्रतिस्पर्धियों के खिलाफ संघर्ष करना पड़ता है, जिनमें से कुछ विदेशी स्वामित्व वाली कंपनियां हैं जिनके पास व्यापक धन और दशकों का अनुभव है, जो विकासशील देशों में परंपरागत प्रसारणकर्ताओं को क्षति पहुंचाती है।

तथ्य यह है कि यदि कोई संगठन लचीला नहीं हो सकता और अद्यतन तकनीकों और व्यावसायिकता को नहीं अपना सकता, तो टीआरपी अथवा दर्शकों की व्यापक संख्या का कोई अर्थ है। इस मुद्दे पर निस्संदेह प्रसार भारती और इसके दो निकायों को खामियों का

सामना करना पड़ा है। इसका कुछ दोष निश्चित रूप से इसके नेतृत्व (अथवा इसके अभाव, जैसा कि कुछ लोग मुखर होकर दावा करते हैं) का है लेकिन दबाव भी इसके लिए जिम्मेदार हैं, जिनमें इन संगठनों को काम करना पड़ता है। प्रसार भारती अधिनियम के अंतर्गत भर्तियों (व्यवसायियों सहित) और सभी सेवा शर्तों आदि से संबंधित सभी विनियमों के लिए केन्द्र सरकार की पूर्व मंजूरी की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे में मौजूदा पदों, जिनका निर्धारण दशकों पहले हुआ था। (और जो कई वर्षों से खाली हैं) को अधिक गतिशील, तकनीकी या अधिक व्यवसायी के रूप में परिवर्तित करना अत्यंत कठिन है। ऐसा सिर्फ सूचना और प्रसारण मंत्रालय की वजह से नहीं है, बल्कि इसलिए है कि इस समंत्रालय को सरकारी कार्य प्रणाली के अंतर्गत प्रत्येक प्रस्ताव को अन्य अलग–अलग मंत्रालयों और विशेषज्ञ निकायों को भेजना पड़ता है। हम कोई अन्य रास्ता नहीं अपना सकते और सरकारी प्रक्रियाओं के कायदे–कानूनों को उद्धृत नहीं कर सकते। पिछले दो दशकों में इसकी विशाल कार्मिक क्षमता को बड़ी निराशा का सामना करना पड़ा है क्योंकि प्राइवेट चैनलों ने आकर्षक प्रस्तावों के जरिये कम वेतन पर भर्ती सरकारी प्रतिभाओं को अपने यहां खींच लिया और जो बचे रहे वे प्रसार भारती में पदोन्नतियों के लिए कुढ़ते रहे और इस दौरान नयी भर्तियां भी नहीं हुई।

किसी भी बड़े मुद्दे पर निर्णय करने संबंधी समूची प्रक्रिया में समय लगता है। इस प्रकार प्रसार भारती, डीडी या आकाशवाणी के नेतृत्व को समूची प्रणाली के समक्ष परास्त होना पड़ता है अथवा ठेठ सरकारी तरीके से लौटाए गए प्रस्तावों को छोड़ना पड़ता है, जो चौथी

अथवा पांचवी बार लगी आपत्तियों के साथ वापस आए होते हैं, जिनमें ज्यादातर प्रश्न प्रासंगिक नहीं होते हैं, फिर भी पूछ जाते हैं। फाइलों और अभिलेखागारों के परीक्षण से पता चलता है कि अनेक प्रश्न ऐसे भी होते हैं, जिनके समाधान का प्रयास ईमानादारी से नहीं किया जाता। कोई भी व्यक्ति इस बात का सहज अनुमान लगा सकता है कि दूरदर्शन तथा आकाशवाणी के 455 केन्द्रों और देशभर में फैले 1900 से अधिक ट्रांसमीटरों की जरूरतें कितनी व्यापक होगी और यह भी एक मौजूदा प्रणाली में किसी संवेदनशील संगठन प्रमुख के समक्ष कितनी व्यापक समस्याएं उत्पन्न होती हैं और किसी प्रकार के नये या साहसिक कदम उठाने में उसे कितनी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कुछ संगठनों का साफ–साफ कहना है कि प्रसार भारती का नेतृत्व समुचित रचनात्मक अथवा संगत नहीं रहा है। मंत्रालय हमेशा यह कहता है कि जब तक प्रसार भारती के प्रस्तावों पर विभिन्न मंत्रालयों के बीच आम सहमति कायम नहीं हो जाती तब तक क्या किया जा सकता है या वे क्या कर सकते हैं ?

प्रसार भारती में शासन की वर्तमान व्यवस्था क्या है ? इसमें एक प्रचालनागत स्वायत्तता शामिल है, जिसके भीतर प्रसार भारती कार्य करती है, ताकि उन उच्च स्तरों तक पहुंचा जा सके, जिनका उल्लेख शुरू के अनुच्छेदों में किया गया है। सामान्यतः किसी भी सार्थक सरकार के पास इतना समय या इतनी ऊर्जा नहीं है अथवा प्रवृत्ति नहीं है कि सूक्ष्म ब्यौरों में जा कर देखें। प्रसार भारती बोर्ड में एक अध्यक्ष, छह जाने–माने व्यवसायी जो अंशकालिक सदस्य हैं, और पांच पूर्णकालिक सदस्य, अर्थात सीईओ, दो सदस्य प्रभारी कार्मिक और

वित्त, दो आकाशवाणी और दूरदर्शन महानिदेशक तथा एक मंत्रालय द्वारा नामित सदस्य हैं। इस बोर्ड की 2 महीने या इससे कुछ अधिक समय में एक बार बैठक होती है और यह प्रसार भारती सचिवालय के निर्णयों का अनुमोदन करता है अथवा स्वयं निर्णय करता है, जो आमतौर पर बृहत या नीति स्तर के होते हैं। बोर्ड संगठन के लिए दिशा निर्धारित करता है और अपनी सलाह को कार्य रूप दिए जाने के बारे में कार्यकारी सदस्यों का मार्गदर्शन करता है। सूचना और प्रसारण मंत्रालय की सलाह पर 2011 में संसद द्वारा संशोधन किए जाने के बाद बोर्ड को कर्मचारियों के संदर्भ में कुछ अनुशासनात्मक अधिकार भी प्राप्त हैं। इसके अंतर्गत आकाशवाणी और दूरदर्शन के अधिकारी और सरकारी कर्मचारी प्रसार भारती में स्थायी प्रतिनियुक्ति पर रखे गए हैं। सरकार ने 300 करोड़ रूपये तक के अपने वित्तीय अधिकार प्रसार भारती को प्रत्यायोजित किए हैं, किन्तु सरकारी वित्त पोषण की प्रत्येक खेप निराशाजनक देरी, टेढ़—मेढ़े ढंग से और वह भी दृढ़तापूर्वक अनुनय विनय के बाद पहुंचती है। महीनों के प्रयास के बावजूद एक भी वित्तीय मूल्यांकन अधिकारी पदासीन नहीं है, ऐसे में वित्तीय स्वायत्तता का क्या अर्थ है ? प्रसारी भारती अधिनियम में काफी प्रचालनगत स्वायत्तता प्रदान की गई है, किन्तु अधिनिमय की धारा 32 या 33 उस स्वायत्तता को निरर्थक बना देती है, जिसमें शर्त लगाई गई है कि महत्वपूर्ण मुद्दों पर सरकार की मंजूरी जरूरी है। अतः इससे रूकावट पेश होती है। तथ्य तो तथ्य ही रहेंगे किन्तु प्रसार भारती बोर्ड भी इस बात पर एकमत है कि अधिनियम में यदि संशोधन किया जाए, तो भी एक समुचित निगरानी तंत्र अनिवार्य है क्योंकि जवाबदेही अनिवार्य है।

दूरदर्शन अपने विशाल ट्रांसमिशन नेटवर्क के समयबद्ध डिजिटीकरण के जरिये क्रांतिकारी बदलाव ला सकता है, बशर्ते प्रारंभिक प्रयोग सफल हो और सुनिश्चित किया जा सके कि धन का प्रवाह उपलब्ध होगा। सरकार ने सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में प्रसार भारती के बारे में एक विशेषज्ञता समिति का गठन किया था, ताकि प्रत्येक मुद्दे पर उपलब्ध सर्वोत्कृष्ट विकल्पों का परीक्षण किया जा सके। समिति ने अपने कामकाज के अंतर्गत आम लोगों और संगठन के भीतर काफी वैचारिक आदान–प्रदान किया जिससे नए क्षितिजों और संभावनाओ का पता चला। एक विचार यह सामने आया (जो अभी तक एक विचार मात्र है) कि प्रसार भारती भावी प्राप्तियों के मौद्रिकीकरण की अग्रिम आयोजना बनाने पर विचार कर सकता है। इसके अंतर्गत यह सुझाव दिया गया कि हमें उन ट्रांसमीटरों और परिसंपत्तियों के नकदीकरण की तात्कालिक या व्यवस्थित योजना बनानी चाहिए, जो डिजिटीकरण के बाद फालतू या बंद होने हैं। प्रसार भारती इन परिसंपत्तियों के नकदीकरण से उन चुने हुए 350--400 अथवा यहां तक कि 630 ट्रांसमीटरों के डिजिटल आधुनिकीकरण के लिए धन जुटा सकता है। यह एक प्रारंभिक विचार मात्र है और इस बारे में पूर्ण पारदर्शिता रखते हुए बहुत ध्यानपूर्वक गणना करने की आवश्यकता है, ताकि किसी संभावित विवाद से बचा जा सके। इसके लिए संगठन के सभी वर्गों को पूरी तरह शामिल करने की आवश्यकता होगी, लेकिन यह संभवना तभी बनती है जब सरकार इस पर गंभीरता से विचार करने को इच्छुक हो क्योंकि ज्यादातर संपत्तियां केन्द्र सरकार से संबद्ध है। इसके लिए सभी पक्षों को सोच--विचार करते हुए आगे बढ़ना होगा।

एक और संभावना यह भी है, जिस पर अमरीका और कुछ अन्य विकसित देशों ने विचार किया है, और जो विश्व के सबसे मूल्यवान संसाधनों 'स्पैक्ट्रम' के उपयोग संबंधी राष्ट्रीय नीति के साथ जुड़ी है। स्पैक्ट्रम का आवंटन विश्व फ्रीक्वेंसी प्लान द्वारा किया जाता है, जिसका निर्धारण अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ (जेनेवा) द्वारा अपने रेडियो विनियमों के जरिये किया जाता है। इसमें प्रत्येक देश का कर्तव्य है कि वह 40 से अधिक प्रकार के इस्तेमालकर्ताओं और प्रतिद्वंद्वी दावेकर्ताओं के लिए स्पैक्ट्रम का अनुकूलतम इस्तेमाल करे। रक्षा से लेकर अंतरिक्ष तक (टेलीफोनों और मोबाइलों से लेकर पुलिस एवं सुरक्षा बलों के लिए वायरलेस सेवाओं तक, श्रव्य ट्रांसमिशन से एफएम रेडियो तक, टेजीविजन से वॉकी टॉकी तक) स्पैक्ट्रम की मांग अधिकाधिक बढ़ती जा रही है। डिजिटल तकनीक अपनाकर भारत स्पैक्ट्रम का बड़ा हिस्सा बेच सकता है। किंतु इसे कार्यान्वित कैसे किसा जाए ? समस्या मौजूदा ढांचे में निहित है जो आवंटित रेंज पर विभिन्न बैंड–विड्थ के स्पैक्ट्रम के प्रति स्थित और नियत है। उन्हें एक परिभाषित कम्पैक्ट बैंड विड्थ में री–फार्म और कम्प्रैस करना संभव नहीं है। यह एक विशाल कार्य है और इसके लिए अत्यधिक धन की भी आवश्यकता होगी। भारत में, एक प्रमुख मंत्रालय ने बहुमूल्य स्पैक्ट्रम खाली करने के लिए कई हजार करोड़ रू. प्राप्त किये हैं। ऐसे में, सूचना और प्रसारण मंत्रालय का प्रसार भारती व्यापक राष्ट्रीय हित में ऐसा क्यों न करें।

उपरोक्त सभी विकल्पों पर रचनात्मक ढंग से सोचते हुए समाधान निकाला जा सकता है। अमरीकी अपने नागरिकों को वाउचर

वितरित करने में करीब 2 अरब डॉलर (11 हजार करोड़ रूपये से अधिक) खर्च करता है ताकि स्पैक्ट्रम बचाया जा सके और अधिक ऊंचे दामों पर बेचा जा सके। कई अन्य देशों ने भी व्यापक हित में ऐसे प्रमुख वित्तीय मार्ग का अनुसरण किया है। प्रसार भारती के बारे में सैम पित्रोदा समिति द्वारा किया जा रहा विचार विमर्श भी लगता है इस दिशा में बढ़ रहा है, हालांकि इस दिशा में अंतिम सुझाव अभी तैयार किए जाने हैं। यह पहला महत्वपूर्ण मोड़, या चौराहा है जहां आज हम खड़े हैं, और यदि यह एक सकारात्मक दिशा है, तो प्रसार भारती एक राष्ट्रीय एफएम नेटवर्क के लिए उपलब्ध समाधानों में से इसकी तरफ बढ़ सकता है। शॉर्ट वेव को कोई नहीं सुनता और मीडियम वेवे का कुछ लोग सुनते हैं यहां तक कि रिसीवर सेट भी इनके लिए उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे में हम शॉर्ट वेव या मीडियम वेव का विस्तार या स्थानापन्न क्यों करें ? एफएफ मोबाइल और कार रेडियो के जरिये लाखों लोगों तक पहुंच रहा है लेकिन ऐसे प्रत्येक चैनल की रेंज सीमित होती है और इसके लिए बड़ी संख्या में चैनलों, सह–चैनलों, नेटवर्क और ट्रांसमीटरों की आवश्यकता पड़ती है ताकि आकाशवाणी की सभी रेडियो सेवाएं जैसे प्राइमरी चैनल और विविध भारती (जो ज्यादादर मीडियम वेव पर हैं) एक साथ ट्रांसमीशन के लिए एफएम पर भी उपलब्ध कराई जा सकें ताकि लाखों लोग उन्हें सुन सकें। और भी चौराहे हैं जहां भारत के लोक सेवा प्रसारणकर्ता और इसके बुनियादी मुद्दों और बड़े अवसरों का संबंध है। लेकिन पहले हमें टीवी सेवाओं के टेरेस्ट्रिय ट्रांसमिशन के डिजिटीकरण के तात्कालिक प्रश्न का समाधान करना होगा।

प्रत्येक चौराहा आगे का मार्ग प्रस्तावित करता है। यह परिवर्तन के समर्थकों को व्यापक छलांग यानी लीप फागिंग की अनुमति देता है और इसमें अंतर्निहित आकर्षण अथवा खतरे भी हैं जो दाएं बाएं मुड़ने अथवा सिर झुकाने मात्र से पैदा हो सकते हैं या फिर पीछे जा सकते हैं, जो हमने कई बार किया है। अतः स्वायत्तता की विचारधारा (सैम पित्रोदा) के अनुपालन में सभी कार्ड टेबल पर रखते हुए अब देखना यह है कि भारत अंततः किस दिशा में आगे बढ़ता है।

निजी चैनलों का विकास :

जी समूह – दो अक्टूबर, 1992 को जी टेलीविजन का प्रसारण किया गया। इसके लिए स्टार और जी की आधी–आधी साझेदारी वाली कंपनी एशिया टुडे लिमिटेड का गठन किया गया। 1993 में ली का शिंग ने स्टार के 63.3 प्रतिशत शेयर रूपर्ट मर्डोक की कंपनी न्यूज कॉरपोरेशन को बेच दिए। इस प्रकार जी टेलीविजन में भी स्वतः ही मर्डोक की हिस्सेदारी हो गई। लेकिन जल्द ही दोनों चैनलों (जी और स्टार टेलीविजन) में कार्यक्रमों को लेकर विवाद गहराने लगा, क्योंकि दोनों चैनल भारतीय मध्यम वर्ग के लिए मनोरंजन के कार्यक्रमों का प्रसारण करते थे। स्टार और जी. टी.वी. में प्रतिस्पर्द्धा होने लगी। 1999 में भरपूर मीडिया कवरेज के बीच सुभाषचंद्र गोयल ने जी टी.वी. में न्यूज कॉरपोरेशन की हिस्सेदारी के सभी शेयर 32 करोड़ 20 लाख डॉलर अदा करके खरीद लिये और इस प्रकार दोनों चैनलों के बीच लंबे समय से चले आ रहे विवाद का अंत हो गया।

दिसम्बर, 1994 में सुभाषचंद्र गोयल ने देश में दूसरे चैनल एल. टी.वी. की शुरूआत की। यह समाचार संगीत और मनोरंजन का चैनल था। इसी चैनल का नाम बदलकर पहले जी इंडिया किया गया और उसके बाद 1998 में इसे चौबीस घंटे समाचार प्रसारित करने वाले जी न्यूज चैनल के रूप में लांच कर दिया। आज तक चैनल के आने से पहले लंबे समय तक जी न्यूज मध्यम वर्गीय परिवार में खूब लोकप्रिय रहा। जी न्यूज चैनल इस समय अपनी हिंगलिश भाषा के लिए जाना जाता था। हालांकि, अनेक लोग भाषा के साथ खिलवाड़ करने के लिए जी न्यूज की आलोचना भी करते रहे, लेकिन चैनल का कहना था कि जैसी भाषा उसका दर्शक यानी शहरी मध्यम वर्ग बोलता है वैसी ही भाषा उन्होंने अपनाई। जी न्यूज अपनी खोजी पत्रकारिता के लिए भी जाना जाता है।

नवंबर, 1999 में जी टेलीविन ने संसदीय चुनावों का 72 घंटे तक सीधा प्रसारण किया था। उस समय तक यह सबसे लंबा चुनावी लाइव शो था। जी न्यूज के इतिहास में यह प्रसारण एक मील का पत्थर बन गया, क्योंकि इसी दौरान चैनल ने सारे देश में अपने ब्यूरो ऑफिसों को वी सेट तकनीक के माध्यम से जोड़ा था। इस प्रसारण के दौरान राजू संथानम्, शैलेश सिंह, राकेश और शाजी जमाल जैसे अनेक बड़े नाम चैनल से जुडे थे। इसी दौरान सुभाष गोयल ने अपनी सफलताओं से उत्साहित होकर 'अग्रणी' नामक देश के पहले निजी उपग्रह को बनाने की घोषणा की। हालांकि वह इस योजना में सफल नहीं हो सके। 2000 में आज तक चैनल शुरू होने के बाद जी न्यूज लगातार टी.आर.पी. के मामले में पिछड़ता चला गया। 30 मार्च, 2002

के दौरान टेलीविजन समाचार बाजार में आज तक की 56 प्रतिशत भागीदारी थी। वहीं जी न्यूज की 22 प्रतिशत और स्टार न्यूज की 17 प्रतिशत। बाद के दिनों में जी न्यूज दूसरे से तीसरे और चौथे स्थान पर भी चला गया। बड़े समूह का छोटा सा हिस्सा होने के कारण जी न्यूज के नीति निर्माताओं ने कभी भी इसको गंभीरता से नहीं लिया। उनके अनुसार सब कुछ टी.आर.पी. आधारित नहीं हो जाना चाहिए। यह जरूरी नहीं कि अच्छी सामग्री हमेशा टी.आर.पी. में आपको आगे ही ले जाएगी। महत्वपूर्ण यह है कि उत्कृष्ट सामग्री पेश करने की एक ईमानदार कोशिश की जानी चाहिए। वहीं, मनोरंजन चैनल जी टेलीविजन भी स्टार प्लस पर कौन बनेगा करोड़पति और एकता कपूर के धारावाहिकों के प्रसारण के बाद लोकप्रियता में तीसरे और चौथे नंबर पर चला गया।

सफरनामा

2 अक्टूबर, 1992 — जी टी.वी. (पहला निजी चैनल)

4 दिसंबर, 1994 — एल टी.वी.

9 अप्रैल, 1995 — जी सिनेमा

अप्रैल, 1995 — सिटी केबल आरंभ, जी.टी.वी. यू.के. में शुरु

1996 — अफ्रीका में जी टी.वी. का प्रसारण

2 जुलाई, 1997 — म्यूजिक एशिया

9 जनवरी, 1998 — जी इंडिया (एल टी.वी. का नया रूप)

1998 — अमेरिका में जी टी.वी. प्रसारण, जी सिने

अवार्ड

10 मई, 1999 — जी न्यूज (जी इंडिया का री लॉच)

15 अगस्त, 1999 — अल्फा मराठी

15 सितंबर, 1999 — अल्फा बांग्ला

25 सितंबर, 1999 — सुभाषचंद्र ने जी टी.वी. में न्यूज

कॉरपोरेशन के सभी शेयर खरीदे

18 अक्टूबर, 1999 — अल्फा पंजाबी

न्वंबर, 1999 — संसदीय आम चुनाव का 72 घंटे का लाइव

प्रसारण

2000 — एमजीएम और वायकॉम के साथ कंटेंट

डिस्ट्रीब्यूशन की साझेदारी।

15 मार्च, 2000 — जी इंग्लिश

15 मार्च, 2000 — जी मूवीज

21 मार्च, 2000 — अल्फा गुजराती

2001 — जी टी.वी. और जी न्यूज पे चैनल बने,

2002 — सुभाष चंद्र ने ई.टी.सी. नेटवर्क और पद्मालय टेलीफिल्म लिमिटेड खरीदा

2003 — फैशन चैनल ट्रेंड्स, डीटीएच सेवा के पाँच नए चैनल आरंभ (एक्शन सिनेमा, क्लासिक सिनेमा, प्रीमियम सिनेमा, स्माइल टी.वी. ए.एक्स.)

2004 — जी बिजनेस चैनल आरंभ।

2006 — यू.एन.आई के शेयर खरीदे

2003 में बढ़ती प्रतिस्पर्द्धा से निबटने के लिए सुभाष गोयल ने अपने भाई लक्ष्मी गोयल को जी न्यूज की कमान सौंप दी। ताजातरीन खबरों को प्रसारित्त करने के लिए दिल्ली के फिल्म सिटी ऑफिस से ही प्रसारण की अनुमति ली गई। नए सॉफ्टवेयर खरीदे गए। खबरों में काफी सुधार के बावजूद जी न्यूज की दर्शकता में कोई बढ़ोतरी नहीं हो पाई। वर्तमान में जी ग्रुप के 17 चैनल (जी टी.वी., न्यूज, सिनेमा,

म्यूजिक, जागरण, बिजनेस, स्पोर्ट्स, स्टूडियोज, जेड कैफे, स्माइल, अल्फा मराठी, पंजाबी, गुजराती और बांग्ला, ई.टी.सी. और ई.टी.सी. पंजाबी ट्रेड्स प्रसारित हो रहे हैं। इनके अलावा सिटी केबल नाम से इसकी केबल सर्विस भी है। जी ग्रुप ने फिल्म निर्माण में भी कदम रखा।

स्टार समूह –

1993 में न्यूज कॉरपोरेशन ने स्टार टी.वी. को खरीद लिया । न्यूज कॉरपोरेशन के मालिक रूपर्ट मर्डोक हैं। मूलतः ऑस्ट्रेलिया के निवासी मर्डोक ने अपना कारोबार 50 के दशक में आरंभ किया था। 60 के दशक में उन्होंने अपना करोबार ब्रिटेन में भी फैला लिया और 80 के दशक तक अमेरिकी बाजार में भी अपनी धाक जमा ली। इसी दौरान न्यूज कॉरपोरेशन प्रसिद्ध फिल्म कंपनी ट्वेंटींथ सेंचुरी फॉक्स को खरीदने के कारण कर्ज में डूब गई। लेकिन अमेरिका में फॉक्स टेलीविजन नेटवर्क बनाने के साथ–साथ मर्डोक ने अपने कारोबार को फिर से खड़ा किया। 90 के दशक तक आते–आते न्यूज कॉरपोरेशन एक बार फिर अपने कारोबार के विस्तार में जुट गई। 1993 में एशियाई कंपनी 'स्टार' को खरीदकर पूरे एशिया में अपने पैर पसारने शुरू कर दिए।

भारत में उन्होंने कारोबार 1993 में स्टार टेलीविजन के 64 प्रतिशत शेयर 2,520 करोड़ रूपए में ली का शिंग से खरीदकर आरंभ किया। तब से लेकर अब तक यह व्यवसाय लगातार फैल रहा है। केबल कंपनी हैथवे में भी उनके 26 प्रतिशत शेयर था।

रूपर्ट मर्डोक ने भारत में समाचार बाजार की संभावनाओं को बहुत पहले ही पहचान लिया था। इसीलिए उन्होनें फरवरी, 1998 में 24 घंटे का एक समाचार चैनल आरंभ करने का फैसला ले लिया था। दरअसल कोई भी कंपनी समाचार चैनल के जरिए आसानी से किसी देश की राजनीति पर अपना असर डालकर अपने पक्ष में फैसलों को प्रभावित कर सकती है। वैसे भी वह आक्रामक व्यावसायिक निर्णयों के लिए जाने जाते थे। शुरूआती दिनों में उनका यह रूप दिखाई भी देता था, विशेषकर तब जब उन्होंने दूरदर्शन के आला अधिकारियों (रतिकांत बसु और अन्य) को स्टार टेलीविजन में मोटी तनख्वाह पर बुलाना शुरू किया। उनकी भारत की पहली यात्रा के दौरान 1994 में तत्कालीन नरसिंह राव से कहा— मुझे आपके देश की राजनीति में दखलंजा.दी करने की कोई योजना नहीं है। मर्डोक ने अपने समाचार चैनल के लिए कंटेंट बनाने का जिम्मा स्वयं न लेकर प्रणव राय के प्रोडक्शन हाउस एन.डी.टी.वी. को सौंप दिया था। इसके लिए एन.डी. टी.वी को प्रतिदिन 10 लाख रूपए का भुगतान किया। एन.डी.टी.वी. के लिए यह करार बड़ा चुनौती भरा था। लेकिन पर्याप्त संपादकीय आजादी होने के कारण प्रणव राय ने इस काम को सफलतापूर्वक पूरा किया। दोनों के बीच कंटेंट निर्माण का यह करार मार्च, 2003 तक चलता रहा। 2004 में स्टार इंडिया ने एकता कपूर के बालाजी टेलीफिल्म्स में भी 25 प्रतिशत शेयर खरीद लिये। वर्ष 2000 स्टार ग्रुप के लिए काफी महत्वपूर्ण रहा। इस वर्ष प्रसिद्ध अभिनेता अमिताभ बच्चन द्वारा संचालित 'कौन बनेगा करोड़पति' एवं एकता कपूर निर्मित 'क्योंक सास भह कभी बहू थी' और अन्य धारावाहिको की लोकप्रियता ने स्टार प्लस चैनल को देश का नंबर एक मनोरंजन चैनल बना

दिया। 2001 में स्टार इंडिया ने अपना रेडियो चैनल रेडियो सिटी बंगलौर में आरंभ किया।

31 मार्च, 2003 को स्टार न्यूज को नए चटक रंगों और कॉरपोरेट चेहरे के साथ री–लांच किया गया। नया स्टार न्यूज पहले से अधिक प्रतिस्पर्धी, चमकदार, आक्रामक और बाजार आधारित था। उस समय तक अधिकांश समाचार चैनलों के मुख्य कार्यालय दिल्ली में थे, लेकिन स्टार न्यूज ने मुंबई को अपना मुख्य कार्यालय बनाने का फैसला किया। उसने दिल्ली में अपना सुपर ब्यूरो बनाया और पांच राज्यों की राजधानियों (लखनऊ, कोलकाता, भोपाल, अहमदाबाद और चेन्नई) में प्रमुख ब्यूरो स्थापित किए। इनके अलावा देश के चौदह अन्य शहरों में मिनी ब्यूरो बनाए गए। रवीना राज कोहली को स्टार न्यूज का सी.ई.ओ. और संजय पुगलिया को संपादक बनाया गया था। इसे जिस उत्साह से लांच किया गया था, एक साल बीत जाने के बाद भी सुखद परिणाम नहीं निकले। इस बीच सरकार की नीतियों के कारण रूपर्ट मर्डोक को स्टार न्यूज के 74 प्रतिशत शेयर पश्चिम बंगाल के प्रसिद्ध समाचार पत्र आनंद बाजार पत्रिका समूह (एबीपी) को बेचने पड़े। आज तक से आए उदय शंकर को संपादक बनाया गया और संजय पुगलिया को अपनी टीम के साथ सी.एन.बी.सी. के हिंदी बिजनेस चैनल आवाज का प्रमुख संपादक बनाया गया। स्टार न्यूज को मुंबई को अपना मुख्य कार्यालय बनाने की अपनी गलती का अहसास जल्दी ही हो गया और उसे अपना मुख्य कार्यालय दिल्ली में ही बनाना पड़ा। रिपोर्टरों और एंकरों को कॉरपोरेशन लुक दिया गया।

सफरनामा :

1931 — रूपर्ट मर्डोक का ऑस्ट्रेलिया में जन्म (11 मार्च)

पिता स्थानीय अखबार के मालिक

1952 — विरासत में मिला

1960 — समाचार करोबार का विस्तार

1964 — ऑस्ट्रेलिया का पहला राष्ट्रीय समाचार पत्र शुरू।

1974 — सुपर मार्केट टेबलॉयड कारोबार में प्रवेश

1979 — मेलबोर्ड टेलीविजन स्टेशन खरीदा।

1980 — न्यूज कॉरपोरेशन का गठन।

1981 — लंदन के टाइम्स और संडे टाइम्स पर अधिकार।

1982 — ऑस्ट्रेलिया बुक पब्लिशर खरीदा।

1983 — पहला उपग्रह चैनल स्काई लांच किया।

1985 — रूपर्ट मर्डोक अमेरिकी नागरिक बने, ताकि

अमेरिका में टेलीविजन स्टेशन और अन्य मीडिया

समूहों को खरीदा जा सके।

1986 — फॉक्स ब्रॉडकास्टिंग कंपनी स्थापित।

1987 — ऑस्ट्रेलिया के मेलबोर्न हेराल्ड और वीकली

टाइम्स खरीदे। न्यूज कॉरपोरेशन दुनिया में

सबसे

बड़ा समाचार पत्र प्रकाशक बना।

1989 — अनेक प्रमुख प्रकाशकों को खरीदकर हार्पर

कॉलिंस का निर्माण।

1990 — ब्रिटेन में का निर्माण

1991 — कर्ज उतारने के लिए अनेक पत्रिकाओं को

बेचा।

1993 — एशिया के सैटेलाइट टेलीविजन एशियन

रीजन में

निर्णायक शेयर खरीदे।

1999 — जी टीवी में अपने शेयर सुभाषचंद्र गोयल को

बेचे।

एन.डी.टी.वी. समूह :

80 के दशक के अंत में जब दूरदर्शन निजी निर्माताओं को कार्यक्रम बनाने के लिए आमंत्रित कर रहा था तो समसामयिक मुद्दों पर कार्यक्रम बनाने की पहल करने वाले कुछ लोगों में डॉ. प्रणव राय भी एक थे। अकादमिक पृष्ठभूमि के प्रणव राय ने न्यू दिल्ली टेलीविजन (एन.डी.टी.वी.) के नाम से 1988 में अपने प्रोडक्शन की स्थापना की। उन्होंने विभिन्न चुनावों के दौरान दूरदर्शन के लिए एंकरिंग और चुनाव विश्लेषण का कार्य भी किया। लेकिन उन्हें आम लोगों में लोकप्रियता 'द वर्ल्ड दिस वीक' से मिली। दूरदर्शन पर प्रसारित इस कार्यक्रम में हफ्ते भर के अंतरराष्ट्रीय घटनाक्रम को प्रस्तुत किया जाता था। कार्यक्रम अंग्रेजी में होने के बावजूद शहरों में दर्शकों ने इसे बड़े चाव से देखा। 1995 में उन्हें दूरदर्शन पर ही आधे घंटे का एक समाचार कार्यक्रम 'द न्यूज टुनाइट' बनाने का मौका मिला। बाद में कुछ दिनों तक स्टार प्लस चैनल पर प्रसारित समाचार बुलेटिन के निर्माण का काम भी किया। यह बी.बी.सी के लिए भी अनेक समसामयिक कार्यक्रमों का निर्माण करता रहा।

प्रणव राय के टेलीविजन न्यूज को सबसे बड़ा प्रोजेक्ट तब मिला जब रूपर्ट मर्डोक ने 1998 में अपना चौबीस घंटे समाचार प्रसारित करने वाला चैनल आरंभ करने का फैसला किया। स्टार इंडिया ने इसके लिए एन.डी.टी.वी. को प्रतिदिन 10 लाख रूपए चुकाए। पांच साल तक समाचारों का निर्माण करता रहा। इस दौरान एन.डी.टी.वी. ने समाचारों की कवरेज और प्रस्तुति में एक गंभीर और परिपक्व छवि बना ली। प्रणव राय ने इसी दौरान एक अनुभवी और कुशल

टेलीविजन पत्रकारों की एक टीम तैयार कर ली, जिसमें राजदीप सरदेसाई, सोनिया वर्मा, अर्णव गोस्वामी, बरखा दत्त, पंकज चौधरी, रूपाली तिवारी, विक्रम चंद्रा, मनोरंजन भारती, विजय विद्रोही, कमाल खान इत्यादि शामिल थे।

2003 में स्टार न्यूज और एन.डी.टी.वी. के बीच का कंटेंट का करार खत्म होते ही प्रणव राय ने अपने दो नए– हिंदी एन.डी.टी.वी. इंडिया और के चैनल आरंभ कर दिए। लंबे समय तक एन.डी.टी.वी. का अंग्रेजी चैनल टी.आर.पी. की दृष्टि से देश का नंबर एक चैनल बना रहा। लेकन सी.एन.एन.–आई.बी.एन. ने इसकी दर्शकता पर कुछ असर डाला। हिंदी चैनल की कमान सँभाली आज तक से आए दिबांग ने। संपादक दिबांग के अलावा पुण्य प्रसून वाजपेयी (एक साल बाद वापस आज तक में लौटे) नगमा, सिक्ता, निधि, कुलपति (जी न्यूज से) कुमार संजय सिंह, प्रियदर्शन, जनसत्ता, इत्यादि भी एन.डी.टी.वी. की टीम में जोड़ लिये गए। एन.डी.टी.वी. इंडिया कभी भी टी.आर.पी. की दौड़ में आगे नहीं निकल पाया। टैम आँकड़ों के अनुसार एन.डी.टी.वी. इंडिया (1.88 प्रतिशत) 2004 के 47वें सप्ताह में आज तक (2.68 प्रतिशत) के बाद दूसरे नंबर पर आ गया था। हिंदी चैनल अपने समसामयिक कार्यक्रमों (मुकाबला, कशमशक, हम लोग, टक्कर, इंडिया बोले हकीकत) में समकालीन मुददों पर गंभीर एवं उपयोगी चर्चा विमर्श के लिए सराहा जाता है।

एन.डी.टी.वी. के चैनल अपने सामाजिक सरोकारों के प्रति संवेदनशीलता के लिए भी जाने जाते हैं। 2004 में एन.डी.टी.वी.को अंतरराष्ट्रीय प्रेस इंस्टीट्यूट ने पत्रकारिता में उत्कृष्टता के पुरस्कार से

सम्मानित किया। शोध बताते हैं कि जब अन्य चैनल मेट्रो राजनीति को प्रमुख बनाए हुये थे तब भी ग्रामीण मुद्दों एवं विकास के मसलों पर सबसे अधिक सामग्री दिखानेवाला चैनल एन.डी.टी.वी.। 2006 में टेलीविजन चैनलों पर क्राइम शोज की होड़ लग गई और सब चैनल अपराध समाचारों को सनसनीखेज तरीके से पेश करने लगे। एन.डी. टी.वी. ने एक उदाहरण पेश करते हुए अपना क्राइम शो डायल 100 बंद कर दिया। इसने बिजनेस चैनल एन.डी.टी.वी.प्रोपट्री आरंभ किया।

इंडिया टुडे समूह : अरूण पुरी ने मीडिया में अपनी शुरूआत 1975 में इंडिया टुडे नामक अंग्रेजी पत्रिका से की थी। यह पत्रिका अब हिंदी, तमिल, मलयालम, तेलुगू के अलावा अंतरराष्ट्रीय संस्करण में भी छपती है।' 1988 में देश की पहली वीडियो मैगजीन वीडियो ट्रैक आरंभ करने का श्रेय इसी समहू को जाता है। इंडिया टुडे समहू ने 1995 में दूरदर्शन के मेट्रो चैनल पर आज तक के नाम से एक समाचार कार्यक्रम की शुरूआत की थी। वरिष्ठ पत्रकार सुरेन्द्र प्रताप सिंह (एस.पी.) को 'आज तक' की जिम्मेदारी सौंपी गई। टेलीविजन के पूर्व अनुभव के बिना एस.पी. ने आज तक की एंकरिंग का जिम्मा लिया। रात दस बजे प्रसारित होने वाला आधे घंटे तक यह कार्यक्रम हिंदी पट्टी पर रातोरात लाखों लोगों का पसंदीदा कार्यक्रम बन गया।

आज तक ने हिंदी टेलीविजन पत्रकारिता में एक नए युग की शुरूआत की। एस.पी. ने नए प्रयोग करते हुए समाचारों में देशज और ठेठ मुहावरों–कहावतों का इस्तेमाल शुरू किया। सीधी–सादी छवि ने उन्हें आम दर्शकों का पसंदीदा एंकर बना दिया। 'ये थी खबरें आज तक इंतजार कीजिए कल' में जनसामान्य की आवाज में सुनाई देने

लगा। आज तक ने समाचरों की लोकप्रियता के सारे रिकार्ड तोड़ दिए और इस कार्यक्रम ने पहली बार हिंदी को टेलीविजन पत्रकारिता की दुनिया में स्थापित कर दिया। 13 जून, 1997 को दिल्ली में बॉर्डर फिल्म कें प्रीमियर शो के दौरान उपहार सिनेमा में आग लग गई। उस दिन का पूरा आज तक कार्यक्रम इस दुर्घटना की खबरों को ही समर्पित था। यह एस.पी. का अंतिम बुलेटिन भी साबित हुआ। अगले दिन उनका ब्रेन हैमरेज के कारण निधन हो गया। हिंदी पत्रकारिता ही नहीं, लाखों लोगों के लिए यह एक दुःखद घटना थी। उनके बाद कुछ दिन राहुल ने एंकरिंग की। टीम के अन्य सदस्य संजय पुगलिया, आशुतोष दिबांग, अंजू गुलेरिया ने भी एंकरिंग संभाले रखी। आज तक के रिपोर्टर दीपक चौरसिया, राजेश बादल, विजय विद्रोही आदि इसे नई बुलंदियों पर ले जाते रहे।

हमारा पहला उद्देश्य खबरों को नई तकनीक की मदद से जल्द से जल्द लोगों के बेडरूम में पहुँचाना है। हमने तय किया है कि टेलीविजन समाचार पहले से अधिक दर्शनीय बनें और हम अंदर की कहानी को ज्यों–का–त्यों लोगों तक पहुँचाएँ। हम सही मायने में चौबीस घंटे का समाचार चैनल बनना चाहते हैं। यह घोषणा आज तक के लांच होने के एक महीने बाद चैनल के सी.ई.ओ. जी कृष्णन ने की। आज तक के प्रवेश ने भारतीय टेलीविजन पत्रकारिता के स्वरूप को पूरी तरह बदलकर रख दिया। यह संयोग ही था कि आज तक के आरंभ के समय कई ऐसी बड़ी दुर्घटनाएँ हुई जिनकी तेज रिपोर्टिंग ने आज तक को लोकप्रियता हासिल करने में मदद की। जनवरी 2001 में गुजरात में भूकंप आया, इसके अलावा गरमियों में

नेपाली राजपरिवार में नर–संहार पाकिस्तान से आगरा शिखर वार्ता, अमेरिकी ट्रेड सेंटर पर आतंकवादी हमने में ध्वस्त होना आधैर दिसंबर में भारतीय संसद पर आतंकवादी हमला इत्यादि महत्वपूर्ण खबरें थीं। आज तक दिल्ली से ही प्रसारित हो रहा था, इसलिए प्रत्येक घटना की तसवीरों को यह जल्द ही दर्शकों तक उपलब्ध करा पाया। जबकि उस समय स्टार न्यूज सिंगापुर और जी न्यूज हांगकांग से प्रसारित किया जा रहा था।

2001 में जी न्यूज पे चैनल बन गया जबकि आज तक दर्शकों के लिए फ्री टू एयर उपलब्ध रहा। नतीजा यह निकला कि लांच हांने के सात महीने के अंदर ही आज तक ने दर्शक संख्या में अन्य दोनों चैनलों को पीछे छोड़ दिया। आज तक के आगे निकलने का एक महत्वपूर्ण कारण इसकी तेज छवि (आज तक सबसे तेज) और आक्रामक मार्केटिंग। पुरानी फिल्मों पर आधारित इसका मनोरंजन विज्ञापन अभियान बड़ा ही तेज चैनल है भी काफी लोकप्रिय रहा। अपनी ब्रांड छवि तेज बनाने के लिए आज तक ने चटक लाल रंग का प्रयोग किया। साथ ही अधिकाधिक घटनाओं के सीधे प्रसारण ने भी इसमें अच्छी मदद की। तकनीकी दृष्टिकोण से भी आज तक देश का पहला पूर्णतः डिजिटल समाचार चैनल था। डिजीटल कैमरों अत्याधुनिक नॉन लीनियर एडिटिंग और ग्राफिक्स सॉफ्टवेयर का उपयोग करके बिलकुल नए अंदाज में समाचारों की पैकेजिंग की, जिसे लोगों ने पसंद किया। 2001 में इंडियन टेलीविजन एकेडमी ने सर्वश्रेष्ठ चैनल का पुरस्कार दिया। एक जनवरी से 30 मार्च, 2002 के दौरान इसने समाचार बाजार में 56 प्रतिशत हिस्से पर कब्जा जमा

लिया था, जबकि जी न्यूज 22 प्रतिशत के साथ दूसरे स्थान पर और स्टार न्यूज 17 प्रतिशत दर्शकों के साथ तीसरे स्थान पर था। इसे इस दौरान समाचार चैनलों को मिलने वाले कुल विज्ञापनों का 55 प्रतिशत हासिल था।

आज तक ने सिद्ध कर दिया कि समाचार चैनल भी विज्ञापन से कमाई कर सकते हैं। इससे पहले माना जाता था कि केवल मनोरंजन चैनलों से ही आय होती है और समाचार चैनल हमेशा घाटे में रहते हैं। लेकिन इसकी लोकप्रियता ने विज्ञापनदाताओं को अपनी राय बदलने को विवश कर दिया। यह हिंदी टेलीविजन पत्रकारिता की पाठशाला भी साबित हुआ। ढेरों पत्रकार इसमें काम करने के दौरान टेलीविजन पत्रकारिता सीख कर अन्य चैनलों में अच्छे पदों पर काम करने लगे, जिनमें दिबांग, अल्का सक्सेना, पूर्व संपादक जी न्यूज, संजय पुगलिया, आशुतोष, समाचार संपादक, उदय शंकर आदि।

सरननामा

1975	—	इंडिया टुडे (अंग्रेजी) पत्रिका
1986	—	इंडिया टुडे (हिंदी) पत्रिका
1988	—	वीडियो मैगजीन न्यूज ट्रेक
1990	—	म्यूजिक टुडे
1992	—	बिजनेस टुडे मैगजीन
1995	—	आज तक कार्यक्रम (दूरदर्शन)

2000	—	आज तक 24 घंटे समाचार चैनल
2001	—	आज तक सर्वश्रेष्ठ चैनल घोषित
2003	—	रेडियो चैनल शुरू (रेड एफ.एफ.)
2003	—	अंग्रेजी चैनल हेडलाइन टुडे
2006	—	तेज़ और दिल्ली आज तक

बाजार की प्रतिस्पर्द्धा में आज तक का चेहरा काफी कुछ बदल गया। अब समाचारों में मनोरंजन का इनपुट बढ़ गया। इन्फोटमेंट के साथ–साथ खबरों को चटपटा और सनसनीखेज बनाया जाने लगा। आज तक का समाचार बोध काफी कुछ बदल गया। अब फैशन, फिल्म, अपराध, ग्लैमर और व्यक्ति पर केन्द्रित समाचारों को प्रमुखता दी जाती है, या कहें कि एस.पी. का आज तक अब देश में टेबलायड टेलीविजन की शुरूआत करने वाला चैनल बन गया।

2003 में टी.वी. टुडे ग्रुप ने अपना अंग्रेजी चैनल हेडलाइंस टुडे शुरू किया। ग्रुप में इसके लिए अलग से रिपोर्टरों का नेटवर्क स्थापित करने की बजाय पुराने रिपोर्टरों की खबरों को अंग्रेजी में डब करके दिखाने का फैसला किया। आज तक के लाल रंग के स्थान पर इस चैनल ने नारंगी रंग को अपना ब्रांड कलर बनाया। चैनल का नारा है। चैनल ने राजनीति के स्थान पर फिल्म, फैशन और जीवन शैली को अपना प्रमुख विषय बनाया। लेकिन अन्य अंग्रेजी चैनलों के मुकाबले यह अपनी विशेष पहचान बनाने में असफल ही रहा।

2004 में परिस्थितियाँ बदलने लगीं और एन.डी.टी.वी. इंडिया और स्टार न्यूज आज तक को कड़ी टक्कर देने लगे। अब आज तक और इसके प्रतिस्पर्धी चैनलों में दर्शक संख्या का फासला थोड़ा कम हो गया। टैम (टेलीविजन ऑडिएंस मेजरमेंट) आँकड़ों के अनुसार 2004 के 47वें सप्ताह हिंदी समाचार चैनलों के दर्शकों की संख्या 8.7 प्रतिशत थी। इसमें आज तक पहले स्थान 2.67, एन.डी.टी.वी. इंडिया दूसरे स्थान 1.88, जी न्यूज तीसरे 1.53 और स्टार न्यूज चौथे स्थान 1.24 पर था। 2006 में टी.वी. टुडे ग्रुप ने दो नए चैनलों की शुरूआत की। पहला समाचारों को फटाफट प्रस्तुत करने वाला तेज चैनल और दूसरा दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की खबरों पर केन्द्रित दिल्ली आज तक।

सन समूह : दक्षिण भारत का सन ग्रुप देश का दूसरा सबसे बड़ा टेलीविजन नेटवर्क है। इसके स्वामी कलानिधि मारन हैं। उन्हें व्यावसायिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि विरासत में मिली है, क्योंकि वे राजनेता एम. करूणानिधि के रिश्तेदार हैं और उद्योगपति मुरासोली मारन के बेटे। 1992 में कलानिधि मारन अमेरिका से एम.बी.ए. की डिग्री लेकर भारत लौटे तो उनके मन में टेलीविजन चलाने का एक सपना था। उनके पास पर्याप्त पूँजी नहीं थी, किन्तु बड़ा जोखिम उठाने के बजाय छोटी शुरूआत करके आगे बढ़ना चाहते थे। उन्होंने जी.टी.वी. के मालिक सुभाष गोयल से मिलकर उनका ट्रांसपोंडर कुछ समय के लिए किराए पर लेने की योजना बनाई। उस समय जी.टी.वी. कुछ ही घंटे प्रसारित होता था। योजना के अनुसार बाकी समय में मारन अपने चैनल का प्रसारण करना चाहते थे। लेकिन किन्हीं कारणों

से मारन सुभाष गोयल से नहीं मिल पाए। परन्तु मारन निराश नहीं हुए और उन्होंने ब्रिटेन से प्रसारित ए.टी.एन. चैनल के ट्रांसपोंडर से अपने चैनल का प्रसारण शुरू कर दिया। मई, 1993 में तमिल भाषा में सन टी.वी. की शुरूआत हुई। प्रारंभ में केवल तीन घंटे का प्रसारण होता था। मारन ने शुरू में ही भारतीय दर्शकों की पसंद को पहचान लिया और दक्षिण भारतीय फिल्मों के सहारे अपनी सफलता का सफर शुरू किया। उन्होंने बड़ी तेजी से दक्षिण भारतीय फिल्मों के अधिकार खरीदने शुरू किए। सन टी.वी. पर लोकप्रिय फिल्में दिखाकर उन्होंने अपने दर्शकों की संख्या का तेजीसे विस्तार किया। एक अनुमान के अनुसार, 2000 तक मारन दक्षिण भारत में बनाई गई लगभग 70 प्रतिशत फिल्में खरीद चुके थे।

पहले चैनल की शुरूआत के केवल एक साल बाद ही मारन ने अक्टूबर, 1994 में कन्नड़ चैनल उदय टी.वी. आरंभ करके अपना कारोबार कर्नाटक तक फैला दिया। उसके बाद चैनलों का सिलसिला आगे बढ़ने लगा। 1996 में आंध्र प्रदेश में तेगुलू चैनल जैमिनी शुरू हुआ और 1998 में मलयाली चैनल सूर्या भी शुरू किया गया उनकी सफलता का रहस्य उनका केबल नेटवर्क सुमंगली केबल विजन भी रहा। शुरू से ही सुमंगली ने सन ग्रुप के चैनलों को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हूँ। मारन जानते थे कि दक्षिण में उपग्रह चैनलों के दर्शकों की संख्या उस समय बहुत कम थी। केबल नेटवर्क के द्वारा सैटेलाइट कनेक्शनों की संख्या भी बढाई।

वर्तमान में सन ग्रुप के 14 टेलीविजन चैनल है, जिसमें चार तमिल (सन.टी.वी. के सन न्यूज, सन म्यूजिक, चार तेलुगु (जैमिनी

टी.वी., तेजा, तेजा न्यूज, आदित्य टी.वी., दो मलयाली (सूर्या और, किरण टी.वी.), चार कन्नड़ (उदय टी.वी., उषे टी.वी. उदय न्यूज, उदय–2) चैनल शामिल हैं। इनके अलावा इसके चार रेडियो चैनल (विशाखा एफ.एम–, सूर्य एफ.एम), दो दैनिक समाचार पत्र और 4 पत्रिकाएं भी।

सहारा समूह : 80 के दशक में एक छोटी सी चिटफंड कंपनी से अपना कारोबार आरंभ करने वाले सुब्रतो राय ने मीडिया में शुरूआत 'राष्ट्रीय सहारा' दैनिक अखबार से की। 90 के दशक के आरंभ में यह पत्र उस समय प्रकाशित किया गया जब देश में उदारीकरण की नीतियों का उदय हो रहा था। 'राष्ट्रीय सहारा' ने डंकल प्रस्ताव और विश्व व्यापार संगठन की नीतियों के विरूद्ध जोरदार अभियान चलाया। इसका शनिवार को प्रकाशित होनेवाला 'हस्तक्षेप' अपनी विषय वस्तु के लिए बहुत ही लोकप्रिय हुआ।

बाद में सहारा समूह ने अपना टेलीविजन चैनल आरंभ किया, जिस पर समाचार भी दिखाए जाते थे। लेकिन मूलतः यह एक मनोरंजन चैनल था। आगे चलकर इसका नाम बदलकर सहारा वन कर दिया गया। 2002 में चौबीस घंटे समाचार प्रसारित करने वाला 'सहारा समय' राष्ट्रीय चैनल शुरू किया गया। यह चैनल पूरी तरह से डिजिटल तकनीक पर आधारित था, किन्तु यह देश के प्रमुख समाचार चैनलों में अपना स्थान नहीं बना पाया। सहारा समूह ने राष्ट्रीय के साथ–साथ क्षेत्रीय बाजार में भी राज्यवार चैनल शुरू किए। सहारा के मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और राष्ट्रीय राजधनी क्षेत्र (एन.सी. आर) चैनलों ने अपनी अच्छी पहचान बनाई । 'राष्ट्रीय सहारा' अखबार

के अलावा इस समूह के अनेक प्रकाशन हैं, जिनमें उर्दू अखबार और अंग्रेजी पत्रिका है।

इनाडू समूह : रामोजी राव ने मीडिया में अपना कारोबार, इनाडू नामक तेलुगू अखबार से 10 अगस्त, 1974 (विशाखापत्तनम) को शुरू किया था। एक साल बाद 17 दिसंबर, 1975 को यह अखबार हैदराबाद से भी छपना शुरू हो गया। 1 मई, 1978 को इनाडू का विजयवाड़ा संस्करण निकला और इस प्रकार एक–एक करके आंध्र प्रदेश के सभी जिलों तक उन्होंने अपनी पहुंच बना ली। देश में अपनी तरह का यह पहला प्रयोग था, जब किसी समाचार पत्र के जिला संस्करण छापे जा रहे थे। उनका बात पर अधिक जोर था कि आम लोगों की समस्याओं से संबद्ध समाचारों को प्रमुखता से छापा जाए। इस समय इनाडू समाचार पत्र के दो दर्जन संस्करण प्रकाशित हो रहे हैं। अप्रैल 1995 में रामोजी ने इनाडू टी.वी. (ई.टी.वी.) नामक तेलुगू चैनल आरंभ किया। उन्होंने हैदराबाद में रामोजी फिल्म सिटी (आर. एफ.सी.) भी स्थापित किया। फिल्म निर्माण की सभी सुविधाओं से सुसज्जित यह फिल्म सिटी दक्षिण भारत में अपनी तरह का एकमात्र स्थान है। हजारों पर्यटक फिल्म सिटी देखने आते हैं जो अब आय का भी एक अच्छा स्रोत है।

यह समूह वर्तमान में कुल 17 चैनल प्रसारित कर रहा है, इनमें ई.टी.वी. तेलुगु, कन्नड़, बांग्ला मराठी, हिन्दू गुजराती, उर्दू, उड़िया प्रमुख हैं। 27 जनवरी, 2002 को उन्होंने एक साथ छह क्षेत्रीय चैनल शुरू करके एक उदाहरण प्रस्तुत किया। इनमें चार हिंदी राज्यों के चैनल थे। मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और राजस्थान। इनाडू

चैनलों के कार्यक्रम–निर्माण और प्रसारण का सारा कार्य पूरी तरह से रामोजी फिल्म सिटी, हैदराबाद से नियंत्रित होता था। इनाडू समूह ने राष्ट्रीय समाचार चैनलों से टक्कर लेने के बजाय क्षेत्रीय बाजार में अपनी पहचान बनाने की रणनीति पर अमल किया और यह नीति काफी हद तक सफल भी रही।

समाचार–पत्र, टेलीविजन और फिल्म सिटी के अलावा इनाडू समूह की मार्गदर्शी नामक चिटफंड कंपनी भी है। वर्तमान में लगभग पांच लाख ग्राहकों से यह कंपनी सालाना 3,000 करोड़ रूपए का कारोबार करती है। उनके कारोबार में प्रिया ब्रांड के मसाले और अचार बनाने वाली कंपनी भी है। कलांजलि नामक भारतीय संस्कृति से जुड़ी कला वस्तुओं को बेचने वाले शोरूम भी उनके व्यापार में शामिल है। इनके अलावा डालफिन ग्रुप आफ होटल्स के जरिए उन्होंने होटल व्यवसाय में अपना भाग्य आजमाया है। 'उषा किरण मूवीज' फिल्म–निर्माण में कार्यरत है। वहीं मयूरी फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर्स फिल्म वितरण का काम करती है।

इंडिया टी.वी.– जी टी.वी. पर प्रसारित 'जनता की अदालत' कार्यक्रम से लोकप्रिय हुए रजत शर्मा ने 20 मई, 2005 को इंडिया टी.वी. की शुरूआत की। उनके साथ थी पर्यावरणविद् मेनका गांधी और तहलका डॉट कॉम के मालिक तरूण तेजपाल। चैनल शुरू करने से पहले मार्केटिंग के दौरान से रजत शर्मा ने अपने चैनल की नई छवि प्रस्तुत करने की कोशिश की और विज्ञापनों में नारा दिया कि देश बदलना है

तो चैनल बदलो। रजत शर्मा ने अपने चैनल की पंच लाइन बनाई बदलें भारत की तस्वीर। लेकिन इंडिया टी.वी. लोकप्रियता के मामले में अपनी अधिक पहचान नहीं बना पाया। इसको उसके स्टिंग आपरेशनों के लिए भी जाना जाता है। कास्टिंग काउच की अवधारणा का परदाफाश करने के लिए इंडिया टी.वी. ने शक्ति कपूर और अमन वर्मा पर स्टिंग ऑपरेशन किया। पत्रकारिता जगत् में इसकी काफी आलोचना हुई। हालाँकि, कुछ समय तक इसके कारण इंडिया टी.वी. एकाएक चर्चा में आ गया, लेकिन फिर टी.आर.पी. के मामले में यह चैनल पिछड़ गया। जनता की अदालत का नाम बदलकर आपकी अदालत के रूप में प्रसारण किया जाता है।

जनमत टी.वी. : 2005 में श्री अधिकारी ब्रदर्स ने एक नए विचार के साथ जनमत टी.वी. की शुरूआत की। विचार था– देश की पहचान विचार चैनल। नाम के अनुरूप इस चैनल पर लंबे समय तक समसामयिक विषयों पर विभिन्न फॉर्मेटों के कार्यक्रमों में विचार–विमर्श किया जाता रहा। करंट अफेयर्स कार्यक्रमों में राहुल देव, उमेश उपाध्याय, अलका सक्सेना, मनोज रघुवंशी, हरीश गुप्ता आदि अनेक जाने–माने चेहरे दिखाई दिए। इन कार्यक्रमों के बीच में कुछ समाचार भी दिखाए जाते थे, लेकिन लगभग एक साल तक कोई विशेष पहचान न बना पाने के बाद इसमें समाचार और विचारों का अनुपात आधा–आधा कर दिया। इसके अलावा इनका एक और चैनल सब टी. वी. है।

सी.एन.एन.–आई.बी.एन. समूह : 2005 में अंग्रेजी समाचार चैनलों के बाजार में विदेशी पूँजीवाले एक नए चैनल ने कदम रखा। इसे शुरू

करने वाली कंपनी ग्लोबल ब्रॉडकास्ट न्यूज (जी.बी.एन.) में टी.वी. 18 के 74 प्रतिशत और अन्य शेयर कुछ पत्रकारों–राजदीप सरदेसाई, समीर मनचंदा और हरेश चावला के हैं, जबकि चैनल चलाने में टर्नर इंटरनेशनल की भी हिस्सेदारी है। चैनल के प्रबंध संपादक राजदीप सरदेसाई ने चैनल शुरू करते समय कहा था कि आई.बी.एन. लाइव सही अर्थों में एक पत्रकारों द्वारा संचालित चैनल होगा और संपादकीय स्वतंत्रता को पूरा महत्व दिया जाएगा। इसके अलावा चैनल ने बड़े जोर–शोर से नागरिक पत्रकारिता का ऐलान किया और कहा कि अब दर्शक और पत्रकारों के बीच का भेद समाप्त हो गया है। आम दर्शक भी चैनल को अपनी फिल्मांकन की गई वीडियो क्लिप भेज सकते हैं। इसके परिणाम काफी उत्साहजनक रहे और इसके अंतर्गत अनेक एक्सक्लूसिव वीडियो चैलन दिखाए गए। सी.एन.एन.–आई.बी.एन. के पास अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्याप्त सहयोग है। इसका कारण था सी. एन.एन. के साथ इसकी भागीदारी। सी.एन.एन. दुनिया भर में 38 उपग्रहों की मदद से प्रसारित किया जाता है। सी.एन.एन. इंटरनेशनल को पूरी दुनिया में 19 करोड़ 30 लाख दर्शक देखते हैं। सी.एन.एन. –आई.बी.एन. को आरंभ से ही दर्शकों ने काफी पसंद किया इसका एक कारण यह भी था कि अभी तक केवल एक ही अंग्रेजी चैनल (एन.डी.टी.वी. 24ग7) दर्शकों को उपलब्ध था। टी.आर.पी. में सफलता के बाद जी.बी.एन. समूह ने हिंदी चैनल में जागरण के चैनल–7 के शेयर खरीद कर कदम रखा। इस चैनल की शुरूआत प्रतिष्ठित हिंदी समाचार पत्र समूह जागरण ने 2005 में की थी। अजय उपाध्याय, अजीत साही और प्रशांत टंडन जैसे वरिष्ठ पत्रकारों की मदद से नई टीम को एक माह प्रशिक्षण देने के बाद चैनल–7 शुरू किया गया।

लेकिन जिंदगी लाइव दिखाने का दावा करने वाला यह चैनल साल भर में भी अपनी अलग पहचान नहीं बना पाया। एक जून, 2006 को चैनल–7 को नए कलेवर के साथ री जांच कर दिया गया। चैनल का नया नारा था–खबर हर कीमत पर। 'आज तक' के आशुतोष, सुमित अवस्थी, संजीव पालीवाल, प्रबल प्रताप सिंह इत्यादि पत्रकारों को हिंदी के नए चैनल की कमान सौंपी गई। दरअसल जी.बी.एन. ने इस बात को समझ लिया था कि हिंदी का बाजार न केवल बड़ा है, बल्कि आम लोगों में इसकी लोकप्रियता भी अधिक हो सकती है।

टाइम्स नाउ : टाइम्स नाउ चैनल की शुरूआत 31 जनवरी, 2006 को हुई। इसे देश के प्रतिष्ठित समाचार पत्र समूह टाइम्स और अंतरराष्ट्रीय न्यूज एजेंसी 'रायटर्स' ने मिलकर आरंभ किया। भारत के शहरी माध्यम वर्ग को अपना प्रमुख दर्शक बताने वाले इस चैनल ने अपना नारा बनाया फील दा न्यूज टाइम्स की ग्लोबल ब्रॉडकास्टिंग कंपनी लिमिटेड के देशभर में ब्यूरों हैं। टाइम्स समूह का समाचार–पत्र, मैगनीज, संगीत, एफ.एम., रेडियो, इंटरनेट, मोबाइल सेवा इत्यादि में पहले से ही कारोबार है। जबकि रायटर्स के पास दुनिया भर के 129 देशों में स्थित 196 ब्यूरो ऑफिसों में 2,300 कर्मचारियो का स्टाफ है। एन.डी.टी.वी. से पत्रकारिता में दीक्षित हुए और ऑक्सफोर्ड में पढ़े हुए अर्णव गोस्वामी को टाइम्स नाउ का एडीटर–इन–चीफ बनाया गया।

भुगतान चैनल : इन निजी चैनलों को चैनल नियामक द्वारा निर्धारित राशि अदा कर देखा जा सकता है। यदि उपभोक्ता केबल के माध्यम से इन्हें ग्रहण कर रहा है तो उसे ये केबल ऑपरेटर को निर्धारित

राशि अदा करके ही देखे जाने योग्य बनता है। डी.टी.एच. के माध्यम से इन्हें प्राप्त करने की स्थिति में इन चैनलों का निर्धारित शुल्क अदा करना पड़ता है। उपभोक्ता उपलब्ध पैकेज के अनुरूप ग्राहक राशि को चैनल नियामक को प्रस्तुत करता है और उसके एवज में वह चैनल देख सकता है। वर्तमान में प्रमुख डी.टी.एच. आपरेटर डिश टी.वी. ने यह व्यवस्था की है कि इसके सेट टॉप बाक्स में एक चिप कार्ड लगाया गया है। मोबाइल के रिचार्ज कूपन की भाँति निर्धारित राशि का भुगतान कर चैनल सीधे ही देख सकते हैं। भुगतान चैनलों के आ जाने से जहां निजी चैनल निर्माताओं के कार्यक्रमों की गुणवत्ता को लेकर प्रतिस्पर्द्धा पनप रही है, वहीं प्रसारण एवं प्रस्तुति के नवीन आयाम भी निरंतर ग्राहकों को मिल रहे हैं।

सेटेलाइट टेलीविजन चैनल्स एवं केबल प्रसारण– सेटेलाइट चैनल और केबल टेलीविजन प्रकारान्तर से एक दूसरे का पर्याय ही हैं। आज समूचे संसार में सूचना क्रांति चरम पर है। टी.वी. भी इससे अछूता नहीं है। दुनिया भर के सैकड़ों चैनल आज सेटेलाइट और केबल के माध्यम से दर्शकों के लिए उपलब्ध है। सेटेलाइट चैनल्स में तकनीकी पक्ष यह है कि विभिन्न चैनल्स जैसे, टी.वी., स्टार प्लस, सोनी, सहारा, डिस्कवरी ,आदि के कार्यक्रम उनके प्रसारण स्टूडियों से एक निश्चित फ्रीक्वेंसी पर निश्चित उपग्रह और उसके ट्रांसपोंडर के माध्यम से प्रसारित किए जाते हैं। इन कार्यक्रमों को प्रचलित दूरदर्शन–वन दूरदर्शन–2 (मेट्रो) की तरह सीधे आम घरों में प्रयुक्त किए जाने वाले साधारण टी.वी. एण्टीना की सहायता से देखा नहीं जा सकता। सेटेलाइट प्रसारणों के लिए लाइसेंसशुदा केबल आपरेटर निर्धारित

प्रक्रिया के अनुसार उपकरण संचार व्यवस्था के तकनीकी और मशीनी उपकरण स्थापित करता है। इसमें मूलतः एक डिस्क और विभिन्न चैनलों के लिए हेतु ट्रांसपोंडर होते हैं। हर एक चैनल अपनी निर्धारित स्थिति, फ्रीक्वेंसी और ट्रांसपोंडर के जरिए केबल आपरेटर को प्राप्त होता है। वह इन सिंनलों को प्राप्त करके उन्हें अपने यहां से आप्टिकल फाइबर केबल या अन्य प्रकार की केबल से उपभोक्ता के घर तक पहुँचाता है। पूरी प्रक्रिया के लिए बिजली वितरण के तारों की व्यवस्था की तरह घर–घर कनेक्शन किया जाता है। उपभोक्ता केबल को अपने टी.वी. सैट से जोड़कर मनचाहे कार्यक्रम को टी.वी. चैनल बदलकर प्राप्त कर सकता है। केबल आपरेटर उपलब्ध कराए जा रहे चैनलों के आधार पर निर्धारित शुल्क उपभोक्ता से वसूलता है। वर्तमान में मनोरंजन, सूचना, समाचार, फैशन, खेल आदि के सैकड़ों चैनल बाजार में हैं। विभिन्न प्रकार की उपग्रह प्रणालियां इन्हें बाजार में दिन–रात उतार रही हैं। सैकड़ों केबल आपरेटर अपने–अपने क्षेत्र में केबल जाल फैला रहे हैं और अनगिनत टी.वी. उपभोक्ता इनसे जुड़े हैं। सेटेलाइट और केबल टेलीविजन का प्रभाव यह है कि इन्होंने उपभोक्ताओं को एक वृहद परिप्रेक्ष्य उपलब्ध कराया है और सेटेलाइट टेलीविजन और केबल टी.वी. एक उद्योग की तरह पनप रहा है। कार्यक्रमों की बाढ़ में उनकी लोकप्रियता और पहुंच के समीकरण भी बदल रहे हैं। आज उपभोक्ता जहां नवीनता की मांग को लेकर आक्रामक हैं वहीं चैनलों इस प्रभाव में कोई कमी नहीं छोड़ रहे हैं। से शीत–युद्ध एक से एक विज्ञापन व प्रसारण नीतियां, डिजिटल प्रसारण स्टीरियों से लेकर डॉल्बी डिजिटल तक ध्वनि प्रसारण, क्षेत्रीय भाषाओं

के प्रसारण और मनोरंजन की नस–नस में रचा बसा यह संसार उपग्रह से उतर कर केबल के जरिए समाज में चारों ओर छा गया है।

इकाई—5

- <u>न्यू मीडिया</u>
- वेब पत्रकारिता एवं पोर्टल,ब्लाग
- मल्टी मीडिया

वेब पत्रकारिता, पोर्टल, ब्लाग :

इण्टरनेट की स्थापना अमेरिका के रक्षा विभाग ने की थी। इसकी स्थापना का उद्देश्य रक्षा संबंधी सूचनाओं को कम्प्यूटर के द्वारा एक जगह से हजारों मील दूर स्थापित दूसरे कम्प्यूटर में शीघ्रता से पहुँचाना था। यह प्रयोग अपेक्षा से ज्यादा सफल रहा। प्रारंभ में इसे आर्पनेट कहा गया। लेकिन जब इसका प्रयोग विश्वविद्यालय और अन्य सरकारी संस्थायें करने लगीं तो इसका नाम बदलकर इण्टरनेट हो गया। इण्टरनेट को यदि आज के हिसाब से परिभाषित करें तो केवल यही कहा जा सकता है कि दुनिया भर में फैले लाखों कम्प्यूटर का नेटवर्क है। इससे सभी कम्प्यूटर एक–दूसरे से जुड़े रहते हैं तथा आपस में किसी भी तरह की सूचनाओं का आदान–प्रदान शीघ्रता से कर लेते हैं, इसलिये इण्टरनेट को सुपर हाइवे भी कहा जाता है।

आज हम सूचनाओं के रूप में इस पर अखबार पढ़ सकते हैं, पत्रिकाएँ पढ़ सकते हैं, फिल्म देख सकते हैं, गाने सुन सकते हैं और गेम खेल सकते हैं। चाहे चित्र हो या आवाज,कम्प्यूटर हमेशा एक फाइल के रूप में समझता और समझाता है। सूचना का यही फाइल का रूप इण्टरनेट की जान है। आप किसी भी तरह की फाइल को सेकेंडों में ट्रांसफर कर सकते हैं। इण्टरनेट के लिए किसी देश की कोई सीमा नहीं है। आप मनचाही सूचनाएँ किसी भी देश में भेज सकते हैं और वहाँ से मँगा सकते हैं। जिनके पास इण्टरनेट का कनेक्शन है, वह बिना किसी बाधा के या दुनिया की परवाह किये बिना किसी भी सूचना को भेज सकता है या मँगा सकता है। आज दुनिया की सैकड़ों कम्प्यूटर कम्पनियाँ इण्टरनेट के विकास में लगी

हैं। इन कम्पनियों ने इण्टरनेट के लिए तीव्र गति से कार्य करने वाले मोडम और आसानी से प्रयोग किए जाने वाले सॉफ्टवेयरों का विकास किया है। इन कम्पनियों में माइक्रोसॉफ्ट का नाम सबसे अग्रणी है। माइक्रोसॉफ्ट ने अपने विंडोज 98 नामक ऑपरेटिंग सिस्टम को विशेष रूप से इण्टरनेट के लिए तैयार किया है। विंडोज 98 के आने से आज कोई भी कम्प्यूटर प्रयोगकर्ता केवल एक ऑपरेटिंग सिस्टम की कीमत में इण्टरनेट के सभी टूल्स प्रयोग कर सकता है। इंटरनेट के लिए प्रयोग किए जाने वाले दूसरे सॉफ्टवेयर, जैसे– गो–फर, वर्जीनिका, या नेटस्केप विंडोज 98 से बहुत पिछड़े हैं। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रो. लियोनार्ड क्लमिरॉक को इण्टरनेट का पिता कहा जाता है। डा. क्लमिरॉक और उनके साथियों ने सितम्बर, 1969 को दो कम्प्यूटरों के बीच संवाद कायम करने में सफलता पाई थी। यह संवाद रिफ्रेजरेर के आकार के एक रूटर के जरिए बना था जिसे इंटरफेस मैसेल प्रोफेसर कहा गया पर वास्वत में दो कम्प्यूटरों ने आपस में बात 20 अक्टूबर, 1969 को की।

डॉ. क्लमिरॉक और उनके साथियों को कहाँ मालूम था कि भविष्य से इतनी संभावना निकल आएगी जो परियोजना शीतयुद्ध के काल में अमेरिका की सुरक्षा जरूरतों से शुरू हुई थी, वह सूचना, मनोरंजन, ज्ञान–विज्ञान और सबसे बढ़कर व्यापार के माध्यम के रूप में विकसित हो गई। इण्टरनेट के वर्डवाइड वेब (WWW) का रूप लेने की यह यात्रा रोमांच भरी है। यह विकास 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में हुआ। तब डाक्टबर्नसे ली ने अपने निजी इस्तेमाल के लिए छोटा कम्प्यूटर प्रोग्रॉम लिखा। इस प्रोग्राम से उनके कम्प्यूटर के

भीतर लिखे पत्रों के आपस में जोड़ने की सुविधा मिली। जल्द ही इण्टरनेट से जुड़े अलग–अलग कम्प्यूटरों के बीच दस्तावेजों को जोड़ने के लिए जिस फॉर्मेटिंग भाषा का इस्तेमाल हुआ, उसे एच.टी. एम.एल. कहा गया। 1992 तक वेब मुख्यतः लिखित रूप में ही रहा। उस साल एक ऐसी घटना हुई जिसने वेब के रूप को बदलकर रख दिया। मार्क एंडरसन ने एक नया कम्प्यूटर प्रोग्राम बनाया जिसे NCSA मौजैक कहा गया। इससे मतलब इलिनोइज विश्वविद्यालय के नेशनल सेंटर सुपर कम्प्यूटरिंग एप्लीकेशंस से है NCSA पहला वेब खोजक था। वेब ब्राउजर से विभिन्न वेबवाइटों तक पहुँचना आसान हो गया। जल्द ही वेबवाइट सिर्फ लिखित रूप में नहीं रह गया। इनमें ध्वनि और वीडियो फाइलों को भी शामिल किया जाने लगा।

ई–मेल– यह इण्टरनेट की डाक सेवा है और इसका पूरा नाम इलेक्ट्रॉनिक मेल है। इसके प्रयोग से हम किसी भी तरह की सूचना और संदेश को कम्प्यूटर के द्वारा दुनिया के किसी कोने में भेज सकते हैं।

वर्ड वाइड वेब– यह इंटरनेट द्वारा प्रदान की जाने वाली व्यावसायिक सेवा हे। इसे संक्षेप में www भी कहा जाता है। इस सेवा का उपयोग करके हम अपने उत्पाद को समूची दुनिया में सामने ला सकते हैं।

एफ.टी.पी.– ए पूरा नाम है फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल। इस सेवा का उपयोग करके हम फाइल को स्थानांतरित कर सकते हैं।

टैली नेट –यह भी संचार की एक सेवा है, जो आपको दूसरे सिस्टमों तक पहुँचाकर उस पर उपलब्ध सेवाओं के प्रयोग का अवसर प्रदान करती है।

होम–पेज– इंटरनेट पर यह एक ऐसी सुविधा है कि कोई भी व्यक्ति अपने या अपनी संस्था या किसी उत्पाद के लिये इसे प्रयोग कर सकता है।

आर्ची– इसके जरिए हम सूचना को ढूँढने का कार्य कर सकते हैं।

गो–फर – आर्ची नामक सुविधा का प्रयोग करके आप यह पता लगा सकते हैं कि हम जिस सूचना की तलाश में है वह कहाँ है, जबकि गो–फर उस सूचना को तलाश करता है, उसे खोजकर आपके कम्प्यूटर पर ला दता है।

वैरोनिका– इसका प्रयोग करके हम तेजी से आवश्यक सूचनाएँ हासिल कर सकते हैं। इंटरनट में सूचनाओं को वर्गीकृत करने के लिए जिन विस्तार नामों का प्रयोग किया जाता हैं उन्हें इन डोमेन कहते है। डोमेन को क्छे नामक बड़े कम्प्यूटर के द्वारा संचालित किया जाता है। क्छे का संपूर्ण नाम डोमेन नेम सर्विस है। सूचनाओं को शीघ्रता से खोजा जा सके और उनकी पहचान की जा इसके आठ वर्गों में बाँटा गया है–

- COM: इस वर्ग में व्यापारिक संगठन को रखा गया है।
- Edu: इस वर्ग में शैक्षणिक संस्थानों को रखा गया है।

- Mil: इस वर्ग में अमेरिकी सरकार के फौजी संस्थान आते हैं।
- Go: इस वर्ग में अमेरिकी सरकार के सरकारी संस्थान आते हैं।
- Org : इस वर्ग में वे संस्थाएँ आती हैं जो पूर्ण रूप से व्यापारिक नहीं है।
- Hat : इस वर्ग में नेटवर्किंग संस्थाएँ आती हैं।
- Ind : इस वर्ग में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं को रखा गया है।
- In Au; Nz : इन वर्गों में कुछ विशेष देशों को रखा गया है।

उपरोक्त वर्गों के अतिरिक्त कुछ नए वर्ग भी बाद में जोड़ गये हैं।

- Firm : इस वर्ग के अंतर्गत विशुद्ध व्यापारिक संस्थाओं को रखा गया है।
- Stere : इस वर्ग में डिपार्टमेन्टल स्टोर आते हैं।
- ˘b : इस वर्ग में इण्टरनेट से संबंधित संस्थाओं को रखा गया है।
- Aet : इस वर्ग में उन संस्थाओं को रखा गया है जो कला से संबंध रखता है।
- Rec : इस वर्ग में मनोरंजन से जुड़ी संस्थाओं को रखा गया है।
- Onto : इस वर्ग में सूचना देने वाली संस्थाओं को रखा गया हैं।
- Nom : इस वर्ग में उन लोगों को रखा गया है, जो नाम, क्रम के अनुसार अपने आपको रखना चाहते है।

इंटरनेट ब्राउजर (खोजक)— इंटरनेट ब्राउजर एक ऐसा सॉफ्टवेयर है जो कम्प्यूटर को इंटरनेट से और उसके द्वारा ही हम लिखित सामग्री से लेकर फिल्में तक देखते हैं। ब्राउजरों में वीगेटर और नेटर—केद प्रमुख हैं।

हार्डवेयर— इंटरनेट का प्रयोग करने के लिए हमें निम्न हार्डवेयरों की आवश्यकता होगी :—

- (1) एक्सटर्नल मॉडेम अथवा इंटरनल मॉडेम
- (2) टेलीफोन हैंडसेट
- (3) कनेक्टर केबल
- (4) टेलीफोन वायर

यदि आपके पास एक्सटर्नल मॉडेम है तो उसे कम्प्यूटर की सीरियल पोर्ट से जोड़े लें। यदि इंटरनल मॉडेम है तो उसे कम्प्यूटर में लगाने पर किसी एक से कॉन्फीगर कर लें। इसके बाद टेलीफोन की तार के कनेक्टर से मॉडेम को जोड़ें और फिर मॉडेम के दूसरे कनेक्टर से टेलीफोन लें। जब यह समस्त प्रक्रिया पूरी हो जाये तो कम्प्यूटर को ऑन करें, विंडोज 98 स्वयं को इंस्टॉल करके सक्रिय कर लेगा। ज्यादा जानकारी हासिल करने के लिए आप विंडोज पैनल में जाकर मॉडेम नाम आइकॉन पर क्लिक करके मॉडेम की प्रोपर्टी चैक करें।

कनेक्शन बनाना—यदि आपने वी.एस.एन.एल., एम.टी.एन.एल. से या किसी कंपनी का इंटरनेट कनेक्शन लिया है तो प्रयोग करने के लिये आपको अपने कम्प्यूटर की स्थापना करनी होगी। कम शुल्क और

विकल्पों के साथ बीस कम्पनियों ने तो अपना कारोबार (कामकाज) शुरू कर दिया है ये मुफ्त सॉफ्टवेयर और ट्रेनिंग किट्स के साथ–साथ अनेक प्रकार की सुविधाएँ और ग्राहकों को कराती हैं।

कनेक्शनः नई आई.एस. पी. नीति लागू हो जाने के बाद निजी क्षत्र में अनेक आई.एस.पी. यानी इंटरनेट प्रोवाइडर कम्पनियाँ मैदान में पहला महत्त्वपूर्ण सवाल कीमत का है अगर आप औसत से अधिक खर्च करने जा रहे हैं तो आपको अतिरिक्त फायदों का ध्यान देने की आवश्यकता है।

टी.सी.पी./आई.पी. में से क्या– हो सकता आपको कंपनी ई–मेल, शेल, एकाउंट टी.सी.पी./आई.पी. एकाउन्ट, 4 एम.बी.स्पेस जैसे विकल्पों की पेशकश करे आपको पूर्ण रूप से टी.सी.पी./आई.पी. एक्सेस की माँग करनी चाहिए, जिसके तहत आपको ई–मेल, ग्राफिक के साथ वेब एक्सटेन, एफ.टी.पी. टेलनेट और इसके अलावा बाकी सब सुविधायें मिलें। अगर टी.सी.पी./आई.पी. जिसके सर्वर में सिर्फ चार एम.बी. का स्पेस है तो यह कोई मायने नहीं रखता। इसके बावजूद आप वहाँ अपना वेब पेज पोस्ट कर सकते हैं। इंटरनेट पर कई वेबसाइटों में अनेक स्थान हैं जहाँ आप मुफ्त में व्यक्तिगत होम पेज बना सकते हैं।

इंटरनेट से जुड़ना– प्रथम चरण में आप अपने निकटवर्ती इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर को एक एकाउंट प्राप्त कर लें। भारत में आज अनेकों सरकारी एवं गैरसरकारी संस्थाएँ इस प्रकार की सेवायें दे रही हैं जिनसे मिलने वाले अनेक तरह के एकाउंटों में से, किसी एक

का पंजीकरण करा सकते हैं। टी.सी.पी./आई.पी. टेक्स्ट के साथ ग्राफिक्स भी उपलब्ध कराता है, इसके लिए आपको इंटरनेट एक्सप्लोरर या नेटस्केप नेविगेटर की तरह के वेब ब्राउजर की आवश्यकता होती है। इसके अलावा आपको विनसॉक जैसे साफ्टवेयर की आवश्यकता होती है।

इंटरनेट के लिए विंडोज 95 का सेट अप– हमने विंडोज 95 के इंस्टॉलेशन के समय डायल अप नेटवर्किंग इंस्टॉल किया है या नहीं, यह आप माई कम्प्यूटर से मालूम कर सकते हैं। अगर यह इंस्टॉल हो तो आप सीधे टी.सी.पी./आई.पी. के लिए डायल अप नेटवर्किंग कॉन्फिगर पर जाएँ। अगर डायल अप नेटवर्किंग इंस्टॉल नहीं है, तो विंडोज 95 की सी.डी./डिस्को की आवश्यकता होती है।

(1) स्टार्ट मीनू से सेटिंग– कन्ट्रोल पैनल सिलेक्ट करें।

(2) कंट्रोल पैनल में एड/रिमूव प्रोग्राम को डबल क्लिक करें। यहाँ प्रोपर्टी बॉक्स उपलब्ध होगा। इसमें से आप विंडोज सेट अप स्लेक्ट करें। आप विंडोज 95 के अवयवों को अपने कम्प्यूटर पर देखेंगे।

(3) डायल अपन नेटवर्किंक कम्यूनिकेशन की श्रेणी में आता है, अतः कम्यूनिकेशन चेक बॉक्स स्लेक्ट कर, ओ.के. क्लिक करें।

(4) आपको तब विंडोज के इंस्टॉलेशन डिस्किट या सी.डी. को इंसर्ट करने को कहा जायेगा। आप बाकी पूरी इंस्टालेशन प्रक्रिया से जाएँ, एवं सिस्टम रिस्टार्ट होता है।

टी.सी.पी./आई.पी. के डायल अप नेटवर्किंग कॉन्फिगर करना– स्टार्ट मीनू से सेटिंग–कंट्रोल पैनल स्लिेक्ट करें तथा कंट्रोल पैनल से नेटवर्क इंस्टॉल करें। नेटवर्क डायलॉग बॉक्स में एड क्लिक करें। आपको स्लिेक्ट नेटवर्क काम्पोनेंट टाइप डायलॉग बॉक्स दोबारा लिखेगा। इसमें से प्रोटोकॉल को डबल क्लिक करें। स्लिेक्ट नेटवर्क प्रोटोकॉल बॉक्स नजर आएगा। इसमें अब निर्माताओं की सूची में से माइक्रोसॉफ्ट क्लिक करें। आप नेटवर्क ड्रायवरों की सूची देखेंगे।

कनेक्शन का निर्माण– माई कम्प्यूटर आइकॉन को खोलकर डायल अप नेटवर्किंग को डबल क्लिक करें। डायल अप नेटवर्किंग के आने पर मीनू कनेक्शन को डबल क्लिक करें। मीनू कनेक्शन में अपने सर्विस प्रोवाइडर का नाम टाइप करें। यह केवल इंगित करने के नाम होता है। स्लिेक्ट ए मॉडेम, पुल डाउन लिस्ट में अपने मॉडेम का नाम छाँटिए। टेलीफोन नम्बर में अपने आई.एस.पी. का टेलीफोन नम्बर टाइप करें अगर वह आपके शहर में ही है तो आपको एरिया कोड और कंट्री कोड देने की आवश्यकता नहीं होती है। नेक्स्ट को क्लिक करें। अगर वह दूसरे शहर का है तो एरिया कोड में एस.टी.डी. कोड टाइप करें तथा कंट्री कोड में इंडिया टाइप करें तथा नेक्स्ट कर फिनिश क्लिक करें।

कनेक्शन कॉन्फिगरेशन– उसके बाद हम अपने आई.एस.पी. का डी.एन.एस. एंटर करें। यह बी.एन.एन.एल. के कम्प्यूटर की संख्या होती है जो कि आप इंटरनेट से जोड़ते हैं। इसका अर्थ यहाँ है कि आप दुनिया के किसी कोने के कम्प्यूटर से भी अपने आई.एस.पी. के कम्प्यूटर के द्वारा जुड़ सकते है।

(1) माई कम्प्यूटर खोलें। नई आइकॉन को क्लिक करें।

(2) अगर आई.एस.पी. आपके शहर में है तो यूज कंट्री कोड एरिया

कोड से चेक मार्क हटा दें।

(3) कॉन्फिगर क्लिक करें।

(4) अगर विंडोज ने आपके द्वारा इंस्टॉल किए हुए मॉडेम को डिटेक्ट कर लिया है तो आपको जनरल एन्ड सेटिंग्स में कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं होती है।

(5) आप आप्शन्स स्लेक्ट करें । ठतपदह नच जमतउपदंस ॅपदकवू ॅिमत क्पंसपदह क्पेचसंल डवकमउ ैजंजनेको चैक करें। आप अपने सर्विस प्रोवाइडर से कनैक्ट होने के बाद एक टर्मिनल विंडो देखेंगे जो कि आपसे यूजर नेम और पासवर्ड पूछेगा। आप ओ.के. पर क्लिक कर दें।

(6) सर्वर टाइप को क्लिक करें।

(7) सर्वर टाइप डायलॉग बॉक्स में देखें कि डायल अप सर्वर का टाइप डायल अप सर्वर है या पी.पी.पी. आपके कनेक्शन को सर्विस प्रोवाइडर से सम्बद्ध करता है। यह भी देखें कि टी.सी.पी/आई.पी. प्रोटोकॉल चेक किया गया या नहीं।

(8) टी.सी.पी/आई.पी. सेटिंग्स क्लिक करें।

(9) टी.सी.पी/आई.पी. सेटिंग्स डायलॉग बॉक्स में आई.पी. अंकित करें जो आपके सर्विस प्रोवाइडर द्वारा निर्धारित की गई रहती है जब आप एक विशाल कम्प्यूटर नेटवर्क का हिस्सा हो हैं तो इसके लिए कम्प्यूटर को अद्वितीय आई.पी. एड्रेस की आवश्यकता होती है। चूंकि वी.एस.एन.एल. प्रयोगकर्ता को स्वतः ही आई.पी. एड्रेस देते हैं, अतः आप इसे खाली भी छोड़ सकते हैं।

(10) स्पेसिफाई नेम, सर्वर एड्रेस पर क्लिक करें। आप प्राथमिक डी.एन.एस. और द्वितीयक डी.एन.एस. डालें।

(11) ओ.के. स्लिेक्ट करें। मॉडेम को ऑन कर माई कम्प्यूटर में इसके लिए निर्मित आइकॉन को डबल क्लिक करें। ऐसा उस समय करें जब तक कि आप कनेक्ट नहीं हो जाते हैं। जब आप कनेक्ट हो जाएँगे तो आप एक डॉस, विंडो पाएँगे जोकि आपसे लॉजिक नेम और पासवर्ड पूछेगा।

(12) सफलतापूर्वक लॉगिंग करने के बाद अगले प्रोम्प्ट पर पी. पी.पी. ऐंटर करें। जब स्क्रीन पर अजीब से करेक्टर नजर आएँ तो आप कांटीन्यू क्लिक करें या एफ–7 दबाएँ। अब आप वेब ब्राउजर को चालू करके नेट पर सर्फिंग शुरू कर सकते हैं और अपने ई–मेल पढ़ सकते हैं।

पूर्ववर्ती संस्करणों के लिये विनसाक बनाना– हम यह मानकर चलते हैं कि आप डॉस एन्वर्यमेंट के अंतर्गत विंडोज 3.एक्स का प्रयोग कर रहे हैं। आप एक डायरेक्टरी टेम के नाम से बनाएँ और चेंज करके उसमें जाएँ अब जें 30A ExEg में फाइल इंटरनेट से कॉपी कर

लें। टेम्प डायरेक्टरी टाइप करें। यह एक स्वतः ही फैलने वाला जें 30। आइकॉन है जो कि कई फाइलों के रूप में फैल जाती है। विंडोज स्टार्ट करके फाइल मीनू में रन स्लेिक्ट करें।

ब्रूध्जमउच पदेजंसस टाइप करें।

स्क्रीन पर के निर्देशों का पालन यस या ओ.के. (डिफाल्ट आप्शन्स स्वीकृत) में उत्तर दें। आपसे पूछा जाएगा कि Autoexec.KxK फाइट को क्या सेव करना है। यस और फिर सेव उत्तर देकर सेव कर दें। यह पूछे जाने पर कि क्या आप टैम्पेट विनासाक को कन्फिगर करना चाहते है। नो उत्तर दें इंस्टालेशन के रजिस्ट्रेशन के लिए कम्प्यूटर रिवूट करें।

ट्रम्पेट विनासाक का कान्फिग्रेशन– विंडोज से ट्रम्पेट विनासाक ग्रुप स्लेिक्ट करें। ट्रम्पेट विनासाक आइकॉन को डबल क्लिक करें। एक सेट अप डायलॉग बॉक्स दिखेगा। डी.एन.एस. सर्वर से आई.एस. पी. का डी.एन.एस. नंबर टाइप करें। उनसे आप सावधानी से ठीक–ठीक टाइप करते वक्त दोनों एड्रेस के बीच स्पेस का ध्यान रखें। डोमेन नेम सफिक्स ये यदि वी.एस.एन.एल. हैं तो अेदजण्दमज पद दे बाकी सेटिंग्स अपरिवर्तित छोड़ दें। क्योंकि डिफाल्ट स्वीकृत होती है। डायलर सेटिंग्स क्लिक करें। इनएक्टीविटी टाइम आउट को एक मिनट से अधिक में बदले : ओ.के. क्लिक करें। ट्रम्पेट विनासाक से एक्जिट करें, क्योंकि प्रोग्राम कान्फिगर हो गया है।

विनसाक का प्रयोग– अपना वेब ब्राउजर लान्च करें, ट्रम्पेट विनसाक स्वतः लोड होगा और मिनिमाइज होकर डेस्कटाप पर आ

जाएगा। आप अपने ब्राउजर विंडो को मिनिमाइज करें। डेस्कटाप के विंडो विनसाक को डबल क्लिक करें। क्पंसमत डंदनंस स्वहण्पद को स्लेक्ट करें। एडिट–क्लीयर (अगर आवश्यक हुआ तो क्लिक करें। स्क्रीन को साफ कर लें कर्सर प्राप्त करने के लिए बॉक्स को क्लिक करें और Altrio8200 टाइप करें। इससे मॉडेम बुरे कनेक्शन के समय है। आप से पहले ज्यादा देर तक प्रतीक्षा करेगा। सर्विस प्रोवाइडर को डायल करने की कमांड अलग–अलग लोगों के लिए अलग–अलग होती है। अगर आपके पास पुराने पल्स डायलफेन हो तो आपका कयाड ।ज्कच से शुरू होगा और अगर आपके पास नया टोन डायल है तो आपका कमांड एडिट से शुरू होगा।

अगर आप बड़े ऑफिस में हैं और बोर्ड से डॉयल करते हैं तो आप अपने नंबर के पहले जीरो डब्ल्यू टाइप करें। इसमें 0 (जीरो) से आप बाहरी लाइन प्रापत करेंगे और डब्ल्यू से माडेम को डायल होने से पहले डायलटोन के लिए रूकने का संकेत मिलेगा। उदाहरण के लिए आप ऑफिस में तीन डायल एवं बोर्ड सेवाओं का प्रयोग करते हैं तो आप ।जकवू 2659387 डायल करें। कनेक्शन मिलने पर आपसे लागिन का नाम पासवर्ड टाइप करने के लिए कहा जाएगा। इन्हें एंटर करके अगले प्राम्प्ट पर पी.पी.पी. टाइप करें और लीजिए, अब आप आन लाइन हैं और अब आप इंटरनेट सर्फिंग करने के साथ–साथ अपनी स्वयं की ई–मेल आदि भी भेज सकते हैं।

मल्टीमीटिया की सुलभता– पहली पीढ़ी के ब्राउजर्स जिनसे केवल लिखित पाठ हो प्रदर्शित हो सकता है, के विपरीत वर्तमान

ग्रैफिकल ब्राउजर द्वारा लिखित पाठ के अतिरिक्त चित्र और गैर रोमन लिपि भी देखा–पढ़ा और काम कया जा सकता है।

दुर्लभ मार्ग पर सुविधा– एक सामान्य वेब कनेक्शन में केवल दो कम्प्यूटर वेब सर्वर और वेब उपभोक्ता प्रयुक्त होते हैं।, लेकिन वेब सर्वर के जरिए यह अन्य कम्प्यूटर पर भी कमांड देने के दुर्लभ मार्ग को सुविधा देता है। यह बहुत ही शक्तिशाली विशेषता है और इसके माध्यम से इसी कारण विषय की तलाश, क्रेडिट कार्ड प्रमाणीकरण और अन्य कार्य संभव हो पाते हैं।

विस्तार की सुविधा– वेब पृष्ठों को बनाने के लिए प्रयुक्त मौलिक भाषा हाइपर टैक्सड मार्कअप लैंग्वेज (एच.टी.एम.एल.) थी। एच.टी.एम.एल. का दायरा बहुत सीमित था और पृष्ठ निर्माण का उद्देश्य निर्माण बड़ी मुश्किल से पूरा हो सकता था। इसके बावजूद जावा स्क्रिप्ट डायनोमिक एच.टी.एम.एल. और फ्लैश आदि के विकास से इसमें उल्लेखनीय सुधार हुए। इन तकनोलॉजियों ने वेब पृष्ठों को कहीं अधिक अंतरसक्रिय बनाने का काम किया। एक संपूर्ण विकसित भाषा के रूप में जावा से इसका और अधिक विस्तार संभव हो जाता है।

उपयोग में सरल– पहले इंटरनेट सेवा के लिये ऐसे क्लाइस कार्यक्रम की जरूरत पड़ती थी जिसे उपभोक्ता स्वयं संचालित करे लेकिन आज वेब ब्राउजर अपने नेटरकेट नेवीगेटर के जरिए ज्यादातर सेवाओं से जुड़ जाता है। यह मेल भेज सकता है, फाइल स्थानांतरित कर सकता है और गोंफर डोक्युमेंट का निपटारा भी कर सकता है।

इसके अलावा उपभोक्ता इन सहायक (हेल्पर) कार्यक्रमों से भी सम्पर्क बना सकते हैं जो इंटरनेट स्रोतो को संचालित करते हैं और सम्पर्क की दृष्टि से अज्ञात होने के कारण जिन्हें प्लक इन कहा जाता है। उदाहरण के लिए यदि इंटरनेट पर नई किस्म का कोई वीडियो के लिए यदि उपलब्ध हुआ है तो मौजूदा ब्राउसर उसको संचारित कर सकता है। हालांकि, इसके लिए उसे प्लग इनको ढूँढने का तरीका ज्ञात होना चाहिये।

इंटरनेट स्रोत और वेब पते– वर्ल्डवाइड वेब मनचाही संख्या वाले अंतरसंबधित डॉक्युमेंट की पहचान उसके विशेष पते से की जा सकती है। इस पते के स्वरूप का मानकीकरण कर दिया गया है जिसे समान स्रोत अनुसंधानक (यूनिवर्सक रिसोर्स लोकेटर अथवा यू. आर.एल.) कहते हैं।

वेब आधारित सेवाएँ– सर्च इंजन वेक पर उपलब्ध सबसे महत्त्वपूर्ण सेवाओं मे से एक सर्चिंग है । इंटरनेट में विभिनन लोकप्रियताओं वाले लगभग सौ सर्च इंजन कार्यरत हैं। इनमें बेहद लोकप्रिय (गूगल काम) याहू और एक्साइड से लेकर फैडहैड अल्पज्ञात सर्च इंजन शामिल है। डाट कॉम, याहू डाट कोम, एक्साइड डाट कोम, इनफोसीक डाट कोम, अल्टाविस्टा डाट कोम, लाइकोण डोट कोम, नार्दर्ननाइट डाट कोम, डोगपाइल डाट कोम, होट बेट डाट कोम, वेबकोलर डाट कोम और गोटु डाट कोम सूचना सर्वरों की श्रेणी में आने वाले प्रमुख सर्च इंजन हैं।

इण्टरनेट टेजीफोनो— मल्टीमीडिया सक्षम कम्प्यूटर के लिए ध्वनि भी बिल्कुल किसी आँकड़े की तरह है और उसे किसी भी दूसरे इंटरनेट कनेक्शन पर संप्रेषित किया जा सकता है। इस प्रकार मल्टीमीडिया सुविधा से सम्पन्न कम्प्यूटर पर इंटरनेट कनेक्शन के जरिए कोई भी उपभोक्ता किसी भी अन्य उपभोक्ता से वार्तालाप कर सकता है। टेलिफोनी (माईक्रोसाफ्ट) (नेटमीटिंग) के लिए सॉफ्टवेयर सुविधा से संपन्न विंडोज ही मिलते हैं।

ई—कामर्स— इंटरनेट की प्रगति की ही एक तार्किक परिणति ई—कामर्स है। किसी भी इंटरनेट की प्रगति को संचालित करने के लिए इंटरनेट पर की जाने वाली कार्यवाही को ई—कामर्स कहते हैं। वस्तुओं का क्रय—विक्रय विभिन्न व्यक्तियों अथवा कम्पनियों के मध्य सेवा या सूचना ई—कामर्स के अंतर्गत आते हैं। आर्थिक गतिविधियों को संचालित करने में नेट की बढ़ती लोकप्रियता ही एक प्रमाण सैकड़ों की संख्या में डाट कॉम कम्पनियों (जैसे रीडिफ डॉट कोम) का उदय है। ई—कामर्स को तीन श्रेणियों में बाँटा गया है— बिजनेस टु बिजनेस (बी2बी) बिजनस टु कंज्यूमर (बी 2 सी) और कंज्यूमर टु कंज्यूमर (सी 2 सी) इनमें अभी बी टू सी श्रेणी अधिक सक्रिय है। यह सेवा विशाल एमेजन डॉट कॉम (और दूसरी कई कम्पनियों) द्वारा संचालित है जिसका उद्देश्य थोक और खुदरा व्यापार के बीच में परम्परागत विभाजन रेखा को मिटा कर व्यक्तिगत ग्राहकों के मध्य सीधा सम्पर्क कराना है । इस श्रेणी के अंतर्गत कम्पनी नेट के जरिए अपने ग्राहकों और वितरकों से कारोबार के लिए सम्पर्क करती है। बी टु बी श्रेणी के विशेष क्षेत्रों में ग्राहक संबंध, प्रबंधन और आपूर्ति प्रबंधन है। किसी

कम्पनी को अपने ग्राहकों और वितरकों से जोड़ने वाले नेटवर्क को सबसे प्रमुख सेवाएँ यही होती हैं। सी टू सी नामक तीसरी श्रेणी का दायरा काफी सीमित है। उसमें ग्राहक का किसी अन्य ग्राहक से सीधा सम्पर्क होता है इसमें या तो नीलामी वाली साइट आती है अथवा किसी उत्पाद या सेवा का उपभोक्ता अपनी सूचना या शिकायत को आपस में बाँटने के लिए नेट का उपयोग करता है। बी टु बी नाम बुनियादी व्यावसायिक चक्र वे आन लाइन स्टोर (भंडार) होता है जो उत्पाद की विशेषताओं, मूल्य और उसके चित्रों के साथ पूरी सूची उपलब्ध कराता है। ग्राहक उस साइट पर लाग ऑन करते हैं और एक या अधिक उत्पादों को चुनने के बाद उन्हें इलेक्टॉनिक गाड़ी में रख देते हैं और फिर सत्यापन में ग्राहक को बीजक भेजने का पता, माल भेजने का पता, क्रेडिट कार्ड संबंधी सूचना जांच के बाद सही पाए जाने पर लेन–देन स्वीकार कर लिया जाता है। कुछ देशों में ऐसी कानूनी व्यवस्था है कि आर्डर, देने के बजाए उत्पाद को भेज दिए जाने के उपरांत ही ग्राहक के क्रेडिट कार्ड संबंधी जानकारी और माल भेजने के तरीके आदि की सारी जानकारी हासिल कर ली जाती है। क्रेडिट कार्ड संबंधी सूचना जांच के बाद सही पाए जाने पर लेन–देन स्वीकार कर लिया जाता है। कुछ देशों में ऐसी कानूनी व्यवस्था है कि आर्डर देने के बजाए उत्पाद को भेज दिया जाता है और माल वहाँ पहुँच जाने पर वह केन्द्र वेब सर्वर के जरिए यह संदेश प्रेषित कर देता है। इसके बाद क्रेडिट कार्ड से भुगतान किया जाता है। इलेक्ट्रोनिक कामर्स के लिए प्रयोग किए जाने वाले सॉफ्टवेयर अनेक प्रकार के हैं और इसी की तरह सर्वर सुविधाएँ भी कई तरह की हैं जैसे– जावा, पर्ल और सी + + का सर्वर पर प्रायः इस्तेमाल होता

है। इसके अलावा आनन–फानन में काम–काज निपटाने के लिए कोल्ड फ्यूजन, वेबस्फीयर, एनहाइड्रा और स्टोरी सर्वर जैसे सॉफ्टवेयर भी मौजूद हैं।

व्यावसायिक पक्ष का एक नया घटनाक्रम एम. कामर्स या मोबाइल कामर्स है। एम–कामर्स के उपरोक्त इंटरनेट पर लेन–देन के लिए सचल उपकरणों यथा सेल्युलर फोन और पर्सनल डिजिटल असिस्टेट का उपयोग करते हैं ?

भारत में इंटरनेट– भारत में इंटरनेट का आरंभ आठवें दशक के अंतिम वर्षो में अनेट (शिक्षा और अनुसंधान नेटवर्क) के रूप में हुआ था। इसके लिए इलेक्ट्रॉनिक विभाग और संयुक्त राष्ट्र विकास मंत्रालय ने आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई थी। इस परियोजना में पाँच प्रमुख संस्थान जैसे– राष्ट्रीय सॉफ्टवेयर टेक्नोलॉजी केन्द्र मुम्बई, भारतीय विज्ञान संस्थान, बेंगलूर, पाँचों भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान और इलेक्ट्रॉनिक निदेशालय शामिल थे। अनेट का बाज व्यापार प्रसार हो चुका है ?

एक अन्य प्रमुख नेटवर्क नेशनल इंफोंमेटिक सेंटर (एन.आई.सी.) के रूप में सामने आया जिसने प्रायः सभी जनपद मुख्यालयों को राष्ट्रीय नेटवर्क से जोड़ दिया। एनआइ सी आज देश के विभिन्न भागों में (1460) स्थलों को अपने नेटवर्क के जरिए जोड़े हुए है। एक नेटवर्क बहुत सूक्ष्म अमस्चार टर्मिनल्स (बी.एम.ए.टी.) पर आधारित है। एन.आई.सी. का मुख्य उद्देश्य राजकीय कार्यक्रमों के लिए सूचना

जारी करना है लेकिन काफी समय से एन.आई.सी. अर्द्धसरकारी संगठनों के लिए भी बैंडविड्थ उपलब्ध करा रहा है।

आम आदमी के लिए इंटरनेट का आगमन, 15 अगस्त 1995 को हो गया था जब विदेशी संचार निगम लिमिटेड ने देश में अपनी सेवाओं का आरंभ किया। शुरू के कुछ वर्षां में वी.एस.एन.एल. के उपभोक्ताओं की संख्या में जबर्दस्त इजाफा हुआ। पुनः 1999 में टेलीकॉम क्षेत्र निजी कम्पनियों के लिए खोल दिए जाने के फलस्वरूप अनेक नए सेवा प्रदाता बेहद प्रतिस्पर्द्धा विकल्पों के साथ सामने आए। देश में इंटरनेट के अनुमानतः 5 लाख कनेक्शन और उसके उपभोक्ताओं की संख्या लगभग 10 लाख कनेक्शन तक तो पहले ही पहुंच गई थी और नेशनल एसोसिएशन आफ सॉफ्टवेयर एंड सर्विसेज कम्पनीज (नास्कोम) के अनुसार देश में नेट उपभोक्ताओं की संख्या वर्ष 2000 तक 15 लाख के आंकड़े को पार कर चुकी थी और इसमें लगातार बढ़ोत्तरी जारी है। अनेक राज्य सरकारों ने सूचना प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहन देने वाली नीतियों को अपनाइया है। इनमें ग्राम स्तर तक सम्पर्क और पहुंच बनाने के उद्देश्य पर मुख्य बल दिया गया है।

भारतीय रैल द्वारा कम्प्यूटरीकृत आरक्षण, मध्य सूचना प्रणाली की स्थापना, सूचना प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा फास्ट रिलायबिल सर्विसेज (फ्रेडस) जैसी पेशकशों ने नागरिकों की अपेक्षाओं को काफी बढ़ा दिया है।

ब्लॉग : वर्तमान में इंटरनेट पर मौजूद अनेक प्रकार की तकनीक के बीच ब्लॉग द्वारा, भी लोग अपने विचारों को व्यक्त करने लगे हैं। आज स्थिति ऐसी है कि ब्लॉग जनसंचार का एक सशक्त माध्यम बन गया है। वस्तुतः ब्लाग एक ऐसी डायरी है जिसे नेट सर्फिंग करने वाले सभी लोग पढ़ सकते हैं और अपने विचारों को व्यक्त कर सकते हैं। इसीलिए आज फिल्मी सितारों से लेकर खेल, व्यापार एवं धार्मिक तथा राजनैतिक हस्तियाँ ब्लाग द्वारा अपनी भावनाओं एवं विचारों को आम लोगों तक पहुँचाने में इसका उपयोग कर रहे हैं। वस्तुतः ब्लॉग वेब लॉग का संक्षिप्त रूप है। यह सर्वप्रथम 1997. में अमेरिका में इंटरनेट में प्रचनल में आया। प्रारंभ में कुछ ऑनलाइन जनरल इस पर प्रकाशित किए गए थे जिसमें इंटरनेट के विभिन्न क्षेत्रों में प्रकाशित समाचार एवं समाचारेतर सामग्रियाँ लिंक होते थे। ब्लॉग लिखने वालों की संक्षिप्त टिप्पणियां भी इस पर प्रसारित होती थीं। इन्हें ही ब्लॉक कहा जाने लगा और इसके लेखन को ब्लागर।

प्रायः एक ही विषय से संबंधित तथ्यों एवं सूचनाओं का यह संकलन ब्लॉग के रूप में तेजी से लोकप्रिय होता जा रहा है। ब्लॉग लेखक को प्रारंभिक दिनों में कम्प्यूटर तकनीकी के कुछ विशेष तकनीक जैसे एच.टी.एम.एल. भाषा की जानकारी होना आवश्यक थी। परन्तु आज यह स्थिति नहीं रह गई है। आज बहुत सी कम्पनियाँ ऐसी हैं जिन्होंने ब्लॉग लिखने के लिये फ्री ऑफ कॉस्ट कुछ साइटें और उपकरण सुलभ करा दिए हैं जिसके लिए कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग की भाषा की जानकारी आवश्यक नहीं है। परिणामस्वरूप ब्लॉग माध्यम का तीव्र ग्रति से विकास हुआ। आज प्रायः यह हर भाषा में लिखा जाने

लगा है। ब्लॉग जैसी परिकल्पना इंटरनेट में ही आकार ले रही है। इंटरनेट सूचनाओं का महासागर है। ब्लॉग लिखने और उन्हें प्रकाशित करने के लिए किसी प्रकार के अलग से इन्फास्ट्रक्चर की आवश्यकता नहीं होती। जो तकनीक उपलब्ध है उसी का उपयोग कर ब्लाग लेखन किया जा रहा है।

ब्लॉग के निम्नलिखित लाभ –

- यदि किसी रचनाकार की कोई रचना किसी समाचार पत्र–पत्रिका में प्रकाशित नहीं हो पाती तो रचनाकार अपना ब्लॉग बनाकर अपनी रचना को पाठकों तक पहुँचा सकता है।
- ब्लॉग प्रायः निजी उपयोग हेतु बिना किसी लागत के प्रयोग में लाया जाता है।
- इसके माध्यम से किसी भी विषय में, किसी भी भाषा में अपने विचारों को प्रकट किया जा सकता है।
- ब्लॉग पर लिखी सामग्री नेट पर पाठकों के लिए हमेशा उपलब्ध है।
- ब्लॉग के द्वारा बिना किसी झंझट एवं संपादकीय सहमति अथवा संपादक की कैंची के अपनी रचनाओं को प्रकाशित एवं प्रसारित किया जा सकता है।
- ब्लॉग पर प्रकाशित सामग्री पर पाठकों की त्वरित टिप्पणियाँ मिल जाती हैं।
- इसका उपयोग कम्पनियाँ अपनी उत्पादकता बढ़ाने, नए विचारोंको प्राप्त करने में भी करती हैं।

- ब्लॉग के माध्यम से कोई भी व्यक्ति अपने विचारों को बिना किसी झिझक के व्यक्त कर सकता है।

मल्टी मीडिया

चलभाषा एवं इंटरनेट संचार

चलभाषा संचार : मोबाइल संचार के लिए अंग्रेजी में सेलुलर शब्द का प्रयोग किया जाता है जिसका उद्‌भव अंग्रेजी के सल (काल) शब्द से हुआ है। इसका हिन्दी अर्थ है कोशिश। सेलूलर फोन इसी कोशिकाओं के माध्यम से कार्य करते हैं। जिसमें संदेशों को एक सेल में भेजा जाता है, यह सेल उक्त सेल से जुडे सेल को, समस्त सूचनाएँ स्थानांतरिक कर देता है। इस प्रकार समीपस्थ जुड़े सेलों के माध्यम से संदेश एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचता है। इसमें टेलीफोन का संबंध केबिल से होता है और सेलुलर रूपी तार विहीन टेलीफोन इस्तेमाल करने वाला 'बेस स्टेशन' से कुछ किलोमीटर के सेल में घूम सकता है। दूरसंचार सेवाओं के क्षेत्र में सेलूलर फोन का आगमन एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। यह दूरसंचार की विकसित प्रणाली है, जो यात्रा के दौरान भी टेलीफोन की सुविधा उपलब्ध कराती है। यह एक चलता–फिरता (मोबाइल) फोन है जो रेडियो तकनीक पर आधारित है।

सेलुलर फोन और साधारण टेलीफोन में प्रमुख अन्तर यही है कि सेलूलर फोन में संदेशों का सम्प्रेषण जहाँ रेडियो तरंगों के माध्यम से होता है, वहीं, साधारण टेलीफोन से भेजे और ग्रहण किये जाने वाले संदेश तारों के जरिये आते–जाते हैं। इस प्रकार यह एक बेतार संचार प्रणाली है। इसका सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इसका उपयोग चलते हुए वाहनों से भी किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि रेडियो तरंग

तकनीक पर आधारित होने के चलते सेलुलर फोन बिल्कुल बंद कमरे, भूमिगत कमरे तथा सशक्त चुम्बकीय प्रभाव वाले क्षेत्रों में कारगर नहीं हो पाते। सेलूलर फोन संबंधी विचार, सर्वप्रथम 1947 में अमेरिका की ब्रेल प्रयोगशाला के इंजीनियर डी.एच.रिंग ने दिया था। लेकिन इस प्रणाली का उपयोग 1978 में तब प्रारंभ हुआ जब ब्रेल प्रयोगशाला ने इसे व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए अत्यधिक चलती–फिरती दूरभाष सेवा की तकनीक विकसित की। धीरे–धीरे सेलूलर फोन विश्व के अधिकांश देशों की दूरसंचार सेवाओं का एक महत्वपूर्ण अंग बनता चला गया। आज स्थिति यह हो गई कि यह प्रायः हर जगह संदेशों के आदान–प्रदान हेतु कार्य करने में सफल है। सेलुलर टेलीफोन प्रणाली को सार्वजनिक चलती–फिरती रेडियो सेवा (PMRS:Public Mobile Radio Service) भी कहा जाता हे। इस सेवा या प्रणाली को जहाँ प्रयोग में लाना होता है, उस क्षेत्र विशेष की छोटे–छोटे भौगोलिक उपक्षेत्रों, जिनको सेल कहा जाता है, में विभाजित कर दिया जाता है। यह सेल आकार की दृष्टि से षटभुजाकार (Hexagonal) होते हैं, और परस्पर एक दूसरे से जुड़े होते हैं। प्रत्येक सेल में एक या एक से अधिक ट्रांसमीटर लगे होते हैं, जो एन्टीना की तरह काम करते हैं। इस सेवा के ये सभी ट्रांसमीटर कम्प्यूटराइज्ड मोबाइल स्वीचिंग सेन्टर से जुड़े होते हैं। यही केन्द्र सारे नेटवर्क को नियंत्रित करता है। ये केन्द्र पब्लिक स्विच्ड टेलीफोन नेटवर्क से भी जुड़ा होता है, इसी वजह से सेलुलर फोन से उपभोक्ता एस.टी.डी. एवं आई.एस.डी. काल भी कर सकते हैं। जब कोई सेलुलर फोन पर संदेशों का आदान–प्रदान करता है तो वह संदेश को

मोबाइल स्वीचिंग सेन्टर में भेजता है। जबकि व्यक्ति विशेष एक सेल क्षेत्र के दूसरे सेल क्षेत्र में प्रवेश करता है, तब ये ट्रांसमीटर काल को समीपवर्ती सेल में भेज देते हैं, ताकि उस व्यक्ति को स्पष्ट संदेश मिल सकें।

देश में सेलुलर फोन सेवा की लिए विश्व की नवीनतम तकनीक ग्लोबल सिस्टम फार मोबाइल कम्यूनिकेशंस (सी.एस.एम.सी.) का उपयोग किया जा रहा है। यह तकनीक डिजिटल कम्प्यूटर भाषा का प्रयोग करती है। मोबेलिटी के प्रति लोगों के रूचि को समझने के लिए टाइम मैग्जीन ने क्वेलकॉम के साथ आठ देशों– भारत, अमेरिका, ब्रिटेन, चीन, दक्षिण कोरिया, दक्षिण अफ्रीका, इंडोनेशिया और ब्राजील में एक सर्वेक्षण किया। इसमें सभी आयु और आय वर्गो के पाँच हजार लोग शामिल थे। मोबाइल फोन लाइफ लाइन का आकार ले चुका है। लोग उसके बिना एक पल भी नहीं रह सकते। सर्वेक्षण में यह पाया गया कि चार में से एक व्यक्ति हर पांच मिनट और पाँच में से एक व्यक्ति हर सात मिनट में उसे चैक करता है। एक तिहाई लोगों ने स्वीकार किया है कि थोड़ी देर के लिए भी मोबाइल साथ न होने पर वे बेचैनी महसूस करते हैं। 25 से 29 वर्ष की आयु के तीन चौथाई व्यक्ति सोते समय भी अपने साथ मोबाइल रखते हैं। टाइम मोबेलिटी फोन से पता लगा है कि पांच में से एक अमेरिकी ने एसएमएस पर किसी से डेट पर चलने के लिए कहा। इसकी तुलना में तीन गुना ब्राजीलियों और चार गुना चीनियों ने ऐसा किया। 10 में से एक विवाहित अमेरिकी ने रोमांस के लिए टेक्सटिंग का सहारा लिया। एक तिहाई भारतीयों और अधिकतर चीनियों ने यह रास्ता चुना।

चलभाष संचार की विशेषताएँ–

- यह बेहतर प्रणाली है। अतएव इसके माध्यम से व्यक्ति कहीं भी सम्प्रेषण कर सकता है।
- इस तकनीक में दो लोगों के बीच हो रहे वार्तालाप की ध्वनि को डिजिट इकाइयों में परिवर्तित किया जाता है। अतः चाह कर भी तीसरा व्यक्ति उनके वार्तालाप को न सुन सकता है और न ही कोई अतिरिक्त अवांछित कनेक्शन जुड़ सकता है।
- सेलूलर कनेक्शन लेने वाले उपभोक्ता को एक सिम कार्ड मिलता है, जिसs Subscriber Identity Module Card के नाम से पुकारा जाता है। सेलुलर फोन तभी कार्य करता है जब उपभोक्ता द्वारा उसमें अपना सिम कार्ड डालकर व्यक्तिगत पहचान संख्या Pin : (Personal Identity Number) फीड किया जाता है।
- उपभोक्ता इस सिम कार्ड को किसी भी सेलूलर फोन में लगाकर बातचीत कर सकता है। इस प्रकार अलग–अलग समय में एक सिम कार्ड का प्रयोग एक से अधिक सेलुलर फोन में तथा एक सेलूलर फोन में विभिन्न सिम कार्ड अलग–अलग प्रयोग किये जा सकते हैं।
- सेलुलर फोन के हैंडसेट का उपयोग ,इलेक्ट्रानिक मेल, टेलीकांफ्रेसिंग और फैक्स आदि की सुविधा पाने के लिए भी किया जा सकता है। लेकिन इनके लिए कुछ अन्य उपकरणों

की आवश्यकता होती है। साथ ही मॉडल के हिसाब से सेलुलर हैंडसेट में कई तरह की सुविधाएँ दी जाती हैं।

- वार्तालाप के दौरान हैण्डसेट के स्क्रीन पर संदेश अथवा आँकड़े प्राप्त किये जा सकते हैं।
- किसी विशेष प्रकार के कॉल को अपने हैंडसेट में प्रतिबंधित कर सकते हैं। कॉल को किसी दूसरे सेट पर स्थानांतरित किया जा सकता है।
- आजकल मोबाइल फोन द्वारा श्रव्य–दृश्य संचार भी हो रहा है।
- कॉल प्रतीक्षा की सुविधा ली जा सकती है। सिमकार्डों पर रोमिंग अर्थात घुमंतु सुविधा भी उपलब्ध हो सकती है, जिससे उपभोक्ता अपने सिम कार्ड का प्रयोग सेलूलर नेटवर्क वाले अन्य स्थानों से भी कर सकते हैं।
- मोबाइल फोन द्वारा रूपयों के लेन–देन, बिलों के भुगतान आदि बैंकिंग कार्य भी होते हैं।
- इसके द्वारा ई–टिकट, रेलवे टिकट भी बनाये जा सकते हैं।

संदर्भ :

- डॉ. रमेशचन्द्र मजुमदार द ब्रिटिश पैरामाउंटसी एण्ड इंडियन रेनांनसे
- श्री अरबिनदों एण्ड द, न्यू थॉट इन इंडियन पॉलीटिक्स
- रोमां रोलां– महात्मा गांधी : जीवन और दर्शन

- माखनलाल चतुर्वेदी, समय के पांव
- निर्मल कुमार बोस, माई डेज वीद गांधी जी
- कृष्ण बिहारी मिश्र, हिन्दी पत्रकारिता (जातीय अस्मिता की जागरण–भूमिका, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, 1998
- आलोक मेहता, भारत में पत्रकारिता, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2009
- जी.एस. भार्गव, भारत में प्रेस, एक सिंहावलोकन, नेशनल बुक ट्रस्ट, पहली आवृत्ति, 2010
- डॉ. मंगला अनुजा, भारतीय पत्रकारिता नींव के पत्थर, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल प्रथम संस्करण, 1996
- हेमंत, योद्धा पत्रकार, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2007
- क्षेमचन्द्र 'सुमन', हिन्दी के यशस्वी, पत्रकार, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, अप्रैल, 1986
- डॉ. सुशीला जोशी, हिन्दी पत्रकारिता : विकास और विविध आयाम, राजस्थान हिन्दी ग्रथ अकादमी, जयपुर, चतुर्थ संस्करण, 2000
- एस.सी. भट्ट, इंडियन प्रेस सिन्स 1955, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1997

- जी.एन.एस. राघवन द प्रेस इन इण्डियन : ए. न्यू हिस्ट्री, ज्ञान पब्लिलिशंक हाउस, दिल्ली
- जे.पी. चतुर्वेदी, इंडिया प्रेस एट ए क्रॉसरोड्स, रिसर्च एसोसियेट्स, दिल्ली